TEXT CUT WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178913

UNIVERSAL
LIBRARY

❀ श्री ❀

चन्द्रकान्ता संतति

उपन्यास

(चौथा खंड)

(भाग १३ से १६ तक)

लेखक

बाबू देवकीनन्दन खत्री



लहरी बुक डिपो

पुस्तक प्रकाशक तथा विक्रेता

काशी

* श्रीः *



चन्द्रकान्ता सन्तति

तेरहवाँ हिस्सा

पहिला बयान

अब हम अपने पाठकों का ध्यान जमानिया के तिलिस्म की तरफ फेरते हैं क्योंकि कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को वहाँ छोड़े बहुत दिन हो गये और अब बीच बीच में उनका हाल लिखे बिना किस्से का सिलसिला ठीक नहीं होगा।

हम लिख आये हैं कि कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी किताब को पढ़ कर समझने का भेद आनन्दसिंह को बताया, इतने ही में मन्दिर के पीछे की तरफ से चिल्लाने की आवाज आई, दोनों भाइयों का ध्यान एक दम उस तरफ चला गया और फिर यह आवाज सुनाई पड़ी, "अच्छा अच्छा, तू मेरा सर काट ले, मैं भी यही चाहती हूँ कि अपनी जिन्दगी में इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को दुःखी न देखूँ। हाय इन्द्रजीतसिंह! अफसोस! इस समय तुम्हें मेरी खबर कुछ भी न होगी!!" इस आवाज को सुन कर इन्द्रजीतसिंह बेचैन और बेताब हो गये और आनन्दसिंह से यह कहते हुए कि—कमलिनी की आवाज मालूम पड़ती है! मन्दिर के पीछे की तरफ लपके। आनन्दसिंह भी उनके पीछे चले गये।

जब कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह मन्दिर के पीछे की तरफ पहुँचे तो एक विचित्र वेषधारी मनुष्य पर उनकी निगाह पड़ी। उस आदमी की उम्र अस्सी वर्ष से कम न होगी। उसके सर मोंछ दाढ़ी और भौं इत्यादि के तमाम बाल बर्फ की तरह सुफैद हो रहे थे मगर गर्दन और कमर पर बुढ़ापे ने अपना दखल जमाने से परहेज कर रक्खा था, अर्थात् न तो उसकी गर्दन हिलती थी और न कमर झुकी हुई थ। उसके चेहरे पर झुर्रियाँ (बहुत कम) पड़ गई थीं मगर फिर भी उसका गोरा गोरा चेहरा रौनकदार और रोबीला दिखाई पड़ता था और दोनों गालों पर अब भी सुर्खी मौजूद थी। एक ही नहीं बल्कि हर एक अँग की किसी न किसी हालत से वह अस्सी बरस का बुड्ढा जान पड़ता था परन्तु कम जोरी, पस्तहिम्मती, बुजदिली और आलस्य इत्यादि के धावे से अभी तक उसका शरीर बचा हुआ था।

उसकी पोशाक राजों महाराजों की पोशाकों की तरह बेशकीमत न थी, मगर इस योग्य भी न थी कि उससे गरीबी और कंगलियाकती जाहिर होती। रेशमी मोटे कपड़े की पोशाक हर जगह से चुस्त और फौजी अफसरों के ढंग की मगर सादी थी। कमर में एक भुजाली लगी हुई थी और बाएँ हाथ में सोने की एक बड़ी सी डलिया (या चंगेर) लटकाये हुए था। जिस समय वह कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को देख कर हँसा उस समय यह भी मालूम हो गया कि उसके मुँह में जवानों की तरह कुल दाँत अभी तक मौजूद हैं और मोती की तरह चमक रहे हैं।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को आशा थी कि वे इस जगह कमलिनी को नहीं तो किसी न किसी औरत को अवश्य देखेंगे मगर आशा के विपरीत एक ऐसे आदमी को देख उन्हें बड़ा ही ताज्जुब हुआ। इन्द्रजीतसिंह ने वह तिलिस्मी खंजर जो मंदिर के नीचे वाले तहखाने में पाया था आनन्दसिंह के हाथ में दे दिया और आगे बढ़ कर उस आदमी से पूछा, "यहाँ से एक औरत के चिल्लाने की आवाज आई थी, वह कहाँ है ?"

बुड्ढा०। (इधर उधर देख के) यहाँ तो कोई औरत नहीं है।

इन्द्र०। अभी अभी हम दोनों ने उसकी आवाज सुनी थी !

बुड्ढा० । बेशक सुनी होगी मगर मैं ठीक कहता हूँ कि यहाँ पर कोई औरत नहीं है ।

इन्द्र० । तो फिर वह आवाज किसकी थी ?

बुड्ढा० । वह मेरी ही आवाज थी ।

आनन्द० । (सिर हिला कर) कदापि नहीं ।

इन्द्र० । मुझे इस बात का विश्वास नहीं हो सकता । आपकी आवाज वैसी नहीं है जैसी वह आवाज थी ।

बुड्ढा० । जो मैं कहता हूँ उस पर आप विश्वास करें या यह बतावें कि आपको मेरी बात का विश्वास क्योंकर होगा ? क्या मैं फिर उसी तरह से बोलूँ ?

इन्द्र० । हाँ यदि ऐसा हो तो हमलोग जरूर आपकी बात मान सकते हैं ।

बुड्ढा० । (उसी तरह से और वे ही शब्द अर्थात्—अच्छा अच्छा तू मेरा सर काट ले—इत्यादि बोल कर) देखिये वे ही शब्द और उसी ढंग की आवाज है या नहीं ?

आनन्द० । (ताज्जुब से) बेशक वे ही शब्द और ठीक वैसी ही आवाज है !

इन्द्र० । मगर इस ढंग से आपको बोलने की क्या आवश्यकता थी ?

बुड्ढा० । मैं इस तिलिस्म में कल से चारो तरफ घूम घूम कर आपको खोज रहा हूँ । सैकड़ों आवाजें दीं और बहुत उद्योग किया मगर आप लोगों से मुलाकात न हुई । तब मैंने सोचा कि कदाचित आप लोगों ने यह सोच लिया हो कि इस तिलिस्मी कारखाने में किसी आवाज का उत्तर देना उचित नहीं है और इसी से आप मेरी आवाज पर ध्यान नहीं देते, आखिर मैंने यह तर्कीब निकाली और इस ढंग से बोला जिसमें सुनने के साथ ही आप बेताब हो जायँ और स्वयं ढूँढ़ कर मुझसे मिलें और आखिर जो कुछ मैंने सोचा था वही हुआ ।

इन्द्र० । आप कौन हैं और मुझे क्यों बुला रहे थे ?

आनन्द० । और इस तिलिस्म के अन्दर आप कैसे आये ?

बुड्ढा० । मैं एक मामूली आदमी और आपका एक अदना गुलाम हूँ, इसी तिलिस्म में रहता हूँ, और यही तिलिस्म मेरा घर है । आप लोगों की मेहमानी और खातिरदारी करना मेरा धर्म है इसी लिये मैं आप लोगों को ढूँढ़ रहा था ।

इन्द्र० । अगर आप इसी तिलिस्म में रहते हैं और यह तिलिस्म आपका

घर है तो हमलोगों को आप दोस्ती की निगाह से नहीं देख सकते क्योंकि हमलोग आपका घर अर्थात् यह तिलिस्म तोड़ने के लिए यहाँ आये हैं अस्तु कोई आदमी किसी ऐसे की खातिर नहीं कर सकता जो उसके मकान को तोड़ने वाला हो, तब हम क्योंकर विश्वास कर सकते हैं कि आप मुझे अच्छी निगाह से देखते होंगे या आप मेरे साथ दगा या फरेब न करेंगे ?

बुड्ढा० । आपका खयाल बहुत ठीक है, ऐसे समय पर इन सब बातों को सोचना और विचार करना बुद्धिमानों का काम है परन्तु इस बात का आप दोनों भाइयों को विश्वास करना ही होगा कि मैं आपका दोस्त हूँ, भला सोचिये तो सही कि मैं दुश्मनी करके आपका क्या बिगाड़ सकता हूँ ? हाँ आपकी मेहरबानी से मैं अवश्य फायदा उठा सकता हूँ ।

इन्द्र० । मेरी मेहरबानी से आपको क्या फायदा होगा और आप इस तिलिस्म के अन्दर मेरी क्या खातिर करेंगे ? इसके अतिरिक्त यह बताइये कि कौन सबूत पा कर मैं आप को अपना दोस्त समझ लूँगा और आपकी बात पर विश्वास कर लूँगा ।

बुड्ढा० । आपकी मेहरबानी से मुझे बहुत फायदा हो सकता है । यदि आप चाहेंगे तो मेरे घर को अर्थात् इस तिलिस्म को बिल्कुल चौपट न करेंगे । मेरे कहने का मतलब यह नहीं है कि आप इस तिलिस्मको न तोड़ें और इससे फायदा न उठावें, बल्कि मैं यह कहता हूँ कि इस तिलिस्म को उतना ही तोड़िये जितने में आपको गहरा फायदा पहुँचे और कम फायदे के लिए व्यर्थ उन मजेदार चीजों को चौपट न कीजिये जिनके बनाने में बड़े बड़े बुद्धिमानों ने वर्षों मेहनत की हो और जिसका तमाशा देखकर बड़े बड़े होशियारों की अक्ल भी चकरा सकती हो । अगर इसका थोड़ा सा हिस्सा आप छोड़ देंगे तो मेरा घर और यह खेल तमाशा बना रहेगा और इसके साथ ही साथ आप के दोस्त गोपालसिंह की इज्जत और नामवरी में भी फर्क न पड़ेगा और वह तिलिस्म का राजा कहलाने लायक बना रहेगा । मैं इस तिलिस्म में आपकी खातिरदारी अच्छी तरह कर सकता हूँ तथा ऐसे तमाशे दिखला सकता हूँ जो आप तिलिस्म तोड़ने की ताकत रखने पर भी बिना मेरी मदद के नहीं देख सकते, हाँ उसका आनन्द लिए बिना उसे चौपट अवश्य कर

सकते हैं। बाकी रही यह बात कि आप मुझ पर भरोसा किस तरह कर सकते हैं इसका जवाब देना अवश्य ही जरा कठिन है।

इन्द्र०। (कुछ सोचकर) तुमसे और राजा गोपालसिंह से जान पहिचान है।

बुड्ढा०। अच्छी तरह जान पहिचान है बल्कि हम दोनों में मित्रता है।

इन्द्र०। (सिर हिलाकर) यह बात तो मेरे जी में नहीं बैठती।

बुड्ढा०। सो क्यों?

इन्द्र०। इसलिये कि एक तो यह तिलिस्म तुम्हारा घर है, कहो—हाँ।

बुड्ढा०। जी हाँ।

इन्द्र०। जब यह तिलिस्म तुम्हारा घर है तो यहाँ का एक एक कोना तुम्हारा देखा हुआ होगा बल्कि आश्चर्य नहीं कि राजा गोपालसिंह की बनिस्बत इस तिलिस्म का हाल तुमको ज्यादे मालूम हो।

बुड्ढा०। जी हाँ, बेशक ऐसा ही है।

इन्द्र०। (मुस्कुरा कर) तिस पर राजा गोपालसिंह से और तुमसे मित्रता है!

बुड्ढा०। अवश्य।

इन्द्र०। तो तुमने इतने दिनों तक राजा गोपालसिंह को मायारानी के कैदखाने में क्यों सड़ने दिया! इसके जवाब में तुम यह नहीं कह सकते कि मुझे गोपालसिंह के कैद होने का हाल मालूम न था या मैं उस सीखचेवाली कोठरी तक नहीं जा सकता था जिसमें वे कैद थे!

इन्द्रजीतसिंह के इस सवाल ने बुड्ढे को लाजवाब कर दिया और वह सिर नीचा करके कुछ सोचने लगा। कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने समझ लिया कि यह बुड्ढा झूठा है और हम लोगों को धोखा दिया चाहता है। बहुत थोड़ी देर तक सोचने के बाद बुड्ढे ने सिर उठाया और मुस्कुरा कर कहा, "वास्तव में भुलावा दे कर मेरा हाल जानना चाहते हैं, मगर ऐसा नहीं हो सकता, हाँ जब आप इस तिलिस्म को तोड़ लेंगे तो मेरा परिचय मिल जायगा, मगर यह बात झूठी नहीं हो सकती कि राजा गोपालसिंह मेरे मित्र हैं और यह तिलिस्म मेरा घर है।"

इन्द्र०। आप स्वयं अपने मुँह से झूठे बन रहे हैं, इसमें मेरा क्या कसूर है!

यदि गोपालसिंह आपके दोस्त हैं तो आप मेरी बात का पूरा पूरा जवाब दे कर मेरा दिल क्यों नहीं भर देते हैं ?

बुड्ढा० । नहीं आपकी इस बात का जवाब मैं नहीं दे सकता कि गोपालसिंह को मैंने मायारानी के कैदखाने से क्यों नहीं छुड़ाया ।

इन्द्र० । तो फिर मेरा दिल कैसे भरेगा और मैं कैसे आप पर विश्वास करूँगा ?

बुड्ढा० । इसके लिये मैं दूसरा उपाय कर सकता हूँ ।

इन्द्र० । चाहे कोई उपाय कीजिये परन्तु इस बात का निश्चय अवश्य होना चाहिये कि यह तिलिस्म आपका घर है और गोपालसिंह आपके मित्र हैं ।

बुड्ढा । आपको तो केवल इसी बातका विश्वास होना चाहिये कि मैं आपका दुश्मन नहीं हूँ ।

आनन्द० । नहीं नहीं, हम लोग और किसी बात का सबूत नहीं चाहते केवल वह दो बात आप साबित कर दें जो भाईजी चाहते हैं ।

बुड्ढा० । तो इस समय मेरा यहाँ आना व्यर्थ ही हुआ ! (चंगेर की तरफ इशारा कर के) देखिये आप लोगों के खाने के लिये मैं तरह तरह की चीजें लेता आया था मगर अब लौटा ले जाना पड़ा क्योंकि जब आपको मुझ पर विश्वास ही नहीं है तो इन चीजों को कब स्वीकार करेंगे !

इन्द्र० । बेशक मैं इन चीजों को स्वीकार नहीं कर सकता जब तक कि मुझे आपकी बातों का विश्वास न हो जाय ।

आनन्द० । (मुस्कुरा कर) क्या आपके लड़के-बाले भी इसी तिलिस्म में रहते हैं ? ये सब चीजें आपके घर की बनी हुई हैं या बाजार से लाए हैं ?

बुड्ढा० । मेरे लड़के-बाले नहीं हैं न मैं दुनियादार हूँ, यहाँ तक कि कोई नौकर भी मेरे पास नहीं है—ये चीजें तो बाजार से खरीद लाया हूँ ।

आनन्द० । तो इससे यह भी जाना जा सकता है कि आप दिन रात इस तिलिस्म में नहीं रहते जब कभी खेल तमाशा देखने की इच्छा होती होगी तो चले आते होंगे ।

इन्द्र० । खैर जो हो हमें इन सब बातों से कोई मतलब नहीं, हमारे सामने जब ये अपने सच्चे होने का सबूत ला कर रक्खेंगे तब हम इनसे बातें करेंगे और इनके साथ चलकर इनका घर भी देखेंगे ।

इस बात का जवाब उस बुड्ढे ने कुछ न दिया और सिर झुकाये वहाँ से चला गया। इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह भी यह देखने के लिए कि वह कहाँ जाता है और क्या करता है उसके पीछे पीछे चले। बुड्ढे ने घूम कर इन दोनों भाइयों को अपने पीछे पीछे आते देखा मगर इस बात की उसने कुछ परवाह न की और बराबर चला गया।

हम पहिले के किसी बयान में लिख आये हैं कि इस बाग में पश्चिम तरफ की दीवार के पास एक कुआँ था। वह बुड्ढा उसी कुएँ की तरफ चला गया और जब उसके पास पहुँचा तो बिना कुछ रुके एकदम उस कुएँ के अन्दर कूद पड़ा। इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह भी उस कुएँ के पास पहुँचे और झाँक कर देखने लगे मगर सिवाय अन्धकार के और कुछ भी दिखाई न दिया।

आनन्द०। जब वह बुड्ढा बेधड़क इसके अन्दर कूद गया तो यह कुआँ जरूर किसी तरफ निकल जाने का रास्ता होगा?

इन्द्र०। मैं भी यही समझता हूँ।

आनन्द०। यदि कहिये तो मैं इसके अंदर जाऊँ?

इन्द्र०। नहीं नहीं, ऐसा करना बड़ी नादानी होगी, तुम इस तिलिस्म का हाल कुछ भी नहीं जानते, हाँ मैं इसके अंदर बेखटक जा सकता हूँ क्योंकि तिलिस्मी किताब को पढ़ चुका हूँ और वह मुझे अच्छी तरह याद भी है, मगर मैं नहीं चाहता कि तुम्हें इस जगह अकेला छोड़ कर जाऊँ।

आनन्द०। अस्तु फिर अब क्या करना चाहिये?

इन्द्र०। बस सब के पहिले तुम इस तिलिस्मी किताब को पढ़ जाओ और इस तरह याद कर जाओ कि पुनः उसके देखने की आवश्यकता न रहे, फिर जो कुछ करना होगा किया जायगा। इस समय इस बुड्ढे का पीछा करना हमें स्वीकार नहीं है। जहाँ तक मैं समझता हूँ यह दगाबाज बुड्ढा खुद हम लोगों का पीछा करेगा और फिर हमारे पास आवेगा, बल्कि ताज्जुब नहीं कि अबकी दफे कोई नया रंग लावे।

आनन्द०। जैसी आज्ञा, अच्छा तो वह किताब मुझे दीजिये मैं पढ़ जाऊँ।

दोनों भाई लौट कर फिर उसी मंदिर के पास आये और आनंदसिंह तिलिस्मी किताब के पढ़ने में लौलीन हुए।

दोनों भाई चार दिन तक उसी बाग में रहे, इस बीच में उन्होंने न तो कोई कार्रवाई की और न कोई तमाशा देखा, हाँ आनंदसिंह ने उस किताब को अच्छी तरह पढ़ डाला और सब बात दिल में बैठा ली। वह खून से लिखी हुई तिलिस्मी किताब बड़ी न थी और उसके अंत में यह बात लिखी हुई थी—

"निःसन्देह तिलिस्म खोलने वाले का जेहन बहुत तेज होगा। उसे चाहिये कि इस किताब को पढ़कर अच्छी तरह याद कर ले क्योंकि इसके पढ़ने ही से मालूम हो जायगा कि यह किताब तिलिस्म खोलने वाले के पास बची न रहेगी किसी दूसरे काम में लग जायगी, ऐसी अवस्था में अगर इसके अंदर की लिखी हुई कोई बात भूल जायगी तो तिलिस्म खोलने वाले की जान पर आ बनेगी। जो आदमी इस किताब को आदि से अंत तक याद न कर सके वह तिलिस्म के काम में कदापि हाथ न लगावे नहीं तो धोखा खायगा।"

दूसरा बयान

दिन लगभग पहर भर के चढ़ चुका है। दोनों कुमार स्नान संध्या पूजा से छुट्टी पाकर तिलिस्म तोड़ने में हाथ लगाने के लिए जा ही रहे थे कि रास्ते में फिर उसी बुड्ढे से मुलाकात हुई। बुड्ढे ने झुककर दोनों कुमारों को सलाम किया और अपनी जेब में से एक चीठी निकाल कुँअर इन्द्रजीतसिंह के हाथ में देकर बोला, "देखिये राजा गोपालसिंह के हाथ की सिफारिसी चीठी ले आया हूँ, इसे पढ़कर तब कहिये कि मुझ पर भरोसा करने में अब आपको क्या उज्र है!" कुमार ने चीठी पढ़ी और आनन्दसिंह को दिखाने के बाद हँस कर उस बुड्ढे की तरफ देखा।

बुड्ढा०। (मुस्कुरा कर) कहिये अब आप क्या कहते हैं? क्या इस पत्र को आप जाली या बनावटी समझते हैं?

इन्द्र०। नहीं नहीं, यह चीठी जाली नहीं हो सकती मगर देखो तो सही— इस (आनंदसिंह के हाथ से चीठी लेकर और चीठी में लिखे हुए एक निशान को दिखाकर) निशानको तुम पहिचानते हो? या इसका मतलब तुम जानते हो।

बुड्ढा०। (निशान देखकर) इसका मतलब तो आप जानिये या गोपालसिंह जानें, मुझे क्या मालूम! हाँ यदि आप बताइये तो.....

इन्द्र० । इसका मतलब यही है कि यह चीठी बेशक सच्ची है मगर इसमें जो कुछ लिखा है उस पर ध्यान देना ।

बुड्ढा० । क्या गोपाल ने आपसे कहा था कि हमारी लिखी जिस चीठी पर ऐसा निशान हो उसकी लिखावट पर ध्यान न देना ?

इन्द्र० । हाँ मुझसे उन्होंने ऐसा ही कहा था, इसलिए जाना जाता है कि यह चीठी उन्होंने अपनी इच्छा से नहीं लिखी बल्कि जबर्दस्ती किये जाने के सबब से लिखा है ।

बुड्ढा० । नहीं नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता, आप भूलते हैं, उन्होंने आपसे इस निशान के बारे में कोई दूसरी बात कही होगी ।

कुमार० । नहीं नहीं, मैं ऐसा भुलक्कड़ नहीं हूँ, अच्छा आप ही बताइये यह निशान उन्होंने क्यों बनाया ?

बुड्ढा० । यह निशान इसलिए स्थिर किया है कि कोई ऐयार उनके दोस्तों को उनकी लिखावट का धोखा न दे सके । (कुछ सोचकर और हँसकर) मगर कुमार, तुम भी बड़े बुद्धिमान और मसखरे हो !!

कुमार० । कहो अब तुम्हारी दाढ़ी मैं नोच लूँ ?

आनंद० । (हँसकर और ताली बजा कर) या मैं नोच लूँ ?

बुड्ढा० । (हँसते हुए) अब आप लोग तकलीफ न कीजिये मैं स्वयम् इस दाढ़ी को नोच कर अलग फेंक देता हूं !!

इतना कह उस बुड्ढे ने अपने चेहरे से दाढ़ी अलग कर दी और कुँअर इन्द्रजीतसिंह के गले से लपट गया ।

पाठक ! यह बुड्ढा वास्तव में राजा गोपालसिंह थे जो चाहते थे कि मैं सूरत बदल कर इस तिलिस्म में कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनंदसिंह की मदद करूँ मगर कुमार की चालाकियों ने उनकी हिकमत लड़ने न दी और लाचार होकर उन्हें प्रगट होना ही पड़ा ।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह दोनों भाई राजा गोपालसिंह के गले मिले और उनका हाथ पकड़े हुए नहर के किनारे गये जहाँ एक पत्थर की चट्टान पर बैठ कर तीनों आदमी बातचीत करने लगे ।

तीसरा बयान

अब हम रोहतासगढ़ का हाल लिखते हैं। जिस समय बाहर यह खबर आई कि लक्ष्मीदेवी की तबीयत ठीक हो गई और वे सब पर्दे के पास आकर बैठ गईं उस समय राजा बीरेन्द्रसिंह ने तेजसिंह की तरफ देखा और कहा, "लक्ष्मीदेवी से पूछना चाहिये कि उसकी तबीयत यह सन्दूकची देखने के साथ ही क्यों खराब हो गई !"

इसके पहिले कि तेजसिंह राजा बीरेन्द्रसिंह की बात का कोई जवाब दें या उठने का इरादा करें जिन्न ने कहा, "आश्चर्य है कि आप इसके लिये जल्दी करते हैं !"

जिन्न की बात सुन राजा बीरेन्द्रसिंह मुसकुरा कर चुप हो रहे और भूतनाथ का कागज पढ़ने के लिये तेजसिंह को इशारा किया। यद्यपि आज भूतनाथ का मुकद्दमा फैसला होने वाला है इसलिये भूतनाथ और कमला का रंज और तरद्दुद तो वाजिब ही है मगर इस समय भूतनाथ से सौगुनी बुरी हालत बलभद्रसिंह की हो रही है। चाहे सभों का ध्यान उस कागज के मुट्ठे की तरफ लगा हो जिसे अब तेजसिंह पढ़ा चाहते हैं मगर बलभद्रसिंह का खयाल किसी दूसरी तरफ है। उसके चेहरे पर बदहवासी और परेशानी छाई हुई है और वह छिपी निगाहों से चारो तरफ इस तरह देख रहा है जैसे कोई मुजरिम निकल भागने के लिये रास्ता ढूँढ़ता हो, मगर भैरोसिंह को मुस्तैदी के साथ अपने ऊपर तैनात पाकर सिर नीचा कर लेता है।

हम यह लिख चुके हैं कि तेजसिंह पहिले उन चीठियों को पढ़ गये जिनका हाल हमारे पाठकों को मालूम हो चुका है, अब तेजसिंह ने उसके आगे वाला पत्र पढ़ना आरम्भ किया जिसमें यह लिखा हुआ था—

"मेरे प्यारे दोस्त !

आज मैं बलभद्रसिंह की जान ले ही चुका था मगर दारोगा साहब ने मुझे ऐसा करने से रोक दिया। मैंने सोचा था कि बलभद्र के खतम हो जाने पर लक्ष्मीदेवी की शादी रुक जायगी और उसके बदले में मुंदर को भरती कर देने का अच्छा मौका मिलेगा मगर दारोगा साहब की यह राय न ठहरी। उन्होंने

कहा कि गोपालसिंह को भी लक्ष्मीदेवी के साथ शादी करने की जिद्द हो गई है ऐसी अवस्था में यदि बलभद्रसिंह को तुम मार डालोगे तो राजा गोपालसिंह दूसरी जगह शादी करने के बदले में बरस दिन अटक रह जाना मुनासिब समझेगा और शादी का दिन टल जाना अच्छा नहीं है इससे यही उचित होगा कि बलभद्रसिंह को कुछ न कहा जाय, लक्ष्मीदेवी की माँ को मरे ग्यारह महीने हो ही चुके हैं, महीना भर और बीत जाने दो, जो कुछ करना होगा शादी वाले दिन किया जायगा। शादी वाले दिन जो कुछ किया जायगा उसका बन्दोबस्त भी हो चुका है, उस दिन मौके पर लक्ष्मीदेवी गायब कर दी जायगी और उसकी जगह मुंदर बैठा दी जायगी और उसके कुछ देर पहिले ही बलभद्रसिंह ऐसी जगह पहुँचा दिया जायगा जहाँ से पुनः लौट आने की आशा नहीं है, बस फिर किसी तरह का खटका न रहेगा। यह सब जो हुआ सो हुआ मगर आपने अभी तक फुटकर खर्च के लिए रु० न भेजे। जिस तरह हो सके उस तरह बन्दोबस्त कीजिये और रुपये भेजिये नहीं तो सब काम चौपट हो जायगा, आगे आपको अख्तियार है।

वही भूतनाथ।"

बीरेन्द्र०। (भूतनाथ की तरफ देख के) क्यों भूतनाथ! यह चीठी तुम्हारे हाथ की लिखी हुई है?

भूत०। (हाथ जोड़ कर) जी हाँ महाराज, यह कागज मेरे ही हाथ का लिखा हुआ है।

बीरेन्द्र०। तुमने यह पत्र हेलासिंह के पास भेजा था?

भूत०। जी नहीं।

बीरेन्द्र०। तुम अभी कह चुके हो कि यह पत्र मेरे हाथ का लिखा है और फिर कहते हो कि नहीं!

भूत०। जी मैं यह नहीं कहता कि यह पत्र मेरे हाथ का लिखा हुआ नहीं है बल्कि मैं यह कहता हूँ कि यह पत्र हेलासिंह के पास मैंने नहीं भेजा था।

बीरेन्द्र०। तब किसने भेजा था?

भूत०। (बलभद्र की तरफ इशारा करके) इसने भेजा था और इसी ने अपना नाम भूतनाथ रक्खा था क्योंकि यह वास्तव में लक्ष्मीदेवी का बाप बलभद्रसिंह नहीं है।

बीरेन्द्र० । अगर यह चीठी (बलभद्रसिंह की तरफ इशारा कर के) इसने हेलासिंह के पास भेजी थी तो फिर तुमने इसे अपने हाथ से क्यों लिखा ? क्या तुम इसके नौकर या मुहर्रिर थे ?

भूत० । जी नहीं, इसका कुछ दूसरा ही सबब है मगर इसके पहिले कि मैं आपकी बात का पूरा जवाब दूँ इस नकली बलभद्रसिंह से दो चार बातें पूछने की आज्ञा चाहता हूँ ।

बीरेन्द्र० । क्या हर्ज है जो कुछ पूछा चाहते हो पूछो ।

भूत० । (बलभद्र की तरफ देख के) इस कागज के मुट्टे को तुम शुरू से आखीर तक पढ़ चुके हो या नहीं ?

बलभद्र० । हाँ पढ़ चुका हूँ ।

भूत० । जो चीठी अभी पढ़ी गई है इसके आगे वाली चीठियाँ जो अभी पढ़ी नहीं गईं तुम्हारे इस मुकद्दमे से कुछ सम्बन्ध रखती हैं ?

बलभद्र० । नहीं ।

भूत० । सो क्यों ?

बलभद्र० । आगे की चीठियों का मतलब हमारी समझ में नहीं आता ।

भूत० । तो अब आगे वाली चीठियों के पढ़ने की कोई आवश्यकता न रही ?

बलभद्र० । तेरा कसूर साबित करने के लिये क्या इतनी चीठियाँ कम हैं जो पढ़ी जा चुकी हैं ?

भूत० । बहुत हैं बहुत हैं, अच्छा तो अब मैं यह पूछता हूँ कि लक्ष्मीदेवी की शादी के दिन तुम कैद कर लिये गये थे ?

बलभद्र० । हाँ ।

भूत० । उस समय बालासिंह कहाँ था और अब बालासिंह कहाँ है ?

भूतनाथ के इस सवाल ने बलभद्रसिंह की अवस्था फिर बदल दी । वह और भी घबड़ाया सा होकर बोला, "इन सब बातों के पूछने से क्या फायदा निकलेगा ?" इतना कह कर उसने दारोगा और मायारानी की तरफ देखा । मालूम होता था कि बालासिंह के नाम ने मायारानी और दारोगा पर भी अपना असर किया जो मायारानी के बगल ही में एक खम्भे के साथ बँधा हुआ था । बीरेन्द्रसिंह और उनके बुद्धिमान ऐयारों ने भी बलभद्र दारोगा और मायारानी के चेहरे

और उन तीनों की इस देखादेखी पर गौर किया और बीरेन्द्रसिंह ने मुस्कुरा कर जिन्न की तरफ देखा।

जिन्न०। मैं समझता हूँ कि इस बलभद्रसिंह के साथ अब आपको बेमुरौवती करनी होगी।

बीरेन्द्र०। बेशक, मगर क्या आप कह सकते हैं कि यह मुकद्दमा आज फैसला हो जायगा?

जिन्न०। नहीं, यह मुकद्दमा इस लायक नहीं है कि आज फैसला हो जाय, यदि आप इस मुकद्दमे की कलई अच्छी तरह खोला चाहते हैं तो इस समय इसे रोक दीजिये और भूतनाथ को छोड़ कर आज्ञा दीजिये कि महीने भर के अन्दर जहाँ से हो सके वहाँ से असली बलभद्रसिंह को खोज लावे नहीं तो उसके लिए बेहतर न होगा।

बीरे०। भूतनाथ को किसकी जमानत पर छोड़ दिया जाय?

जिन्न०। मेरी जमानत पर।

बीरे०। जब आप ऐसा कहते हैं तो हमें कोई उज्र नहीं है यदि लक्ष्मीदेवी और लाडिली तथा कमलिनी इसे स्वीकार करें।

जिन्न०। उन सभों को कोई उज्र न होना चाहिये।

इतने में पर्दे के अंदर से कमलिनी ने कहा, "हमलोगों को कोई उज्र न होगा, हमारे महाराज को अधिकार है जो चाहें करें।"

बीरेन्द्र०। (जिन्न की तरफ देख के) तो फिर कोई चिन्ता नहीं, हम आपकी बात मान सकते हैं। (भूतनाथ से) अच्छा तुम यह तो बताओ कि जब वह चीठी तुम्हारे ही हाथ की लिखी हुई है तो तुम उसे हेलासिंह के पास भेजने की बात से क्यों इन्कार करते हो?

भूत०। इसका हाल भी उसी समय मालूम हो जायगा जब मैं असली बलभद्रसिंह को छुड़ा कर ले आऊँगा।

जिन्न०। आप इस समय इस मुकद्दमे को रोक ही दीजिये जल्दी न कीजिये क्योंकि इसमें अभी तरह तरह के गुल खिलने वाले हैं!

बलभद्र०। नहीं नहीं; भूतनाथ को छोड़ना उचित न होगा, यह बड़ा भारी

बेईमान जालिया धूर्त और बदमाश है, यदि इस समय छट कर चल देगा तो फिर कदापि न आवेगा !!

तेज० । घुड़ककर बलभद्र से) बस चुप रहो, तुमसे इस बारे में राय नहीं ली जाती !!

बल० । (खड़े होकर) अच्छा तो मैं जाता हूँ, जिस जगह ऐसा अन्याय हो वहाँ ठहरना भले आदमियों का काम नहीं है !

बलभद्र उठकर खड़ा हुआ ही था कि भैरोसिंह ने उसकी कलाई पकड़ ली और कहा, "ठहरिये ठहरिये, आप भले आदमी हैं, आपको क्रोध न करना चाहिये ! अगर ऐसा कीजियेगा तो भलमानसी में बट्टा लग जायगा । यदि आपको हम लोगों की सोहबत अच्छी नहीं मालूम पड़ती तो आप मायारानी और दारोगा की सोहबत में रक्खे जायेंगे, जिसमें आप खुश रहें हमलोग वही करेंगे ।

भैरोसिंहने बलभद्रसिंह की कलाई पकड़के एक नस ऐसी दबाई कि वह बेताब हो गया, उसे ऐसा मालूम हुआ कि मानों तमाम बदन की ताकत किसी ने खैंच ली हो, और वह बिना कुछ बोले इस तरह बैठ गया जैसे कोई गिर पड़ता है । उसकी यह अवस्था देख सभों ने मुस्कुरा दिया ।

जिन्न० । (बीरेन्द्रसिंह से) अब मैं आप से और तेजसिंह जी से दो चार बातें एकान्त में कहा चाहता हूँ ।

बीरेन्द्र० । हमारी भी यही इच्छा है ।

इतना कह कर बीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह देवीसिंह से कुछ इशारा कर के उठ खड़े हुए और दूसरे कमरे की तरफ चले गए ।

राजा बीरेन्द्रसिंह तेजसिंह और जिन्न आधे घंटे तक एकान्त में बैठ कर बातचीत करते रहे । सभों को जिन्न के विषय में जितना आश्चर्य था उतना ही इस बात का निश्चय भी हो गया कि जिन्न का हाल राजा बीरेन्द्रसिंह तेजसिंह और भैरोसिंह को मालूम हो गया परन्तु वह किसी से न कहेंगे और न कोई उनसे पूछ सकेगा ।

आधे घंटे के बाद तीनों आदमी कमरे के बाहर निकल कर अपने अपने ठेकाने आ पहुँचे और तेजसिंह ने देवीसिंह की तरफ देख के कहा, "भूतनाथ

को छोड़ देने की आज्ञा हुई है। तुम भूतनाथ और जिन्न के साथ जाओ और हिफाजत के साथ दोनों को पहाड़ के नीचे पहुँचा कर लौट आओ।"

इतना सुनते ही देवीसिंह ने भूतनाथ की हथकड़ी बेड़ी खोल दी और उसको तथा जिन्न को साथ लिए वहाँ से बाहर चले गए। इसके बाद तेजसिंह पर्दे के अन्दर गए और लक्ष्मीदेवी कमलिनी तथा लाडली को कुछ समझा बुझा कर बाहर निकल आये। बलभद्रसिंह खातिरदारी और चौकसी के साथ हिफाजत में रखने के लिये भैरोसिंह के हवाले किया गया और बाकी कैदियों को कैदखाने में पहुँचाने की आज्ञा दे कर राजा बीरेन्द्रसिंह बाहर चले आये तथा अदालत बरखास्त कर दी गई।

चौथा बयान

जब जिन्न और भूतनाथ को पहाड़ के नीचे पहुँचा कर देवीसिंह लौट गए तो वे दोनों आपुस में नीचे लिखी बातें करते हुए पूरब की तरफ रवाना हुए।

भूत०। निःसंदेह आपने मुझ पर बड़ी कृपा की, यदि आज आप मेरे सहायक न होते तो मैं तबाह हो चुका था!

जिन्न०। सो सब तो ठीक है मगर देखो आज हमने तुमको अपनी जमानत पर इसलिये छुड़ा दिया है कि तुम जिस तरह हो असली बलभद्रसिंह को खोज निकालो और उन्हें अपने साथ लेकर राजा बीरेन्द्रसिंह के पास हाजिर हो जाओ, लेकिन ऐसा न करना कि बलभद्रसिंह का पता लगाने के बदले में तुम स्वयं अन्तर्ध्यान हो जाओ और हमको राजा बीरेन्द्रसिंह के आगे झूठा करो।

भूत०। नहीं नहीं, ऐसा कदापि नहीं हो सकता। यदि मुझे नेकनामी के साथ राजा बीरेन्द्रसिंह का ऐयार बनने का शौक न होता तो मैं इन बखेड़ों में क्यों पड़ता? बिना कुछ पाये उनका इतना काम क्यों करता? रुपये की मुझे कुछ परवाह न थी, मैं किसी दूसरे देश में चला जाता और खुशी के साथ जिन्दगी बिताता। मगर नहीं, मुझे राजा बीरेन्द्रसिंह के साथ रहने का बड़ा उत्साह है। फिर जिस दिन से राजा गोपालसिंह का पता लगा है उसी दिन से मैं उनके दुश्मनों की खोज में भी लगा हूँ और बहुत सी बातों का पता भी लगा चुका हूँ।

जिन्न०। (बात काट कर) तो क्या तुमको इस बात की खबर न थी कि मायारानी ने गोपालसिंह को कैद करके किसी गुप्त स्थान में रख दिया है?

भूत० । नहीं बिल्कुल नहीं ।

जिन्न० । और इस बात की भी खबर न थी कि मायारानी वास्तव में लक्ष्मी-देवी नहीं है ?

भूत० । इस बात को मैं अच्छी तरह जानता था ।

जिन्न० । तो तुमने राजा गोपालसिंह के आदमियों को इस बात की खबर क्यों न की ?

भूत० । मैंने इसलिये मायारानी का असल हाल किसी से नहीं कहा कि एक तो मुझे राजा गोपालसिंह के मरने का पूरा पूरा विश्वास हो चुका था दूसरे उस समय मैं रणधीरसिंह के यहाँ नौकर था, तब मुझे दूसरे राज्य के भले बुरे कामों से मतलब ही क्या था ?

जिन्न० । तुमसे और हेलासिंह से जब दोस्ती थी तब तुम किसके नौकर थे ?

भूत० । मुझसे और हेलासिंह से कभी दोस्ती थी ही नहीं ! मैं तो आपसे कैदखाने के अन्दर ही कह चुका हूँ कि राजा गोपालसिंह के छूटने के बाद मैंने उन कागजों का पता लगाया है जो इस समय मेरे ही साथ दुश्मनी कर रहे हैं और.....

जिन्न० । हाँ हाँ मुझे बखूबी याद है जो तुमने कहा था, अच्छा अब यह बताओ कि इस समय तुम कहाँ जाओगे और क्या करोगे ?

भूत० । मैं खुद नहीं जानता कि कहाँ जाऊँगा और क्या करूँगा बल्कि यह बात मैं आप ही से पूछने वाला था ।

जिन्न० । (ताज्जुब से) क्या तुम्हें मालूम नहीं है कि बलभद्रसिंह को किसने कैद किया और अब वह कहाँ हैं ?

भूत० । यह तो मैं जानता हूँ कि बलभद्रसिंह को मायारानी के दारोगा ने कैद किया था मगर यह नहीं मालूम कि इस समय वह कहाँ है ।

जिन्न० । अगर ऐसा ही है तो कमलिनी के तिलिस्मी मकान के बाहर तुमने तेजसिंह से क्यों कहा था कि मेरे साथ कोई चले तो मैं असली बलभद्रसिंह को दिखा दूँगा ? इस बात से तो तुम खुद झूठे साबित होते हो ।

भूत० । जी हाँ बेशक मैंने नादानी की जो ऐसा कहा मगर मुझे इस बात

का निश्चय हो चुका है कि बलभद्रसिंह अभी तक जीता है और उसे तिलिस्मी दारोगा ने कैद किया था।

जिन्न०। इसी से तो मैं पूछता हूँ कि अब तुम कहाँ जाओगे और क्या करोगे?

भूत०। अगर वह दारोगा मेरे काबू में होता तब तो मैं सहज ही में पता लगा लेता मगर मुझे उसके लिये बहुत कुछ उद्योग करना होगा तथापि इन समय मैं जमानिया में राजा गोपालसिंह के पास जाता हूँ यदि उन्होंने मेरी मदद की तो मैं अपना काम बहुत जल्द कर सकूँगा मगर आशा नहीं है कि वे मेरी मदद करेंगे क्योंकि जब वे मेरे मुकद्दमे का हाल सुनेंगे तो मुझको नालायक बनावेंगे। (कुछ सोच कर) अभी तक यह भी मुझे मालूम नहीं हुआ कि आप कौन हैं अगर जानता तो कहता कि राजा गोपालसिंह के नाम की आप एक चीठी लिख दें।

जिन्न०। मेरा परिचय तुम्हें सिवाय इसके और कुछ नहीं मिल सकता कि मैं जिन्न हूँ और हर जगह पहुँचने की ताकत रखता हूँ! खैर तुम राजा गोपालसिंह के पास जाओ और उनसे मदद माँगो, मैं तुम्हें एक सिफारिशी चीठी देता हूँ। तुम्हारे पास कागज कलम दावात है?

भूत०। जी हाँ मुझे आपकी कृपा से मेरा ऐयारी का बटुआ मिल गया है और उसमें सब सामान मौजूद है।

इतना कह कर भूतनाथ खड़ा हो गया और एक पेड़ के नीचे बैठने के लिये जिन्न को कहा मगर जिन्न ने ऐसा करने से इन्कार किया और आगे की तरफ इशारा कर के कहा, "उस पेड़ के नीचे चल कर हम ठहरेंगे क्योंकि वहाँ हमारा घोड़ा मौजूद है।"

थोड़ी ही देर में दोनों आदमी उस पेड़ के नीचे जा पहुँचे। भूतनाथ ने देखा कि कसे कसाये दो उम्दे घोड़े उस पेड़ की जड़ के साथ बागडोर के सहारे बंधे हैं और जिन्न ही की सूरत शक्ल चाल ढाल का एक आदमी उन दोनों घोड़ों के पास टहल रहा है जो जिन्न के वहाँ पहुँचते ही सलाम करके एक किनारे खड़ा हो गया। जिन्न ने भूतनाथ से कलम दावात और कागज ले कर कुछ लिखा और भूतनाथ को देकर कहा, "यह चीठी राजा गोपालसिंह को देना, बस अब तुम जाओ।" इतना कह कर जिन्न एक घोड़े पर सवार हो गया, जिन्न

ही की सूरत का दूसरा आदमी जो वहाँ मौजूद था दूसरे घोड़े पर सवार हो गया और भूतनाथ के देखते ही देखते दूर जा कर ये दोनों उसकी नजरों से गायब हो गये। भूतनाथ तरद्दुद और परेशानी के सबब से उदास और सुस्त हो रहा था इस लिये थोड़ी देर तक आराम करने की नीयत से उसी पेड़ के नीचे बैठ गया और उस पत्र को पढ़ने लगा जो जिन्न ने राजा गोपालसिंह के लिये लिख दिया था मगर हजार कोशिश करने पर भी उससे वह चीठी पढ़ी न गई क्योंकि सिवाय टेढ़ी और पेचीली लकीरों के किसी साफ अक्षर का उसके अंदर भूतनाथ को पता ही न लगा।

आधे घण्टे तक आराम करने बाद भूतनाथ उठ खड़ा हुआ और 'लामाघाटी' की तरफ रवाना हुआ।

पांचवां बयान

भूतनाथ अब बिल्कुल आजाद हो गया। इस समय उसकी ताकत उतनी ही है जितनी आज के दस दिन पहले थी और जितने आज के दस दिन पहिले उसके ताबेदार थे उतने ही आज भी हैं। पाठक जानते ही हैं कि भूतनाथ अकेला नहीं है, बल्कि लुटेरों की सूरत में बहुत से आदमी उसके नौकर भी हैं जो इधर उधर घूम फिर कर उसका काम किया करते हैं। भूतनाथ ने जब से नकली बलभद्रसिंह से यह सुना था कि "उसकी बहुत ही प्यारी चीज नकली बलभद्रसिंह के कब्जे में है जिसे वह लामाघाटी* में छोड़ आया था, तब से वह और भी परेशान हो गया था। वह बहुत प्यारी चीज क्या थी! बस वही उसकी स्त्री जिसके पेट से नानक पैदा हुआ था और जिसे उसने नागर की मेहरबानी से पुनः पा लिया था। वास्तव में भूतनाथ अपनी उस प्यारी स्त्री को लामाघाटी में छोड़ आया था।

भूतनाथ इस समय जमानिया जाने के बदले लामाघाटी हा की तरफ रवाना हुआ और तीसरे दिन सन्ध्या के समय उस घाटी में जा पहुँचा जिसे वह अपना घर समझता था।

---

* "लामाघाटी" एक पहाड़ी स्थान का नाम है।

यहाँ पर हम पाठकों के दिल में लामाघाटी की तस्वीर खैंच कर भूतनाथ की ताकत और उसके स्वभाव और खयालात का अन्दाजा करा देना मुनासिब समझते हैं। लामाघाटी में किसी अनजान आदमी का जाना बहुत कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव था। ध्यान शक्ति की सहायता से यदि आप वहाँ जायँ तो सब के पहिले एक छोटी सी पहाड़ी मिलेगी जिस पर चढ़ने के लिये एक बारीक पगडंडी दिखाई देगी। जब उस पगडंडी की राह से पहाड़ी के ऊपर चढ़ जायँगे तो तीन तरफ मैदान और पश्चिम तरफ केवल आध कोस की दूरी पर एक बहुत ऊँचा पहाड़ मिलेगा। उसके पास जाने पर मालूम होगा कि ऊपर चढ़ने के लिये कोई रास्ता या पगडंडी नहीं है और न पहाड़ के दूसरी तरफ घूम जाने का मौका है अस्तु राह खोजने की कोई आवश्यकता नहीं, आप उस पहाड़ी के नीचे पहुँच कर दाहिनी तरफ घूम जाइये और जब तक पानी का एक छोटा सा झरना आपको न मिले बराबर चले ही जाइये। वह दो तीन हाथ चौड़ा झरना आपका रास्ता काट के बहता होगा, उसे लाँघने की कोई आवश्यकता नहीं, आप बाईं तरफ आँख उठा कर देखेंगे तो बीस पचीस हाथ की ऊँचाई पर एक छोटी सी गुफा दिखाई देगी, आप बेधड़क उस गुफा में चले जाइये जिसके अन्दर बिल्कुल अन्धकार होगा और बनिस्बत बाहर के अन्दर गर्मी कुछ ज्यादे होगी। कोस भर तक बराबर उस गुफा के अन्दर ही अन्दर चलने बाद जब आप बाहर निकलेंगे तो एक हरा भरा छोटा सा मैदान नजर आवेगा। वह मैदान छोटे छोटे जंगली फूलों और लताओं से ऐसा भरा होगा कि दूर से देखने वालों को तो आनन्द मगर उसके अन्दर जाने वालों के लिये आफत समझिये। उसमें जाने वाला तीस चालीस कदम मुश्किल से जाने के बाद इस तरह फँस जायगा कि निकलना कठिन होगा। उस मैदान के किनारे किनारे दाहिनी तरफ और फिर बाईं तरफ घूम जाना होगा और जब आप पश्चिम और उत्तर के कोने में पहुँचेंगे तो और एक गुफा मिलेगी। आप उस गुफा के अन्दर चले जाइये, लगभग दो सौ कदम जाने बाद जब आप बाहर निकलेंगे तो अनगढ़ और मोटे मोटे पत्थर के ढोकों से बनी हुई एक दीवार मिलेगी जिसके बीचोबीच में एक बहुत बड़ा लकड़ी का दर्वाजा लगा है। यदि दर्वाजा खुला है तो आप दीवार के उस पार चले जाइये और एक पुरानी मगर बहुत बड़ी इमारत पर नजर डालिये। यद्यपि वह मकान बहुत

पुराना है और कई जगह से टूट भी गया है तथापि जो कुछ बचा है बहुत मजबूत और पचासों बरसात सहने योग्य है, जिसमें अब भी कई बड़े बड़े दालान और कोठरियाँ मौजूद हैं और उसी मकान वा स्थान का नाम 'लामाघाटी' है। भूतनाथ के आदमी या नौकर चाकर उसी मकान में रहते हैं और वह अपनी स्त्री को भी इसी जगह छोड़ गया था। उसके सिपाही जो सब बड़े ही दिमागदार बहादुर कटैर और साथ ही इसके ईमानदार भी थे गिनती में पचास से कम न थे और भूतनाथ के खजाने की हिफाजत बड़ी मुस्तैदी और नेकनियती के साथ करते थे तथा बड़े बड़े कठिन कामों को पूरा करने के लिये भूतनाथ की आज्ञा पाते ही मुस्तैद हो जाते थे। उसी मकान के चारो तरफ बहुत बड़ा मैदान छोटे छोटे जंगली खूबसूरत पौधों से हरा भरा बहुत ही खूबसूरत मालूम पड़ता था और उसके बाद भी चारो तरफ की पहाड़ियों के ऊपर जहाँ तक निगाह काम कर सकती थी छोटे छोटे खूबसूरत पेड़ दिखाई पड़ते थे।

भूतनाथ इसी लामाघाटी में पहुँचा। पहुँचने के साथ ही चारो तरफ से उसके आदमियों ने खुशी खुशी उसे घेर लिया और कुशल मंगल पूछने लगे। भूतनाथ सभों से हँस कर मिला और "हाँ सब ठीक है, बहुत अच्छा है, मेरा आना जिस लिये हुआ उसका हाल जरा ठहर कर कहूँगा!" इत्यादि कहता हुआ सीधा अपनी स्त्री के पास चला गया जो बहुत दिनों से उसे देखे बिना बेताब हो रही थी। हँसी खुशी से मिलने के बाद दोनों में यों बातचीत होने लगी—

स्त्री०। तुम बहुत दुबले और उदास मालूम पड़ते हो!

भूत०। हाँ इधर के कई दिन मुसीबत ही में कटे हैं।

स्त्री०। (चौंक कर) सो क्या, कुशल तो है?

भूत०। कुशल क्या, जान बच गई यही गनीमत है।

स्त्री०। सो क्या? क्या तुम्हारा भेद खुल गया?

भूत०। (ऊँची साँस ले कर) हाँ कुछ खुल ही गया!

स्त्री०। (हाथ मल कर) हाय हाय यह तो बड़ा ही गजब हुआ!

भूत०। बेशक गजब हो गया।

स्त्री०। फिर तुम बच कर कैसे निकल आये?

भूत० । ईश्वर ने एक सहायक भेज दिया जिसने अपनी जमानत पर महीने भर के लिये मुझे छुड़ा दिया ।

स्त्री० । तो क्या महीने भर के बाद तुम्हें हाजिर होना पड़ेगा ?

भूत० । हाँ ।

स्त्री० । किसके आगे ?

भूत० । राजा बीरेन्द्रसिंह के आगे ।

स्त्री० । राजा बीरेन्द्रसिंह से क्या सरोकार ? उनका तो तुमने कुछ भी नहीं बिगाड़ा था ?

भूत० । इतना ही तो कुशल है कि वह दूसरी जगह जाने के बदले सीधा लक्ष्मीदेवी के पास चला गया ।

स्त्री० । (चौक कर) हैं ! क्या लक्ष्मीदेवी जीती है ?

भूत० । हाँ जीती है । मुझे इस बात की खबर कुछ भी न थी कि कमलिनी के साथ जो तारा रहती है वह वास्तव में लक्ष्मीदेवी है मगर बालासिंह को यह बात मालूम हो गई थी इस लिये वह सीधे लक्ष्मीदेवी के पास चला गया । यदि मुझे पहिले लक्ष्मीदेवी की खबर लग गई होती तो आज मैं राजा बीरेन्द्रसिंह के आगे अपनी तारीफ सुनता होता ।

स्त्री० । तुम तो कहते थे कि बालासिंह मर गया !

भूत० । हाँ मैं ऐसा ही जानता था ।

स्त्री० । उसी ने तो तुम्हारी सन्दूकड़ी चुराई थी ?

भूत० । हाँ जब उसने सन्दूकड़ी चुराई थी तभी मैं अधमुआ हो चुका था मगर यह सुन कर कि वह मर गया, मैं निश्चिन्त भी हो गया था, परन्तु जिस समय वह यकायक मेरे सामने आ खड़ा हुआ मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ । उसके हाथ में वह गठड़ी उसी कपड़े में बंधी उसी तरह लटक रही थी जैसी तुम्हारे संदूक से चोरी गई थी और जिसे देखने के साथ ही मैं पहिचान गया । ओफ ! मैं नहीं कह सकता कि उस समय मेरी क्या हालत थी । मेरे हवास दुरुस्त न थे और मैं अपने को जिन्दा नहीं समझता था । इस बात के दो ही चार दिन पहिले जब मैं राजा गोपालसिंह के साथ किशोरी और कामिनी को कमलिनी के मकान में पहुँचाने गया था तो उस समय तारा पर मुझे शक हो गया था मगर

अपनी भलाईका कोई दूसरा ही रास्ता सोचकर मैं उस समय चुप रहा, परन्तु जिस समय बालासिंह से यकायक मुलाकात हो गई और उसने उस गठड़ी की तरफ इशारा करके मुझसे कहा कि इसमें सोहागिन तारा की किस्मत बन्द है उसी समय मुझे विश्वास हो गया कि तारा वास्तव में लक्ष्मीदेवी है और वह कागज का मुट्ठा भी इसी ने चुरा लिया है जिसे मैंने बड़ी मेहनत से बटोर कर नकल कर रक्खा था। मैं उस समय बदहवास हो गया और अफसोस करने लगा कि जिन कागजों से मैं फायदा उठाने वाला था वे ही कागज अब मुझे चौपट करेंगे क्योंकि वह उन्हीं कागजों से मुझी को दोषी ठहराने का उद्योग करेगा। यदि वह सन्दूकची उसके पास न होती तो मैं हताश न होता और कोई बन्दोबस्त करता परन्तु उस सन्दूकड़ी के खयाल ही से मैं पागल हो गया, और उस समय तो मैं बिलकुल ही मुर्दा हो गया जब उसकी बेगम पर मेरी निगाह पड़ी।

स्त्री०। (चौंक कर) क्या बेगम भी जीती है?

भूत०। हाँ उस समय वह उसके साथ ही और थोड़ी ही दूर पर एक झाड़ी के अन्दर छिपी हुई थी।

स्त्री०। यह बड़ा ही अँधेर हुआ, अगर तुम्हें मालूम होता कि वह जीता है तो तुम अपना नाम भूतनाथ काहे को रखते!

भूत०। नहीं, अगर मुझे उसके मरने में कुछ भी शक होता तो मैं अपना नाम भूतनाथ न रखता। केवल इतना ही नहीं, उसने तो मुझे उस समय एक ऐसी बात कही कि जिससे बची बचाई जान भी निकल गई और मैं ऐसा कमजोर हो गया कि उसके साथ लड़ने योग्य भी न रहा।

स्त्री०। सो क्या?

भूत०। उसने तुम्हारी तरफ इशारा करके मुझसे कहा कि तुम्हारी बहुत ही प्यारी चीज मेरे कब्जे में है जो तुम्हारे बाद बड़ी तकलीफ में पड़ जायगी और जिसे तुम लामाघाटी में छोड़ आये थे—और यही सबब है कि छूटने के साथ ही सब के पहिले मैं इसी तरफ आया मगर ईश्वर को धन्यवाद देता हूँ कि तुम उस शैतान के हाथ से बची रहीं और तुम्हें मैं इस जगह राजी खुशी देख रहा हूँ।

स्त्री०। उसकी क्या मजाल कि यहाँ आ सके, उसे स्वप्न में भी यहाँ का रास्ता मालूम नहीं हो सकता!

भूत० । सो तो मैं समझता हूँ परन्तु 'लामाघाटी' का नाम लेने से मुझे उसकी बात पर विश्वास हो गया, मैंने सोचा कि यदि वह लामाघाटी तक न गया होता तो लामाघाटी का नाम भी उसे मालूम न होता और उ.....

स्त्री० । नहीं नहीं, लामाघाटी का नाम किसी दूसरे ही सबब के उसे मालूम हो गया होगा ।

भूत० । बेशक ऐसा ही है, खैर तुम्हारी तरफ से तो मैं निश्चिन्त हो गया मगर अब अपनी जान बचाने के लिए मुझे असली बलभद्रसिंह का पता लगाना चाहिये ।

स्त्री० । अब तुम अपना खुलासा हाल उस दिन से कह जाओ जिस दिन से तुम मुझसे जुदा हुए हो ।

भूतनाथ ने अपना कुल हाल अपनी स्त्री को कह सुनाया और इसके बाद थोड़ी देर तक बातचीत करके बाहर निकल आया । एक दालान में जिसमें सुन्दर बिछावन बिछा हुआ था और रोशनी बखूबी हो रही थी, उसके संगी साथी या सिपाही सब बैठे उसके आने की राह देख रहे थे । भूतनाथ के आते ही वे सब अदब के तौर पर उठ खड़े हुए तथा बैठने बाद उसकी आज्ञा पाकर बैठ गये और बातचीत होने लगी ।

भूत० । कहो तुम लोग अच्छे तो हो ?

सब० । जी आपके अनुग्रह से हम लोग अच्छे हैं ।

भूत० । ऐसा ही चाहिये ।

एक० । आप इतने दुबले और उदास क्यों हो रहे हैं ?

भूत० । मैं एक भारी आफत में फँस गया था बल्कि अभी तक फँसा ही हुआ हूँ ।

सब० । सो क्या, सो क्या ?

भूत० । मैं तुमसे सब कुछ कहता हूँ क्योंकि तुम लोग मेरे खैरख्वाह हो और मुझे तुम लोगों का बहुत सहारा रहता है ।

सब० । हम लोग आपके ताबेदार और एक अदने इशारे पर जान देने के लिये तैयार हैं, औरों की तो दूर रहे खास राजा बीरेन्द्रसिंह से भिड़ जाने की हिम्मत रखते हैं ।

भूत०। बेशक ऐसा ही है और इसी लिये मैं कोई बात तुम लोगों से नहीं छिपाता।

इतना कहकर भूतनाथ ने अपना हाल कहना आरम्भ किया। जो कुछ अपनी स्त्री से कह चुका था वह तथा और भी बहुत सी बातें उसने उन लोगों से कहीं और इसके बाद कई बहादुरों को कई तरह के काम करने की आज्ञा दे पुनः अपने स्त्री के पास चला गया।

दूसरे दिन सवेरे जब भूतनाथ बाहर आया तब मालूम हुआ कि उसके बहादुर सिपाहियों में से चालीस आदमी उसकी आज्ञानुसार 'लामाघाटी' के बाहर जा चुके हैं। भूतनाथ भी वहाँ से रवाना होने के लिये तैयार था और अपनी स्त्री से बिदा होकर बाहर निकला था, अस्तु वह भी एक आदमी को साथ लेकर चल पड़ा और दो ही घंटे बाद 'लामाघाटी' के बाहर मैदान में जमानिया की तरफ जाता हुआ दिखाई देने लगा।

छठवां बयान

जो कुछ हम ऊपर लिख आये हैं उसके कई दिन बाद जमानिया में दोपहर दिन के समय जब राजा गोपालसिंह भोजन इत्यादि से छुट्टी पाकर अपने कमरे में चारपाई पर लेटे हुए एक एक करके बहुत सी चीठियों को पढ़ पढ़ कर कुछ सोच रहे थे उसी समय चोबदार ने भूतनाथ के आने की इत्तिला की। गोपालसिंह ने भूतनाथ को अपने सामने हाजिर करने की आज्ञा दी। भूतनाथ हाजिर हुआ और सलाम कर के चुपचाप खड़ा हो गया। उस समय वहाँ पर इन दोनों के सिवाय और कोई न था।

गोपाल०। कहो भूतनाथ, अच्छे तो हो! इतने दिनों तक कहाँ थे और क्या करते थे?

भूत०। आपसे बिदा होकर मैं बड़ी मुसीबत में पड़ गया।

गोपाल० सो क्या?

भूत०। कमलिनीजी के मकान की बर्बादी का हाल तो आपको मालूम हुआ ही होगा।

गोपाल० । हाँ मैं सुन चुका हूँ कि कमलिनी के मकान को दुश्मनों ने उजाड़ कर दिया और उसके यहाँ जो कैदी थे वे भाग गये ।

भूत० । ठीक है, तो क्या आप किशोरी कामिनी और तारा का हाल भी सुन चुके हैं जो उस मकान में थीं ?

गोपाल० । उसका खुलासा हाल तो मुझे मालूम नहीं हुआ मगर इतना सुन चुका हूँ कि अब वे सब कमलिनी के साथ रोहतासगढ़ में जा पहुँची हैं ।

भूत० । ठीक है मगर उन पर कैसी मुसीबत आ पड़ी थी उसका हाल आपको शायद मालूम नहीं हुआ ।

गोपाल० । नहीं, बल्कि उसका खुलासा हाल दरियाफ्त करने के लिये मैंने एक आदमी रोहतासगढ़ में ज्योतिषीजी के पास भेजा है और एक पत्र भी लिखा है मगर अभी तक जवाब नहीं आया । तो क्या कमलिनी के साथ तुम भी वहाँ गये थे ?

भूत० । जी हाँ मैं कमलिनी जी के साथ था ।

गोपाल० । तब तो मुझे सब खुलासा हाल तुम्हारी ही जुबानी मालूम हो सकता है, अच्छा कहो कि क्या क्या हुआ ?

भूत० । मैं सब हाल आपसे कहता हूँ और इसीके बीच में अपनी तबाही और बर्बादी का हाल भी कहता हूँ ।

इतना कह के भूतनाथ ने किशोरी कमलिनी लक्ष्मीदेवी भगवनिया श्याम-सुन्दरसिंह और बलभद्रसिंह का कुल हाल जो ऊपर लिखा जा चुका है कहा और इसके बाद रोहतासगढ़ किले के अन्दर जो कुछ हुआ था और कृष्णाजिन्न ने जो कुछ काम किया था वह सब भी कहा ।

पलँग पर पड़े पड़े राजा गोपालसिंह भूतनाथ की कुल बातें सुन गए और जब वह चुप हो गया तो उठ कर एक ऊँची गद्दी पर जा बैठे जो पलँग के पास ही बिछी हुई थी । थोड़ी देर तक कुछ सोचने के बाद वे बोले, "हाँ तो इस ढंग से मालूम हुआ कि तारा वास्तव में लक्ष्मीदेवी है ।"

भूत० । जी हाँ और मुझे इस बात की कुछ भी खबर न थी ।

गोपाल० । यह हाल बड़ा ही दिलचस्प है ! अच्छा कृष्णाजिन्न की चीठी मुझे दो, मैं देखूँ ।

भूत० । (चीठी देकर) आशा है कि इसमें कोई बात मेरे विरुद्ध लिखी हुई न होगी ।

गोपाल० । (चीठी देख कर) नहीं इसमें तो तुम्हारी सिफारिश की है और मुझे मदद देने के लिये लिखा है ।

भूत० । कृष्णाजिन्न को आप जानते हैं ?

गोपाल० । वह मेरा दोस्त है, लड़कपन ही से मैं उसे जानता हूँ, उसे मेरे कैद होने की कुछ भी खबर न थी, पाँच सात दिन हुए हैं जब मुबारकबाद देने के लिये मेरे पास आया था ।

भूत० । तो मैं उम्मीद करता हूँ कि इस काम में आप मेरी मदद करेंगे ?

गोपाल० । हाँ हाँ मैं इस काम में हर तरह से मदद देने के लिये तैयार हूँ क्योंकि यह काम वास्तव में मेरा ही काम है मगर मेरी समझ में नहीं आता कि मैं क्या मदद कर सकूँगा क्योंकि मुझे इन बातों की कुछ भी खबर न थी और न है।

भूत० । जिस तरह की मदद मैं चाहता हूँ अर्ज करूँगा मगर उसके पहिले यह जानना चाहता हूँ कि क्या आप राजा बीरेन्द्रसिंह और कमलिनी इत्यादि से मिलने के लिये रोहतासगढ़ जायँगे ?

गोपाल० । जब तक राजा बीरेन्द्रसिंह मुझे न बुलावेंगे मैं अपनी मर्जी से न जाऊँगा और न मुझे कमलिनी या लक्ष्मीदेवी से मिलने की जल्दी ही है, जब तुम्हारा मुकदमा फैसला हो जायगा तब जैसा होगा देखा जायगा ।

गोपालसिंह की बात सुन कर भूतनाथ को बड़ा ताज्जुब हुआ क्योंकि लक्ष्मी-देवी की खबर सुन कर न तो उनके चेहरे पर किसी तरह की खुशी दिखाई दी और न बलभद्रसिंह का हाल सुन कर उन्हें कुछ रंज ही हुआ । कमरे के अन्दर पैर रखते ही भूतनाथ ने जिस शान्त भाव में उन्हें देखा था वैसी ही सूरत में अब भी देख रहा था । आखिर बहुत कुछ सोचने विचारने के बाद भूतनाथ ने कहा, "आपने खास बाग में मायारानी के कमरे की तलाशी ली थी ?"

गोपाल० । तुम भूलते हो, खास बाग के किसी कमरे या कोठरी की तलाशी लेने से कोई काम नहीं चल सकता । या तो तुम हेलासिंह के किसी पक्षपाती को जो उस काम में शरीक रहा हो गिरफ्तार करो और या फिर दारोगा कम्बख्त को

दुःख देकर पूछो, मगर अफसोस इतना ही है कि दारोगा राजा बीरेन्द्रसिंह के कब्जे में है और उसके विषय में उनको कुछ लिखना मैं पसन्द नहीं करता।

गोपालसिंह की इस बात से भूतनाथ को और भी आश्चर्य हुआ और उसने कहा, "तलाशी से मेरा और कोई मतलब नहीं है, मुझे ठीक पता लग चुका है कि मायारानी के पास तस्वीरों की एक किताब थी और उसमें उन लोगों की तस्वीरें भी थीं जो इस काम में उसके मददगार थे, बस मेरा मतलब उसी किताब के पाने से है और कुछ नहीं।"

गोपाल०। हाँ ठीक है, मुझे इस प्रकार की एक किताब मिली थी मगर उस समय मैं बड़े क्रोध में था इसलिए कम्बख्त नकली मायारानी का असबाब कपड़ा लत्ता इत्यादि जो कुछ मेरे हाथ लगा उसी में उस तस्वीर वाली किताब को भी रखकर मैंने आग लगा दी, मगर अब मुझे यह जान कर अफसोस होता है कि वह किताब मेरे मतलब की थी!

अब भूतनाथ को निश्चय हो गया कि राजा गोपालसिंह उससे बहाना करते हैं और कोई मदद करना नहीं चाहते। तब क्या करना चाहिये? इसके लिए वह सिर झुकाये हुए कुछ सोच रहा था कि राजा गोपालसिंह ने पुनः कहा—

गोपाल०। मगर भूतनाथ, मुझे याद पड़ता है कि उस तस्वीर वाली किताब में तुम्हारी तस्वीर भी थी!!

भूत०। शायद हो।

गोपाल०। खैर अब तो वह किताब ही जल गई, उसके बारे में कुछ कहना वृथा है!!

भूत०। (उदासी के साथ) मेरी किस्मत! मैं लाचार मेरी मदद के लिए बस केवल एक वही किताब थी जिसे पाने की उम्मीद में मैं आपके पास आया था खैर अब जाता हूँ, जो कुछ हैरानी बदी है उसे उठाऊँगा और जिस परह बनेगा असली बलभद्रसिंह का पता लगाऊँगा।

गोपाल०। मैं जानता हूँ कि इस समय जमानिया के बाहर होकर तुम कहाँ जाओगे और क्या करोगे?

भूत०। (ताज्जुब से) वह क्या?

गोपाल०। काशी में मनोरमा का मकान तुम्हारा सबसे पहिला ठिकाना होगा।

भूत० । बस बस, ठीक है, आपने खूब समझा, अब मुझे विश्वास हो गया कि इस काम में आप मेरी बहुत कुछ मदद कर सकते हैं मगर आश्चर्य है कि किसी तरह की सहायता नहीं करते !!

गोपाल० । खैर अब हम तुमसे साफ साफ कह देना अच्छा समझते हैं। कृष्णाजिन्न से और मुझसे निःसन्देह दोस्ती थी और वह अब भी मुझ से प्रेम रखता है मगर किसी कारण से मेरी तबीयत उससे खट्टी हो गई और मैं कसम खा चुका हूँ कि जिस काम में वह पड़ेगा उसमें मैं दखल न दूँगा चाहे वह काम मेरे ही फायदे का क्यों न हो और मदद न देने के सबब से मेरा कितना ही बड़ा नुकसान क्यों न हो या मेरी जान ही क्यों न चली जाय। बस यही सबब है कि मैं तुम्हारी मदद नहीं करता।

भूत० । (कुछ सोच कर) अच्छा तो फिर मुझे आज्ञा दीजिये कि जाऊँ और बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिये उद्योग करूँ।

गोपाल० । जाओ, ईश्वर तुम्हारी मदद करे।

भूतनाथ सलाम कर के कमरे के बाहर चला गया। उसके जाने बाद गोपालसिंह को हँसी आई और उन्होंने आप ही आप धीरे से कहा, "इसने जरूर सोचा होगा कि गोपालसिंह पूरा बेवकूफ या पागल है !!"

भूतनाथ महल की ड्योढ़ी पर आया जहाँ अपने साथी को छोड़ गया था और उसे साथ लेकर शहर के बाहर निकल गया। जब वे दोनों आदमी मैदान में पहुँचे जहाँ चारो तरफ सन्नाटा था तो भूतनाथ के साथी ने पूछा, "कहिये गोपालसिंह की मुलाकात का क्या नतीजा निकला ?"

भूत० । कुछ भी नहीं, मैं व्यर्थ ही यहाँ आया !

आदमी० । सो क्यों ?

भूत० । उन्होंने किसी प्रकार की मदद देने से इन्कार किया।

आदमी० । बड़े आश्चर्य की बात है ! यह काम तो वास्तव में उन्हीं का है।

भूत० । सब कुछ है मगर.....

आदमी० । क्या लक्ष्मीदेवी का पता लगने से खुश नहीं हैं।

भूत० । मेरी समझ में कुछ नहीं आया कि खुश हैं वा नाराज, न तो उनके

चेहरे पर किसी तरह की खुशी दिखाई दी न रंज। हँसना तो दूर रहा लक्ष्मीदेवी बलभद्रसिंह मायारानी और जिन्न का किस्सा सुन कर वे मुसकुराये भी नहीं, यद्यपि कई बातें ऐसी थीं कि जिन्हें सुन कर उन्हें अवश्य हँसना चाहिये था।

आदमी०। क्या उनके मिजाज में कुछ फर्क पड़ गया है?

भूत०। मालूम तो ऐसा ही होता है! बल्कि मैं तो समझता हूँ कि वे पागल हो गये हैं। मैंने उनसे पूछा कि राजा बीरेन्द्रसिंह या लक्ष्मीदेवी से मिलने के लिये आप रोहतासगगढ़ जायँगे? तो उन्होंने कहा, "नहीं, जब तक राजा बीरेन्द्रसिंह न बुलावेंगे न जाऊँगा!" भला यह भी कोई बुद्धिमानी की बात है!!

आदमी०। मालूम होता है वह सनक गये हैं!

भूत०। या तो वह सनक गये हैं या फिर कोई धूर्तता करना चाहते हैं। खैर जाने दो, इस समय तो भूतनाथ स्वतन्त्र है फिर जो कुछ होगा देखा जायगा। अब मुझे एक ठिकाने बैठ कर अपने आदमियों का इन्तजार करना चाहिये।

आदमी०। हाँ उसी कुटी में चलिये किसी न किसी से मुलाकात हो ही जायगी।

भूत०। (हँसकर) अच्छा देखो तो सही भूतनाथ क्या करता है और कैसे कैसे खेल तमाशे दिखाता है!!

सातवां बयान

अब हम थोड़ासा हाल लक्ष्मीदेवी की शादी का लिखना आवश्यक समझते हैं।

जब लक्ष्मीदेवी की माँ जहरीली मिठाई के असर से मर गई (जैसा कि ऊपर के लेखों से हमारे पाठकों को मालूम हुआ होगा) तब लक्ष्मीदेवी की सगी मौसी जो बिधवा थी और अपने ससुराल में रहा करती थी बुला ली गई और उसने बड़े लाड़ प्यार से लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली की परवरिश शुरू की और बड़ी दिलजमई तथा दिलासे से उन तीनों को रखने लगी। परन्तु बलभद्रसिंह अपनी स्त्री के मरने से बहुत ही उदास और विरक्त हो गये थे। उनका दिन गृहस्थी तथा व्यापार की तरफ नहीं लगता था और वे दिन रात इसी विचार में पड़े रहते थे कि किसी तरह तीनों लड़कियों की शादी हो जाय और वे सब अपने अपने ठिकाने

पहुँच जायँ तो उत्तम हो। लक्ष्मीदेवी की बातचीत तो राजा गोपालसिंह के साथ हो ही चुकी थी परन्तु कमलिनी और लाडिली के विषय में अभी कुछ निश्चय नहीं हो पाया था।

लक्ष्मीदेवी की माँ को मरे जब लगभग सोलह महीने के हो चुके तब उसकी शादी का इन्तजाम होने लगा। उधर राजा गोपालसिंह और इधर बलभद्रसिंह तैयारी करने लगे। यह बात पहिले ही से तै पा चुकी थी कि राजा गोपालसिंह बारात सजाकर बलभद्रसिंह के घर न आवेंगे बल्कि बलभद्रसिंह को अपनी लड़की उनके घर ले जा कर ब्याह देनी होगी, और आखिर ऐसा ही हुआ।

सावन का महीना और कृष्णपक्ष की एकादशी का दिन था जब बलभद्रसिंह अपनी लड़की को लेकर जमानिया पहुँचे। उसके दूसरे या तीसरे दिन शादी होने वाली थी और उधर कम्बख्त दारोगा ने गुप्त रीति से हेलासिंह और उसकी लड़की मुन्दर को बुला कर अपने मकान में छिपा रक्खा था। बलभद्रसिंह और दारोगा से दोस्ती थी और बलभद्रसिंह दारोगा का बड़ा विश्वास करते थे, मगर अफसोस, रुपया जो चाहे सो करावे! इसकी ठंढी आँच का बरदाश्त करना किसी ऐसे वैसे दिल का काम नहीं, इसके सबब से बड़े बड़े मजबूत कलेजे हिल जाते हैं और पाप और पुण्य के विचार को तो यह इस तरह से उड़ा देता है जैसे गन्धक का धुआँ कनेर पुष्प के लाल रंग को। यद्यपि दारोगा और बलभद्रसिंह से दोस्ती थी परन्तु हेलासिंह के दिखाए हुए सब्ज बाग ने उसे ईश्वर और धर्म की तरफ कुछ भी विचार करने न दिया और वह बड़ी दृढ़ता के साथ विश्वासघात करने के लिए तैयार हो गया।

बलभद्रसिंह अपनी लड़की तथा कई नौकरों और सिपाहियों को ले कर जमानिया में पहुँचे और एक किराये के बाग में डेरा डाला जो कि दारोगा ने उनके लिये पहिले ही से ले रक्खा था। जब हर तरह का सामान ठीक हो गया तो उन्होंने दोस्ती के ढंग पर दारोगा को अपने पास बुलाया और उन चीजों को दिखाया जो शादी के लिये बन्दोबस्त कर अपने साथ ले आये थे। उन कपड़ों और गहनों को भी दिखाया जो अपने दामाद को देने के लिये लाये थे, फिहरिस्त के सहित वे चीजें उसके सामने रक्खीं जो दहेज में देने के लिये थीं, और सबके

अन्त में वे कपड़े भी दिखाये जो शादी के समय अपनी लड़की लक्ष्मीदेवी को पहिराने के लिये तैयार करा लाये थे। दारोगा ने दोस्ताने ढंग पर एक एक करके सब चीजों को देख और तारीफ करता गया मगर सब से ज्यादे देर तक जिन चीजों पर उसकी निगाह ठहरी वह शादी के समय पहिराये जाने वाले लक्ष्मीदेवी के कपड़े थे। दारोगा ने उन कपड़ों को उससे भी ज्यादे बारीक निगाह से देखा जिस निगाह से कि रेहन रखने वाला कोई चालाक बनिता उन्हें देखता और जाँच करता।

दारोगा अकेला बलभद्रसिंह के पास नहीं आया था बल्कि अपने नौकर सिपाहियों के साथ जिनको वह दर्वाजे ही पर छोड़ आया था और भी दो आदमियों को लाया था जिन्हें बलभद्रसिंह नहीं पहिचानते थे और दारोगा ने जिन्हें अपना दोस्त कह कर परिचय दिया था। इस समय उन दोनों ने भी उन कपड़ों को अच्छी तरह देखा जिनके देखने में दारोगा ने अपने समय का बहुत बड़ा हिस्सा नष्ट किया था।

थोड़ी देर तक गपशप और तारीफ करने के बाद दारोगा उठ कर अपने घर चला आया। यहाँ उसने सब हाल हेलासिंह से कहा और यह भी कहा कि मैं दो चालाक दर्जियों को अपने साथ लिये गया था जिन्होंने वे कपड़े बहुत अच्छी तरह देख भाल लिये हैं जो लक्ष्मीदेवी को विवाह के समय पहिराये जाने वाले हैं और उन दर्जियों को ठीक उसी तरह के कपड़े तैयार कर के लाने के लिये आज्ञा दे दी गई है, इत्यादि।

जिस दिन शादी होनेवाली थी, केवल रात ही अन्धेरी न थी बल्कि बादल भी चारो तरफ से इतना घिर आये थे कि हाथ को हाथ नहीं दिखाई देता था। व्याह का काम उसी खास बाग में ठीक किया गया था जिसमें मायारानी के रहने का हाल हम कई मर्तबे लिख चुके हैं। इस समय इस बाग का बहुत बड़ा हिस्सा दारोगा ने शादी का सामान वगैरह: रखने के लिये अपने कब्जे में कर लिया था जिसमें कई दालान कोठड़ियाँ कमरे और तहखाने भी थे और साथ साथ हेलासिंह की लड़की मुन्दर को लौंडियों के कपड़े पहिना कर और लौंडियों के झुण्ड में मिला कर पहिले ही से बाग के अन्दर कर लिया और एक तहखाने में छिपा रक्खा था।

कन्यादान का समय तीन पहर रात बीते पण्डितों ने निश्चय किया था

और जो पण्डित विवाह कराने वालों का मुखिया था उसे दारोगा ने पहिले ही मिला लिया था। दो पहर रात बीतने के पहिले ही लक्ष्मीदेवी को साथ लिये हुए बलभद्रसिंह बाग के अन्दर कर लिये गये और विवाह का कार्य्य आरम्भ कर दिया गया। बाग का जो हिस्सा दारोगा ने अपने अधिकार में कर रक्खा था उसमें एक सुन्दर सजी हुई कोठरी भी थी जिसके नीचे एक तहखाना था। दारोगा की इच्छा से गोपालसिंह के कुलदेवता का स्थान उसी में नियत किया गया और उसके नीचे वाले तहखाने में दारोगा ने हेलासिंह की लड़की सुंदर को ठीक वैसे ही कपड़े पहिना कर छिपा रक्खा था जैसे कि बलभद्रसिंह ने अपनी लड़की लक्ष्मी-देवी के लिये बनवाए थे और जिसे चालाक दर्जियों के सहित दारोगा अच्छी तरह देख आया था।

बलभद्रसिंह का दोस्त केवल दारोगा ही न था बल्कि दारोगा के गुरुभाई इन्द्र-देव से भी उनकी मित्रता थी और उन्हें निश्चय था कि इस विवाह में इन्द्रदेव भी अवश्य आवेंगे क्योंकि राजा गोपालसिंह भी इन्द्रदेव को मानते और उनकी इज्जत करते थे परन्तु बलभद्रसिंह को बड़ा ही आश्चर्य हुआ जब विवाह का समय निकट होने पर भी उन्होंने इन्द्रदेव को वहाँ न देखा। जब उन्होंने दारोगा से पूछा तो दारोगा ने इन्द्रदेव की चीठी दिखाई जिसमें यह लिखा था कि मैं बीमार हूँ इसलिये विवाह में उपस्थित नहीं हो सकता और इस लिये आपसे तथा राजा साहब से क्षमा माँगता हूँ।

जब कन्यादान हो गया तो पण्डित की आज्ञानुसार लक्ष्मीदेवी को लिये हुए राजा गोपालसिंह उस कोठरी में आये जहाँ कुलदेवता का स्थान बनाया गया था और वहाँ भी पण्डित ने कई तरह की पूजा कराई। इसके बाद पण्डित की आज्ञा-नुसार लक्ष्मीदेवी को वहीं छोड़ राजा गोपालसिंह उस कोठरी से बाहर आये और वे लौंडियाँ भी बाहर कर दी गईं जो लक्ष्मीदेवी के साथ थीं। उसी समय पानी बड़े जोर से बरसने लगा और हवा बड़ी तेज चलने लगी, इस सबब से जितने आदमी वहाँ थे सब छितर बितर हो गये, जिसको जहाँ जगह मिली वहाँ जा घुसा। दारोगा तथा पण्डित की आज्ञानुसार बलभद्रसिंह पालकी में सवार हो अपने डेरे की तरफ रवाने हुए, इधर गोपालसिंह दूसरे कमरे में जाकर गद्दी पर बैठ रहे और रण्डियों का नाच शुरू हुआ। जितने आदमी उस बाग में थे उसी

महफिल की तरफ जा पहुँचे और नाच देखने लगे और उस समय दारोगा को अपना काम करने का मौका मिला। वह उस कोठरीमें घुसा जिसमें लक्ष्मीदेवी थी, उसे पूजा करने के बहाने से तहखाने के अन्दर ले गया और तहखाने में से मुंदर को लाकर लक्ष्मीदेवी की जगह बैठा दिया। उस समय लक्ष्मीदेवी को भी मालूम हो गया कि उसके साथ चालाकी खेली गई और बदकिस्मती ने आकर उसे घेर लिया! यद्यपि बहुत चिल्लाई और रोई मगर उसकी आवाज तहखाने और कोठरी को छेद कर उन लोगों के कानों तक न पहुँच सकी जो कोठरी के बाहर दालान में पहरा दे रहे थे या महफिल में बैठे रण्डी का नाच देख रहे थे। तहखाने के अन्दर से एक रास्ता बाग के बाहर निकल जाने का था जिसके खुले रहने का इन्तजाम दारोगा ने पहिले ही से कर रक्खा था और उसके आदमी गुप्त रीति से बाहरी दर्वाजे के आस पास मौजूद थे। दारोगा ने लक्ष्मीदेवी के मुँह में कपड़ा ठूँस कर उसे हर तरह से लाचार कर दिया और इस सुरंग की राह बाग के बाहर पहुँचा अपने आदमियों के हवाले कर दर्वाजा बन्द करता हुआ लौट आया। घंटे ही भर के बाद लक्ष्मीदेवी ने अपने को अजायबघर की एक कोठरी में बन्द पाया और वहीं यह हाल भी उसके सुनने में आया कि बलभद्रसिंह पर जो पानी बरसते में अपने डेरे की तरफ जा रहे थे रास्ते में डाकुओं ने छापा मारा और उन्हें गिरफ्तार कर ले गए। जब यह खबर राजा गोपालसिंह के कान में पहुँची महफिल बरखास्त की गई। अकेली लक्ष्मीदेवी (मुन्दर) महल के अन्दर पहुँचाई गई और राजा साहब की आज्ञानुसार सैकड़ो आदमी बलभद्रसिंह की खोज में रवाने हो गए। उस समय पानीका बरसना बन्द हो गया था और सुबह की सुफेदी आसमान पर अपना दखल जमा चुकी थी। राजा साहब के आदमियों ने दो दिन तक बलभद्रसिंह को खोजने के लिए बहुत कुछ उद्योग किया मगर कुछ काम न चला अर्थात् बलभद्रसिंह का पता न लगा और पता लगता भी क्योंकर? असल तो यह है कि बलभद्रसिंह भी दारोगा के कब्जे में पड़ कर अजायबघर में पहुँच चुके थे।

बलभद्रसिंह पर डाका पड़ने और उनके गायब होने का हाल लेकर जब उनके आदमी लोग घर पहुँचे तो वहाँ हाहाकार मच गया। कमलिनी लाडिली और उनकी मौसी रोते रोते बेहाल थीं मगर क्या हो सकता था, अगर कुछ हो सकता

था तो केवल इतना ही कि थोड़े दिन में धीरे धीरे गम कम होकर केवल कहने सुनने के लिये रह जाता और माया के फेर में पड़े हुए जीव अपने अपने काम धन्धे में लग जाते। खैर इस पचड़े को छोड़कर हम बलभद्रसिंह और लक्ष्मीदेवी का हाल लिखते हैं जिससे हमारे किस्से का बड़ा भारी सम्बन्ध है।

दारोगा की यह नीयत नहीं थी कि लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह उसके कैद में रहें बल्कि वह यह चाहता था कि महीने बीस दिन के बाद जब हो हल्ला कम हो जावे और वे लोग अपने अपने घर चले जावें जो विवाह के न्योते में आये हैं तो इन दोनों को मार कर टंटा ही मिटा दिया जावे परन्तु ईश्वर की मर्जी कुछ और ही थी। वह चाहता था कि लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह जीते रहकर बड़े बड़े कष्ट भोगें और मुद्दत तक मुर्दों से बदतर बने रहें, क्योंकि थोड़े ही दिन बाद दारोगा की राय बदल गई और उसने लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह को हमेशे के लिये कैद में रखना उचित समझा। उसे निश्चय हो गया कि हेलासिंह बड़ा ही बदमाश और शैतान आदमी है और मुन्दर भी सीधी औरत नहीं है, अतएव आश्चर्य नहीं कि लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह के मरने बाद वे दोनों बेफिक्र हो जावें और यह समझ कर कि अब दारोगा हमारा कुछ नहीं कर सकता मुझे दूध की मक्खी की तरह निकाल बाहर करें तथा जो कुछ देने का वादा कर चुके हैं उसके बदले में अँगूठा दिखा दें। उसने सोचा कि यदि लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह मेरी कैद में बने रहेंगे तो हेलासिंह और मुन्दर भी कब्जे के बाहर न जा सकेंगे, वे समझेंगे कि अगर दारोगा से बेमुरौवती की जावेगी तो वह तुरत बलभद्रसिंह और लक्ष्मीदेवी को प्रगट कर देगा और खुद राजा का खैरखाह बना रहेगा, उस समय लेने के देने पड़ जायँगे, इत्यादि।

वास्तव में दारोगा का ख्याल बहुत ठीक था। हेलासिंह यही चाहता था कि दारोगा किसी तरह लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह को खपा डाले तो हम लोग निश्चिन्त हो जायँ मगर जब उसने देखा कि दारोगा ऐसा नहीं करेगा तो लाचार चुप हो रहा। दारोगा ने हेलासिंह के साथ ही साथ मुन्दर को भी यह कह रक्खा था कि देखो बलभद्रसिंह और लक्ष्मीदेवी मेरे कब्जे में हैं, जिस दिन तुम मुझ से बेमुरौवती करोगी या मेरे हुक्म से सर फेरोगी उसी दिन मैं लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह को प्रकट कर के तुम दोनों को जहन्नुम में मिला दूँ

इसमें सन्देह नहीं कि इनको कैद में रख कर के दारोगा ने बहुत दिनों तक फायदा उठाया और मालामाल हो गया, मगर साथ ही इसके मुन्दर की शादी के महीने ही भर बाद उसकी चालाकियों ने लोगों को यह भी विश्वास दिला दिया कि बलभद्रसिंह डाकुओं के हाथ मारा गया। यह खबर जब बलभद्रसिंह के घर पहुँची तो उसकी साली और दोनों लड़कियों के रंज का हद्द न रहा। बरसों बीत जाने पर भी उनकी आँखें सदा तर रहा करती थीं, मगर मुंदर जो अब लक्ष्मीदेवी के नाम से मशहूर हो रही थी लोगों को यह विश्वास दिलाने के लिए कि मैं वास्तव में कमलिनी और लाडिली की बहिन हूँ उन दोनों के पास हमेशः तोहफा और सौगात भेजा करती थी और कमलिनी और लाडिली भी जो यद्यपि बिना माँ बाप की हो गई थीं परन्तु अपनी मौसी की बदौलत, जो उन दोनों को अपने से बढ़ कर मानती थी और जिसे वे दोनों भी अपनी माँ की तरह मानती थीं, बराबर सुख के साथ रहा करती थीं। मुंदर की शादी के तीन वर्ष बाद कमलिनी और लाडिली की मासी भी कुटिल काल के गाल में जा पड़ी और इसके थोड़े दिन बाद मुंदर ने कमलिनी और लाडिली को अपने यहाँ बुला लिया और इस तरह खातिरदारी के साथ रक्खा कि उन दोनों के दिल में इस बात का शक तक न होने पाया कि मुंदर वास्तव में हमारी बहिन लक्ष्मीदेवी नहीं है। यद्यपि लक्ष्मीदेवी की तरह मुन्दर भी बहुत खूबसूरत और हसीन थी मगर सूरत शक्ल में फिर भी बहुत कुछ अन्तर था, लेकिन लक्ष्मीदेवी और लाडिली ने इसे जमाने का हेर फेर समझा जैसा कि हम ऊपर के किसी बयान में लिख आये हैं।

यह सब कुछ हुआ मगर मुंदर के दिल में, जिसका नाम राजा गोपालसिंह ने मायारानी रक्खा था, दारोगा का खौफ बना ही रहा। वह इस बात से डरती ही रही कि कहीं किसी दिन दारोगा मुझसे रंज हो कर सारा भेद राजा गोपालसिंह के आगे खोल न दे। इस बला से बचने के लिये उसे इससे बढ़ कर कोई तर्कीब न सूझी कि राजा गोपालसिंह ही को इस दुनिया से उठा दे और स्वयं राजरानी बनकर दारोगा पर हुकूमत करे। उसकी ऐयाशी ने उसके इस ख्याल को और भी मजबूत कर दिया और यही वह जमाना था कि एक छोकड़े पर जिसका परिचय धनपति के नाम से पहिले किसी बयान में दिया जा चुका है, उसका दिल आ गया था और उसके विचार की जड़ बड़ की तरह मजबूती पक-

ढ़ती चली गई थी। उधर दारोगा भी बेफिक्र न था, उसे भी अपना रंग चोखा करने की फिक्र लग रही थी। यद्यपि उसने लक्ष्मीदेवी और बलभद्र को एक ही कैदखाने में कैद किया हुआ था मगर वह लक्ष्मीदेवी को भी धोखेमें डाल कर एक नया काम करने की फिक्र में लगा हुआ था और चाहता था कि बलभद्रसिंह को लक्ष्मीदेवी से इस ढंग पर अलग कर दे कि लक्ष्मीदेवी को किसी तरह का गुमान तक न होने पावे। इस काम में उसने अपने एक दोस्त से जिसका नाम जैपाल-सिंह था मदद ली जिसका हाल हम आगे लिखते हैं।

आठवां बयान

हम ऊपर लिख आये हैं कि लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह अजायबघर के किसी तहखाने में कैद किये गये थे मगर मायारानी और हेलासिंह इस बात को नहीं जानते थे कि उन दोनों को दारोगा ने कहाँ कैद कर रक्खा है।

इसके कहने की कोई आवश्यकता नहीं कि बलभद्रसिंह और लक्ष्मीदेवी कैद-खाने में क्योंकर मुसीबत के दिन काटते थे। मगर ताज्जुब की बात तो यह थी कि दारोगा अक्सर इन दोनों के पास जाया करता और बलभद्रसिंह के ताने और गालियाँ बरदाश्त करता था मगर उसे किसी तरह की शर्म नहीं आती थी। जिस कोठरी में वे दोनों कैद थे उसमें रात और दिन का विचार करना बड़ा कठिन था। उन दोनों से थोड़ी ही दूर पर एक चिराग दिन रात जला करता था जिसकी रोशनी में वे एक दूसरे के उदास और रंजीदे चेहरे को बराबर देखा करते थे।

जिस जगह वे दोनों कैद थे उसके आगे लोहे का जंगला लगा हुआ था तथा सामने की तरफ एक दालान और दाहिनी तरफ एक कोठरी तथा बाँईं तरफ ऊपर चढ़ जाने का रास्ता था। एक दिन आधीरात के समय एक खटके की आवाज सुन कर लक्ष्मीदेवी जो एक मामूली कम्बल पर सोई थी उठ बैठी और सामने की तरफ देखने लगी। उसने देखा कि सामने से सीढ़ियाँ उतर कर चेहरे पर नकाब डाले हुए एक आदमी इसकी तरफ आ रहा है। जब वह लोहे वाले जंगले के पास पहुँचा तो झाँक कर देखने लगा कि दोनों कैदी सोए हुए हैं या जागते, मगर जब उसने लक्ष्मीदेवी को बैठे हुए पाया तो बोला, "बेटी, मुझे तुम दोनों की अवस्था पर बड़ा ही रंज होता है मगर क्या करूँ लाचार हूँ, अभी तक कोई

मौका मेरे हाथ नहीं लगा, मगर फिर भी मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि किसी न किसी दिन तुम दोनों को मैं इस कैद से जरूर छुड़ाऊँगा। इस समय मैं केवल यह कहने को आया हूँ कि आज दारोगा ने बलभद्रसिंह को जो खाने की चीजें दी थी उनमें जहर मिला हुआ था। अफसोस! बेचारा बलभद्रसिंह उसे खा गया, ताज्जुब नहीं कि वह इस दुनिया से घटे ही दो घंटे में कूच कर जाये, लेकिन यदि तू उसे जगावे और जो कुछ मैं कहूँ करे तो निःसन्देह उसकी जान बच जायगी।

बेचारी लक्ष्मीदेवी के लिये पहिले की मुसीबत क्या कम थी और इस खबर ने उसके दिल पर क्या असर किया सो वही जानती होगी। वह घबड़ाई हुई अपने बाप के पास गई जो एक कम्बल पर सो रहा था। उसने उसे उठाने की कोशिश की मगर उसका बाप न उठा, तब तो उसने समझा कि बेशक जहर ने उसके बाप की जान ले ली, मगर जब उसने नब्ज पर उँगली रक्खी तो नब्ज को तेजी के साथ चलता पाया। लक्ष्मीदेवी की आँखों से बेअन्दाज आँसू जारी हो गये। वह लपक कर जंगले के पास आई और उस आदमी से हाथ जोड़ कर बोली, "निःसन्देह तुम कोई देवता हो जो इस समय मेरी मदद के लिये आए हो! यद्यपि मैं यहाँ मुसीबत के दिन काट रही हूँ मगर फिर भी अपने बाप को अपने पास देख कर मैं इस मुसीबत को कुछ नहीं गिनती थी, लेकिन अफसोस! दारोगा मुझे इस सुख से भी दूर किया चाहता है। जो कुछ तुमने कहा सो बहुत ठीक है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं कि दारोगा ने मेरे बाप को जहर दे दिया, मगर मैं तुम्हारी दूसरी बात पर भी विश्वास करती हूँ जो तुम अभी कह चुके हो कि यदि तुम्हारी बताई हुई तर्कीब की जावेगी तो इनकी जान बच जायगी!"

नकाबपोश०। बेशक ऐसा ही है (एक पुड़िया जंगले के अन्दर फेंक कर) यह दवा तुम इनके मुंह में डाल दो, घंटे ही भर में जहर का असर दूर हो जायगा और मैं प्रतिज्ञा पूर्वक कहता हूँ इस दवा की तासीर से भविष्य में भी इन पर कभी किसी तरह के जहर का असर न होने पावेगा।

लक्ष्मीदेवी०। अगर ऐसा हो तो क्या बात है।

नकाबपोश०। बेशक ऐसा ही है, मगर तुम अब विलम्ब न करो और वह

दवा शीघ्र अपने बाप के मुंह में डाल दो, लो अब मैं जाता हूँ ज्यादे देर तक नहीं ठहर सकता।

इतना कह कर नकाबपोश चला गया और लक्ष्मीदेवी ने पुड़िया खोल कर अपने बाप के मुंह में वह दवा डाल दी।

इस जगह यह कह देना हम उचित समझते हैं कि यह नकाबपोश जो यहाँ आया था दारोगा का वही मित्र जैपालसिंह था और इसे दारोगा ने अपनी इच्छानुसार खूब सिखा पढ़ा कर भेजा था। वह अपने चेहरे और बदन को विशेष करके इस लिये ढांके हुए था कि उसका चेहरा और तमाम बदन गर्मी के जख्मों से गन्दा हो रहा था और उन्हीं जख्मों की बदौलत वह दारोगा का एक भारी काम निकाला चाहता था।

दवा लेने के घंटे भर बाद बलभद्रसिंह होश में आया। उस समय लक्ष्मीदेवी बहुत खुश हुई और अपने बाप से मिजाज का हाल पूछा। बलभद्रसिंह ने कहा, "मैं नहीं जानता कि मुझे क्या हो गया था और मेरे बदन में चिनगारियाँ क्यों छूट रही हैं।" लक्ष्मीदेवी ने सब हाल कहा जिसे सुन बलभद्रसिंह बोला, "ठीक है, तुम्हारी खिलाई हुई दवा ने मेरी जान तो बचा ली, परन्तु मैं देखता हूँ कि जहर का असर मुझे साफ छोड़ा नहीं चाहता, निःसन्देह इसकी गर्मी मेरे तमाम बदन को बिगाड़ देगी!" इतना कह कर बलभद्रसिंह चुप हो गया और गर्मी की बेचैनी से हाथ पैर मारने लगा। सुबह होते होते बदन में फफोले निकल आये जिसकी तकलीफ से वह बहुत ही बेचैन हो गया। बेचारी लक्ष्मीदेवी उसके पास बैठ कर सिवा रोने के और कुछ भी नहीं कर सकती थी। दूसरे दिन जब दारोगा उस तहखाने में आया तो बलभद्रसिंह का हाल देख कर पहिले तो लौट गया मगर थोड़ी ही देर बाद दो आदमियों को साथ लेकर पुनः आया और बलभद्रसिंह को हाथोंहाथ उठवा कर तहखाने के बाहर ले गया। इसके बाद आठ दिन तक बेचारी लक्ष्मीदेवी ने अपने बाप की सूरत नहीं देखी। नौवें दिन कम्बख्त दारोगा ने बलभद्रसिंह की जगह अपने दोस्त जैपालसिंह को उस तहखाने में ला डाला और ताला बन्द करके चला गया। जैपालसिंह को देख कर लक्ष्मीदेवी ताज्जुब में आ गई और बोली "तुम कौन हो और यहाँ पर क्यों लाये गये?"

जैपालसिंह०। बेटी! क्या तू मुझे इसी आठ दिन में भूल गई? क्या तू

नहीं जानती कि जहर के असर ने मेरी यह दुर्गति कर दी है। क्या तेरे ही सामने मेरे तमाम बदन में फफोले नहीं उठ आये थे ? ठीक है, बेशक तू मुझे नहीं पहिचान सकी होगी क्योंकि मेरा तमाम बदन जख्म से भरा हुआ है, मेरा चेहरा बिगड़ गया है, मेरी आवाज खराब हो गई है, और मैं बहुत ही दुखी हो रहा हूँ !!

लक्ष्मीदेवी को यद्यपि अपने बाप पर शक हुआ था मगर मोढ़े पर का वही दांत काटा निशान जो इस समय भी मौजूद था और जिसे दारोगा ने कारीगर जर्राह की बदौलत दिया था देख कर चुप हो रही और उसे निश्चय हो गया कि मेरा बाप बलभद्रसिंह यही है। थोड़ी देर बाद लक्ष्मीदेवी ने पूछा, "तुम्हें जब दारोगा यहाँ से ले गया तब उसने क्या किया ?"

नकली बलभद्रसिंह ०। तीन दिन तक तो मुझे तनोबदन की सुध नहीं रही।

लक्ष्मी०। अच्छा फिर ?

नकली बलभद्र०। चौथे दिन जब मेरी आँख खुली तो मैंने अपने को एक तहखाने में कैद पाया जहाँ सामने चिराग जल रहा था, कुर्सी पर बेईमान दारोगा बैठा हुआ था और एक जर्राह मेरे जख्मों पर मरहम लगा रहा था।

लक्ष्मी०। आश्चर्य है कि जब दारोगा ने तुम्हारी जान लेने के लिये जहर दिया तो.....

नकली बलभद्र०! मैं खुद आश्चर्य कर रहा हूँ कि जब दारोगा मेरी जान ही लिया चाहता था और इसी लिये उसने मुझको जहर दिया था तो यहाँ से ले जाकर उसने मुझे जीता क्यों छोड़ा ? मेरा सिर क्यों नहीं काट डाला बल्कि मेरा इलाज क्यों करने लगा ?

लक्ष्मी०। ठीक है, मैं भी यही सोच रही हूँ, अच्छा तब क्या हुआ ?

नकली बलभद्र०। जब जर्राह मरहम लगा के चला गया और निराला हुआ तब दारोगा ने मुझसे कहा, "देखो बलभद्रसिंह, निःसन्देह तुम मेरे दोस्त थे मगर दौलत की लालच ने मुझे तुम्हारे साथ दुश्मनी करने पर मजबूर किया। जो कुछ मैं किया चाहता था सो मैं यद्यपि कर चुका अर्थात् तुम्हारी लड़की को जगह हेलासिंह की लड़की मुन्दर को राजरानी बना दिया मगर फिर मैंने सोचा कि

अगर तुम दोनों बच कर निकल जाओगे तो मेरा भेद खुल जायगा और मैं मारा पड़ूँगा इस लिये मैंने तुम दोनों को कैद किया। फिर हेलासिंह ने राय दी कि बलभद्रसिंह को मार कर सदैव के लिये टण्टा मिटा देना चाहिये और इसी लिये मैंने तुमको जहर दिया मगर आश्चर्य है कि तुम मरे नहीं! जहाँ तक मैं समझता हूँ मेरे किसी नौकर ने मेरे साथ दगा की अर्थात मेरे दवा के सन्दूक में से संजीवनी की पुड़िया जो केवल एक ही खुराक थी और जिसे वर्षों मेहनत कर के मैंने तैयार किया था निकाल कर तुम्हें खिला दी और उसी की बदौलत तुम्हारी जान बच गई। बेशक यही बात है और वह शक मुझे तब हुआ जब मैंने अपने सन्दूक में वह संजीवनी की पुड़िया न पाई। यद्यपि तुम उस संजीवनी की बदौलत बच गये मगर फिर भी उस तेज जहर के असर से तुम्हारा बदन तुम्हारी सूरत, और तुम्हारी जिन्दगी खराब हुए बिना नहीं रह सकती। आज नहीं तो ताज्जुब नहीं कि दो चार वर्ष के अन्दर तुम मर जाओ अतएव मैं तुम्हारे मारने के लिए कष्ट नहीं उठाता बल्कि तुम्हारे इन जख्मों को आराम करने का उद्योग करता हूँ और इसमें अपना फायदा भी समझता हूँ।" इतना कह दारोगा चला गया और मुझे कई दिनों तक उसी तहखाने में रहना पड़ा। इस बीच में जर्राह दिन में तीन चार दफे मेरे पास आता और जख्मों को साफ करके पट्टी लगा जाता। जब मेरे जख्म दुरुस्त होने पर आये और जर्राह ने कहा कि अब पट्टी बदलने की जरूरत न पड़ेगी तब मैं पुनः इस जगह पहुँचा दिया गया।

लक्ष्मी०। (ऊँची साँस लेकर) न मालूम हमलोगों ने ऐसे कौनसे पाप किये हैं जिनका फल यह मिल रहा है!

इतना कह लक्ष्मीदेवी रोने लगी और नकली बलभद्रसिंह उसको दम दिलासा देकर समझाने लगा।

हमारे पाठक आश्चर्य करते होंगे कि दारोगा ने ऐसा क्यों किया और उसे एक नकली बलभद्रसिंह बनाने की क्या आवश्यकता थी? अस्तु इसका सबब भी इसी जगह लिख देना हम उचित समझते हैं?

कम्बख्त दारोगा ने सोचा कि लक्ष्मीदेवी की जगह में मैंने मुंदर को राजरानी तो बना दिया मगर कहीं ऐसा न हो कि दो चार वर्ष के बाद जब उसकी दोनों

बहनें मुंदर से मिलने आवें और लक्ष्मीदेवी के लड़कपन का जिक्र छेड़ दें तो अगर उस समय मुन्दर उनकी बातों का जवाब न दे सकी तो उनको जरूर शक हो जायगा। सूरत शक्ल के बारे में कुछ चिन्ता नहीं, जैसी लक्ष्मीदेवी खूबसूरत है वैसी ही मुंदर भी है और औरतों की सूरत सक्ल प्रायः विवाह होने के बाद शीघ्र ही बदल जाती है अस्तु सूरत शक्ल के बारे में कोई कुछ कह नहीं सकेगा, परन्तु जब पुरानी बातें निकलेंगी और मुन्दर जवाब न दे सकेगी तब कठिन होगा, अतएव लक्ष्मीदेवी का कुछ हाल, उसके लड़कपन की कैफियत उसके रिश्तेदारों और सखी सहेलियों के नाम, और उनकी तथा उनके घर की अवस्था से मुन्दर को पूरी तरह जानकार हो जाना चाहिये। अगर यह सब हाल हम बलभद्रसिंह से पूछेंगे तो वह कदापि न बतावेगा, हाँ अगर किसी दूसरे आदमी को बलभद्रसिंह बनाया जाय और वह कुछ दिनों तक लक्ष्मीदेवी के साथ रहकर इन बातों का पता लगावे तब काम चल सकता है, इत्यादि बातों को सोचकर ही दारोगा ने उपरोक्त चालाकी की और कृतकार्य भी हुआ अर्थात् दो ही चार महीने में नकली बलभद्रसिंह को लक्ष्मीदेवी का पूरा पूरा हाल मालूम हो गया। उसने सब हाल दारोगा से कहा और दारोगा ने मुन्दर को सिखा पढ़ा दिया।

जब इन बातों से दारोगा की दिलजमई हो गई तो उसने नकली बलभद्रसिंह को कैदखाने से बाहर कर दिया और फिर मुद्दत तक लक्ष्मीदेवी को अकेले ही कैद की तकलीफ उठानी पड़ी।

नौवां बयान

एक दिन लक्ष्मीदेवी उसी कैदखाने में बैठी हुई अपनी किस्मत पर रो रही थी कि उसने दाहिनी तरफ वाली कोठरी में से एक नकाबपोश को निकलते देखा। लक्ष्मीदेवी ने समझा कि यह वही नकाबपोश है जिसने उसके बाप की जान बचाई थी मगर तुरत ही उसे मालूम हो गया कि यह कोई दूसरा है क्योंकि उसके और इसके डील डौल में बहुत फर्क था। जब नकाबपोश जंगले के पास आया तब लक्ष्मीदेवी ने पूछा, "तुम कौन हो और यहाँ क्यों आए हो?

नकाब०। मैं अपना परिचय तो नहीं दे सकता परन्तु इतना कह सकता हूँ कि बहुत दिनोंसे मैं इस फिक्रमें था कि इस कैदखानेसे किसी तरह तुमको निकाल

दूँ मगर मौका न मिल सका, आज उसको मौका मिलने पर यहाँ आया हूँ बस विलम्ब न करो और उठो।

इतना कह नकाबपोश जँगला खोल दिया।

ल०। और मेरा बाप?

नकाब०। मुझे मालूम नहीं कि वह कहाँ कैद है या किस अवस्था में है, यदि मुझे उसका पता लग जायगा तो मैं उसे भी छुड़ाऊँगा।

यह सुनकर लक्ष्मीदेवी चुप हो रही और कुछ सोच विचार कर आँखोंसे आँसू टपकाती हुई जँगले के बाहर निकली। नकाबपोश उसे साथ लिए उसी कोठड़ी में घुसा जिसमें से वह स्वयं आया। अब लक्ष्मीदेवी को मालूम हुआ कि यह एक सुरंग का मुहाना है। बहुत दूर तक नकाबपोश के पीछे पीछे जा और कई दर्वाजे लाँघने बाद उसे आसमान दिखाई दिया और मैदान की ताजी हवा भी मयस्सर हुई। उस समय नकाबपोश ने पूछा, "कहो अब तुम क्या करोगी और कहाँ जाओगी?"

ल०। मैं नहीं कह सकती कि कहाँ जाऊँगी और क्या करूँगी बल्कि डरती हूँ कि कहीं फिर दारोगा के कब्जे में न पड़ जाऊँ, हाँ यदि तुम मेरे साथ कुछ और भी नेकी करो और मुझे मेरे घर तक पहुँचवाने का बन्दोबस्त कर दो तो बहुत अच्छा हो।

नकाब०। (ऊँची साँस लेकर) अफसोस! तुम्हारा घर बर्बाद हो गया और इस समय वहाँ कोई भी नहीं है। तुम्हारी दूसरी माँ अर्थात् तुम्हारी मासी भी मर गई, तथा तुम्हारी दोनों छोटी बहिनें राजा गोपालसिंह के यहाँ जा पहुँची हैं और मायारानी को जो तुम्हारे बदले में गोपालसिंह के गले मढ़ी गई है अपनी सगी बहिन समझकर उसी के साथ रहती हैं।

ल०। मैंने तो सुना था कि मेरे बदले में मुंदर राजरानी बनाई गई है।

नकाब०। हाँ वही मुन्दर अब मायारानी के नाम से प्रसिद्ध हो रही है?

ल०। तो क्या मैं अपनी बहिनों से या राजा गोपालसिंह से मिल सकती हूँ?

नकाब०। नहीं।

ल०। क्यों?

नकाब०। इसलिए कि अभी महीना भर भी नहीं हुआ कि राजा गोपालसिंह

का भी अन्तकाल हो गया। अब तुम्हारी फरियाद सुनने वाला वहाँ कोई भी नहीं है और यदि तुम वहाँ जाओगी और मायारानी को कुछ मालूम हो जायगा तो तुम्हारी जान कदापि न बचेगी।

इतना सुन लक्ष्मीदेवी अपनी बदकिस्मती पर रोने लगी और नकाबपोश उसे समझाने बुझाने लगा। अन्त में लक्ष्मीदेवी ने कहा, "अच्छा फिर तुम्हीं बताओ मैं कहाँ जाऊँ और क्या करूँ ?"

नकाब०। (कुछ सोच कर) तो तुम मेरे ही घर चलो, मैं तुम्हें अपनी ही बेटी समझूँगा और तुम्हारी परवरिश करूँगा।

ल०। मगर तुम तो अपना परिचय तक नहीं देते !

नकाब०। (ऊँची साँस लेकर) खैर अब तो परिचय देना ही पड़ा और कहना ही पड़ा कि मैं तुम्हारे बाप का दोस्त इन्द्रदेव हूँ।

इतना कह कर नकाबपोश ने चेहरे से नकाब उतारी और पूर्णचन्द्र की रोशनी ने उसके चेहरे के हर एक रग रेशे को अच्छी तरह दिखा दिया। लक्ष्मीदेवी उसे देखते ही पहिचान गई और दौड़ कर उसके पैरों पर गिर पड़ी। इन्द्रदेव ने उठा कर उसका सिर छाती से लगा लिया और तब उसे अपने घर ले आ कर गुप्त रीति से बड़ी खातिरदारी के साथ अपने यहां रखने लगा।

लक्ष्मीदेवी का दिल फोड़े की तरह पका हुआ था। वह अपनी नई जिन्दगी में हर तरह की तकलीफ उठा चुकी थी और अब भी वह अपने बाप को खोज निकालने की फिक्र में लगी हुई थी, इसके अतिरिक्त उसका ज्यादा खयाल इस बात पर था कि किसी तरह अपने दुश्मनों से बदला लेना चाहिये। इस विषय पर उसने बहुत कुछ विचार किया और अन्त में यह निश्चय किया कि इन्द्रदेव से ऐयारी सीखनी चाहिये क्योंकि वह खूब जानती थी कि इन्द्रदेव ऐयारी के फन में बड़ा ही होशियार है। आखिर उसने अपने दिल का हाल इन्द्रदेव से कहा और इन्द्रदेव ने भी उसकी राय पसन्द की तथा दिलोजान से कोशिश करके उसे ऐयारी सिखाने लगा। यद्यपि वह दारोगा का गुरुभाई था तथापि दारोगा की करतूतों ने उसे हद्द से ज्यादा रंजीदा कर दिया था और उसे इस बात की कुछ भी परवाह न थी कि लक्ष्मीदेवी ऐयारी के फन में होशियार होकर दारोगा से बदला लेगी। निःसन्देह इन्द्रदेव ने बड़ी मर्दानगी

की और दोस्ती का हक जैसा चाहिये था वैसा ही निबाहा। उसने बड़ी मुस्तैदी के साथ लक्ष्मीदेवी को ऐयारी की विद्या सिखाई बड़े बड़े ऐयारों के किस्से सुनाये, एक से एक बड़े बड़े नुसखे सिखलाये, और ऐयारी के गूढ़तत्वों को उसके दिल में नक्श (अंकित) कर दिया। थोड़े ही दिनों में लक्ष्मीदेवी पूरी ऐयारा हो गई और इन्द्रदेव की मदद से अपना नाम तारा रख कर मैदान की हवा खाने और दुश्मनों से बदला लेने की फिक्र में घूमने लगी। मगर लक्ष्मीदेवी ने तारा बनकर जो जो काम किया सब में इन्द्रदेव की राय लेती रही और इन्द्रदेव भी बराबर उसकी मदद और खबरगीरी करता रहा।

यद्यपि इन्द्रदेव ने लक्ष्मीदेवी की जान बचाई, उसे अपनी लड़की के समान पाल कर सब लायक किया, और बहुत दिनों तक अपने साथ रक्खा, मगर उसके दो एक सच्चे प्रेमियों के सिवाय लक्ष्मीदेवी का हाल किसी को मालूम न हुआ और इन्द्रदेव ने भी किसी को उसकी सूरत तक देखने न दी। इस बीच में पचासों ही दफे कम्बख्त दारोगा इन्द्रदेव के घर गया और इन्द्रदेव ने भी अपने दिल का भाव छिपा कर हर तरह से उसकी खातिरदारी की मगर दारोगा तक को इस बात का पता न लगा कि जिस लक्ष्मीदेवी को मैंने कैद किया था वह इन्द्रदेव के घर में मौजूद है और इस लायक हो रही है कि कुछ दिनों के बाद हम लोगों से बदला ले।

लक्ष्मीदेवी का नाम तारा इन्द्रदेव ही ने रक्खा था। जब तारा हर तरह से होशियार हो गई और वर्षों की मेहनत में उसकी सूरत शक्ल में भी बहुत बड़ा फर्क पड़ गया तब इन्द्रदेव ने उसे आज्ञा दी कि तू मायारानी के घर जा कर अपनी बहिन कमलिनी से मिल जो बहुत ही नेक और सच्ची है मगर अपना असली परिचय न देकर उसके साथ मोहब्बत पैदा कर और ऐसा उद्योग कर कि उसमें और मायारानी में लड़ाई हो जाय और वह उस घर से निकल कर अलग हो जाय, फिर जो कुछ होगा देखा जायगा। केवल इतना ही नहीं, इन्द्रदेव ने उसे एक प्रशंसापत्र भी दिया जिसमें यह लिखा हुआ था—

"तारा को मैं अच्छी तरह जानता हूँ। यह मेरी धर्म की लड़की है। इसकी चाल चलन बहुत ही अच्छी है और नेक तथा धार्मिक लोगों के लिये यह विश्वास करने योग्य है।"

इन्द्रदेव ने तारा को यह भी कह दिया था कि मेरा यह पत्र सिवाय कमलिनी

के और किसी को न दिखाइयो और जब इस बात का निश्चय हो जाय कि वह तुझ पर मुहब्बत रखती है तब उसको एक दफे किसी तरह मेरे घर ले आइयो, फिर जैसा होगा मैं समझ लूँगा।

आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् तारा इन्द्रदेव के बल पर निडर होकर मायारानी के महल में चली गई और कमलिनी की नौकरी कर ली उसे पहचानना तो दूर रहा किसी को इस बात का शक भी न हुआ कि यह लक्ष्मीदेवी है।

तीन महीने के अन्दर उसने कमलिनी को अपने ऊपर मोहित कर लिया और मायारानी के इतने ऐब दिखाये कि कमलिनी को एक सायत के लिये भी मायारानी के पास रहना कठिन हो गया। जब उसने अपने बारे में तारा से राय ली तब तारा ने उसे इन्द्रदेव से मिलने के लिये कहा और इस बात पर बहुत जोर दिया। कमलिनी ने तारा की राय मान ली और तारा उसे इन्द्रदेव के पास ले आई। इन्द्रदेव ने कमलिनी की बड़ी खातिर की और जहाँ तक बन पड़ा उसे उभाड़ कर खुद इस बात की प्रतिज्ञा की कि 'यदि तू मेरा भेद गुप्त रखेगी तो मैं बराबर तेरी मदद करता रहूँगा।'

उन दिनों तालाब के बीच वाला तिलिस्मी मकान बिल्कुल उजाड़ पड़ा हुआ था और सिवाय इन्द्रदेव के उसका असल भेद किसी को मालूम न था। इन्द्रदेव ही के बताने से कमलिनी ने उस मकान में अपना डेरा डाला और हर तरह से निडर होकर वहाँ रहने लगी और इसके बाद जो कुछ हुआ हमारे प्रेमी पाठकों को मालूम ही है या आगे चल कर हो जायगा।

दसवां बयान

भूतनाथ जब राजा गोपालसिंह से बिदा हुआ तो अपने शागिर्द को साथ लिए हुए शहर के बाहर निकला और बातचीत करता हुआ आधी रात जाते जाते तक एक घने जंगल के बीचोबीच में पहुँचा जहाँ एक साधारण ढंग की कुटी बनी हुई थी और उसके दर्वाजे पर दो आदमी बैठे हुए धीरे धीरे बातचीत कर रहे थे। ये दोनों भूतनाथ को देखते ही उठ खड़े हुए और सलाम करके बोले—

एक०। क्या राजा गोपालसिंह से आपका कुछ काम निकला?

भूत० । कुछ भी नहीं ।

दूसरा० । (आश्चर्य से) सो क्या !

भूत० । ठहरो जरा दम ले लूँ तो कहूँ । और लोग सब कहाँ गए हैं ?

एक० । घूमने फिरने गए हैं, आते ही होंगे ।

भूत० । अच्छा कुछ खाने पीने के लिए हो तो लाओ ।

इतना सुनते ही एक आदमी कुटी के अंदर चला गया और एक लम्बा चौड़ा कम्बल ला कर कुटी के बाहर बिछा कर फिर अन्दर लौट गया । भूतनाथ उसी कम्बल पर बैठ गया । दूसरा आदमी कुछ खाने की चीजें और जल से भरा हुआ लोटा ले आया और उस आदमी को जो भूतनाथ के साथ ही साथ यहाँ तक आया था इशारा करके कुटी के अन्दर ले गया । भूतनाथ खा पी कर निश्चिन्त हुआ ही था कि उसके बाकी आदमी जो कि घूमने के लिये गये थे आ पहुँचे और भूतनाथ को सलाम करने बाद इशारा पा कर उसके सामने बैठ कर बातचीत करने लगे । इस जगह यह लिखने की कोई जरूरत नहीं कि इन लोगों में क्या क्या बातें हुईं । रात भर सलाह और बातचीत करने बाद भूतनाथ उन लोगों को समझा बुझा और कई काम करने लिये ताकीद कर सवेरा होते होते अकेले वहाँ से रवाना हो गया और इन्द्रदेव के मकान की तरफ चल निकला ।

दोपहर से कुछ ज्यादे दिन ढल चुका था जब भूतनाथ इन्द्रदेव की पहाड़ी पर जा पहुँचा और उस खोह के बाहर खड़ा हो कर जो इन्द्रदेव के मकान में जाने का दर्वाजा था इधर उधर देखने लगा । जब किसी को न देखा तो एक पत्थर की चट्टान पर बैठ गया क्योंकि वह इन्द्रदेव के मकान में पहुँचने का रास्ता नहीं जानता था हाँ यह बात उसे जरूर मालूम थी कि इन्द्रदेव की आज्ञा बिना या जब तक इन्द्रदेव का कोई आदमी अपने साथ न ले जाय कोई उस सुरंग को पार करके इन्द्रदेव के पास नहीं पहुँच सकता । इसके पहिले भी इन्द्रदेव के पास जाने का भूतनाथ को मौका मिला था मगर हर दफे इन्द्रदेव का आदमी भूतनाथ की आँखों पर पट्टी बाँध कर ही उसे खोह के अन्दर ले गया था ।

भूतनाथ घण्टे भर तक उसी चट्टान पर बैठा रहा, इसके बाद इन्द्रदेव का एक आदमी खोह के बाहर निकला जो भूतनाथ को अच्छी तरह पहिचानता था

और भूतनाथ भी उसे जानता था। उस आदमी ने साहब सलामत करने बाद भूतनाथ से पूछा, "कहिये आप कहाँ आये ?"

भूतनाथ०। आपके मालिक इन्द्रदेव से मिलने के लिये आया हूँ और बड़ी देर से यहाँ बैठा हूँ।

आदमी०। तो क्या आपकी इत्तला करनी होगी ?

भूत०। अवश्य।

आदमी०। अच्छा तो आप थोड़ी देर तक और तकलीफ कीजिए, मैं अभी जा कर इत्तला करता हूँ।

इतना कह कर वह आदमी लौट गया और आधे घन्टे के बाद और भी दो आदमियों को अपने साथ लिए हुए आकर भूतनाथ से बोला, "चलिए, मगर आँखों पर पट्टी बंधवाने की तकलीफ आपको उठानी पड़ेगी।" इसके जवाब से भूतनाथ यह कह कर उठ खड़ा हुआ, "सो तो मैं पहिले ही से जानता हूँ !"

भूतनाथ की आँखों पर पट्टी बांध दी गई और वे तीनों आदमी उसे साथ लिए हुए इन्द्रदेव के पास जा पहुँचे। इन्द्रदेव के स्थान और उसके मकान की कैफियत हम पहिले लिख चुके हैं इस लिए यहाँ पुनः न लिख कर असल मतलब पर ध्यान देते हैं।

जिस समय भूतनाथ इन्द्रदेव के सामने पहुँचा उस समय इन्द्रदेव अपने कमरे में मसनद के सहारे बैठा हुआ कोई ग्रंथ पढ़ रहा था भूतनाथ को देखते ही उसने मुस्कुरा कर कहा, "आओ आओ भूतनाथ ! अबकी तो बहुत दिनों पर तुमसे मुलाकात हुई है !"

भूत०। (सलाम करके) बेशक बहुत दिनों पर मुलाकात हुई है, क्या करूँ जमाने के हेर फेर ने ऐसे ऐसे कुढंगे कामों में फँसा दिया और अभी तक फँसा रक्खा है कि मेरी कमजोर जान को किसी तरह छुटकारे का दिन नसीब नहीं होता, इसीसे आज बहुत दिनों पर आपके भी दर्शन हुए हैं।

इन्द्र०। (हस कर) तुम्हारी कमजोर जान ! जो भूतनाथ हजारों मजबूत आदमियों को भी नीचा दिखाने की ताकत रखता है वह कहे कि 'मेरी कमजोर जान !'

भूत०। बेशक ऐसा ही है, यद्यपि मैं अपने को बहुत कुछ कर गुजरने

लायक समझता था मगर आजकल ऐसी आफत में जान फँसी हुई है कि अक्ल कुछ काम नहीं करती।

इन्द्र०। सो क्या कुछ कहो भी तो?

भूतनाथ०। मैं यही सब कहने और आप से मदद माँगने के लिए तो आया ही हूँ।

इन्द्र०। मदद माँगने के लिये!!

भूत०। जी हाँ, और आपसे बहुत बड़ी मदद की मुझे आशा है।

इन्द्र०। सो कैसे? क्या तुम नहीं जानते कि मायारानी का तिलिस्मी दारोगा मेरा गुरुभाई है और वह तुम्हें दुश्मनी की निगाह से देखता है?

भूत०। इन बातों को मैं खूब जानता हूँ मगर इतना जानने पर भी आपसे मदद लेने के लिए आया हूँ।

इन्द्र०। यह तुम्हारी भूल है।

भूत०। नहीं मेरी भूल कदापि नहीं है, यद्यपि आप दारोगा के गुरुभाई हैं मगर मैं इस बात को भी अच्छी तरह जानता हूँ कि आपके और उसके मिजाज में उलटे सीधे का फर्क है और मैं जिस काम में आपसे मदद लिया चाहता हूँ वह नेक और धर्म का काम है।

इन्द्र०। (कुछ सोच कर) अगर तुम यह समझकर कि मैं तुम्हारी मदद न करूंगा अपना मतलब कह सकते हो तो कहो, जैसा होगा मैं जवाब दूँगा।

भूत०। यह तो मैं समझ ही नहीं सकता कि आपसे किसी तरह की मदद न मिलेगी, मदद मिलेगी और जरूर मिलेगी क्योंकि आपसे और बलभद्रसिंह से दोस्ती थी और उस दोस्ती का बदला आप उस तरह नहीं दे सकते जिस तरह दारोगा साहब ने दिया था।

उस समय उस कमरे में वे तीनों आदमी भी मौजूद थे जो भूतनाथ को अपने साथ यहाँ तक लाये थे। इन्द्रदेव ने उन तीनों को बिदा करने के बाद कहा:—

इन्द्र०। क्या तुम उस बलभद्रसिंह के बारे में मुझसे मदद लिया चाहते हो जिसे मरे आज कई वर्ष बीत चुके हैं?

भूत०। जी हाँ, उसी बलभद्रसिंह के बारे में जिसकी लड़की तारा बनकर कम-

लिनी के साथ रहने वाली लक्ष्मीदेवी है और जिसे आप चाहे मरा हुआ समझे हैं मगर मैं मरा हुआ नहीं समझता।

इन्द्र०। (आश्चर्य से) क्या तारा ने अपना भेद प्रगट कर दिया? और क्या तुम्हें कोई ऐसा सबूत मिला है जिससे समझा जाय कि बलभद्रसिंह अभी तक जीता है?

भूत०। जी हाँ, तारा का भेद यकायक प्रगट हो गया जिसे मैं भी नहीं जानता था कि वह लक्ष्मी है और बलभद्रसिंह के जीते रहने का सबूत भी मुझे मिल गया, मगर आपने तारा का नाम इस ढंग से लिया जिससे मालूम होता है कि आप तारा का असल भेद पहिले ही से जानते थे।

इन्द्र० नहीं नहीं, मैं क्योंकर जान सकता था कि तारा लक्ष्मीदेवी है, यह तो आज तुम्हारे ही मुँह से मालूम हुआ है, अच्छा तुम पहिले यह तो कह जाओ कि तारा का भेद क्योंकर प्रगट हुआ, तुम किस मुसीबत में पड़े हो और इस बात का क्या सबूत तुम्हारे पास है कि बलभद्रसिंह अभी तक जीता है? क्या बलभद्रसिंह जान बूझ कर छिपा हुआ है या किसी की कैद में है?

भूत०। नहीं नहीं, बलभद्रसिंह जान बूझकर छिपा हुआ नहीं है बल्कि कहीं कैद है। मैं उसे छुड़ाने की फिक्र में लगा हूँ और इसी काम में आपसे मदद लिया चाहता हूँ क्योंकि अगर बलभद्रसिंह का पता लग गया तो आपको दो जानें बचाने का पुण्य मिलेगा।

इन्द्र०। दूसरा कौन?

भूत०। दूसरा मैं क्योंकि अगर बलभद्रसिंह का पता न लगेगा तो निश्चय है कि मैं भी मारा जाऊँगा।

इन्द्र०। अच्छा तुम पहिले अपना हाल तो कह जाओ।

इतना सुनकर भूतनाथ ने अपना हाल उस जगह से जब भगवनिया के सामने नकली बलभद्रसिंह से उससे मुलाकात हुई थी कहना शुरू किया और इन्द्रदेव बड़े गौर से उसे सुनता रहा। भूतनाथ ने अपना कैदियों की सूरत में रोहतासगढ़ पहुँचना, कृष्णाजिन्न से मुलाकात होना, मायारानी और दारोगा इत्यादि की गिरफ्तारी राजा बीरेन्द्रसिंह के आगे मुकद्दमे की पेशी, कृष्णाजिन्न के पेश किए हुए अनूठे कलमदान की कैफियत, असली बलद्रसिंह को खोज निकालने के लिये अपनी रिहाई

और राजा गोपालसिंह के पास से बिना कुछ मदद पाये बैरंग लौट आने का हाल सब पूरा पूरा इन्द्रदेवसे कह सुनाया। इन्द्रदेव थोड़ी देर तक चुपचाप कुछ सोचते रहे। भूतनाथ ने देखा कि इन्द्रदेव के चेहरे का रंग थोड़ी देर में बदलता है और कभी लाल कभी सफेद और कभी जर्द होकर उसके दिल की अवस्था का थोड़ा बहुत हाल प्रगट करता है।

इन्द्र०। हाँ, मगर तुम्हारे इस किस्से में कोई ऐसा सबूत नहीं मिला जिससे बलभद्रसिंह का अभी तक जीते रहना साबित हो।

भूत०। क्या मैंने आपसे अभी नहीं कहा कि असली बलभद्रसिंह के जीते रहने का मुझे शक हुआ और कृष्णाजिन्न ने मेरे उस शक को यह कह कर विश्वास के साथ बदल दिया 'बेशक असली बलभद्रसिंह अभी तक कहीं कैद है और तू जिस तरह हो सके उसका पता लगा।'

इन्द्र०। हाँ यह तो तुमने कहा मगर मैं यह नहीं जानता कि कृष्णाजिन्न कौन है और उसकी बातों पर कहाँ तक विश्वास करना चाहिये।

भूत०। अफसोस! आपने कृष्णाजिन्न की कार्रवाई पर अच्छी तरह ध्यान नहीं दिया जो मैं अभी आपसे कह चुका हूँ। यद्यपि मैं स्वयं उसे नहीं जानता परन्तु जिस समय कृष्णाजिन्न ने वह अनूठा कलमदान पेश किया जिसे देखने के साथ ही नकली बलभद्रसिंह की आधी जान निकल गई, जिस पर निगाह पड़ते ही लक्ष्मीदेवी बेहोश हो गई, जिसे एक झलक ही में मैं पहिचान गया, जिस पर मीनाकारी की तीन तस्वीरें बनी हुई थीं, और छिस पर बिचली तस्वीर के नीचे मीनाकारी के मोटे मोटे खूबसूरत अक्षरों में 'इन्दिरा' लिखा हुआ था, उसी समय मैं समझ गया कि यह साधारण मनुष्य नहीं है।

इ०। (चौंककर) क्या कहा? क्या लिखा हुआ था!! "इन्दिरा!!"

और यह कहने के साथ ही इन्द्रदेव के चेहरे का रंग उड़ गया तथा आश्चर्य ने उस पर अपना रोआब जमा लिया।

भूत०। हाँ हाँ, 'इन्दिरा!' बेशक यही लिखा था!!

अब इन्द्रदेव अपने को किसी तरह सम्हाल न सका, वह घबड़ाकर उठ खड़ा हुआ और धीरे धीरे निम्नलिखित बातें कहता हुआ इधर से उधर घूमने लगा :—

"ओफ ! मुझे धोखा हुआ ! वाह रे दारोगा ! तैंने इन्द्रदेव ही पर अपना हाथ साफ किया जिसने तेरे सैकड़ों कसूर माफ किये और फिर भी तेरे रोने पीटने और बड़ी बड़ी कसम खाने पर विश्वास करके मुझे राजा बीरेन्द्रसिंह की कैद से छुड़ाया ! वाह रे जयपाल ! तुझे तो इस तरह तड़पा तड़पाकर मारूँगा कि गन्दगी पर बैठने वाली मक्खियों को भी तेरे हाल पर रहम आवेगा ! लक्ष्मीदेवी का बाप बनकर चला था मायारानी और दारोगा की मदद करने ! वाह रे कृष्णाजिन्न ! ईश्वर तेरा भला करे ! मगर इसमें भी कोई शक नहीं कि तुमको यह हाल हाल ही में मालूम हुआ है ! आह ! मैंने वास्तव में धोखा खाया ! लक्ष्मीदेवी की बहुत ही प्यारी इन्दिरा ! अच्छा अच्छा, ठहर जा, देख तो सही मैं क्या करता हूँ ! भूतनाथ ने यद्यपि बहुत से बुरे काम किये हैं परन्तु अब वह इसका प्रायश्चित भी बड़ी खूबी के साथ कर रहा है ! (भूतनाथ की तरफ देख के) अच्छा अच्छा, मैं तुम्हारा साथ दूँगा, मगर अभी नहीं, जब तक मैं उस कलमदान को अपनी आँखों से न देख लूंगा तब तक मेरा जी ठिकाने न होगा !!

भूत० । (जो बड़े गौर से इन्द्रदेव का बड़बड़ाना सुन रहा था) हाँ हाँ, आप उसे देख सकते हैं, मेरे साथ रोहतासगढ़ चलिए ।

इ० । तुम्हारे साथ चलने की कोई आवश्यकता नहीं, तुम इसी जगह रहो, मैं अकेला ही जाऊँगा और बहुत जल्द लौट आऊँगा ।

इतना कहकर इन्द्रदेव ने ताली बजाई और आवाज के साथ ही अपने दो आदमियों को कमरे के अन्दर आते देखा । इन्द्रदेव अपने आदमियों से यह कह कर कि तुम लोग भूतनाथ को खातिरदारी के साथ यहाँ रक्खो जब तक कि मैं एक छोटे सफर से न लौट आऊँ' कमरे के बाहर हो गया और एक दूसरे कमरे में जिसकी ताली वह अपने पास ही रक्खा करता था ताला खोल कर चला गया । इस कमरे में खूंटियों के सहारे तरह तरह के कपड़े, ऐयारी के बहुत से बटुए, रंग बिरंग के नकाब, एक से एक बढ़कर नायाब और बेशकीमत हर्बे और कमंद वगैरह लटक रहे थे और एक तरफ लोहे तथा लकड़ी के छोटे बड़े कई संदूक भी रक्खे हुए थे । इन्द्रदेव ने अपने मतलब का एक जोड़ (बेशकीमत पोशाक) खूँटी से उतार कर पहिर लिया और जो कपड़े पहिले पहिरे हुए थे उतारकर एक तरफ रख दिये । सुर्ख रंग की नकाब उतार कर चेहरे पर लगाई, ऐयारी का

बटुआ बगल में लटकाने बाद बेशकीमती हर्बों से अपने को दुरुस्त किया, और इसके बाद लोहे के सन्दूक में से कुछ निकाल कमर में रख कमरे के बाहर निकल आया। कमरे में ताला बन्द किया और तब बिना भूतनाथ से मुलाकात किये ही वहाँ से रवाना हो गया।

ग्यारहवां बयान

रोहतासगढ़ में महल के अन्दर एक खूबसूरत सजे हुए कमरे में राजा बीरेन्द्रसिंह ऊँची गद्दी के ऊपर बैठे हुए हैं, बगल में तेजसिंह और देवीसिंह बैठे हुए हैं, सामने की तरफ किशोरी कामिनी लक्ष्मीदेवी कमलिनी लाडिली और कमला अदब के साथ सिर झुकाये हुए बैठी हैं। आज राजा बीरेन्द्रसिंह अपने दोनों मित्र ऐयारों के सहित यहाँ बैठ कर उन सभों की बीती हुई दुःख भरी कहानी बड़े गौर से कुछ सुन चुके हैं और कुछ सुन रहे हैं। दर्वाजे पर भैरोसिंह और तारासिंह खड़े पहरा दे रहे हैं, किसी लौंडी तक को भी यहाँ आने की आज्ञा नहीं है। किशोरी कामिनी कमलिनी कमला और लक्ष्मीदेवी का हाल सुन चुके हैं, इस समय लाडिली अपना किस्सा कह रही है।

लाडिली अपना किस्सा कहते कहते बोली :—

"जब मायारानी की आज्ञानुसार धनपत और मैं नानक और किशोरी के साथ दुश्मनी करने के लिये जमानिया से निकलीं तो शहर के बाहर हो कर हम दोनों अलग अलग हो गए। इत्तफाक की बात है कि धनपत भी सूरत बदल के इसी किले में आ रही और मैं भी घूमती फिरती भेष बदले हुए किशोरी का यहाँ होना सुन कर इसी किले में आ पहुँची और हम दोनों ही ने रानी साहबा की नौकरी कर ली। उस समय मेरा नाम लाला था। यद्यपि इस मकान में मेरी और धनपत की मुलाकात हुई और बहुत दिनों तक दोनों आदमी एक ही जगह रहे भी मगर न तो मैंने धनपत को पहिचाना जो कुन्दन के नाम से यहाँ रहती थी और न धनपत ही ने मुझे पहिचाना। (ऊँची साँस ले कर) अफसोस! मुझे उस समय का हाल कहते शर्म मालूम होती है क्योंकि मैं बेचारी निर्दोष किशोरी के साथ दुश्मनी करने के लिये तैयार थी। यद्यपि मुझे किशोरी की अवस्था पर रहम आता था मगर मैं लाचार थी क्योंकि मायारानी के कब्जे में थी और इस बात को खूब

समझती थी कि यदि मैं मायारानी का हुक्म न मानूँगी तो निःसन्देह वह मेरा सिर काट लेगी।"

इतना कह कर लाडिली रोने लगी।

बीरेन्द्र०। (दिलासा देते हुए) बेटी! अफसोस करने की कोई जगह नहीं है। यह तो बनी बनाई बात है कि यदि कोई धर्मात्मा या नेक आदमी शैतान के कब्जे में पड़ा हुआ होता है तो उसे झखमार कर शैतान की बात माननी पड़ती है। मैं खूब समझता हूँ और विश्वास दिलाया जा चुका हूँ कि तू नेक है, तेरा कोई दोष नहीं, जो कुछ किया कम्बख्त दारोगा और मायारानी ने किया, अस्तु तू कुछ चिन्ता मत कर और अपना हाल कह!

आँचल से आँसू पोंछ कर लाडिली ने फिर कहना शुरू किया :—

"मैं चाहती थी कि किशोरी को अपने कब्जे में कर लूँ और तिलिस्मी तहखाने की राह से बाहर हो कर इसे मायारानी के पास ले जाऊँ, तथा धनपत का भी इरादा यही था। इस सबब से कि यहाँ का तहखाना एक छोटा सा तिलिस्म है और जमानिया के तिलिस्म से सम्बन्ध रखता है, यहाँ के तहखाने का बहुत कुछ हाल मायारानी को मालूम है और उसने मुझे और धनपत को बता दिया था अस्तु किशोरी को साथ लेकर यहाँ के तहखाने की राह से निकल जाना मेरे या धनपत के लिये कोई बड़ी बात न थी। इसके अतिरिक्त यहाँ एक बुढ़िया रहती थी जो रिश्ते में राजा दिग्विजयसिंह की बूआ होती थी। यह बड़ी ही सूधी नेक तथा धर्मात्मा थी और बड़ी सीधी चाल बल्कि फकीरी ढंग पर रहा करती थी। मैंने सुना है कि वह मर गई, अगर जीती होती तो आपसे मुलाकात करा देती। खैर, मुझे यह बात मालूम हो चुकी थी कि वह बुढ़िया यहाँ के तहखाने का हाल बहुत ज्यादे जानती है अतएव मैंने उससे दोस्ती पैदा कर ली और तब मुझे मालूम हुआ कि वह किशोरी पर दया करती है और चाहती है कि यह किसी तरह यहाँ से निकल कर राजा बीरेन्द्रसिंह के पास पहुँच जाय। मैंने उसके दिल में विश्वास दिला दिया कि किशोरी को यहाँ से निकाल कर चुनार पहुँचा देने के विषय में जी जान से कोशिश करूँगी और इसी लिए उस बुढ़िया ने भी यहाँ के तहखाने का बहुत हाल मुझसे कहा बल्कि उस राह से निकल जाने की तर्कीब भी बताई मगर धनपत जो कुन्दन के नाम से यहाँ रहती थी बराबर मेरे काम में बाधा

डाला करती थी और मैं इस फिक्र में लगी हुई थी कि किसी तरह उसे दबाना चाहिए जिसमें वह मेरा मुकाबला न कर सके। एक दिन आधी रात के समय मैं अपने कमरे से निकल कर कुन्दन के कमरे की तरफ चली। जब उसके पास पहुँची तो किसी आदमी के पैर की आहट मिली जो कुन्दन की तरफ आ रहा था। मैं रुक गई और जब वह आदमी आगे बढ़ कर कुन्दन के मकान के अन्दर चला गया तब मैं भी धीरे धीरे कदम रख कर उसी मकान के पास पहुँची जिसमें कुन्दन रहती थी। उस कमरे की कुर्सी बहुत ऊँची थी, पाँच सीढ़ियाँ चढ़ कर सहन में पहुँचना होता था और उसके बाद कमरे के अन्दर जाने का दर्वाजा था। वह कमरा अभी तक मौजूद है शायद आप उसे देखें। सीढ़ियों के दोनों बगल चमेली की घनी टट्टी थी, मैं उसी टट्टी में छिप कर उस आदमी के लौट आने की राह देखने लगी जो मेरे सामने ही उस मकान में गया था। आधे घंटे के बाद वह आदमी कमरे के बाहर निकला, उस समय कुंदन भी उसके साथ थी। जब वह सहन की सीढ़ियाँ उतरने लगा तो कुन्दन ने उसे रोक कर धीरे से कहा, "मैं फिर कहे देती हूँ कि आपसे मुझे बहुत बड़ी उम्मीद है! जिस तरह आप गुप्त राह से इस किले के अन्दर आते हैं उसी तरह मुझे किशोरी के सहित निकाल तो ले जायंगे न!" इसके जवाब में उस आदमी ने कहा, "हाँ हाँ, इस बात का तो मैं तुमसे वादा ही कर चुका हूं, अब तुम किशोरी को अपने काबू में करने का उद्योग करो, मैं तीसरे चौथे यहाँ आकर तुम्हारी खबर ले जाया करूँगा।" इस पर कुन्दन ने फिर कहा, "मगर मुझे इस बात की खबर पहिले ही हो जाया करे आज आप आधी रात के समय यहाँ आवेंगे।" इसके जवाब में उस आदमी ने अपनी जेब में से एक नारंगी निकाल कर कुन्दन के हाथ में दी और कहा, "इसी रंग की नारंगी उस दिन तुम इस बाग के उत्तर और पश्चिम वाले कोने में सन्ध्या के समय देखोगी जिस दिन मैं तुमसे मिलने के लिए यहाँ आने वाला होऊंगा।" कुन्दन ने वह नारंगी उसके हाथ से ले ली। सीढ़ियों के दोनों तरफ फूलों के गमले रक्खे हुए थे, जिनमें से एक गमले में कुन्दन ने वह नारंगी रख दी और उस आदमी के साथ ही साथ थोड़ी दूर तक उसे पहुँचाने की नीयत से आगे की तरफ बढ़ गई। मैं छिपे छिपे सब कुछ देख सुन रही थी। जब कुन्दन आगे बढ़ गई और उस

जगह निराला हुआ तब मैं उस झाड़ी के अन्दर से निकली और गमले में से उस नारंगी को ले कर जल्दी जल्दी कदम बढ़ाती हुई अपने मकान में चली आई। किशोरी अपना हाल कहती समय आपसे यह कह चुकी है कि 'एक दिन मैंने नारंगी दिखा कर कुन्दन को दबा लिया था' यह वही नारंगी थी जिसे देख कर कुन्दन समझ गई कि मेरा भेद लाली को मालूम हो गया, यदि यह राजा साहब को इस बात की इत्तला दे देगी और उस आदमी को जो पुनः मेरे पास आने वाला है और जिसे इस बात की खबर नहीं है, गिरफ्तार करा देगी तो मैं मारी जाऊँगी, अस्तु उसे मुझसे दबना ही पड़ा क्योंकि वास्तव में यदि मैं चाहती तो कुन्दन के मकान में उस आदमी को गिरफ्तार करा देती और उस समय महाराज दिग्विजयसिंह दोनों का सर काटे बिना न रहते।

बीरेन्द्र०। ठीक है अब मैं समझ गया, अच्छा तो फिर यह भी मालूम हुआ कि वह आदमी जो कुन्दन के पास आया करता था कौन था?

लाडिली०। पीछे तो मालूम हो ही गया कि वह शेरसिंह थे और उन्होंने कुन्दन के बारे में धोखा खाया।

देवीसिंह०। (बीरेन्द्रसिंह से) मैंने एक दफे आपसे अर्ज किया था कि शेरसिंह ने कुन्दन के बारे में धोखा खाने का हाल मुझसे खुद बयान किया था, और लाली को नीचा दिखाने या दबाने की नियत से खून से लिखी किताब तथा आँचल पर गुलामी का दस्तावेज वाला जुमला भी शेरसिंह ही ने कुन्दन को बताया था और शेरसिंह ने वह हाल छिप कर किसी दूसरे आदमी की बातचीत से मालूम किया था।

बीरेन्द्र०। ठीक है मगर यह नहीं मालूम हुआ कि शेरसिंह ने छिप कर जिन लोगों की बातचीत सुनी थी वे कौन थे?

देवी०। हाँ इसका हाल मालूम न हुआ, शायद लाडिली जानती हो।

लाडिली०। जी हाँ, जब मैं यहाँ से लौट कर मायारानी के पास गई तब मुझे मालूम हुआ कि वे लोग मायारानी के दोनों ऐयार बिहारीसिंह और हरनामसिंह थे जो हम लोगों का पता लगाने तथा दोनों राजकुमारों को गिरफ्तार करने की नीयत से इस तरफ आये थे।

बीरेन्द्र०। ठीक है, अच्छा तो अब हम यह सुना चाहते हैं कि 'खून से

लिखी किताब' और 'गुलामी के दस्तावेज' से क्या मतलब था और तू इन शब्दों को सुन कर क्यों डरी थी ?

लाडिली० । खून से लिखी किताब को तो आप जानते ही हैं जिसका दूसरा नाम 'रिक्तगन्थ' है और जो आज कल आपके कुँअर इन्द्रजीतसिंह के कब्जे में है ।

बीरेन्द्र० । हाँ हाँ सो क्यों न जानेंगे, वह तो हमारी ही चीज है और हमारे ही यहाँ से चोरी गई थी ।

लाडिली० । जी हाँ, तो उन शब्दों के विषय में मैंने बहुत बड़ा धोखा खाया । अगर मैं कुन्दन को पहिचान जाती तो मुझे उन शब्दों से डरने की आवश्यकता न थी । खून से लिखी किताब अर्थात् रिक्तगन्थ से जितना सम्बन्ध मुझे था उतना ही कुन्दन को भी था मगर कुन्दन ने समझा कि मैं भूतनाथ के रिश्तेदारों में से हूँ जिसने रिक्तगन्थ की चोरी की थी और मैंने यह सोचा कि कुन्दन को मेरा असल हाल मालूम हो गया, वह जान गई कि मैं मायारानी की बहिन लाडिली हूँ और राजा दिग्विजयसिंह को धोखा देकर यहाँ रहती हूँ । मैं इस बात को खूब जानती थी कि यह रोहतासगढ़ का तहखाना जमानिया के तिलिस्म से सम्बन्ध रखता है और यदि राजा दिग्विजयसिंह के हाथ रिक्तगन्थ लग जाय तो वह बड़ा ही खुश हो क्योंकि वह रिक्तगन्थ का मतलब खूब जानता है और उसे यह भी मालूम है कि भूतनाथ ने रिक्तगन्थ की चोरी की थी और उसके हाथ से मायारानी रिक्तगन्थ ले लेने के उद्योग में लगी हुई थी और उस उद्योग में सब से भारी हिस्सा मैं ही ने लिया था । यह सब हाल उसे कम्बख्त दारोगा की जुबानी मालूम हुआ था क्योंकि वह राजा दिग्विजयसिंह से मिलने के लिये बराबर आया करता था और उनसे मिला हुआ था । निःसन्देह अगर मेरा हाल राजा दिग्विजयसिंह को मालूम हो जाता तो वह मुझे कैद कर लेता और रिक्तगन्थ के लिये मेरी बड़ी दुर्दशा करता बस इसी खयाल ने मुझे बदहवास कर दिया और मैं ऐसा डरी कि तनोबदन की सुध जाती रही । क्या दिग्विजयसिंह कभी इस बात को सोचता कि उसकी दारोगा से दोस्ती है और दारोगा लाडिली का पक्षपाती है ? कभी नहीं, वह बड़ा ही मतलबी और खोटा था ।

बीरेन्द्र० । बेशक ऐसा ही है और तुम्हारा डरना बहुत वाजिब था मगर—हाँ, एक बात तो तुमने कही ही नहीं ।

लाडिली० । वह क्या ?

बीरेन्द्र० । "आँचल-पर गुलामी के दस्तावेज" से क्या मतलब था ?

राजा बीरेन्द्रसिंह की यह बात सुन कर लाडिली शर्मा गई और उसने अपने दिल की अवस्था को रोक कर सर नीचे कर लिया । जब राजा बीरेन्द्रसिंह ने पुन टोका तब वह हाथ जोड़ कर बोली, "आशा है कि महाराजा साहब इसका जवाब चाहने के लिये जिद्द न करेंगे और मेरा यह अपराध क्षमा करेंगे । मैं इसका जवाब अभी नहीं दिया चाहती और बहाना करना या झूठ बोलना भी पसन्द नहीं करती !"

लाडिली की बात सुन कर राजा बीरेन्द्रसिंह चुप हो रहे और कोई दूसरी बात पूछा ही चाहते थे कि भैरोसिंह ने कमरे के अन्दर पैर रक्खा ।

बीरेन्द्र० । (भैरो से) क्या है ?

भैरो० । बाहर से खबर आई है कि मायारानी के दारोगा के गुरूभाई इन्द्रदेव जिनका हाल मैं एक दफे अर्ज कर चुका हूँ महाराज का दर्शन करने के लिये हाजिर हुए हैं । उन्हें ठहराने की कोशिश की गई थी मगर वह कहते हैं कि मैं पल भर भी नहीं अटक सकता और शीघ्र ही मुलाकात की आशा रखता हूँ और मुलाकात भी महल के अन्दर लक्ष्मीदेवी के सामने करूँगा, यदि इस बात में महाराज साहबको उज्र हो तो लक्ष्मीदेवी से राय लें और जैसा वह कहें वैसा करें ।

इसके पहिले कि बीरेन्द्रसिंह कुछ सोचें या लक्ष्मीदेवी से राय लें लक्ष्मीदेवी अपनी खुशी को रोक न सकी, उठ खड़ी हुई और हाथ जोड़ कर बोली "महाराज से मैं सविनय प्रार्थना करती हूँ कि इन्द्रदेवजी को इसी जगह आने की आज्ञा दी जाय । वे मेरे धर्म के बाप हैं, मैं अपना किस्सा कहती समय अर्ज कर चुकी हूँ कि उन्होंने मेरी जान बचाई । वे हम लोगों के सच्चे खैरख्वाह और भलाई चाहने वाले हैं ।"

बीरेन्द्र० । बेशक बेशक, हम उन्हें इसी जगह बुलावेंगे, हमारी लड़कियों को उनसे पर्दा करने की कोई आवश्यकता नहीं है । (भैरोसिंह की तरफ देख कर) तुम स्वयं जाओ और शीघ्र इसी जगह ले आओ ।

"बहुत अच्छा" कह कर भैरोसिंह चला गया और थोड़ी ही देर में इन्द्रदेव को अपने साथ लिये हुए आ पहुँचा। लक्ष्मीदेवी उन्हें देखते ही उनके पैरों पर गिर पड़ी और आँसू बहाने लगी। इन्द्रदेव ने उसके सर पर हाथ फेर कर आशीर्वाद दिया, कमलिनी और लाडिली ने भी उन्हें प्रणाम किया और राजा बीरेन्द्रसिंह ने सलाम का जवाब देने बाद उन्हें बड़ी खातिर से अपने पास बैठाया।

बीरेन्द्र०। (मुस्कुराते हुए) कहिये आप कुशल से तो हैं। राह में कुछ तकलीफ तो नहीं हुई?

इन्द्रदेव०। (हाथ जोड़ कर) आपकी कृपा से मैं बहुत अच्छा हूँ! सफर में हजार तकलीफ उठा कर आने वाला भी आपका दर्शन पाते ही कृतार्थ हो जाता है फिर मेरी क्या बात है जिसे इस सफर पर ध्यान देने की छुट्टी अपने खयालों के उलझन की बदौलत बिल्कुल न मिली।

बी०। इससे मालूम होता है कि आप किसी भारी काम के लिये यहाँ आये हैं। (हँसकर) क्या अबकी फिर दारोगा साहबको छुड़ाकर ले जाने का इरादा है?

इ०। (शर्मिन्दगी के साथ हँस कर) जी नहीं, अब मैं उस कम्बख्त की कुछ मदद नहीं कर सकता जिसे गुरुभाई समझ कर आपके कैदखाने से छुड़ाया था और आइन्दे नेकनीयती के साथ जिन्दगी बिताने की जिससे मैंने कसम ले ली थी। अफसोस! दिन दिन उसकी शैतानी का पता लगता ही जाता है!

बी०। इधर का हाल तो आपने न सुना होगा?

इ०। जी हाँ, भूतनाथ की जुबानी मैं सब सुन चुका हूँ और इसी सबब से ही हाजिर हुआ हूँ। मुझे यह देख कर बड़ी खुशी हुई कि लक्ष्मीदेवी को अपनायत के ढंग पर आपके सामने बैठने की इजाजत मिली है और वह बहुत तरह के दुःख सहने के बाद अब हर तरह से प्रसन्न और सुखी हुआ चाहती है।

बी०। निःसन्देह लक्ष्मीदेवी को मैं अपनी लड़की के समान देख रहा हूं और उसके साथ आपने जो कुछ नेकी की है उसका हाल भी उसी की जुबानी सुन कर बहुत प्रसन्न हूँ। इस समय मेरे दिल में आपसे मिलने की इच्छा हो चुकी थी और किसी को आपके पास भेजने के विचार में मैं था कि आप स्वयम् आ पहुँचे। बलभद्रसिंह और भूतनाथ के मामले ने तो हम लोगों को अजब

दुबधे में डाल रक्खा है, अब कदाचित् आपकी जुबानी उनका खुलासा हाल मालूम हो जाय।

इ०। निःसन्देह यह एक आश्चर्य घटना हो गई है जिसकी मुझे कुछ आशा न थी।

ल०। (इन्द्रदेव से) मेरे प्यारे चचा! (क्योंकि वह इन्द्रदेव को चचा कह के ही पुकारा करती थी) जब भूतनाथ की जुबानी आप सब हाल सुन चुके हैं तो निःसन्देह मेरी तरह आपको भी इस बात का विश्वास हो गया होगा कि मेरा बदकिस्मत बाप अभी तक जीता है मगर कहीं कैद है।

इ०। बेशक ऐसा ही है।

बी०। तो क्या भूतनाथ उन्हें खोज निकालेगा?

इ०। इसमें मुझे सन्देह है, क्योंकि वह लाचार हो कर मुझसे मदद माँगने गया था और उसी की जबानी सब हाल सुन कर मैं यहाँ आया हूँ।

बी०। तो आप इस काम में उसको मदद देंगे?

इ०। अवश्य मदद दूँगा! असल तो यों है कि इस समय बलभद्रसिंह को खोज निकालने की चाह बनिस्बत भूतनाथ के मुझको बहुत ज्यादे है और उनके जीते रहने का विश्वास भी सभों से ज्यादे मुझी को हुआ, इसी तरह से बलभद्रसिंह का पता लगाने में मेरी बुद्धि जितना काम कर सकती है उतनी भूतनाथ की नहीं! (ऊँची साँस लेकर) अफसोस! आज के दो दिन पहले मुझे इस बात का स्वप्न में भी गुमान न था कि अपने प्यारे दोस्त बलभद्रसिंह के जीते रहने की खबर मेरे कानों तक पहुँचेगी और मुझे उनका पता लगाना पड़ेगा।

बी०। आपके इस कहने से पाया जाता है कि बनिस्बत इस लोगों के आपको भूतनाथ की बातों का ज्यादे यकीन हुआ है और अगर ऐसा ही है तो आज के बहुत दिन पहले आपको या किसी और को इस बात की इत्तला न देने का इलजाम भी भूतनाथ पर लगाया जायगा।

इ०। जी नहीं, इस घटना के पहिले भूतनाथ को भी बलभद्रसिंह के जीते रहने का विश्वास न था, हाँ कुछ शक सा हो गया था, उस शक को यकीन के दर्जे तक पहुँचाने के लिये भूतनाथ ने बहुत उद्योग किया और वही उद्योग इस समय उसका दुश्मन हो रहा है। सच तो यह है कि अगर इसके पहले बलभद्र-

सिंह के जीते रहने की खबर भूतनाथ मुझे देता भी तो मुझे विश्वास न होता और मैं उसे झूठा या दगाबाज ही समझता।

बी०। (मुसकुरा कर) आपकी बातें तो और भी उलझन पैदा करती हैं मालूम होता है कि भूतनाथ की बातों के अतिरिक्त और भी कोई सच्चा सबूत बलभद्रसिंह के जीते रहने के बारे में आपको मिला है और भूतनाथ वास्तव में उन दोषों का दोषी नहीं है जो कि उसकी दस्तखती चीठियों के पढ़ने से मालूम हुआ है।

इ०। बेशक ऐसा ही है!

ल०। (ताज्जुब से) तो क्या किसी और ने भी मेरे बाप के जीते रहने की खबर आपको दी है?

इ०। नहीं।

ल०। तो आज कैसे भूतनाथ के कहने का इतना विश्वास आपको हुआ जब कि आज के पहिले उसके कहने का कुछ भी असर न होता?

बी०। मैं भी यही सवाल आपसे करता हूँ।

इ०। भूतनाथ के इस कहने ने कि "कृष्णाजिन्न ने एक कलमदान आपके सामने पेश किया था जिस पर मीनाकारी की तीन तस्वीरें बनी हुई थीं और उसे देखते ही नकली बलभद्रसिंह बदहवास हो गया था"—मुझे असली बलभद्रसिंह के जीते रहने का विश्वास दिला दिया। क्या यह बात ठीक है? क्या कृष्णाजिन्न ने कोई कलमदान पेश किया था?

बी०। हाँ एक कलमदान.....

लक्ष्मी०। (बात काट कर) हाँ हाँ मेरे प्यारे चाचा! वही कलमदान जो मेरी बहुत ही प्यारी चाची ने मुझे ब्याह के.....

इतना कहते कहते लक्ष्मीदेवी का गला भर आया और वह रोने लगी।

इन्द्रदेव०। (व्याकुलता से) मैं उस कलमदान को इसी समय देखा चाहता हूं (तेजसिंह से) आप कृपा कर उसे शीघ्र ही मंगवाइये।

तेज०। (अपने बटुए में से कलमदान निकाल कर और इन्द्रदेव के हाथ में दे कर) लीजिए तैयार है! मैं इसे हर वक्त अपने पास रखता हूं और उस समय की राह देखता हूं जब इसके अद्भुत रहस्य का पता हम लोगों को लगेगा।

इन्द्रदेव० । (कलमदान देख कर) निःसन्देह भूतनाथ ने जो कुछ कहा वह बहुत ठीक है । अफसोस ! कम्बख्तों ने बड़ा भारी धोखा दिया ! अच्छा, ईश्वर मालिक है !!

लक्ष्मी० । क्यों यह वही कलमदान है न ?

इन्द्रदेव० । हाँ तुम इसे वही कलमदान समझो ? (क्रोध से लाल लाल आँखें कर के) ओफ ! अब मुझसे बरदाश्त नहीं हो सकता और न मैं ऐसे काम में विलम्ब कर सकता हूं ! (बीरेन्द्रसिंह से) क्या आप इस काम में मेरी सहायता कर सकते हैं ?

बीरेन्द्र० । जो कुछ मेरे किये हो सकता है उसे करने के लिए मैं तैयार हूं, मुझे बड़ी खुशी होगी जब मैं अपनी आँखों से बलभद्रसिंह को सही सलामत देखूंगा !!

इन्द्र० । और आप मुझ पर विश्वास भी कर सकते हैं ?

बीरेन्द्र० । हाँ, मैं तुम पर उतना ही विश्वास करता हूं जितना इन्द्रजीत और आनन्द पर ।

इन्द्रदेव० । (हाथ जोड़ कर और गद्गद् हो कर) अब मुझे विश्वास हो गया कि अपने दोनों प्रेमियों को शीघ्र ही देखूंगा ।

बीरेन्द्र० । (आश्चर्य से) दूसरा कौन ?

लक्ष्मी० । (चौंक कर) ओह, मैं समझ गई, ईश्वर ! यह क्या ! क्या मैं अपनी बहुत ही प्यारी 'इन्दिरा' को भी देखूंगी ?

इन्द्र० । हाँ, यदि ईश्वर चाहेगा तो ऐसा ही होगा ।

बीरेन्द्र० । अच्छा यह बताओ कि अब तुम क्या चाहते हो ?

इन्द्रदेव० । मैं नकली बलभद्रसिंह दारोगा और मायारानी को देखना चाहता हूं और साथ ही इसके इस बात की आज्ञा चाहता हूं कि उन लोगों के साथ मैं जैसा बर्ताव चाहे कर सकूं या उन तीनों में से किसी एक को यदि आवश्यकता हो तो अपने साथ ले जा सकूं ।

इन्द्रदेव की बात सुन कर बीरेन्द्रसिंह ने ऐसे ढंग से तेजसिंह की तरफ देखा और इशारे से कुछ पूछा कि सिवाय उनके और तेजसिंह के किसी दूसरे को मालूम न हुआ और जब तेजसिंह ने भी इशारे ही में कुछ जवाब दे दिया तब इन्द्रदेव की तरफ देख कर कहा, "वे तीनों कैदी सब से बढ़ कर लक्ष्मीदेवी के गुनह-

गार हैं जो तुम्हारी और हमारी धर्म की लड़की है इसलिये उन कैदियों के विषय में जो कुछ तुमको पूछना या करना हो उसकी आज्ञा लक्ष्मीदेवी से ले लो हमें किसी तरह का उज्र नहीं है।"

ल०। (प्रसन्न होकर) यदि महाराज की मुझ पर इतनी कृपा है तो मैं कह सकती हूं कि उन कैदियों में से जिनकी बदौलत मेरी जिन्दगी का सबसे कीमती हिस्सा बर्बाद हो गया जिसे मेरे चाचा चाहें ले जायं।

बी०। बहुत अच्छा (इन्द्रदेव से) क्या उन कैदियों को यहाँ हाजिर करने के लिए हुक्म दिया जाय?

इ०। वे सब कहाँ रक्खे गये हैं?

बी०। यहाँ के तिलिस्मी तहखाने में।

इ०। (कुछ सोच कर उत्तम यही होगा कि मैं उस तहखाने ही में उन कैदियों को देखूं और उनसे बातें करूं, तब जिसकी आवश्यकता हो उसे अपने साथ ले जाऊं।

बी०। जैसी तुम्हारी मर्जी, अगर कहो तो हम भी तुम्हारे साथ तहखाने में चलें?

इ०। आप जरूर चलें यदि यहाँ के तहखाने की कैफियत आपने अच्छी तरह देखी न तो मैं आपको तहखाने की सैर भी कराऊंगा बल्कि ये लड़कियाँ भी साथ रहें तो कोई हर्ज नहीं, परन्तु यह काम मैं रात्रिके समय किया चाहता हूं और इस समय केवल इसी बात की जाँच किया चाहता हूं कि भूतनाथ ने मुझसे जो जो बातें कही थी वे सब सच हैं या झूठ।

बी०। ऐसा ही होगा।

इसके बाद बहुत देर तक इन्द्रदेव, लक्ष्मी देवी कमलिनी, किशोरी, लाडिली, तेजसिंह और बीरेन्द्रसिंह इत्यादि में बातें होती रहीं और बीती हुई बातों को इन्द्रदेव बड़े गौर से सुनता रहा। इसके बाद भोजन का समय आया और दो तीन घण्टे के लिए सब कोई जुदा हुए। राजा बीरेन्द्रसिंह की इच्छानुसार इन्द्रदेव की बड़ी खातिर की गई और वह जब तक अकेला रहा बलभद्रसिंह और कृष्णाजिन्न के विषय में गौर करता रहा। जब संध्या हुई तब सब कोई फिर उसी जगह इकट्ठे हुए और बातचीत होने लगी। इन्द्रदेव ने राजा बीरेन्द्रसिंह से पूछा, "कृष्णा-

जिन्न का असल हाल आपको मालूम हुआ या नहीं ? या उसने अपना परिचय आपको दिया ?"

बी० । पहिले तो उसने अपने को बहुत छिपाया मगर भैरोसिंह ने गुप्त रीति से पीछा करके उसका हाल जान लिया । जब कृष्णाजिन्न को मालूम हो गया कि भैरोसिंह ने उसे पहिचान लिया तब उसने भैरोसिंह को बहुत कुछ ऊँच नीच समझा इस बात की प्रतिज्ञा करा ली कि सिवाय मेरे और तेजसिंह के वह कृष्णाजिन्न का असल हाल किसी से न कहे और न हम तीनों में से कोई किसी चौथे को उसका भेद बतावे । पर अब मैं देखता हूँ तो कृष्णाजि॰ का असल हाल तुमको भी मालूम होना उचित जान पड़ता है पर साथ ही हम अपने ऐयार की की हुई प्रतिज्ञा को भी तोड़ना नहीं चाहते ।

इन्द्रदेव० । निःसन्देह कृष्णाजिन्न का हाल जानना मुझे आवश्यक है परन्तु मैं भी यह नहीं पसन्द करता कि भैरोसिंह या आपकी मण्डली में से किसी की प्रतिज्ञा भंग हो । आप इसके लिये चिन्ता न करें, मैं कृष्णाजिन्न को पहिचाने बिना नहीं रहता, बस एक दफे सामना होने की देर है ।

बीरेन्द्र० । मेरा भी यही विश्वास है ।

इन्द्रदेव० । अच्छा तो अब उन कैदियों के पास चलना चाहिये ।

बीरेन्द्र० । चलो हम तैयार हैं । (तेजसिंह, देवीसिंह, लक्ष्मीदेवी, कमलिनी और किशोरी इत्यादि की तरफ इशारा करके) इन सभों को भी लेते चलें ?

इन्द्रदेव० । जी हाँ, मैं तो पहिले ही अर्ज कर चुका हूँ, बल्कि ज्योतिषीजी तथा भैरोसिंह को भी लेते चलिये ।

इतना सुनते ही राजा बीरेन्द्रसिंह उठ खड़े हुए और सभों को साथ लिये हुए तहखाने की तरफ रवाना हुए । जगन्नाथ ज्योतिषी को बुलाने के लिये देवीसिंह भेज दिये गये ।

ये लोग धीरे धीरे जब तक तहखाने के दर्वाजे पर पहुँचे तब तक जगन्नाथ ज्योतिषी भी आ गए और सब कोई एक साथ मिल कर तहखाने के अंदर गए ।

इस तहखाने अन्दर जानेवाले रास्ते का हाल हम पहिले लिख चुके हैं इसलिए पुनः लिखने की आवश्यकता न जान कर केवल मतलब की बातें ही लिखते हैं ।

ये सब लोग तहखाने के अन्दर जाकर उसी दालान में पहुँचे जिसमें तहखाने के दारोगा साहब रहा करते थे और जिसके पीछे की तरफ कई कोठड़ियाँ थीं। इस समय भैरोसिंह और देवीसिंह अपने हाथ में मशाल लिए हुए थे जिसकी रोशनी से बखूबी उजाला हो रहा था और वहाँ की हर एक चीज साफ-साफ दिखाई दे रही थी। ये लोग इन्द्रदेव के पीछे पीछे एक कोठड़ी के अन्दर घुसे जिसमें सदर दर्वाजे के अलावे एक दर्वाजा और भी था। सब कोई उस दर्वाजे में घुस कर दूसरे खण्ड में पहुँचे जहाँ बीचोबीच में छोटा सा चौक था और उसके चारो तरफ दालान और दालानों के बाद बहुत सी लोहे के सीखचों से बनी हुई जंगलेदार ऐसी कोठड़ियाँ थीं जिनके देखने से साफ मालूम होता था कि यह कैदखाना है और इन कोठड़ियों में रहनेवाले आदमियों को स्वप्न में भी रोशनी नसीब न होती होगी।

उन्हीं सीखचेवाली कोठड़ियों में से एक में दारोगा, दूसरे में मायारानी, और तीसरे में नकली बलभद्रसिंह कैद था जब ये लोग यकायक उस कैदखाने में पहुँचे और उजाला हुआ तो तीनों कैदी जो अब तक एक दूसरे को नहीं देख सकते थे ताज्जुब की निगाहों से उन लोगों को देखने लगे। जिस समय दारोगा की निगाह इन्द्रदेव पर पड़ी उसके दिल में यह ख्याल पैदा हुआ कि या तो अब इसको इस कैदखाने से छुट्टी ही मिलेगी या इससे भी ज्यादे दुःख भोगना पड़ेगा।

इन्द्रदेव पहिले मायारानी की तरफ गया जिसका रंग एक दम से पीला पड़ गया था और जिसकी आँखों के सामने मौत की भयानक सूरत हर दम फिरा करती थी। दो तीन पल तक मायारानी को देखने बाद इन्द्रदेव उस कोठड़ी के सामने आया जिसमें नकली बलभद्रसिंह कैद था, उसकी सूरत देखते ही इन्द्रदेव ने कहा, "ऐ मेरे लड़कपन के दोस्त बलभद्रसिंह! मैं तुम्हें सलाम करता हूँ। आज ऐसे भयानक कैदखाने में तुम्हें देखकर मुझे बड़ा रञ्ज होता है। तुमने क्या कसूर किया था जो यहाँ भेजे गये?"

नकली बलभद्र०। मैं कुछ भी नहीं जानता कि मुझ पर क्या दोष लगाया गया है। मैं तो अपनी लड़कियों से मिल कर खुश हुआ था मगर अफसोस! राजा साहब ने इन्साफ करने के पहिले ही मुझे कैदखाने में भेज दिया!!

भैरो०। राजा साहब ने तुम्हें कैदखाने में नहीं भेजा बल्कि तुमने खुद

कैदखाने में आने का बंदोबस्त किया! महाराज ने तो मुझे ताकीद की थी कि तुम्हें इज्जत और खातिरदारी के साथ रक्खूँ मगर जब तुमने इन्साफ होने के पहिले ही भागने का उद्योग किया तो लाचार ऐसा करना पड़ा।

इन्द्र०। नहीं नहीं, अगर ये मेरे दोस्त हैं और वास्तव में बलभद्रसिंह हैं तो इनके साथ ऐसा न करना चाहिये!

बल०। मैं वास्तव में बलभद्रसिंह हूँ। क्या लक्ष्मीदेवी मुझे नहीं पहचानती जिसके साथ मैं एक ही कैदखाने में कैद था?

इन्द्र०। लक्ष्मीदेवी तो खुद तुमसे दुश्मनी कर रही है, वह कहती है कि यह बलभद्रसिंह नहीं है बल्कि जैपालसिंह है।

इतना सुनते ही नकली बलभद्रसिंह चौंक उठा और उसके चेहरे पर डर तथा घबराहट की निशानी दिखाई देने लगी। वह समझ गया कि इन्द्रदेव मुझ पर दया करने के लिए नहीं आया बल्कि मुझे सताने के लिए आया है। कुछ देर तक सोचने बाद उसने इन्द्रदेव से कहा :—

बल०। यह बात लक्ष्मीदेवी तो नहीं कह सकती बल्कि तुम स्वयं कहते होगे!

इन्द्र०। अगर ऐसा भी हो तो क्या हर्ज है, तुम इस बात का क्या जवाब देते हो?

बलभद्र०। झूठी बात का जो कुछ जवाब दिया जा सकता हो वही मेरा जवाब है।

इ०। क्या तुम जैपाल नहीं हो?

बल०। मैं जानता भी नहीं कि जैपाल किस जानवर का नाम है।

इ०। अच्छा जैपाल नहीं तो बालेसिंह सही।

बालेसिंह का नाम सुनते ही नकली बलभद्रसिंह फिर घबड़ा गया और मौत की भयानक सूरत उसकी आँखों के सामने दिखाई देने लगी। उसने कुछ जवाब देने का इरादा किया मगर बोल न सका। उसकी ऐसी अवस्था देखकर इन्द्रदेव ने तेजसिंह से कहा, "दारोगा और मायारानी को भी इसी कोठरी में लाना चाहिये जिसमें मेरी बातों से तीनों बेईमानों के दिल का पता लगे!" यह बात तेजसिंह ने भी पसंद की और बात की बात में तीनों कैदी एक साथ कर दिये गये और तब इन्द्रदेव ने दारोगा से पूछा, "आपको इस आदमी का नाम बताना होगा जो आप के बगल में कैदियों की तरह बैठा हुआ है।

दारोगा० । मैं इसे नहीं जानता और जब वह स्वयं कह रहा है कि बलभद्र सिंह है तो मुझसे क्यों पूछते हो ?

इ० । तो क्या आप बलभद्रसिंह की सूरत शक्ल भूल गये जिसकी लड़की को आपने मुंदर के साथ बदल कर हद्द से ज्यादे दुःख दिया ?

दारोगा० । हाँ मुझे उसकी सूरत याद है मगर जब यह मेरे यहाँ कैद था तब आप ही ने इसे जहर की पुड़िया खिलाई थी जिसके असर से निःसन्देह इसे मर जाना चाहिये था मगर न मालूम क्योंकर बच गया फिर भी उस जहर की तासीर ने इसका तमाम बदन बिगाड़ दिया और इस लायक न रक्खा कि कोई पहिचाने और बलभद्रसिंह के नाम से इसे पुकारे ।

दारोगा की बात सुन कर इन्द्रदेव की आँखें मारे क्रोध के लाल हो गईं और उसने दाँत पीस कर कहा—

इ० । कम्बख्त बेईमान ! तू चाहता है कि अपने साथ मुझे भी लपेटे ! मगर ऐसा नहीं हो सकता, तेरी इन बातों से लक्ष्मीदेवी और राजा बीरेन्द्रसिंह का दिल मुझसे नहीं फिर सकता ! इसका सबब अगर तू जानता तो ऐसी बातें कदापि न कहता, खैर इसका सबब मैं तुझसे बयान करता हूँ सुन ! अगर तू बलभद्रसिंह को किसी दूसरी जगह न छिपा रखता और उसका हाल मुझे मालूम होता तो बेशक मैं उसकी जान बचाता और उसे तेरे कैदखाने से निकाल लेता, मगर फिर भी वह शख्स मैं ही हूँ जिसने लक्ष्मीदेवी को तुझ बेईमान और विश्वासघाती के पंजे से छुड़ा कर वर्षों अपने घर में इस तरह रक्खा कि तुझे कुछ भी मालूम न हुआ और मेरे ही सबब से लक्ष्मीदेवी आज इस लायक हुई कि तुझसे अपना बदला ले !

दारोगा० । मगर ऐसा नहीं हो सकता !

यद्यपि इन्द्रदेव की बात सुनकर आश्चर्य और डर से दारोगा के रोंगटे खड़े हो गए मगर फिर भी न मालूम किस भरोसे पर वह बोल उठा कि—'मगर ऐसा नहीं हो सकता ।' और उसके इस कहने ने सभों को आश्चर्य में डाल दिया ।

इ० । (दारोगा से) मालूम होता है कि तेरा घमंड अभी टूटा नहीं और तुझे अब भी किसी की मदद पहुँचने और अपने बचने की आशा है ।

दारोगा० । बेशक ऐसा ही है ।

अब इन्द्रदेव अपने क्रोध को बर्दाश्त न कर सका और उसने कोठरी के अंदर घुसकर दारोगा के बाएँ गाल पर ऐसी चपत जमाई कि वह तलमला कर जमीन पर लुढ़क गया क्योंकि हथकड़ी और बेड़ी के कारण उसके हाथ और पैर मजबूर हो रहे थे। इसके बाद इन्द्रदेव ने नकली बलभद्रसिंह का बदन नंगा कर डाला और अपने कमर से एक चमड़े का तसमा खोल मारना और पूछना शुरू किया, "बता तू जैपाल है या नहीं इन्दिरा कहाँ है?"

यद्यपि तसमे की मार खाकर नकली बलभद्रसिंह बिना जल की मछलीकी तरह तड़पने लगा मगर मुँह से सिवाय 'हाय' के कुछ भी न बोला। इन्द्रदेव उसे और मारा चाहता था कि एक गम्भीर आवाज ने उसका हाथ रोक दिया और वह ध्यान दे कर उसे सुनने लगा। आवाज यह थी—

"होशियार! होशियार!!"

इस आवाज ने केवल इन्द्रदेव ही को नहीं बल्कि उन सभों ही को चौंका दिया जो वहाँ मौजूद थे। इन्द्रदेव कैदखाने की कोठरी में से बाहर निकल आया और छत की तरफ सिर उठा कर देखने लगा जिधर से वह आवाज आई थी। मशाल की रोशनी बखूबी हो रही थी जिससे छत का एक सूराख जिसमें आदमी का सर बखूबी जा सकता था साफ दिखाई पड़ता था। सभों को विश्वास हो गया कि आवाज इसी में से आई है।

दो चार पल तक सभोंने राह देखा मगर फिर आवाज सुनाई न दी। आखिर इन्द्रदेव ने पुकारकर कहा, "कौन बोला था?"

फिर आवाज आई—"हम।"

इ०। तुमने क्या कहा था?

आवाज०। होशियार, होशियार!

इ०। क्यों!

आवाज०। दुश्मन आ पहुँचा और तुम लोग मुसीबत में फँसा चाहते हो।

इन्द्र०। तुम कौन हो?

आवाज०। कोई तुम लोगों का हिती।

इन्द्र०। कैसे समझा जाय कि तुम हमलोगों के हिती हो और जो कुछ कहते हो वह सच है?

आवाज० । हिती होने का सबूत इस समय देना कठिन है मगर इस बात का सबूत मिल सकता है कि हमने जो कुछ कहा है वह सच है ।

इन्द्र० । इसका क्या सबूत ?

आवाज० । बस इतना ही कि इस तहखाने से निकलने के सब दर्वाजे बन्द हो गये और अब आप लोग बाहर नहीं जा सकते ।

अब तो सभों का कलेजा दहल उठा, आश्चर्य से एक दूसरे का मुँह देखने लगे । तेजसिंह ने देवीसिंह और भैरोसिंह की तरफ देखा और वे दोनों उसी समय इस बात का पता लगाने चले गए कि तहखाने के दर्वाजे वास्तव में बन्द हो गए या नहीं, और इसके बाद इन्द्रदेव ने फिर छत की तरफ मुँह करके कहा, "हाँ तो क्या तुम बता सकते हो कि वे लोग कौन हैं जिन्होंने इस तहखाने में हम लोगों को घेरने का इरादा किया है ?"

आवाज० । हाँ बता सकते हैं ।

इन्द्र० । अच्छा उनके नाम बताओ ?

आवाज० । कमलिनी के तिलिस्मी मकान से छूट कर भागे हुए शिवदत्त माधवी और मनोरमा तथा उन्हीं तीनों की मदद से छूटा हुआ दिग्विजयसिंह का लड़का कल्याणसिंह जो इस तिलिस्मी तहखाने का हाल उतना ही जानता है जितना उसका बाप जानता था ।

इन्द्र० । वह तो चुनार में कैद था ?

आवाज० । हाँ कैद था मगर छूट गया जैसा कि मैंने कहा ।

इन्द्र० । तो क्या वे लोग हम सभों को नुकसान पहुँचा सकते हैं ?

आवाज० । सो तो तुम्हीं लोग जानो, मैंने केवल तुम लोगों को होशियार कर दिया, अब जिस तरह अपने को बचा सको बचाओ ।

इन्द्र० । (कुछ सोच कर) उन चारों के साथ कोई और भी है ?

आवाज० । हाँ, एक हजार के लगभग फौज भी है जो किले के अन्दर इसी तहखाने की किसी गुप्त राह से घुस कर अपना दखल जमाया चाहती है ।

इन्द्र० । इतनी मदद उन सभों को कहाँ से मिली ?

आवाज० । इसी कम्बख्त माधवीरानी की बदौलत ?

इन्द्र० । क्या तुम भी उन्हीं लोगों के साथ हो ?

आवाज०। नहीं।

इन्द्र०। तब तुम कौन हो?

आवाज०। एक दफे तो कह चुका कि तुम्हारा कोई हिती हूँ।

इन्द्र०। अगर हितो हो तो हम लोगों की कुछ मदद भी कर सकते हो?

आवाज०। कुछ भी नहीं।

इन्द्र०। क्यों?

आवाज०। मजबूरी से।

इन्द्र०। मजबूरी कैसी?

आवाज०। वैसी ही।

इन्द्र०। तो क्या तुम हम लोगों की मदद किये बिना ही इस तहखाने के बाहर चले जाओगे?

आवाज०। नहीं, क्योंकि रास्ता बन्द है।

इतना सुन कर इन्द्रदेव चुप हो गया और कुछ देर तक सोचता रहा, इसके बाद राजा बीरेन्द्रसिंह का इशारा पाकर फिर बातचीत करने लगा :—

इन्द्र०। तुम अपना नाम क्यों नहीं बताते?

आवाज०। व्यर्थ समझ कर।

इन्द्र०। क्या हम लोगों के पास भी नहीं आ सकते?

आवाज०। नहीं।

इन्द्र०। क्यों?

आवाज०। रास्ता नहीं है।

इन्द्र०। तो क्या तुम यहाँ से निकल कर बाहर भी नहीं जा सकते?

इस बात का जवाब कुछ भी न मिला, इन्द्रदेव ने पुनः पूछा मगर फिर भी जवाब न मिला। इतने ही में छत पर धमधमाहट की आवाज इस तरह आने लगी जैसे पचासों आदमी चारो तरफ दौड़ते उछलते या कूदते हों। उसी समय इन्द्रदेव ने राजा बीरेन्द्रसिंह की तरफ देख कर कहा, "अब मुझे निश्चय हो गया कि इस गुप्त मनुष्य का कहना ठीक है और इस छत के ऊपर वाले खण्ड में ताज्जुब नहीं कि दुश्मन आ गये हों और यह उन्हीं के पैरों की धमधमाहट हो।" राजा बीरेन्द्रसिंह इन्द्रदेव की बात का कुछ जवाब दिया ही चाहते थे कि उसी मौके में

से जिसमें से गुप्त मनुष्य के बातचीत की आवाज आती थी, रंग बिरंग की और बहुत से आदमियों के बोलने की आवाजें आने लगीं। साफ सुनाई देता था कि बहुत से आदमी आपुस में लड़भिड़ रहे और तरह तरह की बातें कर रहे हैं।

"कहाँ है ? कोई तो नहीं ! जरूर है ! यही है ! यहा है ! पकड़ो पकड़ो !! तेरी ऐसी तैसी, तू क्या हमें पकड़ेगा ? क्यों नहीं, अब तू बच के जा कहाँ सकता है ? अच्छा देखें सही तू हमारा क्या कर सकता है !!" इत्यादि आवाजें कुछ देर तक सुनाई देती रहीं, इसके बाद उसी मोखे में से बिजली की तरह चमक दिखाई देने लगी। उस समय "हाय रे, यह क्या, जले जले, मरे मरे, देव है देव, भूत है भूत, देवता, काल है काल, अग्निदेव, कुछ नहीं कुछ नहीं, जाने दो, हम नहीं, हम नहीं !" इत्यादि की आवाजें सुनाई देने लगीं जिससे बेचारी किशोरी और कामिनी का कोमल कलेजा दहलने लगा और वे थर थर काँपने लगीं। राजा बीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह वगैरह भी घबड़ा कर सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिये ?

इन्द्र०। दुश्मनों के आने में कोई शक नहीं !

बीरेन्द्र०। खैर क्या हर्ज है, लड़ाई से हम लोग डरते नहीं अगर कुछ खयाल है तो केवल इतना ही कि इस तहखाने में पड़े रह कर बेबसी की हालत में जान न देनी पड़े क्योंकि दर्वाजों के बन्द होने की खबर सुनाई देती है, अगर दुश्मन लोग आ गये तब तो कोई हर्ज नहीं क्योंकि जिस राह से वे लोग आवेंगे वही राह हम लोगों के निकल जाने के लिए भी होगी हाँ पता लगाने में जो कुछ बिलम्ब हो (रुक कर) लो भैरो और देवीसिंह भी आ गये (दोनों ऐयारों से) कहो क्या खबर है ?

देवी०। दर्वाजे बन्द हैं।

भैरो०। किले के बाहर निकल जाने वाला दर्वाजा भी बन्द है।

तेज०। खैर कोई चिन्ता नहीं, अब तो दुश्मनों का आ जाना ही हमारे लिये बेहतर है।

इन्द्रदेव०। कहीं ऐसा न हो कि हम लोग तो दुश्मनों से लड़ने के फेर में रह जायँ और दुश्मन लोग तीनों कैदियों को छुड़ा ले जायँ अस्तु पहिले कैदियों का बन्दोबस्त करना चाहिये और इससे भी ज्यादे जरूरी (किशोरी कामिनी इत्यादि की तरफ इशारा करके) इन लड़कियों की हिफाजत है।

कमलिनी० । मुझे छोड़ कर और सभों की फिक्र कीजिये क्योंकि तिलिस्मी खंजर अपने पास रख कर भी छिपे रहना मैं पसन्द नहीं करती, मैं लड़ूँगी और अपने खंजर की करामात देखूँगी ।

बीरेन्द्र० । नहीं नहीं हम लोगों के रहते हमारी लड़कियों को हौसला करने की कोई जरूरत नहीं है ।

इन्द्रदेव० । कोई हर्ज नहीं, आप कमलिनी के लिये चिन्ता न करें, मैं खुशी से देखा चाहता हूँ कि वर्षों मेहनत करके मैंने जो कुछ विद्या इसे सिखाई है उससे यह कहाँ तक फायदा उठा सकती है, खैर देखिये मैं सभों का बन्दोबस्त करे देता हूँ ।

इतना कह कर इन्द्रदेव ने ऐयारों की तरफ देखा और कहा, "इन कैदियों की आँखों पर शीघ्र पट्टी बाँधिये ।" सुनने के साथ ही बिना कुछ पूछे भैरोसिंह तारासिंह और देवीसिंह जङ्गल के अन्दर चले गए और बात की बात में तीनों कैदियों की आँखों पर पट्टियाँ बाँध दीं । इसके बाद इन्द्रदेव ने छत की तरफ देखा जहाँ लोहे की बहुत सी कड़ियाँ लटक रही थीं । उन कड़ियों में से एक कड़ी को इन्द्रदेव ने उछल कर पकड़ लिया और लटकते हुए तीन चार झटके दिये जिससे वह कड़ी नीचे की तरफ खिंच आई और इन्द्रदेव का पैर जमीन के साथ लग गया । वह कड़ी एक लोहे की जंजीर के साथ बँधी हुई थी जो खैंचने के साथ ही नीचे तक खिच आई और जंजीर खिंच जाने से एक कोठड़ी का दर्वाजा ऊपर की तरफ चढ़ गया जैसे पुल का तख्ता जंजीर खैंचने से ऊपर की तरफ चढ़ जाता है । यह कोठड़ी उसी दालान में दीवार के साथ इस ढंग से बनी हुई थी कि दर्वाजा बन्द रहने की हालत में इस बात का कुछ भी पता नहीं लग सकता था कि यहाँ पर कोई कोठड़ी है ।

जब कोठड़ी का दर्वाजा खुल गया तब इन्द्रदेव ने कमलिनी को छोड़ के बाकी औरतों को उस कोठड़ी के अन्दर कर देने के लिये तेजसिंह से कहा और तेजसिंह ने ऐसा ही किया । जब सब औरतें कोठड़ी के अन्दर चली गईं तब इन्द्रदेव ने हाथ से कड़ी छोड़ दी । उस कोठड़ी का दर्वाजा बन्द हो गया और वह कड़ी छत के साथ इस तरह चपक गई जैसे कोई चीज लटकाने के लिये जड़ी हो ।

इसके बाद इन्द्रदेव ने तीनों कैदियों को भी वहाँ से निकाल ले जा कर किसी

दूसरी जगह बंद कर देने का इरादा किया मगर ऐसा करने का समय न मिला, क्योंकि उसी समय पुनः "सावधान, सावधान !" की आवाज आई और कैदखाने वाली कोठड़ी के बाहर बहुत से आदमियों के आ पहुँचने की आहट मिली अतएव हमारे बहादुर लोग कमलिनी के सहित बाहर निकल आये। राजा बीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह ने म्यान से तलवार निकाल ली, कमलिनी ने तिलिस्मी खंजर सम्हाला, ऐयारों ने कमन्द और खंजर को दुरुस्त किया, और इन्द्रदेव ने अपने बटुए में से छोटे छोटे चार गेंद निकाले और लड़ने के लिये हर तरह से मुस्तैद हो कर सभों के साथ कोठड़ी के बाहर निकल आया।

राजा बीरेन्द्रसिंह उनके ऐयारों और इन्द्रदेव को विश्वास हो गया था कि उस गुप्त मनुष्य ने जो कुछ कहा वह सब ठीक है और शिवदत्त माधवी और मनोरमा के साथ ही साथ दिग्विजयसिंह का लड़का कल्याणसिंह भी अपने मददगारों को लिये हुए इसी तहखाने में दिखाई देगा, इसलिये इन्द्रदेव और ऐयार लोग इस बात की फिक्र में थे कि जिस तरह हो सके चारो ही को नहीं तो कल्याणसिंह और शिवदत्त को तो जरूर ही पकड़ लेना चाहिये परन्तु वे लोग ऐसा न कर सके, क्योंकि कोठरी के बाहर निकलते ही जिन लोगों ने उन पर हमला किया वे सब के सब अपने चेहरों पर नकाब डाले हुए थे इसलिये उनमें से अपने मतलब के आदमियों को पहिचानना बड़ा कठिन था। इन्द्रदेव ने जल्दी के साथ कमलिनी से कहा, "तू हम लोगों के पीछे इसी दर्वाजे के बीच में खड़ी रह, जब कोई तुझ पर हमला करे या इस कैदखाने के अंदर जाने लगे तो तू अपने तिलिस्मी खंजर से उस पर हमला कीजियो" और कमलिनी ने ऐसा ही किया।

जब हमारे बहादुर लोग कैदखाने वाली कोठड़ी से बाहर निकले तो देखा कि उन पर हमला करने वाले सैकड़ों नकाबपोश हाथों में नंगी तलवारें लिये हुए आ पहुंचे और मार मार कह कर तलवारें चलाने लगे। हमारे बहादुर लोग भी जो यद्यपि गिनती में उनसे बहुत ही कम थे दुश्मनों के वारों का जवाब देने और अपने वार करने लगे। हमारे दोनों ऐयारों ने मशालें जमीन पर फेंक दीं क्योंकि दुश्मनों के साथ ही साथ हमारे बहादुरों का काम भी अच्छी तरह चल सकता था।

इसमें कोई शक नहीं कि दुश्मनों ने जी तोड़ कर लड़ाई की और राजा बीरेन्द्रसिंह वगैरह को गिरफ्तार करने का बहुत उद्योग किया मगर कुछ कर न सके

और हमारे बहादुर बीरेंद्रसिंह तथा आफत के परकाले उनके ऐयारों ने ऐसी बहादुरी दिखाई कि दुश्मनों के छक्के छूट गये। राजा बीरेंद्रसिंह की न रुकने वाली तलवार ने तीस आदमियों को यमलोक का रास्ता दिखाया, ऐयारों ने कमन्दों की उलझन में डाल कर पचासों को जमीन पर सुलाया जो अपने ही साथियों के पैरों के तले रौंदे जा कर बेकाम हो गए। इन्द्रदेव ने जो चारों गेंद निकाले थे उन्होंने तो अजीब ही तमाशा दिखाया। इंद्रदेव ने उन गेंदों को बारी बारी से दुश्मनों के बीच में फेंका जो ठेस लगने के साथ ही आवाज दे कर फट गए और उनमें से निकले हुए आग के शोलों ने बहुतों को जलाया और बेकाम किया। जब दुश्मनों ने देखा कि हम राजा बीरेंद्रसिंह और उनके साथियों का कुछ भी न कर सके और उन्होंने हमारे साथियों को मारा और बेकाम कर दिया, तो वे लोग भागने की फिक्र में लगे मगर वहाँ से भाग जाना भी असम्भव था, क्योंकि वहाँ से निकल जाने का रास्ता उन्हें मालूम न था। कल्याणसिंह जिस राह से उन सभों को इस तहखाने में लाया था उसे बन्द न भी कर देता तो उस घूमघुमौवे और पेचीले रास्ते का पता लगा कर निकल जाना कठिन था।

आधी घड़ी से ज्यादे देर तक मौत का बाज़ार गर्म रहा। दुश्मन लोग मारे जाते थे और ऐयारों को सर्दारों के गिरफ्तार करने की फिक्र थी, इसी बीच में तहखाने के ऊपरी हिस्से से किसी औरत के चिल्लाने की आवाज आने लगी और सभों का ध्यान उसी तरफ चला गया। तेजसिंह ने भी उसे कान लगा कर सुना और कहा, "किशोरी की आवाज मालूम पड़ती है !! वह आवाज यह थी—

"हायरे मुझे बचाओ, अब मेरी जान न बचेगी, दोहाई राजा बीरेन्द्रसिंह की!"

इस आवाज ने केवल तेजसिंह ही को नहीं बल्कि राजा बीरेन्द्रसिंह को भी परेशान कर दिया। वह ध्यान दे कर उस आवाज को सुनने लगे। इसी बीच में एस दूसरे आदमी की आवाज भी उसी तरफ से आने लगी। राजा बीरेन्द्रसिंह और उनके साथियों ने पहिचान लिया कि यह उसी की आवाज है जो कैदखाने की कोठड़ी में थोड़ी देर पहिले गुप्त रीति से बातें कर रहा था और जिसने दुश्मनों के आने की खबर दी थी। वह आवाज यह थी—

"होशियार होशियार, देखो यह चांडाल बेचारी किशोरी को पकड़े लिए जाता है। हाय! बेचारी किशोरी फिर अपने दुष्ट बाप के पंजे में फँस गई!

इन्द्रदेव, इन्द्रदेव ! बेचारी किशोरी को बचाने की फिक्र करो ! रह तो जा नालायक, पहिले मेरा मुकाबला तो कर ले !!"

इस आवाज ने राजा बीरेन्द्रसिंह तेजसिंह इन्द्रदेव और उनके साथियों को बहुत ही परेशान कर दिया और वे लोग घबड़ा कर चारो तरफ देखने तथा सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिये।

बारहवां बयान

हम ऊपर लिख आये हैं कि इन्द्रदेव ने भूतनाथ को अपने मकान से बाहर जाने न दिया और अपने आदमियों को यह ताकीद करके कि भूतनाथ को हिफाजत और खातिरदारी के साथ रक्खें रोहतासगढ़ की तरफ रवाना हो गया।

यद्यपि भूतनाथ इन्द्रदेव के मकान में रोक लिया गया और वह भी उस मकान से बाहर होने का रास्ता न जानने के कारण लाचार और चुप हो रहा मगर समय और आवश्यकता ने वहाँ उसे चुपचाप बैठने न दिया और उस मकान से बाहर निकलने का मौका उसे मिल ही गया।

जब इन्द्रदेव रोहतासगढ़ की तरफ रवाना हो गया उसके दूसरे दिन दोपहर के समय सर्यूसिंह जो इन्द्रदेव का बड़ा विश्वासी ऐयार था भूतनाथ के पास आया और बोला, "क्यों भूतनाथ, तुम चुपचाप बैठे क्या सोच रहे हो ?"

भूत०। बस अपनी बदनसीबी पर रोता और झख मारता हूँ, इसी के साथ साथ इस बात को भी सोच रहा हूँ कि आदमी को दुनिया में किस ढंग से रहना चाहिये।

सर्यू०। क्या तुम अपने को बदनसीब समझते हो ?

भूत०। क्यों नहीं ! तुम नहीं जानते कि वर्षों से मैं राजा बीरेन्द्रसिंह का काम कैसी ईमानदारी और नेकनीयती के साथ कर रहा हूँ ? और क्या यह बात तुमसे छिपी हुई है कि उस सेवा करने का बदला आज मुझे क्या मिल रहा है ?

सर्यू०। (पास बैठ कर) मै सब कुछ जानता हूँ मगर भूतनाथ, मैं फिर भी यह कहने से बाज न आऊँगा कि आदमी को कभी हताश न होना चाहिये और हमेशे बुरे कामों की तरफ से अपने दिल को रोक कर नेक काम में तन मन धन से लगे रहना चाहिये। ऐसा करने वाला निःसन्देह सुख भोगता है। चाहे

बीच बीच में उसे थोड़ी बहुत तकलीफ भी क्यों न उठानी पड़े, अस्तु आज कल के दुःखों से तुम हताश मत हो जाओ और राजा बीरेन्द्रसिंह तथा उनकी तरह सुजन लोगों के साथ नेकी करने से अपने दिल को मत रोको। तुम तो ऐयार हो और ऐयारों में भी नामी ऐयार, फिर भी दो चार दुष्टों की अनोखी कार्रवाइयों से आ पड़नेवाली आफतों को न सहकर उदास हो जाओ तो बड़े आश्चर्य की बात है!!

भूत०। नहीं नहीं मेरे दोस्त, मैं हताश होने वाला आदमी नहीं हूँ, मैं तो केवल समय का हेर फेर देख कर अफसोस कर रहा हूँ। निःसन्देह मुझसे दो एक काम बुरे हो गये और उसका बदला भी मैं पा चुका हूँ, मगर फिर भी मेरा दिल यह कहने से बाज नहीं आता कि तेरे माथे से कलंक का टीका अभी तक साफ नहीं हुआ अतएव तू नेकी करता जा और भूलता जा।

सर्यू०। शाबास, मैं केवल तुम्हीं को नहीं बल्कि तुम्हारे दिल को भी अच्छी तरह जानता हूँ और वे बातें मुझसे छिपी हुई नहीं हैं जिनका इलजाम तुम पर लगाया गया है। यद्यपि मैं एक ऐसे सर्दार का ऐयार हूँ जो किसी के नेक बद से सरोकार नहीं रखता और इस स्थान को देखने वाला कह सकता है कि वह दुनिया के पर्दे के बाहर रहता है मगर फिर भी मैं काम ज्यादे न होने के सबब से घूमता फिरता और नामी ऐयारों की कार्रवाइयों को देखा सुना करता हूँ और यही सबब है कि मैं उन भेदों को भी कुछ कुछ जानता हूँ जिनका इलजाम तुम पर लगाया गया है।

भूत०। (आश्चर्य से) क्या तुम उन भेदों को जानते हो!

सर्यू०। बखूबी नहीं मगर कुछ कुछ।

भूत०। तो मेरे दोस्त! तुम मेरी मदद क्यों नहीं करते? तुम मुझे इस आफत से क्यों नहीं छुड़ाते! आखिर हम तुम एक ही पाठशाला के पढ़े लिखे हैं, क्या लड़कपन की दोस्ती पर ध्यान देते तुम्हें शर्म आती है! या क्या तुम इस लायक नहीं हो?

सर्यू०। (हँस कर) नहीं नहीं ऐसा ख्याल न करो, मैं तुम्हारी मदद जरूर करूँगा, अभी तक तो तुम्हें किसी से मदद लेने की आवश्यकता भी नहीं पड़ी थी और जब आवश्यकता आ पड़ी तो मैं मदद करने के लिये हाजिर भी हो गया हूं।

भूत०। (मुसकुरा कर) तब तो मुझे खुश होना चाहिये, मगर जब तक

तुम्हारा मालिक रोहतासगढ़ से लौट कर न आ जाय तब तक हम लोग कुछ भी न कर सकेंगे।

सर्यू०। क्यों न कर सकेंगे?

भूत०। इसलिये कि तुम्हारा मालिक हमें यहाँ कैद कर गया है। हम इसे कैद ही समझते हैं जब कि यहाँ से बाहर निकलने की आज्ञा नहीं है।

सर्यू०। यह कोई बात नहीं है, अगर जरूरत आ पड़े तो हम तुम्हें इस मकान के बाहर कर देंगे चाहे बाहर होने का रास्ता अपने मालिक के नियमानुसार न बतावें।

भूत०। (प्रसन्नता से हाथ उठा कर) ईश्वर! तू धन्य है! अब आशा-लता ने जिसमें सुन्दर और सुगंधित फूल लगे हुए हैं, मुझे फिर घेर लिया! (सर्यू से) अच्छा दोस्त! तो अब बताओ कि मुझे क्या करना चाहिये।

सर्यू०। सब के पहिले मनोरमा को अपने कब्जे में लाना चाहिये।

भूत०। (कुछ सोच कर) ठीक कहते हो, मेरी भी एक दफे यही इच्छा हुई थी, मगर क्या तुम इस बात को नहीं जानते कि शिवदत्त मनोरमा और.....

सर्यू०। (बात काट कर) मैं खूब जानता हूँ कि शिवदत्त माधवी और मनोरमा को कमलिनी के कैदखाने से निकल भागने का मौका मिला और वे लोग भाग गये।

भूत०। तब?

सर्यू०। मगर आज एक खबर ऐसी सुनने में आई है जो आश्चर्य और उत्कंठा से भरी हुई है और हम लोगों को चुपचाप बैठे रहने की आज्ञा नहीं देती।

भूत०। वह क्या?

सर्यू०। यही कि कम्बख्त मायारानी की मदद पाकर शिवदत्त माधवी और मनोरमा ने जो पहिले ही से अमीर थे, अपनी ताकत बहुत बढ़ा ली और सब के पहिले उन्होंने यह काम किया कि राजा दिग्विजयसिंह के लड़के कल्याणसिंह को कैद से छुड़ा लिया जिसकी खबर राजा बीरेंद्रसिंह को अभी तक नहीं हुई और यह तो तुम जानते ही हो कि रोहतासगढ़ के तहखाने का भेद कल्याणसिंह उतना ही जानता है जितना उसका बाप जानता था।

भूत०। बेशक बेशक, अच्छा तब?

सर्यू० । अब उन लोगों ने यह सुनकर कि राजा बीरेंद्रसिंह, तेजसिंह इत्यादि ऐयार तथा किशोरी कामिनी कमलिनी कमला और लाडिली वगैरह सभी रोहतासगढ़ में मौजूद हैं, गुप्तरीति से रोहतासगढ़ जाने का इरादा किया है।

भूत० । बेशक कल्याणसिंह उन लोगों को तहखाने की गुप्त राह से किले के अंदर ले जा सकता है और इसका नतीजा निःसंदेह बहुत बुरा होगा।

सर्यू० । मैं भी यही सोचता हूँ, तिसपर मजा यह है कि वे लोग अकेले नहीं हैं बल्कि हजार फौजी सिपाहियों को भी उन लोगों ने अपना साथी बनाया है।

भूत० । और रोहतासगढ़ के तहखाने में इससे दूने आदमी भी हों तो सहज ही में समा सकते हैं, मगर मेरे दोस्त ! यह खबर तुमने कहाँ से और क्योंकर पाई?

सर्यू० । मेरे चेलों ने जो प्रायः बाहर घूमा करते हैं यह खबर मुझे सुनाई है।

भूत० । तो क्या मालूम नहीं हुआ कि शिवदत्त माधवी मनोरमा और कल्याणसिंह तथा उनके साथी किस राह से जा रहे हैं और कहाँ हैं?

सर्यू० । हाँ यह भी मालूम हुआ है, वे लोग बराबर घाटी की राह से जंगल ही जंगल जा रहे हैं।

भूत० । (कुछ देर तक गौर करके) मौका तो अच्छा है।

सर्यू० । बेशक अच्छा है।

भूत० । तब ?

सर्यू० । चलो हम तुम दोनों मिलकर कुछ करें।

भूत० । हम तैयार हैं, मगर इस बात को सोच लो कि ऐसा करने पर तुम्हारा मालिक रञ्ज तो न होगा।

सर्यू० । सब सोचा समझा है, हमारा मालिक भी रोतासगढ़ ही गया हुआ है और वह राजा बीरेन्द्रसिंह का पक्षपाती है।

भूत० । खैर तो बिलम्ब करना अपने अमूल्य समयको नष्ट करना है ! (ऊँची साँस लेकर) ईश्वर न करे शिवदत्त के हाथ कहीं किशोरी लग जाय, अगर ऐसा हुआ तो अबकी दफे यह बेचारी कदापि न बचेगी !

सर्यू० । मैं भी यही सोच रहा हूँ, अच्छा तो अब तैयार हो जाओ, मगर मैं नियमानुसार तुम्हारी आँखों पर पट्टी बाँधकर बाहर ले जाऊँगा।

भूत०। कोई चिंता नहीं, हाँ यह तो कहो कि मेरे ऐयारी के बटुए में कई मसालों की कमी हो गई है, क्या तुम उसे पूरा कर सकते हो ?

सर्यू०। हाँ हाँ, जिन जिन चीजों की जरूरत हो ले लो, यहाँ किसी बात की कमी नहीं है।

तेरहवां बयान

दोपहर दिन का समय है। गर्म गर्म हवा के झपेटों से उड़ी हुई जमीन की मिट्टी केवल आसमान ही को गदला नहीं कर रही है बल्कि पथिकों के शरीरों को भी अपना सा करती और आँखों को इतना खुलने नहीं देती है जिसमें रास्ते को अच्छी तरह देखकर तेजी के साथ चलें और किसी घने पेड़ के नीचे पहुँच कर अपने थके मांदे शरीर को आराम दें। ऐसे ही समय में भूतनाथ सर्यूसिंह और सर्यूसिंह का एक चेला आँखों को मिट्टी और गर्दसे बचाने के लिये अपने अपने चेहरों पर बारीक कपड़ा डाले रोहतासगढ़ की तरफ तेजी के साथ कदम बढ़ाये जा रहे हैं। तमाम बदन पर सेरों मिट्टी चढ़ी हुई है, कपड़े पसीने से तर हो रहे हैं, हवा के झपेटे आगे बढ़ने में रोक टोक करते हैं मगर ये तीनों अपनी धुन के पक्के इस तरह चले जा रहे हैं कि बात तक नहीं करते, हाँ उस सामने के घने जंगल की तरफ उनका ध्यान अवश्य है जहाँ आधी घड़ी के अन्दर ही पहुँच कर सफर की हरारत मिटा सकते हैं। उन दोनों ने अपनी चाल और भी तेज की और थोड़ी ही देर बाद उसी जंगल में एक सघन पेड़ के नीचे बैठकर थकावट मिटाते दिखाई देने लगे।

सर्यू०। (रूमाल से मुँह पोंछ कर) यद्यपि आज का सफर दुखदाई हुआ परंतु हमलोग ठीक समय पर ठिकाने पहुँच गए।

भूत०। अगर दुश्मनों का डेरा अभी तक इसी जंगल में हो तो हम भी ऐसा ही कहेंगे।

सर्यू०। बेशक वे लोग अभी तक इसी जंगल में होंगे क्योंकि हमारे शागिर्द ने उनके दो दिन तक यहाँ ठहरने की खबर दी थी और वह जासूसी का काम बहुत अच्छे ढग से करता है।

भूत०। तब हमलोगोंको कोई ऐसा ठिकाना ढूँढना चाहिए जहाँ पानी हो और हमलोग अपना भेष अच्छी तरह बदल सकें।

सर्यू०। जरा सा और आराम कर लें तब उठेंगे।

भूत०। क्या हर्ज है।

थोड़ी देर तक ये तीनों उसी पेड़ के नीचे बैठे बातचीत करते रहे और इसके बाद उठ कर ऐसे ठिकाने पहुँचे जहाँ साफ जल का सुन्दर चश्मा बह रहा था। उसी चश्मे के जल से बदन साफ करने बाद तीनों ऐयारों ने आपुस में कुछ सलाह करके अपनी सूरत बदली और वहाँ से उठ कर दुश्मनों की टोह में इधर उधर घूमते हुए सन्ध्या होने के पहिले ही उन लोगों का पता लगा लिया जो दो सौ आदमियों के साथ उसी जंगल में टिके हुए थे। जब रात हुई और अंधकार ने अपना दखल चारो तरफ अच्छी तरह जमा लिया तो ये तीनों भी उस लश्कर की तरफ रवाना हुए।

शिवदत्त और कल्याणसिंह तथा उनके साथियों ने जंगल के मध्य में डेरा जमाया हुआ था। खेमा या कनात का नाम निशान न था, बड़े-बड़े और घने पेड़ों के नीचे सभों का डेरा था। एक पेड़ के नीचे शिवदत्त और कल्याणसिंह मामूली बिछावन पर लेटे हुए बातें कर रहे थे और उनसे थोड़ी ही दूर पर उनके संगी साथी और सिपाही लोग अपने अपने काम में तथा रसोई बनाने की फिक्र में लगे हुए थे। जिस पेड़ के नीचे शिवदत्त और कल्याणसिंह थे उससे तीस या चालीस गज की दूरी पर दो पालकियाँ पेड़ों की झुरमुट के अन्दर रक्खी हुई थीं और उनमें माधवी तथा मनोरमा विराज रही थीं और उन्हीं के पीछे की तरफ बहुत से घोड़े पेड़ों के साथ बँधे हुए घास खा रहे थे।

शिवदत्त और कल्याणसिंह एकान्त में बैठ कर बातचीत कर रहे थे। उनसे थोड़ी ही दूर पर एक जवान जिसका नाम धन्नूसिंह था हाथ में नंगी तलवार लिए हुए पहरा दे रहा था और यही जवान उन दो सौ सिपाहियों का अफसर था जो इस समय इस जंगल में मौजूद थे। रात हो जाने के कारण कहीं कहीं पर रोशनी हो रही थी और एक लालटेन उस जगह पर जल रही थी जहाँ शिवदत्त और कल्याणसिंह बैठे हुए निम्नलिखित बातें कर रहे थे।

शिवदत्त०। हमारी फौज ठिकाने पहुँच गई होगी?

कल्याण०। बेशक!

शिवदत्त० । क्या इतने आदमियों का रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर समा जाना सम्भव है ?

कल्याण० । (हँस कर) इससे दूने आदमी भी अगर हों तो उस तहखाने में अँट सकते हैं ।

शिवदत्त० । अच्छा तो उस तहखाने में घुसने के बाद क्या क्या करना होगा ?

कल्याण० । उस तहखाने के अंदर चार कैदखाने हैं, पहिले उन कैदखानों को देखेंगे अगर उसमें कोई कैदी होगा तो उसे छुड़ा कर अपना साथी बनावेंगे, मायारानी और उसका दारोगा भी उन्हीं कैदखानों में से किसी में जरूर होगा और छूट जाने पर उन दोनों से बड़ी मदद मिलेगी ।

शिवदत्त० । बेशक बहुत बड़ी मदद मिलेगी, अच्छा, तब ?

कल्याण० । अगर उस समय बीरेंद्रसिंह वगैरह तहखाने की सैर करते हुए मिल जायँगे तो मैं उन लोगों के बाहर निकलने का रास्ता बंद करके उन्हें फँसाने की फिक्र करूँगा तथा आप फौजी सिपाहियों को ले कर किले के अंदर चले जाइयेगा और मर्दानगी के साथ किले में अपना दखल कर लीजियेगा ।

शिवदत्त० । ठीक है मगर यह कब सम्भव है कि उस समय बीरेंद्रसिंह वगैरह तहखाने की सैर करते हुए हम लोगों को मिल ही जायँगे ।

कल्याण० । अगर न मिलेंगे तो न सही, उस अवस्था में हमलोग एक साथ किले में अपना दखल जमावेंगे और बीरेंद्रसिंह तथा उनके ऐयारों को गिरफ्तार कर लेंगे । यह तो आप सुन ही चुके हैं कि किले में फौजी सिपाही पाँच सौ से ज्यादे नहीं हैं सो भी बेफिक्र बैठे होंगे और हम लोग यकायक हर तरह से तैयार जा पहुँचेंगे । मगर मेरा दिल यही गवाही देता है कि बीरेंद्रसिंह वगैरह को हम लोग तहखाने में सैर करते हुए अवश्य देखेंगे क्योंकि बीरेंद्रसिंह ने जहाँ तक सुना गया है, अभी तक तहखाने की सैर नहीं की, अबकी दफे जो वह वहाँ गए हैं तो जरूर तहखाने की सैर करेंगे और तहखाने की सैर दो एक दिन में हो नहीं सकती आठ दस दिन अवश्य लगेंगे और सैर करने का समय भी रात ही का ठीक होगा इसीसे कहते हैं कि अगर वे लोग तहखाने में मिल जायँ तो ताज्जुब नहीं ।

शिव० । अगर ऐसा हो तो क्या बात है ! मगर सुनो तो, कदाचित् बीरेन्द्रसिंह तहखाने में मिल गये तो तुम तो उनके फँसाने की फिक्र में लगोगे और मुझे

किले के अंदर घुस कर दखल करना होगा और मैं उस तहखाने के रास्ते को जानता नहीं। तुम कह चुके हो कि तहखाने में आने जाने के लिए कई रास्ते हैं और वे पेचीले हैं अस्तु ऐसी अवस्था में मैं क्या कर सकूँगा ?

कल्याण०। ठीक है मगर आपको तहखाने के कुछ रास्ते और वहाँ जाने की तर्कीब मैं सहज ही में समझा सकता हूँ।

शिव०। सो कैसे ?

कल्याणसिंह अपने पास पड़े हुए एक बटुए में से कलम दावात और कागज निकाल और लालटेन को जो कुछ हट कर जल रही थी पास रखने बाद कागज पर तहखाने का नक्शा खैंच कर समझाना शुरू किया। उसने ऐसे अच्छे ढंग से समझाया कि शिवदत्त को किसी तरह का शक न रहा और उसने कहा, "अब मैं बखूबी समझ गया।" उसी समय बगल से यह आवाज आई, "ठीक है, मैं भी समझ गया।"

वह पेड़ बहुत मोटा और जंगली लताओं के चढ़े होने से घना हो रहा था। शिवदत्त और कल्याणसिंह की पीठ पेड़ की तरफ थी और उसकी आड़ में कुछ देर से खड़ा एक आदमी उन दोनों की बातचीत सुन रहा था और छिप कर उस नक्शे को भी देख रहा था। जब उसने कहा कि 'ठीक है मैं भी समझ गया' तब ये दोनों चौंके और घूम कर पीछे की तरफ देखने लगे मगर एक आदमी के भागने की आहट के सिवाय और कुछ भी मालूम न हुआ।

कल्याण०। लीजिये श्रीगणेश हो गया, निःसन्देह बीरेन्द्रसिंह के ऐयारों ने हमें पा लिया !

शिवदत्त०। बात तो कुछ ऐसी ही मालूम होती है, लेकिन कोई चिन्ता नहीं, देखो हम बन्दोबस्त करते हैं।

कल्याण०। अगर हम ऐसा जानते तो आपके ऐयारों को दूसरा काम सपुर्द करके आगे बढ़ाने की राय कदापि न देते।

शिवदत्त०। धन्नूसिंह को बुलाना चाहिये।

इतना कह कर शिवदत्त ने ताली बजाई मगर कोई न आया और न किसी ने कुछ जवाब दिया। शिवदत्त को ताज्जुब मालूम हुआ और उसने कहा, "अभी तो हाथमें नंगी तलवार लिये यहाँ पहरा दे रहा था, चला कहाँ गया ? कल्याणसिंह

ने जफील बजाई जिसकी आवाज सुनकर कई सिपाही दौड़ आये और हाथ जोड़कर सामने खड़े हो गये। शिवदत्त ने एक सिपाही से पूछा, "धन्नूसिंह कहाँ गया है?"

सिपाही०। मालूम नहीं हुजूर, अभी तो इसी जगह पर टहल रहे थे।

शिवदत्त०। देखो कहाँ है, जल्द बुलाओ!

हुक्म पा कर वे सब चले गए और थोड़ी देर में वापस आकर बोले, "हुजूर करीब में तो कहीं पता नहीं लगता!"

शिवदत्त०। बड़े आश्चर्य की बात है! उसे दूर जाने की आज्ञा किसने दी?

इतने ही में हाँपता काँपता धन्नूसिंह भी आ मौजूद हुआ जिसे देखते ही शिवदत्त ने पूछा, "तुम कहाँ चले गये थे?"

धन्नू०। महाराज कुछ न पूछिये, मैं तो बड़ी आफत में फँस गया था।

शिवदत्त०। सो क्या? तुम इतने बदहवास क्यों हो रहे हो?

धन्नू०। मैं इसी जगह पर घूम घूम कर पहरा दे रहा था कि एक लड़के ने जिसे मैंने आज के सिवाय पहले कभी देखा न था आ कर कहा, "एक औरत तुमसे कुछ कहा चाहती है।" यह सुन कर मुझे ताज्जुब हुआ और मैंने उससे पूछा, "वह औरत कौन है, कहाँ है, और मुझसे क्या कहा चाहती है?" इसके जवाब में लड़का बोला, "सो सब मैं कुछ नहीं जानता, तुम खुद चलो और जो कुछ वह कहती है सुन लो, इसी जगह पास ही में तो है।" इतना सुन कर ताज्जुब करता हुआ मैं उस लड़के के साथ चला और थोड़ी ही दूर पर एक औरत को देखा। (काँप कर) क्या कहूँ, ऐसा दृश्य तो आज तक मैंने देखा ही न था!!

शिवदत्त०। अच्छा अच्छा कहो वह औरत कैसी और किस उम्र की थी?

धन्न०। कृपानिधान वह बड़ी ही भयानक औरत थी! काला रंग, बड़ी बड़ी और लाल आँखें, हाथ में लोहे का एक डंडा लिये हुए थी जिसमें बड़े बड़े काँटे लगे थे और उसके चारो तरफ बड़े बड़े और भयानक सूरत के कुत्ते मौजूद थे जो मुझे देखते गुर्राने लगे। उस औरत ने कुत्तों को डाँटा जिससे वे चुप हो रहे मगर चारो तरफ मुझे घेर कर खड़े हो गये। डर के मारे मेरी अजब हालत हो गई। उस औरत ने मुझसे कहा, "अपने हाथ की तलवार म्यान में कर ले नहीं

तो ये कुत्ते तुझे फाड़ खायेंगे !!" इतना सुनते ही मैंने तलवार म्यान में कर ली और इसके साथ ही वे कुत्ते मुझसे कुछ दूर हट कर खड़े हो गए। (लम्बी साँस ले कर) ओफ ओह ! इतने भयानक और बड़े बड़े कुत्ते मैंने आज तक नहीं देखे थे !

शिवदत्त० । (आश्चर्य और भय से) अच्छा अच्छा आगे चलो, तब क्या हुआ ?

धन्नू० । मैंने डरते डरते उस औरत से पूछा, "आपने मुझे क्यों बुलाया ?" उस औरत ने कहा, "मैं अपनी बहिन मनोरमा से मिला चाहती हूं, उसे बहुत जल्द मेरे पास ले आ।"

शिव० । (आश्चर्य से) अपनी बहिन मनोरमा से !!

धन्नू० । जी हाँ ! मुझे यह सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि मुझे स्वप्न में भी इस बात का गुमान न हो सकता था कि मनोरमा की बहिन ऐसी राक्षसी होगी ! और महाराज उसने आपको और कुँअर साहब को भी अपने पास बुलाने के लिए कहा !

कल्याण० । (चौंक कर) मुझे और महाराज को ?

धन्नू० । जी हाँ ।

शिव० । अच्छा तब क्या हुआ ?

धन्नू० । मैंने कहा कि तुम्हारा संदेशा मनोरमा को अवश्य दे दूँगा मगर महाराज और कुँअर साहब तुम्हारे कहने से यहाँ नहीं आ सकते।

कल्याण० । तब उसने क्या कहा ?

धन्नू० । बस मेरा जवाब सुनते ही वह बिगड़ गई और डाँटकर बोली, "खबरदार ओ कम्बख्त ! जो मैं कहती हूँ वह तुझे और तेरे महाराज को करना ही होगा !! (काँप कर) महाराज, उसके डाँटने के साथ ही एक कुत्ता उछल कर मुझ पर चढ़ बैठा। अगर वह औरत अपने कुत्ते को न डाँटती और न रोकती तो बस मैं आज समाप्त हो चुका था ! (गर्दन और पीठ के कपड़े दिखाकर) देखिये मेरे तमाम कपड़े उस कुत्ते के बड़े बड़े नाखूनों की बदौलत फट गये और बदन भी छिल गया, देखिए ये मेरे ही खून से मेरे कपड़े तर हो रहे हैं !

शिव० । (भय और घबराहट से) ओफ ओह धन्नूसिंह, तुम तो जख्मी हो गये ! तुम्हारे पीठ पर के कपड़े सब लहू से तर हो रहे हैं !!

धन्नू० । जी हाँ महाराज, बस आज मैं काल के मुँह से निकल कर आया हूँ, मगर अभी तक मुझे इस बात का विश्वास नहीं होता कि मेरी जान बचेगी !

कल्याण० । सो क्यों ?

धन्नू० । जवाब देने के लिए लौटकर मुझे फिर उसके पास जाना होगा ।

कल्याण० । सो क्या, अगर न जाओ तो क्या हो ? क्या हमारी फौज में भी आकर वह उत्पात मचा सकती है ?

इतने ही में दो तीन भयानक कुत्तों के भौंकने की आवाज थोड़ी ही दूर पर से आई जिसे सुनते ही धन्नूसिंह थर थर काँपने लगा । शिवदत्त तथा कल्याणसिंह भी डरकर उठ खड़े हुए और काँपते हुए उस तरफ देखने लगे । उसी समय बद-हवास और घबड़ाई हुई मनोरमा भी आ पहुँची और बोली, "अभी अभी मैंने भूतनाथ की सूरत देखी है, वह बेखौफ मेरी पालकी के पास आ कर कह गया है कि 'आज मैं तुम लोगों की जान लिए बिना नहीं रह सकता !' अब क्या होगा ? उसका बेखौफ यहाँ चले आना मामूली बात नहीं है !!"

* तेरहवाँ हिस्सा समाप्त *

दुर्गा प्रेस, दुण्ढिराज गणेश, बनारस ।

* श्रीः *



चन्द्रकान्ता सन्तति

चौदहवाँ हिस्सा

पहिला बयान

धन्नूसिंह की बातों ने शिवदत्त और कल्याणसिंह को ऐसा बदहवास कर दिया कि उन्हें बात तक करना मुश्किल हो गया। शिवदत्त चाहता था कि कुछ देर की सच्ची मोहलत मिले तो मनोरमा से उसकी बहिन का हाल पूछें मगर उसी समय घबड़ाई हुई मनोरमा भी वहाँ आ पहुँची और उसने जो कुछ कहा वह और भी परेशान करने वाली बात थी। शिवदत्त ने मनोरमा से पूछा, "क्या तुमने अपनी आँखों से भूतनाथ को देखा?"

मनो०। हाँ मैंने स्वयम् देखा और उसने वह बात मुझी से कही थी जो मैं आपसे कह चुकी हूँ।

शिव०। क्या वह तुम्हारी पालकी के पास आया था?

मनो०। हाँ, मैं माधवी से बातें कर रही थी कि वह निडर होकर हम लोगों के पास आया और धमका कर चला गया।

शिव० । तो तुमने आदमियों को ललकारा क्यों नहीं ?

मनो० । क्या आप भूतनाथ को नहीं जानते कि वह कैसा भयानक आदमी है ? क्या वे दो चार आदमी भूतनाथ को गिरफ्तार कर लेते जो मेरी पालकी के पास थे ?

शिव० । ठीक है, वह बड़ा ही भयानक ऐयार है, दो चार क्या दस पाँच आदमी भी उसे गिरफ्तार नहीं कर सकते । मैं तो उसके नाम से काँप जाता हूँ । ओफ, वह समय मुझे कदापि भूल नहीं सकता जब उसने 'रूहा' बन कर मुझे अपने चंगुल में फँसा लिया था ! * अपने चेले को भीमसेन की सूरत ऐसा बनाया कि मै भी पहिचान न सका ! मगर बड़े आश्चर्य की बात है कि आज वह असली सूरत में तुम्हें दिखाई पड़ा । उसका इस तरह चले आना मामूली बात नहीं है !!

मनो० । जितना मैं उसका हाल जानती हूँ आप उसका सोलहवाँ हिस्सा भी न जानते होंगे, यही सबब है कि इस समय डर के मारे मेरा कलेजा काँप रहा है । जहाँ तक मैं ख्याल करती हूँ वह अकेला नहीं है ।

शिव० । नहीं नहीं, वह अकेला कदापि न होगा । (धन्नूसिंह की तरफ इशारा करके) इसने भी एक ऐसी ही भयानक खबर मुझे सुनाई है ।

मनो० (ताज्जुब से) वह क्या ?

शिव० । उसका हाल धन्नूसिंह की जुबानी ही सुनना ठीक होगा ! (धन्नूसिंह से) हाँ तुम जरा उन बातों को दोहरा तो जाओ !

धन्नू० । बहुत खूब ।

इतना कह कर धन्नूसिंह उन बातों को ऐसे ढंग से दोहरा गया कि मनोरमा का कलेजा काँप उठा और शिवदत्त तथा कल्याणसिंह पर पहिले से भी ज्यादे असर पड़ा ।

शिव० । (मनोरमा से) क्या वास्तव में वह तुम्हारी बहिन है ?

---

* चन्द्रकान्ता सन्तति छठवाँ हिस्सा दूसरा बयान देखिये ।

मनो० । राम राम, ऐसी भयानक राक्षसी मेरी बहिन हो सकती है ? असल तो यह है कि मैं अकेली हूँ, न कोई बहिन है न कोई भाई है ।

धन्नू० । तब जरा खड़े खड़े उसके पास चली जाओ जो कुछ वह पूछे उसका जवाब दे दो ।

मनो० । (रञ्ज होकर) मैं क्यों उसके पास जाने लगी ! जाकर कह दो कि मनोरमा नहीं आती ।

धन्नू० । (खैरख्वाही दिखाने के ढंग से) मालूम होता है कि तुम अपने साथ ही साथ हमारे मालिक पर आफत लाया चाहती हो ! (शिवदत्त से) महाराज ! उस राक्षसी ने जितनी बातें मुझसे कहीं मैं अदब के ख्याल से अर्ज नहीं कर सकता तथापि एक बात केवल आप ही से कहने की इच्छा है ।

धन्नूसिंह की बात सुनकर मनोरमा को डर के साथ ही साथ क्रोध भी चढ़ आया और वह कड़ी निगाह से धन्नूसिंह की तरफ देख कर बोली, "महाराज के खैरख्वाह एक तुम्हीं तो दिखाई देते हो ! इतनी बड़ी फौज की अफसरी करने के लिए क्यों मरे जाते हो जो एक औरत के सामने जाने की हिम्मत नहीं है ?"

धन्नू० । हिम्मत तो लाखों आदमियों के बीच में घुसकर तलवार चलाने की है, मगर केवल तुम्हारे सबब से अपने मालिक पर आफत लाने और अपनी जान देने का हौसला कोई बेवकूफ ही आदमी कर सकता है ! (शिवदत्त से) तिस पर भी महाराज जो आज्ञा दें उसे करने के लिए मैं तैयार हूँ, यदि आग में कूद जाने के लिए कहें तो क्षण भर देर लगाने वाले पर लानत भेजता हूँ, परन्तु मेरी बात सुनकर तब जो चाहे आज्ञा दें ।

इतना सुन शिवदत्त उठ खड़ा हुआ और धन्नूसिंह को अपने पीछे आने का इशारा कर के कुछ दूर चला गया जहाँ से उसकी बातचीत कोई दूसरा नहीं सुन सकता था ।

शिव० । हाँ धन्नूसिंह, कहो अब क्या कहते हो ?

धन्नू० । महाराज क्षमा करें, रंज न हों, मैं सरकार का नमकखार गुलाम हूँ इसलिए सिवाय सरकार की भलाई के मुझे और कुछ भी नहीं सूझता । मैं यह

नहीं चाहता कि मनोरमा के सबब से जो आपकी कुछ भलाई नहीं कर सकती बल्कि आपके सबब से अपने को फायदा पहुँचा सकती है, आप किसी आफत में फँस जाँय। मैं सच कहता हूँ कि वह भयानक औरत साधारण नहीं मालूम होती। उसने कसम खाकर कहा था कि मैं केवल एक पहर तक राजा शिवदत्त का मुलाहजा करूँगी इसके अन्दर अगर मनोरमा मेरे पास न भेजी जायगी या अलग न कर दी जायगी तो राजा शिवदत्त को इस दुनिया से उठा दूँगी और अपने कुत्तों को जो आदमी के खून के हर दम प्यासे रहते हैं.....! बस महाराज अब आगे कहने से अदब जुबान रोकती है (काँप कर) ओफ वे भयानक कुत्ते, जो शेर का कलेजा फाड़ कर खा जायँ ! (रुक कर) फिर मनोरमा की जुबानी भी आप सुन ही चुके हैं कि भूतनाथ यकायक यहाँ पहुँच कर मनोरमा से क्या कह गया है इसीलिए (हाथ जोड़ कर) मैं अर्ज करता हूँ किसी बहाने मनोरमा को अपने से अलग करें। सरकार खूब समझ सकते हैं कि जिस काम के लिए जा रहे हैं उसमें सिवाय कुँअर कल्याणसिंह के और कोई भी मदद नहीं कर सकता। फिर एक मामूली औरतके लिए अपना हर्ज या नुकसान करना उचित नहीं, आगे महाराज मालिक हैं जो चाहें करें।

शिव०। तुम्हारा कहना बहुत ठीक है, मैं भी यही सोच रहा.....

जिस जगह ये तीनों खड़े होकर बातें कर रहे थे वहाँ एक दम निराला था, कोई आदमी पास न था। शिवदत्त ने अपनी बात पूरी भी न की थी कि यकायक भूतनाथ वहाँ आ पहुँचा और कड़ाई के ढंग से शिवदत्त की तरफ देख के बोला, "इस अन्धेरेमें शायद तुम मुझे न पहिचान सको इसलिए मैं अपना नाम भूतनाथ बता कर तुम्हें होशियार करता हूँ कि घण्टे भर के अन्दर मेरी खूराक मनोरमा को मेरे हवाले करो या अपने साथ से अलग कर दो नहीं तो तुम्हें जीता न छोड़ूँगा।" इतना कह कर बिना कुछ जवाब सुने भूतनाथ वहाँ से चला गया और शिवदत्त उसकी तरफ देखता ही रह गया।

शिवदत्त एक दफे भूतनाथ के हाथ में पड़ चुका था और भूतनाथ ने जो सुलूक उसके साथ किया था उसे वह कदापि भूल नहीं सकता था बल्कि भूतनाथ के नाम ही से उसका कलेजा काँपता था इसीलिए वहाँ यकायक भूतनाथ के आ

पहुँचने से वह काँप उठा और धन्नूसिंह की तरफ देख के बोला, "निःसन्देह यह बड़ा ही भयानक ऐयार है!"

धन्नू०। इसी लिए मैं अर्ज करता हूँ कि एक साधारण औरत के लिए ऐसे भयानक ऐयार और उस राक्षसी को अपना दुश्मन बना लेना उचित नहीं है।

शिव०। तुम ठीक कहते हो, अच्छा जाओ मैं कल्याणसिंह से राय मिलाकर इसका बन्दोबस्त करता हूँ।

धन्नूसिंह को साथ लिए हुए शिवदत्त अपने ठिकाने पहुँचा जहाँ कल्याणसिंह और मनोरमा को छोड़ गया था। मनोरमा को यह कह कर वहाँ से विदा किया कि—"तुम अपने ठिकाने जाकर बैठो, हम यहाँ से कूच करने का बन्दोबस्त करते हैं, निश्चय हो जाने पर बुलावेंगे।" और जब वह चली गई और वहाँ केवल तीन आदमी रह गये तब बातचीत होने लगी।

शिवदत्त ने धन्नूसिंह की जुबानी जो कुछ सुना था और धन्नूसिंह की जो कुछ राय हुई थी वह सब तथा बातचीत के समय यकायक भूतनाथ के आ पहुँचने और धमका कर चले जाने का पूरा हाल कल्याणसिंह से कहा और पूछा कि अब आपकी क्या राय होती है? कुँअर कल्याणसिंह ने कहा, "मैं धन्नूसिंह की राय पसंद करता हूँ। मनोरमा के लिए अपने को आफत में फँसाना बुद्धिमानी का काम नहीं है, अस्तु किसी मुनासिब ढंग से उसे अलग ही कर देना चाहिये।"

शिव०। तिस पर भी अगर जान बचे तो समझें कि ईश्वर की कृपा हुई।

कल्याण०। सो क्या?

शिव०। मैं यह सोच रहा हूँ कि भूतनाथ का यहाँ आना केवल मनोरमा ही के लिए नहीं है। ताज्जुब नहीं कि हम लोगों का कुछ भेद उसे मालूम हो गया हो और वह हमारे काम में बाधा डाले।

कल्याण०। ठीक है मगर हमारा काम आधा हो चुका है केवल हमारे और आपके वहाँ पहुँचने भर की देर है। यदि भूतनाथ हम लोगों का पीछा करेगा भी तो रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर हमारी मर्जी के बिना वह कदापि नहीं जा

सकता और जब तक मनोरमा को ले जाकर कहीं रखने या अपना कोई काम निकालनेका बन्दोबस्त करेगा तबतक तो हमलोग रोहतासगढ़ में पहुँच कर जो कुछ करना है कर गुजरेंगे।

शिव०। ईश्वर करे ऐसा ही हो, अच्छा अब यह कहिये कि मनोरमा को किस ढंग से अलग करना चाहिये?

कल्याण०। (धन्नूसिंह से) तुम बहुत पुराने तजुर्बेकार आदमी हो, तुम ही बताओ कि क्या करना चाहिये?

धन्नू०। मेरी तो यही राय है कि मनोरमा को बुला कर समझा दिया जाय के अगर तुम हमारे साथ रहोगी तो भूतनाथ तुम्हें कदापि न छोड़ेगा सो तुम मर्दानी पोशाक पहिर कर धन्नूसिंह के (यानी मेरे) साथ शिवदत्तगढ़ की तरफ चली जाओ, वह तुम्हें हिफ़ाजत के साथ वहाँ पहुँचा देगा, जब हम लौट कर तुम से मिलेंगे तो जैसा होगा किया जायगा, अगर तुम अपने आदमियों को साथ ले जाया चाहोगी तो भूतनाथ को मालूम हो जायगा अतएव तुम्हारा अकेले ही यहाँ से निकल भागना उत्तम है।

शिवदत्त०। ठीक है, लेकिन अगर वह इस बात को मंजूर कर ले तो क्या तुम भी उसी के साथ जाओगे? तब तो हमारा बड़ा हर्ज होगा।

धन्नू०। जी नहीं, मैं पाँच चार कोस तक उसके साथ जाऊँगा इसके बाद भुलावा देकर उसे अकेला छोड़ आपसे आ मिलूँगा।

शिवदत्त०। (आश्चर्य से) धन्नूसिंह! क्या तुम्हारी अक्ल में कुछ फर्क पड़ गया है, या तुम्हें निसियान (भूल जाने) की बीमारी हो गई है, या तुम कोई दूसरे धन्नूसिंह हो गये हो? क्या तुम नहीं जानते कि मनोरमा ने मुझे किस तरह से रुपये की मदद की है और उसके पास कितनी दौलत है? तुम्हारी ही मार्फत मनोरमा से कितने ही रुपये मंगाये गये थे! तो क्या इस हीरे की चिड़िया को मैं छोड़ सकता हूँ! अगर ऐसा ही करना होता तो तरद्दुद की जरूरत ही क्या थी इसी समय कह देते कि हमारे यहाँ से निकल जा!

धन्नू०। (कुछ सोच कर) आपका कहना ठीक है, मैं इन बातों को भूल

नहीं गया, मैं खूब जानता हूँ कि वह बेइन्तहा खजाने की चाभी है मगर मैंने यह बात इसलिए कही कि जब उसके सबब से हमारे सर्कार ही आफत में फँस जायंगे तो वह सोने की चिड़िया किसके काम आवेगी !

शिवदत्त० । नहीं नहीं, तुम इसके सिवाय और कोई तर्कीब ऐसी सोचो जिसमें मनोरमा इस समय हमारे साथ से अलग तो जरूर हो जाय मगर हमारी मुट्ठी से निकल न जाय ।

धन्नू० । (सोच कर) अच्छा तो एक काम किया जाय ।

शिव० । वह क्या ?

धन्नू० । इसे तो आप निश्चय जानिये कि यदि मनोरमा इस लश्कर के साथ रहेगी तो भूतनाथ के हाथ से कदापि न बचेगी और जैसा कि भूतनाथ कह चुका है, वह सर्कार के साथ भी बेअदबी जरूर करेगा, इस लिए यह तो आवश्यक है कि उसे अलग जरूर किया जाय मगर वह रहे अपने कब्जे ही में, तो बेहतर यह होगा कि वह मेरे साथ की जाय, मैं जंगल ही जंगल एक गुप्त पगडण्डी से जिसे मैं बखूबी जानता हूँ रोहतासगढ़ तक उसे ले जाऊँ और जहाँ आप या कुँअर साहब आज्ञा दें ठहर कर राह देखूँ, भूतनाथ को जब मालूम हो जायगा कि मनोरमा अलग कर दी गई तब वह उसके खोजने की धुन में लगेगा मगर मुझे नहीं पा सकता । हाँ एक बात है, आप भी यहाँ से शीघ्र ही डेरा उठावें और मनोरमा की पालकी इसी जगह छोड़ दें जिससे मनोरमा के अलग कर देने का विश्वास भूतनाथ को पूरा पूरा हो जाय ।

कल्याण० । हाँ यह राय अच्छी है, मैं इसे पसन्द करता हूँ ।

शिव० । मुझे भी पसन्द है मगर धन्नूसिंह को ठिक कर राह देखने का ठिकाना बताना आप ही का काम है ।

कल्याण० । हाँ हाँ मैं बताता हूँ, सुनो धन्नूसिंह !!

धन्नू० । सर्कार !

कल्याण० । रोहतासगढ़ पहाड़ के पूरब तरफ एक बहुत बड़ा कूँआ है जिस पर एक टूटी फूटी इमारत भी है ।

धन्नू० । जी हाँ, मुझे मालूम है ।

कल्याण०। अच्छा तो अगर तुम उस कूँए पर खड़े होकर पहाड़ी की तरफ देखोगे तो एक टीले के ढंग का खण्ड पर्वत दिखाई देगा जिसके ऊपर सूखा हुआ पुराना पीपल का पेड़ है और उसी पेड़ के नीचे एक खोह का मुहाना है। उसी जगह तुम हम लोगों का इंतजार करना क्योंकि उसी खोह की राह से हम-लोग रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर घुसेंगे, मगर उस खोह तक पहुँचने का रास्ता जब तक हम न बतावें तुम वहाँ नहीं जा सकते। (शिवदत्त से) आप मनोरमा को बुलवा कर सब हाल कहिये, अगर वह मंजूर करे तो हम धन्नूसिंह को रास्ते का हाल समझा दें।

शिव०। (धन्नूसिंह से) तुम ही जा कर उसे बुला लाओ।

"बहुत अच्छा" कह कर धन्नूसिंह चला गया और थोड़ी ही देर में मनोरमा को साथ लिये हुए आ पहुँचा। उसके विषय में जो कुछ राय हो चुकी थी उसे कल्याणसिंह ने ऐसे ढंग से मनोरमा को समझाया कि उसने कबूल कर लिया और धन्नूसिंह के साथ चले जाना ही अच्छा समझा। कुँअर कल्याणसिंह ने उस टीले तक पहुँचने का रास्ता धन्नूसिंह को अच्छी तरह समझा दिया। दो घोड़े चुपचुपाते तैयार किये गए, मनोरमा ने पालकी के अन्दर बैठ कर मर्दानी पौशाक पहिरी और घोड़े पर सवार हो धन्नूसिंह के साथ रवाना हो गई। धन्नूसिंह की सवारी का घोड़ा बनिस्बत मनोरमा के घोड़े के तेज और ताकतवर था।

सरा बयान

मनोरमा और धन्नूसिंह घोड़ों पर सवार होकर तेजी के साथ वहाँ से रवाना हुए और चार कोस तक बिना कुछ बातचीत किये चले गये। जब वे दोनों एक ऐसे मैदान में पहुँचे जहाँ बीचोबीच में एक बहुत बड़ा आम का पेड़ और उसके चारो तरफ आध आध कोस का साफ मैदान था कि जहाँ सरपत जंगली बैर या पलास तक का भी कोई पेड़ न था जिनका होना जंगल के आस पास आवश्यक समझा जाता है, तब धन्नूसिंह ने अपने घोड़े का मुँह उसी आम के पेड़ की तरफ यह कह के फेरा—"मेरे पेट में कुछ दर्द हो रहा है, इसलिए थोड़ी देर तक इसी पेड़ के नीचे ठहरने की इच्छा होती है।"

मनोरमा० । क्या हर्ज है ठहर जाओ, मगर खौफ यह है कि कहीं भूतनाथ आ न पहुँचे ।

धन्नू० । अब भूतनाथ के आने की आशा छोड़ो क्योंकि जिस राह से हम लोग आये हैं वह भूतनाथ को कदापि मालूम न होगी, मगर मनोरमा ! तुम तो भूतनाथ से इतना डरती हो कि.....

मनो० । (बात काट कर) भूतनाथ निःसन्देह ऐसा ही भयानक ऐयार है ! परन्तु थोड़े ही दिन की बात है कि जिस तरह आज मैं भूतनाथ से डरती हूँ उससे ज्यादे भूतनाथ मुझ से डरता था ।

धन्नू० । हाँ जब तक उसके कागजात तुम्हारे या नागर के कब्जे में थे ।

मनोरमा० । (चौंक कर, ताज्जुब से) क्या यह तुमको मालूम है !!

धन्नू० । हाँ बहुत अच्छी तरह ।

मनोरमा० । सो कैसे ?

इतने ही में वे दोनों उस पेड़ के नीचे पहुँच गये । धन्नूसिंह यह कह कर घोड़े के नीचे उतर पड़ा कि—"अब जरा बैठ जायँ तो कहें ।"

मनोरमा भी घोड़े के नीचे उतर पड़ी । दोनों घोड़े लम्बी बागडोर के सहारे डाल के साथ बाँध दिये गये और जीनपोश बिछा कर दोनों आदमी जमीन पर बैठ गये । रात आधे से ज्यादे जा चुकी थी और चन्द्रमा की विमल चाँदनी बड़ी खूबी के साथ चारो तरफ फैल रही थी जिसका थोड़ी ही देर पहिले कहीं नाम निशान भी न था ।

मनोरमा० । हाँ अब बताओ कि भूतनाथ के कागजात का हाल तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?

धन्नू० । मैंने भूतनाथ ही कि जुबानी सुना था ।

मनो० । हैं, क्या तुमसे और भूतनाथ से जान पहिचान है ?

धन्नू० । बहुत अच्छी तरह ।

मनोरमा० । तो भूतनाथ ने तुमसे यह भी कहा होगा कि उसने अपने कागजात नागर के हाथ से कैसे पाए ?

धन्नू०। हाँ भूतनाथ ने मुझसे वह किस्सा भी बयान किया था, क्या तुमको वह हाल मालूम नहीं हुआ ?

मनोरमा०। मुझे वह हाल कैसे मालूम होता ? मैं तो मुद्दत तक कमलिनी के कैदखानेमें सड़ती रही, जब वहाँ से छुटी तो दूसरे ही फेरमें पड़ गई, मगर तुम जब सब हाल जानते ही हो तो फिर जान बूझ कर ऐसा सवाल क्यों करते हो ?

धन्नू०। ओफ ! पेट का दर्द ज्यादे होता जा रहा है, जरा ठहरो तो मैं तुम्हारी बातों का जवाब दूँ।

इतना कह कर धन्नूसिंह चुप हो गया और घण्टे भर से ज्यादे देर तक बातों का सिलसिला बन्द रहा। धन्नूसिंह यद्यपि इतनी देर तक चुप रहा मगर बैठा ही रहा और मनोरमा की तरफ से इस तरह होशियार और चौकन्ना रहा जैसे किसी दुश्मन की तरफ से रहना वाजिब होता, साथ ही इसके उसकी निगाह मैदान की तरफ भी इस ढङ्ग से पड़ती रही जैसे किसी के आने की उसे उम्मीद हो। मनोरमा उसके इस ढङ्ग पर आश्चर्य कर रही थी। यकायक उस मैदान में दो आदमी बड़ी तेजी के साथ दौड़ते हुए उसी तरफ आते दिखाई पड़े जिधर मनोरमा और धन्नूसिंह का डेरा जमा हुआ था।

मनोरमा०। ये दोनों कौन हैं जो इस तरफ आ रहे हैं ?

धन्नू०। यही बात मैं तुमसे पूछा चाहता था मगर जब तुमने पूछ ही लिया तो कहना पड़ा कि इन दोनों में एक तो भूतनाथ है।

मनोरमा०। क्या तुम मुझसे दिल्लगी कर रहे हो ?

धन्नू०। नहीं कदापि नहीं।

मनोरमा०। तो ऐसी बात क्यों कहते हो ?

धन्नूसिंह०। इसलिये कि मैं वास्तव में धन्नूसिंह नहीं हूँ।

मनोरमा० (चौंक कर) तब कौन हो ?

धन्नू०। भूतनाथ का दोस्त और इन्द्रदेव का ऐयार सर्यूसिंह !

इतना सुनते ही मनोरमा का रंग बदल गया और उसने बड़ी फुर्ती से अपना दाहिना हाथ सर्यूसिंह के चेहरे की तरफ बढ़ाया मगर सर्यूसिंह पहिले ही से होशियार और चौकन्ना था। उसने चालाकी से मनोरमा की कलाई पकड़ ली।

मनोरमा की उँगली में उसी तरह के जहरीले नगीने वाली अँगूठी थी जैसी नागर की उँगली में थी और जिससे उसने भूतनाथ को मजबूर कर दिया था तथा जिसका हाल इस उपन्यास के सातवें हिस्से में हम लिख आये हैं। उसी अँगूठी से मनोरमा ने नकली धन्नूसिंह को मारना चाहा मगर न हो सका क्योंकि उसने मनोरमा की कलाई पकड़ ली और उसी समय भूतनाथ और सर्यूसिंह का शागिर्द भी वहाँ आ पहुँचा। अब मनोरमा ने अपने को काल के मुँह में समझा और वह इतना डरी कि जो कुछ उन ऐयारों ने कहा बेउज्र करने के लिये तैयार हो गई।

भूतनाथ के हाथ से क्षमा प्रार्थना की सहायता से छूटने की आशा मनोरमा को कुछ भी न थी इसलिये जब तक भूतनाथ ने उससे किसी तरह का सवाल न किया वह भी कुछ न बोली और बेउज्र हाथ पैर बँधा कर कैदियों की तरह मजबूर हो गई। इसके बाद भूतनाथ तथा सर्यूसिंह में बातचीत होने लगी:—

भूत०। अब क्या करना होगा?

सर्यू०। अब यही करना होगा कि तुम इसे घोड़े पर सवार करा के अपने घर ले जाओ और हिफाजत के साथ रख कर शीघ्र लौट जाओ।

भूत०। और उस धन्नूसिंह के बारे में क्या किया जाय जिसे आप गिरफ्तार करने के बाद बेहोश करके डाल आये हैं?

सर्यू०। (कुछ सोच कर) अभी उसे भी अपने कब्जे ही में रखना चाहिए क्योंकि मैं धन्नूसिंह की सूरत में राजा शिवदत्त के साथ रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर जा कर इन दुष्टों की चालबाजियों को जहाँ तक हो सके बिगाड़ा चाहता हूँ, ऐसी अवस्था में अगर वह छूट जायगा तो केवल काम ही नहीं बिगड़ेगा बल्कि मैं खुद आफत में फँस जाऊँगा यदि शिवदत्त के साथ रोहतासगढ़ के तहखाने में जाने का साहस करूँगा।

इसके बाद सर्यूसिंह ने भूतनाथ से वे सब बातें कहीं जो उससे और शिवदत्त तथा कल्याणसिंह से हुई थी और जो हम ऊपर लिख आये हैं। उस समय मनोरमा को मालूम हुआ कि नकली धन्नूसिंह ने जिस भयानक कुत्ते वाली औरत का

हाल शिवदत्त से कहा और जिसे मनोरमा की बहिन बताया वह सब बिल्कुल झूठ और बनावटी किस्सा था।

भूत०। (सर्यूसिंह से) तब तो आपको दुश्मनों के साथ मिल जुल कर रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर जाने का बहुत अच्छा मौका है।

सर्यू०। हाँ इसी से तो मैं कहता हूँ कि धन्नूसिंह को जिसे हम लोगों ने गिरफ्तार किया है। अभी अपने कब्जे में ही रखना चाहिये।

भूत०। कोई चिन्ता नहीं, मैं लगे हाथ किसी तरह उसे भी अपने घर पहुँचा दूँगा। (शागिर्द की तरफ इशारा करके) इसे तो आप मनोरमा बना कर अपने साथ ले जायँगे ?

सर्यू०। जरूर ले जाऊँगा और कल्याणसिंह के बताये हुए ठिकाने पर पहुँच कर उन लोगों की राह देखूँगा।

भूत०। और मुझे क्या काम सपुर्द किया जाता है ?

सर्यू०। मुझे इस बात का पता ठीक ठीक लग चुका है कि शेरअलीखाँ आज कल रोहतासगढ़ में है और कुँअर कल्याणसिंह उससे मदद लिया चाहता है। ताज्जुब नहीं कि अपने दोस्त का लड़का समझा कर शेरअलीखाँ उसकी मदद करे और अगर ऐसा हुआ तो राजा बीरेन्द्रसिंह को बड़ा नुकसान पहुँचेगा।

भूत०। मैं आपका मतलब समझ गया, अच्छा तो इस काम से छुट्टी पाकर मैं बहुत जल्द रोहतासगढ़ पहुँचूँगा और शेरअलीखाँ की हिफाजत करूँगा (कुछ सोच कर) मगर इस बात का खौफ है मगर मेरा वहाँ जाना बीरेन्द्रसिंह पर खुल जायगा तो मुझे बिना बलभद्रसिंह का पता लगाये लौट आने के जुर्म में सजा तो न मिलेगी (इतना कह कर भूतनाथ ने मनोरमा की तरफ देखा)।

सर्यू०। नहीं नहीं ऐसा न होगा, अगर हुआ भी तो मैं तुम्हारी मदद करूँगा।

बलभद्रसिंह का नाम सुन कर मनोरमा जो सब बातचीत सुन रही थी चौंक पड़ी और उसके दिल में एक हौल सा पैदा हो गया, उसने अपने को रोकना चाहा मगर रोक न सकी और घबड़ा कर भूतनाथ से पूछ बैठी, "बलभद्रसिंह कौन ?"

भूतनाथ० । (मनोरमा से) लक्ष्मीदेवी का बाप जिसका पता लगाने के लिये हम लोगों ने तुझे गिरफ्तार किया है ।

मनोरमा० । (घबड़ा कर) मुझसे और उससे क्या सम्बन्ध है ? मैं क्या जानूँ वह कौन है और कहां है और लक्ष्मीदेवी किसका नाम है ।

भूत० । खैर जब समय आवेगा तो तुझे सब कुछ मालूम हो जायगा ! (हंस कर) लक्ष्मीदेवी से मिलने के लिये तो तुम लोग रोहतासगढ़ जाते ही थे मगर बलभद्रसिंह और इन्दिरा से मिलने का बन्दोबस्त अब मैं करूँगा, घबड़ाती काहे को हो !

मनोरमा० । (घबड़ाहट के साथ बेचैनी से) इन्दिरा, कैसी इन्दिरा ? ओफ ! नहीं नहीं, मैं क्या जानूं कौन इन्दिरा ? क्या तुम लोगों से उसकी मुलाकात हो गई ? क्या उसने मेरी शिकायत की थी ? कभी नहीं, वह झूठी है, मैं तो उसे प्यार करती थी और उसे अपनी बहिन समझती थी, मगर उसे किसी ने बहका दिया है या बहुत दिनों तक दुःख भोगने के कारण वह पागल हो गई है या ताज्जुब नहीं कि मेरी सूरत बन कर किसी ने उसे धोखा दिया हो, नहीं नहीं मैं न थी कोई दूसरी थी, मैं उसका नाम भी बताऊँगी (ऊँची साँस लेकर) नहीं इन्दिरा नहीं ! मैं तो मथुरा गई हुई थी, वह कोई दूसरी थी, भला मैं तेरे साथ क्यो ऐसा करने लगी थी ! ओफ ओफ !! मेरे पेट में दर्द हो रहा है । आह! आह !! मैं क्या करूँ !!

मनोरमा की अजब हालत हो गई, उसका बोलना और बकना पागलों की तरह मालूम पड़ता था जिसे देख भूतनाथ और सर्यूसिंह आश्चर्य करने लगे मगर वे दोनों ऐयार समझ गये कि दर्द का बहाना करके मनोरमा अपने असली दर्द दिल को छिपाना चाहती है मगर ऐसा होना कठिन है ।

सर्यू० । (भूतनाथ से) खैर अब इसके पाखण्ड को कहाँ तक देखोगे ! बस झटपट ले जाओ और अपना काम करो, यह समय अनमोल है इसे नष्ट न करना चाहिये । (अपने शागिर्द की तरफ इशारा करके) इसे हमारे पास छोड़ जाओ, मैं भी अपने काम की फिक्र में लगूँ ।

भूतनाथ ने बेहोशी की दवा सुँघा कर मनोरमा को बेहोश किया और जिस

घोड़े पर वह आई थी उसी पर उसे लाद आप भी सवार हो पूरब का रास्ता लिया, इधर सर्यूसिंह उसके चेले को मनोरमा बनाने की फिक्र में लगा।

तीसरा बयान

हम ऊपर लिख आए हैं कि शेरअली खाँ खातिरदारी और इज्जत के साथ रोहतासगढ़ में रक्खा गया क्योंकि उसने अपने कसूरों की माफी माँगी थी और तेजसिंह ने माफी दे भी दी थी। अब हम उस रात का हाल लिखते हैं जिस रात बीरेन्द्रसिंह तेजसिंह और इन्द्रदेव वगैरह तहखाने के अन्दर गये थे और यकायक आ पड़ने वाली मुसीबत में गिरफ्तार हो गये थे। उन लोगों का किसी काम के लिए तहखाने के अन्दर जाना शेरअली खाँ को मालूम था मगर उसे उन बातों से कोई मतलब न था, उसे सिर्फ इस बात की फिक्र थी कि भूतनाथ का मुकदमा खतम हो ले तो वह अपनी राजधानी की तरफ पधारे और इसीलिए वह राजा बीरेन्द्रसिंह की तरफ से रोका भी गया था।

जिस कमरे में शेरअलीखाँ का डेरा था वह बहुत लम्बा चौड़ा और कीमती असबाब से सजा हुआ था। उसके दोनों तरफ दो कोठड़ियाँ थीं और बाहर दालान तथा दालान के बाद एक चौखूटा सहन था। उन दोनों कोठड़ियों में से जो कमरे के दोनों तरफ थीं एक में तो सोने के लिये बेशकीमती मसहरी बिछी हुई थी और दूसरी कोठड़ी में पहिरने के कपड़े तथा सजावट का सामान रहता था। इस कोठड़ी में एक दर्वाजा और भी था जो उस मकान के पिछले हिस्से में जाने के लिए काम देता था, मगर इस समय वह दर्वाजा बन्द था और उसकी ताली दारोगा के पास थी। जिस कोठड़ी में सोने के लिये मसहरी थी उसमें सिर्फ एक ही दर्वाजा था और दर्वाजे वाली दीवार को छोड़ के उसकी बाकी तीनों तरफ की दीवारें आबनूस के लकड़ी की बनी हुई थीं जिस पर बहुत चमकदार पालिश किया हुआ था। यह अवस्था उस जगह की थी जिसमें शेरअली खाँ रहता था।

रात डेढ़ पहर से कुछ ज्यादे जा चुकी है। शेरअलीखाँ अपने कमरे में मोटी गद्दी पर लेटा हुआ कोई किताब पढ़ रहा है और सिहाने की तरफ संगमर्मर की छोटी सी चौकी के ऊपर एक शमादान जल रहा है इसके अतिरिक्त कमरे में और

कोई रोशनी नहीं है। यकायक सोने वाली कोठड़ी के अन्दर से एक ऐसी आवाज आई जैसे किसी ने मसहरी के साथ ठोकर खाई हो।

शेरअलीखाँ चौंक पड़ा और कुछ देर तक उसी कोठरी की तरफ देखता रहा जिसके आगे पर्दा गिरा हुआ था। जब उस पर्दे को भी हिलते देखा तो किताब जमीन पर रख बैठ गया और उसी समय कल्याणसिंह को पर्दा हटा कर बाहर निकलते देखा। शेरअलीखाँ घबड़ा कर उठ खड़ा हुआ और बड़े गौर से उसे देख कर बोला, "क्या तुम कुँअर कल्याणसिंह हो!"

कल्याण०। (सलाम करके) जी हाँ।

शेर०। तुम इस कमरे में कब आये और कब इस कोठड़ी में गये मुझे कुछ भी नहीं मालूम!!

कल्याण०। मैं बाहर से इस कमरे में नहीं आया बल्कि इसी कोठरी में से आया हूँ।

शेर०। सो कैसे? इस कोठरी में तो कोई दूसरा रास्ता है?

कल्याण०। जी हाँ, एक रास्ता है जिसे शायद आप नहीं जानते मगर पहले मैं दर्वाजा बन्द कर लूँ।

इतना कह कर कल्याणसिंह दर्वाजे की तरफ बढ़ गया और इस कमरे के तीनों दर्वाजे बन्द कर के शेरअलीखाँ के पास लौट आया।

शेर०। दर्वाजा क्यों बन्द कर दिया? क्या डरते हो?

कल्याण०। जी हाँ, यदि कोई देख लेगा तो मुश्किल होगी।

शेर०। इससे मालूम होता है कि तुम राजा बीरेन्द्रसिंह की मर्जी से नहीं छूटे बल्कि किसी की मदद और चोरी से निकल भागे हो क्योंकि चुनारगढ़ में तुम्हारे कैद होने का हाल मैं अच्छी तरह जानता हूँ।

कल्याण०। जी हाँ, ऐसी ही बात है।

शेर०। (बैठ कर) अच्छा आओ मेरे पास बैठ जाओ और कहो कि तुम कैसे छूटे और यहाँ कैसे पहुँचे?

कल्याण०। (बैठ कर) खुलासा हाल कहने का तो इस समय मौका नहीं है

परन्तु इतना कहना जरूरी हैं कि अपनी मदद के लिए मुझे राजा शिवदत्त ने छुड़ाया है और अब मैं मदद लेने के लिए आपके पास आया हूँ। यदि आप मदद कर देंगे तो मैं राजा बीरेन्द्रसिंह से अपने बाप का बदला ले लूँगा।

शेरअली०। (हँस कर) यह तुम्हारी नादानी है! तुम अभी लड़के हो, ऐसे मामलों पर गौर नहीं कर सकते। राजा बीरेन्द्रसिंह के साथ दुश्मनी करना अपने पैर में आप कुल्हाड़ी मारना है, उनसे लड़ कर कोई जीत नहीं सकता और न उनके ऐयारों के सामने किसी की चालाकी लग सकती है।

कल्याण०। आपका कहना ठीक है मगर इस समय हम लोगों ने राजा बीरेन्द्रसिंह और उनके ऐयारों को हर तरह से मजबूर कर रक्खा है।

शेरअली०। सो कैसे?

कल्याण०। क्या आप नहीं जानते कि बीरेन्द्रसिंह अपने ऐयारों और किशोरी कामिनी इत्यादि को लेकर तहखाने के अन्दर गये हैं?

शेरअली०। हाँ सो तो जानते हैं मगर इससे क्या?

कल्याण०। जिस समय बीरेन्द्रसिंह वगैरह तहखाने में गये उसके पहिले ही हम लोग अपनी छोटी सेना सहित तहखाने में आ चुके थे और यकायक गुप्त राह से इस किले में पहुँच कर अपना दखल जमाया चाहते थे मगर ईश्वर ने उन्हीं लोगों को तहखाने में पहुँचा दिया जिससे हम लोगों को बड़ा सुभीता हुआ शिवदत्तसिंह ने तो सेना सहित दुश्मनों को घेर लिया है और मैं एक सुरंग की राह से जिसका दूसरा दर्वाजा (सोने वाली कोठड़ी की तरफ इशारा करके) इस कोठड़ी में निकला है आपके पास मदद माँगने के लिये आया हूँ, आशा है कि शिवदत्तसिंह ने दुश्मनों को काबू में कर लिया होगा या मार डाला होगा और इधर मैं आपकी मदद से किले में अपना अधिकार जमा लूँगा।

शेरअली०। (कुछ सोचकर) मैं खूब जानता हूँ कि इस तहखानेका और यहाँ के पेचीले तथा गुप्त रास्तोंका हाल तुमसे ज्यादा जानने वाला कोई नहीं है फिर भी तुम लोगों का तहखाने में राजा बीरेन्द्रसिंह वगैरह को मार डालना मुश्किल है हाँ घेर लिया हो तो ताज्जुब नहीं मगर साथ ही इसके इस बात को भी ख्याल करना

चाहिये कि यद्यपि राजा बीरेन्द्रसिंह वगैरह इस तहखाने का हाल बखूबी नहीं जानते परन्तु आज इन्द्रदेव भी उनके साथ है जिसे हम तुम अच्छी तरह जानते हैं। क्या तुम्हें उस दिन की बात याद नहीं है जिस दिन तुम्हारे पिता ने हमारे सामने तुमसे कहा था कि "यहाँ के तहखाने का हाल मुझसे ज्यादा जानने वाला इस दुनिया में यदि कोई है तो केवल इन्द्रदेव !!'

कल्याण० । (ताज्जुब से) हाँ मुझे याद है मगर क्या इन्द्रदेव राजा बीरेन्द्रसिंह के साथ तहखाने में गये हैं और क्या बीरेन्द्रसिंह ने उन्हें अपना दोस्त बना लिया ?

शेरअली० । हाँ, अस्तु यह आशा नहीं हो सकती कि बीरेन्द्रसिंह वगैरह तुम लोगों के काबू आ जायेंगे, दूसरी बात यह है कि तुम अकेले या दो एक मददगारों को लेकर इस किले में कर ही क्या सकते हो ?

कल्याण० । मैं आपके पास अकेला नहीं आया हूँ बल्कि सौ सिपाही भी अपने साथ लाया हूँ जिन्हें आप आज्ञा देने के साथ ही इसी कोठड़ी में से निकलते हुए देख सकते हैं। क्या ऐसी हालत में जब कि मालिकों या अफसरों में से यहाँ कोई भी न हो और यहाँ रहने वाली केवल पाँच सात सौ की फौज बेफिक्र पड़ी हो, हम आप सौ बहादुरों को साथ लेकर कुछ नहीं कर सकते ? हाँ इन्द्रदेव का इस समय बीरेन्द्रसिंह वगैरह के साथ तहखाने में होना बेशक हमारे काम में विघ्न डाल सकता है मगर मुझे इसकी भी विशेष चिन्ता नहीं है क्योंकि यदि दुश्मन लोग काबू में न आवेंगे तो हर तरह से रास्ता बन्द हो जाने के कारण तहखाने के बाहर भी न निकल सकेंगे और भूखे प्यासे उसी में पड़े रह कर मर जायेंगे, और इधर जब हम लोग किले में अपना दखल जमा लेंगे.....

शेरअली० । (बात काट कर) ये सब बातें फजूल हैं, मैं जानता हूँ कि तुम अपने को बहादुर और होनहार समझते हो मगर राजा बीरेन्द्रसिंह के प्रबल प्रताप के चमकते हुए सितारे की रोशनी को अपने हाथ की ओट लगा कर नहीं रोक सकते और उनकी सचाई सफाई और नेकियों को भूल कर इस किले का रहने वाला कोई भी तुम्हारा साथ नहीं दे सकता। बुद्धिमानों को तो जाने दो, यहां का एक बच्चा भी राजा बीरेन्द्रसिंह का निकल जाना पसन्द न करेगा। अहा, क्या

ऐसा जुबान का सच्चा रहमदिल और नेक राजा कोई दूसरा होगा ? यह राजा बीरेन्द्रसिंह ही का काम था कि उसने मेरे कसूरों को माफ ही नहीं किया बल्कि इज्जत और आबरू के साथ मुझे अपना मेहमान बनाया। मेरी रग रग में उनके एहसान का खून भरा है, मेरा बाल बाल उन्हें दुआ देता है, मेरे दिल में उनकी हिम्मत मर्दानगी इंसाफ और रहमदिली का दरिया जोश मार रहा है। ऐसे बहादुर शेरदिल राजा के साथ शेरअली कभी दगाबाजी या बेईमानी नहीं कर सकता बल्कि ऐसे की ताबेदारी अपनी इज्जत हुर्मत और नामवरी का बायस समझता है। तुम मेरे दोस्त के लड़के हो मगर मैं यह जरूर कहूँगा कि तुम्हारे बाप ने बीरेन्द्रसिंह के साथ दगाबाजी की। खैर जो कुछ हुआ सो हुआ, अब तुम ऐसा न करो, मैं तुम्हें पुरानी मोहब्बत और दोस्ती का वास्ता दिलाता हूँ कि ऐसा न करो। राजा बीरेन्द्रसिंह दुश्मनी करने योग्य राजा नहीं बल्कि दर्शन करने योग्य है। मैं वादा करता हूँ कि तुम्हारा कसूर माफ करा दूँगा और अगर कहो कि तुमको रोहतासगढ़ का लालच है तो इसे भी तुम राजा बीरेन्द्रसिंह की ताबेदारी करके ले सकते हो। वह बड़ा उदार दाता है, यह राज्य दे देना उसके सामने कोई बात नहीं है।

कल्याण०। अफसोस ! मुझे इन शब्दों के सुनने की कदापि आशा न थी जो इस समय आपके मुँह से निकल रहे हैं। मुझे इस बात का ध्यान भी न था कि आज आपको हिम्मत और मर्दानगी से खाली देखूँगा। मैं किसी के कहने पर भी विश्वास नहीं कर सकता था कि आप की रगों में बुजदिली का खून पाऊँगा मुझे स्वप्न में भी इस बात का विश्वास नहीं हो सकता था कि आज आपको उसी राजा बीरेन्द्रसिंह की खुशामद करते पाऊँगा जिसके लड़के ने आपकी लड़की को हर तरह से बेइज्जत किया।

शेरअली०। ओफ ! तुम्हारी जली कटी बातें मेरे दिल को हिला कर मुझे बेईमानी दगाबाजी या विश्वासघाती की पदवी नहीं दिला सकतीं। उस गौहर की याद मेरे दिल की सच्ची तथा इन्साफपसन्द आँखों को फोड़ कर नेकों की दुनिया में मुझको अन्धा नहीं बना सकती जो बुजुर्गों की इज्जत को मिट्टी में मिला मेरी बदनामी का झण्डा बन जहरीली हवा में उड़ती हुई आसमान की तरफ बढ़ती

ही जाती थी और जिसका कि गिरफ्तार होकर सजा पाना बल्कि इस दुनिया से उठ जाना मुझे पसन्द है। किसी नालायक के लिये लायक के साथ बुराई करना, किसी अधर्मी के लिये धर्मी का खून करना, किसी बेईमान के लिये ईमान का सत्यानास करना, और किसी अविश्वासी के लिये विश्वासघात करना शेरअली खाँ का काम नहीं है। मैं समझता था कि तुम्हारे दिल का प्याला सच्ची बहादुरी की शराब से भरा हुआ होगा और तुम दुनिया में नामवरी पैदा कर सकोगे और इसीलिए मैं तुम्हारी सिफारिश करने वाला था मगर अब निश्चय हो गया कि तुम्हारी किस्मत का जहाज शिवदत्त के तूफान में पड़कर एक भारी पहाड़ से टक्कर खाया चाहता है अस्तु तुम यहाँ से चले जाओ और मुझसे किसी तरह की उम्मीद मत रक्खो, अगर मैं तुम्हारे बाप का दोस्त और तुमको दोस्त का लड़का न कह चुका होता तो .....

कल्याण०। मैं इस समय आपका यह लम्बा चौड़ा लेक्चर (वक्तृता) नहीं सुन सकता क्योंकि समय कम है और काम बहुत करना है, बस आप इतना ही बताइए कि आपसे किसी तरह की आशा मैं रक्खूँ या नहीं ?

शेर०। नहीं, बल्कि इस बात की भी आशा मत रक्खो कि तुम्हें राजा बीरेन्द्रसिंह के साथ दुश्मनी करते देख कर मैं चुपचाप बैठा रहूँगा।

कल्याण०। (क्रोध में आकर) क्या आप मेरी मदद अगर न करेंगे तो चुपचाप भी न बैठे रहेंगे !!

शेर०। नहीं।

कल्याण०। तो आप मेरे साथ दुश्मनी करेंगे ?

शेर०। अगर ऐसा करूँ तो हर्ज ही क्या है ! जिसकी लोग इज्जत करते हैं या जिसे दुनिया मोहब्बत की निगाह से देखती हो उसके साथ दुश्मनी करना बेशक बुरा है मगर ऐसे के साथ बेमुरौवती करने में कुछ भी हर्ज नहीं है जिसके हृदय की आँख फूट गई हो, जिसे दुनिया में किसी तरह की इज्जत हासिल करने का शौक न हो, और जिसे लोग हमदर्दी की निगाह से न देखते हों।

कल्याण०। (दाँत पीस कर) तो सब के पहिले मुझे आप ही का बन्दोबस्त करना पड़ा !!

इसके पहिले कि कल्याणसिंह की बात का शेरअलीखाँ कुछ जवाब दे, बाहर से एक आवाज आई, "हाँ यदि तेरे किये कुछ हो सके !"

इस आवाज ने दोनों को चौंका दिया मगर कल्याणसिंह ने ज्यादे देर तक राह देखना मुनासिब न जाना और उस कोठरी की तरफ बढ़ कर जोर से ताली बजाई। शेरअलीखाँ समझ गया कि कल्याणसिंह अपने साथियों को बुलाता है क्योंकि वह थोड़ी ही देर पहले कह चुका था कि मेरे साथ सौ सिपाही भी आये हैं जो हुक्म होने के साथ ही मेरी तरह इस कोठरी में से निकल सकते हैं।

कल्याणसिंह ताली बजाता हुआ कोठरी की तरफ बढ़ा और उसका मतलब समझ कर शेरअलीखाँ ने भी शीघ्रता से कमरे का दर्वाजा अपने मददगारों को बुलाने की नीयत से खोल दिया तथा उसी समय एक नकाबपोश को हाथ में खंजर लिए कमरे के अन्दर पैर रखते देखा। शेरअलीखाँ ने पूछा; "तुम कौन हो ?" नकाबपोश ने जवाब दिया, "तुम्हारा मददगार !"

इससे ज्यादे बातचीत करने का मौका न मिला क्योंकि कोठड़ी के अन्दर से कई आदमी हाथ में नंगी तलवार लिए हुए निकलते दिखाई दिये जिन्हें कल्याणसिंह ने अपनी मदद के लिए बुलाया था।

चौथा बयान

अब हम अपने पाठकों को कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की तरफ ले चलते हैं जिन्हें जमानिया के तिलिस्म में नहर के किनारे पत्थर की चट्टान पर बैठ कर राजा गोपालसिंह से बातचीत करते छोड़ आये हैं।

दोनों कुमार बड़ी देर तक राजा गोपालसिंह से बातचीत करते रहे। राजा साहब ने बाहर का सब हाल दोनों भाइयों से कहा और यह भी कहा कि किशोरी और कामिनी राजी खुशी के साथ कमलिनी के तालाब वाले मकान में जा पहुँचीं, अब उनके लिए चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।

किशोरी और कामनी का शुभ समाचार सुन कर दोनों भाई बड़े प्रसन्न हुए और राजा गोपालसिंह से इन्द्रजीतसिंह ने कहा, "हम चाहते हैं कि इस तिलिस्म

से बाहर होकर पहिले अपने माँ बाप से मिल आवें क्योंकि उनका दर्शन किये बहुत दिन हो गये और वे भी हमारे लिए बहुत उदास होंगे।"

गोपाल०। मगर यह हो ही नहीं सकता।

इन्द्र०। क्यों ?

गोपाल०। जब तक आप बाहर जाने के लिए रास्ता न बना लेंगे बाहर कैसे जायँगे ! और जब तक इस तिलिस्म को आप तोड़ न लेंगे बाहर जाने का रास्ता न मिलेगा ?

इन्द्र०। जिस रास्ते से आप यहाँ आये हैं या आप जायँगे उसी रास्ते से आपके साथ अगर हमलोग जायँ तो कौन रोक सकता है ?

गोपाल०। वह रास्ता केवल मेरे ही आने जाने के लिए है आप लोगों के लिए नहीं।

इन्द्र०। (हँस कर) क्योंकि आप से हम लोग मोटे ताजे ज्यादे हैं, दर्वाजे में अँट न सकेंगे !!

गोपाल०। (हँस कर) आप भी बड़े मसखरे हैं ! मेरा मतलब यह नहीं है कि मैं जान बूझ कर आपको नहीं ले जाता बल्कि यहाँ के नियम का ध्यान करके मैंने ऐसा कहा था, आपने तो तिलिस्मी किताब में पढ़ा ही होगा।

इन्द्र०। हाँ हम पढ़ चुके हैं और उससे यही मालूम होता है कि हमलोग बिना तिलिस्म तोड़े बाहर नहीं जा सकते, मगर अफसोस यही है कि उस किताब का लिखने वाला हमारे सामने मौजूद नहीं है अगर होता तो पूछते कि क्यों नहीं जा सकते ? जिस राह से राजा साहब आये हैं उसी राह से उनके साथ जाने में क्या हर्ज है ?

गोपाल०। किसी तरह का हर्ज होगा तभी तो बुजुर्गों ने ऐसा लिखा है ! कौन ठिकाना किसी तरह की आफत आ जाय तो जन्म भर के लिए मैं बदनाम हो जाऊँगा, अस्तु आपको भी इसके लिए जिद न करना चाहिये, हाँ यदि अपने उद्योग से आप बाहर जाने का रास्ता बना लें तो बेशक चले जाइये।

इन्द्र०। (मुस्कुरा कर) बहुत अच्छा आप जाइये, हम अपने लिए रास्ता ढूँढ़ लेंगे !

गोपाल०। (हँस कर) मेरे पीछे पीछे चल कर ! अच्छा आइए !!

यह कह गोपालसिंह उठ खड़े हुए और उसी कूँए पर चले गये जिसमें पहिले दफे उस वक्त कूद कर गायब हो गये थे जब बुड्ढे की सूरत बन कर आये थे। दोनों कुमार भी मुस्कुराते हुए उनके पीछे पीछे गये और पास पहुँचने के पहिले ही उन्होंने राजा गोपालसिंह को कूँए के अन्दर कूद पड़ते देखा। यह कूआँ यद्यपि बहुत चौड़ा था तथापि नीचे के हिस्से में सिवाय अन्धकार के और कुछ भी दिखाई न देता था। दोनों कुमार भी जल्दी से उसी कूँए पर गये और बारी बारी से कुछ विलम्ब करके अन्दर कूद पड़े।

हम पहले आनन्दसिंह का हाल लिखते हैं जो इन्द्रजीतसिंह के बाद उस कूँए में कूदे थे। आनन्दसिंह सोचे हुए थे कि कूँए में कूदने के बाद अपने भाई से मिलेंगे मगर ऐसा न हुआ। जब उनका पैर जमीन पर लगा तो उन्होंने अपने को नर्म नर्म घास पर पाया जिसकी ऊँचाई या तौल का अन्दाज नहीं कर सकते थे और उसी के सबब से इन्हें चोट की तकलीफ उठानी न पड़ी। अन्धकार के सबब से कुछ मालूम न पड़ता था इसलिए दोनों हाथ आगे बढ़ा कर कुँअर आनन्दसिंह उसमें घूमने लगे। तब मालूम हुआ कि नीचे से यह कूआँ बहुत चौड़ा है और इसकी दीवार चिकनी तथा सँगीन है। टटोलते और घूमते हुए एक छोटे से बन्द दर्वाजे पर इनका हाथ पड़ा, वहाँ ठहर गये और कुछ सोच कर आगे बढ़े। तीन चार कदम के बाद फिर एक बन्द दर्वाजा मिला, उसे भी छोड़ा और आगे बढ़े। इसी तरह घूमते हुए इन्हें चार दर्वाजे मिले। दो तो खुले हुए थे और दो बन्द। आनन्दसिंह ने सोचा कि बेशक इन्हीं दोनों दर्वाजों में से जो खुले हुए हैं किसी एक दर्वाजे में कुअँर इन्द्रजीतसिंह गये होंगे। बहुत सोचने विचारने के बाद आनन्दसिंह ने भी एक दर्वाजे के अन्दर पैर रक्खा मगर दो ही चार कदम आगे बढ़े होंगे कि पीछे से दर्वाजा बन्द होने की आवाज आई। उस समय उन्हें विश्वास हो गया कि मैंने धोखा खाया, कुँअर इन्द्रजीतसिंह दूसरे दर्वाजे के अन्दर गए होंगे और वह दर्वाजा भी उनके जाने बाद इसी तरह बन्द हो गया होगा। अफसोस करते हुए आगे की तरफ बढ़े मगर दो ही कदम जाने बाद अन्धकार के सबब से जी घबड़ा गया। उन्होंने कमर से तिलिस्मी खञ्जर निकाल कर कब्जा दबाया जिससे

बहुत तेज रोशनी हो गई और वहाँ की हर एक चीज साफ साफ दिखाई देने लगी। कुमार ने अपने को एक कोठड़ी में पाया जिसमें चारो तरफ चार दर्वाजे थे। उनमें एक दर्वाजा तो यही था जिससे कुमार आये थे और बाकी के तीन दर्वाजे भी बन्द थे और उनकी कुण्डियों में ताला लगा हुआ था मगर उस दर्वाजे में कोई ताला या ताले का निशान या जञ्जीर न थी जिससे कुमार आये थे। चारो तरफ की सङ्गीन दीवारों में कई बड़े बड़े सूराख थे जिनमें से हवा आती और निकल जाती थी। जिस दर्वाजे से कुमार आये थे उसके पास जाकर उसे खोलना चाहा मगर किसी तरह से वह दर्वाजा न खुला, तब दूसरे दर्वाजे के पास आये और तिलिस्मी खञ्जर से उसकी जञ्जीर काट कर दर्वाजा खोल उसके अन्दर गये। यह कोठड़ी बनिस्बत पहले के तिगुनी लम्बी थी। जमीन और दीवार संगमर्मर की बनी हुई थी और हवा आने जाने के लिए दीवारों में सूराख भी बने हुए थे *। इस कमरे के बीचोबीच में एक ऊँचा चौतरा था और उस पर एक बड़ा सन्दूक जो असल में बाजा था रक्खा हुआ था। कुमार के अन्दर जाते ही वह बाजा बजने लगा और उसकी सुरीली आवाज ने कुमार का दिल अपनी तरफ खैंच लिया। चारो तरफ दीवारों में बड़ी बड़ी तस्वीरें लगी हुई थीं जिनमें एक तस्वीर बहुत ही बड़ी और जड़ाऊ चौखटे के अन्दर थी। उस तस्वीर में किसी तरह की चमक देख कर कुमार ने अपने खञ्जर की रोशनी बन्द कर दी। उस समय मालूम हुआ कि यहाँ की सब तस्वीरें इस तरह चमक रही हैं कि उनके लिये किसी तरह की रोशनी की दरकार नहीं है। कुमार उस बड़ी तस्वीर को गौर से देखने लगे। देखा कि जड़ाऊ सिंहासन पर एक बूढ़े महाराज बैठे हुए हैं जिनकी उम्र अस्सी वर्ष से कम न होगी, सुफेद लम्बी दाढ़ी नाभी तक लटक रही है, जड़ाऊ मुकुट माथे पर चमक रहा है, कपड़ों के सुन्दर बेलों में मोती और जवाहिरात के फूल और बेल बूटे बने हुए हैं। सामने सोने की चौकी पर एक ग्रन्थ रक्खा हुआ है और पास ही एक दूसरे सिंहासन पर मृगछाल बिछाये एक

* हर एक कोठड़ी या कमरों में जहाँ कहीं दोनों कुमार गये दीवारों में सूराख देखा जिनमें से हवा आने के लिए कहीं से रास्ता था।

बहुत ही वृद्ध साधू महाशय बैठे हुए हैं जिसके भाव से साफ मालूम होता है कि महात्माजी ग्रन्थ का मतलब महाराज को समझा रहे हैं और महाराज बड़े गौर से सुन रहे हैं। उस तस्वीर के नीचे यह लिखा हुआ था :—

"महाराज सूयकान्त और उनके गुरु सोमदत्त जिन्होंने इस तिलिस्म को बनाया और इसके दो हिस्से किये। महाराज के दो लड़के थे। एक का नाम धीरसिंह, दूसरे का नाम जयदेवसिंह। जब इस तिलिस्म की उम्र समाप्त होने पर आवेगी तब धीरसिंह के खानदान में गोपालसिंह और जयदेवसिंह के खानदान में इन्द्रजीतसिंह और आनन्द-सिंह पैदा होंगे और नाते में वे तीनों भाई होंगे। इसीलिये इस तिलिस्म के दो हिस्से किये गये, आधे का मालिक गोपालसिंह होगा और आधे के मालिक इन्द्रजीत-सिंह और आनंदसिंह होंगे, लेकिन यदि उन तीनों में मेल न होगा तो इस तिलिस्म से सिवाय हानि के किसी को भी फायदा न होगा अतएव चाहिए कि वे तीनों भाई आपुस में मेल रक्खें और इस तिलिस्म से फायदा उठावें। उन तीनों के हाथ से इस तिलिस्म के बारह दर्जों में से सिर्फ तीन दर्जे टूटेंगे और नौ दर्जों का मालिक उन्हीं के खानदान में कोई दूसरा होगा। इसी तिलिस्म में से कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को एक ग्रंथ प्राप्त होगा जिसकी बदौलत वे दोनों भाई चर्णाद्रि (चुनारगढ़) के तिलिस्म को तोड़ेंगे.....।"

इसके बाद और भी कुछ लिखा हुआ था मगर अक्षर इतने बारीक थे कि पढ़ा नहीं जाता था। यद्यपि उसके पढ़ने का शौक आनन्दसिंह को बहुत हुआ मगर लाचार हो कर रह गये। उस तस्वीर के बाईं तरफ जो तस्वीर थी उसके नीचे केवल 'धीरसिंह' लिखा हुआ था और दाहिनी तरफ वाली तस्वीर के नीचे 'जयदेवसिंह' लिखा हुआ था। उन दोनों की तस्वीरें नौजवानी के समय की थीं। उसके बाद क्रमशः और भी तस्वीरें थीं और सभों के नीचे नाम लिखा था। कुँअर आनन्दसिंह बाजे की सुरीली आवाज सुनते जाते थे और तस्वीरों को देखते जाते थे। जब सब तस्वीरों को देख चुके तो अन्त में राजा गोपालसिंह, अपनी और अपने भाई की तस्वीर भी देखी और इस काम में उन्हें कई घण्टे लग गये।

इस कमरे में जिस दर्वाजे से कुँअर आनन्दसिंह गये थे उसी के ठीक सामने

एक दर्वाजा और था जो बन्द था और उसकी जंजीर में ताला लगा हुआ था। जब वे घूमते हुए उस दर्वाजे के पास गये तब मालूम हुआ कि दूसरी तरफ से कोई आदमी इस दर्वाजे को ठोकर देता है या खोलना चाहता है। कुमार को इन्द्रजीतसिंह का ख्याल हुआ और सोचने लगे कि ताज्जुब नहीं कि किसी राह से घूमते फिरते भाई साहब यहाँ तक आ गये हों। यह खयाल उनके दिल में बैठ गया और उन्होंने तिलिस्मी खञ्जर से उस दर्वाजे की जञ्जीर काट डाली। दर्वाजा खुल गया और एक औरत कमरे के अन्दर आती हुई दिखाई दी जिसके हाथ में एक लालटैन थी और उसमें तीन मोमबत्तियाँ जल रही थीं। यह नौजवान और हसीन औरत इस लायक थी कि अपनी सुघराई खूबसूरती नजाकत सादगी और बाँकपन की बदौलत जिसका दिल चाहे मुट्ठी में कर ले। यद्यपि उसकी उम्र सत्रह अठारह वर्ष से कम न होगी मगर बुद्धिमानों की बारीक निगाह जाँच कर कह सकती थी कि इसने अभी तक मदनमहीप की पँचरंगी वाटिका में पैर नहीं रक्खा और उसकी रसीली कली को प्रातः समीर के सत्संग से गुदगुदा कर खिल जाने का अवसर नहीं मिला, तथा इसके सतीत्व की अनमोल गठरी पर किसी ने लालच में पड़ कर मालिकाना दखल जमाने की नीयत से हाथ नहीं डाला और न इसने अपनी अनमोल अवस्था का किसी के हाथ सट्टा ठीक या बौना किया। उसके रूप रंग जाने की चौकसी करने वाली बड़ी बड़ी आँखों के निचले हिस्से में अभी तक ऊदी डोरी पड़ने नहीं पाई थी और उसकी गर्दन में स्वर घंटिका उभार दिखाई नहीं देता था। इस गोरी नायिका को देख कर कुँअर आनन्दसिंह भौंचक्के से रह गये और ललचौंही निगाहों से उसे देखने लगे। इस औरत ने भी इन्हें एक दफे तो नजर भर कर देखा मगर साथ ही गर्दन नीची कर ली और पीछे की तरफ हटती हुई धीरे धीरे कुछ दूर जा कर किसी दीवार या दर्वाजे की ओट में हो गई और उस जगह फिर अन्धेरा हो गया।

आनन्दसिंह आश्चर्य लालच और उत्कंठा के फेर में पड़ रहे थे अस्तु वे खञ्जर की सहायता से दर्वाजा लाँघ कर उसी तरफ गये जिधर वह नाजनीन गई थी। अब जिस कमरे में आनन्दसिंह ने पैर रक्खा वह बनिस्बत तस्वीरों वाले कमरे के कुछ बड़ा था और उसके दूसरे सिरे पर भी वैसा ही एक दूसरा दर्वाजा था जैसा

तस्वीर वाले कमरे में था। कुँअर साहब बिना इधर उधर देखे दर्वाजे तक चले गये मगर जब उस पर हाथ रक्खा तो बन्द पाया। उस दर्वाजे में कोई जञ्जीर या ताला दिखाई न दिया जिसे खोल या तोड़ कर कुमार उधर जाते इससे मालूम हुआ कि इस दर्वाजे का खोलना या बन्द करना उस दूसरी तरफ वाले के आधीन है। बड़ी देर तक आनन्दसिंह उस दर्वाजे के पास खड़े होकर सोचते रहे, मगर इसके बाद जब पीछे की तरफ हटने लगे तो दर्वाजा खोले जाने की आहट सुनाई दी। आनन्दसिंह रुके और गौर से देखने लगे। इतने ही में एक और आवाज इस ढङ्ग की आई जिसने आनन्दसिंह को विश्वास दिला दिया कि उस तरफ की जञ्जीर किसी ने तलवार या खञ्जर से काटी है। थोड़ी ही देर में दर्वाजा खुला और कुँअर इन्द्रजीतसिंह दिखाई पड़े। आनन्दसिंह को उस औरत के देखने की लालसा हद्द से ज्यादे थी और कुछ कुछ विश्वास हो गया था कि अबकी दफे पुनः उसी औरत को देखेंगे मगर उसके बदले में अपने बड़े भाई को देखा, देखते ही खुश होकर बोले, "मैंने तो समझा था कि आपसे जल्दी मुलाकात न होगी परन्तु ईश्वर ने बड़ी कृपा की!"

इन्द्र०। मैं भी यही सोचे हुए था क्योंकि कूँए के अन्दर कूदने बाद जब मैंने एक दर्वाजे में पैर रक्खा और दो चार कदम जाने बाद वह दर्वाजा बन्द हो गया तभी मैंने सोचा कि अब आनन्द से मुलाकात होनी कठिन है।

आनन्द०। मेरा भी यही हाल हुआ, जिस दर्वाजे के अन्दर मैंने पैर रक्खा था वह भी दो ही चार कदम जाने बाद बन्द हो गया।

इसके बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह उस कमरे में चले आये जिसमें आनन्दसिंह थे। दोनों भाई एक दूसरे से मिल कर बहुत खुश हुए और यों बातचीत करने लगे :—

आनन्द०। इस कोठड़ी में आपने किसी को देखा था?

इन्द्रजीत०। (ताज्जुब से) नहीं तो!!

आनन्द०। बड़े आश्चर्य की बात है! (कोठरी के अन्दर झाँक कर) कोठड़ी तो बहुत बड़ी नहीं है!!

इन्द्रजीत०। तुम किसे एक रहे हो सो तो कहो?

आनन्द०। अभी अभी एक औरत हाथ में लालटेन लिये मुझे दिखाई दी थी जो इस कोठड़ी में घुस गई और उसके थोड़ी ही देर बाद आप आये हैं।

इन्द्र०। जब मैं कूँए में कूदा तब से इस समय तक मैंने किसी दूसरे की सूरत नहीं देखी!

आनन्द०। अच्छा यह कहिये कि आप जब कूँए में कूदे तब क्या हुआ और यहाँ क्यों कर पहुँचे?

इन्द्रजीत०। कूँए की तह में पहुँच कर जब मैं टटोलता हुआ दीवार के पास पहुँचा तो एक छोटे से दर्वाजे पर हाथ पड़ा। मैं उसके अन्दर चला गया। दो ही चार कदम गया था कि पीछे से दर्वाजा बन्द हो जाने की आवाज आई। मैंने तिलिस्मी खञ्जर हाथ में ले लिया और कब्जा दबा कर रोशनी करने बाद चारो तरफ देखा तो मालूम हुआ कि कोठड़ी बहुत छोटी है और सामने की तरफ एक दर्वाजा और है। खञ्जर से जञ्जीर काट कर दर्वाजा खोला तो एक कमरा और नजर आया जिसकी लम्बाई पचीस हाथ से कुछ ज्यादे थी। उस कमरे में जो कुछ मैंने देखा कहने योग्य नहीं है बल्कि इस योग्य है कि तुम्हें अपने साथ ले जाकर दिखाऊँ। वह कमरा बहुत दूर नहीं है, (जिस कोठड़ी में से आये थे उसे बता कर) इस कोठड़ी के बाद ही वह कमरा है, चलो हम वहाँ का विचित्र तमाशा तुम्हें दिखायें।

आनन्द०। पहिले आप इस कमरे को देख लीजिये जिसकी सैर मैं कर चुका हूँ।

इन्द्र०। मैं समझ गया, जरूर तुमने भी कोई अनूठा तमाशा देखा होगा, (रुक कर) अच्छा चलो पहिले इसी को देख लें।

इतना कह कर आनन्दसिंह के पीछे पीछे इन्द्रजीतसिंह उस कमरे में गये और जो कुछ उनके छोटे भाई ने देखा था उसे उन्होंने भी बड़े गौर और ताज्जुब के साथ देखा।

इन्द्र०। मुझे यह जान कर बड़ी प्रसन्नता हुई कि राजा गोपालसिंह नाते में हमारे भाई होते हैं, (कुछ सोच कर) मगर इस बात की सचाई का कोई और सबूत भी होना चाहिये।

आनन्द०। जब इतना मालूम हुआ है तब और भी कोई न कोई सबूत मिल ही जायगा।

इन्द्रजीत०। अच्छा अब हमारे साथ आ कर उस कमरे का तमाशा देखो जिसका जिक्र हम कर चुके हैं और इसके बाद सोचो कि हम लोग यहाँ से क्यों कर निकल सकेंगे क्योंकि जिस राह से यहाँ आये हैं वह तो बन्द ही हो गया।

आनन्द०। जी हाँ, हम दोनों भाइयों को धोखा हुआ, गोपालसिंहजी के पीछे कोई भी न जा सका।

इन्द्रजीत०। यह कैसे निश्चय हो कि हम लोगों ने धोखा ही खाया, कदाचित् गोपालसिंहजी इसी राह से आते जाते हों और यहाँ से बाहर होने के लिये कोई दूसरा रास्ता हो।

आनन्द०। यह भी हो सकता है मगर बड़े आश्चर्य की बात है कि खून से लिखी किताब में जिसे हम लोग अच्छी तरह पढ़ चुके हैं इस जगह तथा इन तस्वीरों का हाल कुछ भी नहीं लिखा है !!

इन्द्रजीतसिंह इसका कुछ जवाब न देकर यहाँ से रवाना हुआ ही चाहते थे कि बाजे की सुरीली आवाज (जो इस कमरे में बोल रहा था) बन्द हो गई और दो चार पल तक बन्द रहने बाद पुनः इस ढंग से बोलने लगी जैसे कोई मनुष्य बोलता हो। दोनों कुमारों ने चौंक कर उस पर ध्यान दिया तो "सुनो सुनो सुनो" की आवाज सुनाई पड़ी अर्थात् उस बाजे में से "सुनो सुनो" की आवाज आ रही थी। दोनों कुमार उत्कंठा के साथ उसके पास गये और ध्यान देकर सुनने लगे। सुनो सुनो की आवाज बहुत देर तक निकलती रही। तब इन्द्रजीतसिंह ने यह कह कर कि निःसन्देह यह कोई मतलब की बात कहेगा—अपने जेब में से एक सादी किताब और जस्ते की कलम निकाली और लिखने के लिये तैयार हो गये। अपना खंजर कमर में रख लिया और आनन्दसिंह को अपने खंजर का कब्जा दबा कर रोशनी करने के लिए कहा। थोड़ी देर तक और सुनो सुनो की आवाज आती रही और फिर सन्नाटा रहा। कई पल के बाद फिर आवाज धीरे धीरे आने लगी और इन्द्रजीतसिंह लिखने लगे। वह आवाज यह थी—

साकरा खति गलि घस्मङ तो चइ छनेज
काभ खज याट लट नड कढ रोण औत
रथ इद सध तिन लिप स्मफ कीब ताभ
लीम किय सीर चल लब तीश फिप
रस तीह ॐ० से कप्रा खसग कब
रोङ इच सछ बाज जेभ में ञवेट
सठ बड बाढ तेंण भत रीथ हैंद
जिध न न कीप तुफ म्हेब जभ रूम
रय तर हैल ताव लीश लप गास
याह ॐ० कफ रोख औग रघ सुङ
नाच कछ रोज अभ गत्र रट एठ
कड हीढ दण फेत सुथ नद नेध सेन
सप मफ भब में भन म आय वेर
तोल दोव हश राप कस रह ॐ० के
क भीख सुग नघ सङ कच तेछ हौ ज
इस सज कीट तठ कींड बढ औण
रत ताथ लीद इध सीन कप मफ
रेब में भहै म ढूँय ढोर ।

इसके बाद बाजे का बोलना बन्द हो गया और फिर किसी तरह की आवाज न आई। कुँअर इन्द्रजीतसिंह जो कुछ लिख चुके थे उस पर गौर करने लगे। यद्यपि वे बातें बेसिर पैर की मालूम होती थीं मगर थोड़ी ही देर में उनका मतलब इन्द्रजीतसिंह समझ गये और जब आनन्दसिंह को समझाया तो वे बहुत खुश हो कर बोले—"अब कोई हर्ज नहीं, हम लोगों का कोई काम अटका न रहेगा, मगर वाह रे कारीगरी !!"

इन्द्र०। निःसन्देह ऐसी ही बात है, मगर जब तक हम लोग उसे पा न लें

इस कमरे के बाहर न होना चाहिये, कौन ठिकाना अगर किसी तरह दर्वाजा बन्द हो गया और यहाँ आ न सके तो बड़ी मुश्किल होगी।

आनन्द०। मैं भी यही मुनासिब समझता हूँ।

इन्द्र०। अच्छा इस तरफ आओ।

इतना कह कर कुँअर इन्द्रजीतसिंह उस बड़ी तस्वीर की तरफ बढ़े और आनन्दसिंह उनके पीछे पीछे चले।

उस आवाज का मतलब जो बाजे में सुनाई दी थी इस जगह लिखने की कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ती क्योंकि हमारे पाठक यदि उन शब्दों पर जरा भी गौर करेंगे तो मतलब समझ जायँगे कोई कठिन बात नहीं है।

पांचवां बयान

कल्याणसिंह के ताली बजाने के साथ ही बहुत से आदमी हाथों में नंगी तलवारें लिये हुए उसी कोठड़ी से निकल आये जिसमें से कल्याणसिंह निकला था मगर शेरअली खाँ की मदद के लिये केवल एक वही नकाबपोश उस कमरे में था जो दर्वाजा खोलने के साथ ही उन्हें दिखाई दिया था। विशेष बातचीत का समय तो न मिला मगर नकाबपोश ने शेरअली खाँ से इतना अवश्य कह दिया कि आप अपनी मदद के लिये अभी किसी को भी न बुलाइये, इन लोगों के लिये अकेला मैं ही बहुत हूँ, हाँ यदि मेरी बात पर आपको विश्वास न हो तो जल्दी से इस कमरे के बाहर हो जाइये।"

यद्यपि सैकड़ों आदमियों के मुकाबले में केवल एक नकाबपोश का इतना बड़ा हौसला दिखाना विश्वास करने योग्य न था मगर शेरअली खाँ खुद भी जवाँमर्द और दिलेर आदमी था इस सबब से या शायद किसी और सबब से उसने नकाबपोश की बातों का विश्वास कर लिया और किसी को बुलाने के लिये उद्योग न करके अपने बिछावन के नीचे से तलवार निकाल कर स्वयम् लड़ने के लिये तैयार हो गया।

यह नकाबपोश असल में भूतनाथ था जो सर्यूसिंह के कहे मुताबिक शेरअली खाँ के पास आया था। उसे विश्वास था कि शेरअली खाँ कल्याणसिंह की

मदद के लिये तैयार हो जायगा मगर जब उसने कमरे के बाहर से उन दोनों की बातें सुनीं और शेरअली खाँ को नेक ईमानदार इन्साफपसन्द और सच्चा बहादुर पाया तो बहुत प्रसन्न हुआ और जी जान से उसकी मदद करने के लिये तैयार हो गया। हमारे पाठक यह तो जानते ही हैं कि भूतनाथ के पास भी कमलिनी का दिया हुआ एक तिलिस्मी खञ्जर है जिसे भूतनाथ पर कई तरह का शक उठने और मुकदमा कायम होने पर भी कमलिनी ने अपने बात का पास करके अभी तक नहीं लिया था। आज उसी खञ्जर की बदौलत भूतनाथ ने इतना बड़ा हौसला किया और बेईमानों के हाथ से शेरअली खाँ को बचा लिया।

जिस समय कल्याणसिंह ने भूतनाथ का मुकाबिला करना चाहा उस समय भूतनाथ ने फुर्ती से अपने चेहरे की नकाब उलट दी और ललकार कर कहा, "आज बहुत दिनों पर तुम लोग भूतनाथ के सामने आए हो, जरा समझ कर लड़ना!"

इतना कह कर भूतनाथ ने तिलिस्मी खञ्जर से दुश्मनों पर हमला किया—इस नीयत से किसी की जान भी न जाय और सब के सब गिरफ्तार कर लिये जायं।

सब के पहिले उसने खञ्जर का एक साधारण हाथ कल्याणसिंह पर लगाया जिससे उसकी दाहिनी कलाई जिसमें नंगी तलवार का कब्जा था कट कर जमीन पर गिर पड़ी और साथ ही इसके तिलिस्मी खञ्जर की तासीर ने उसके बदन में बिजली पैदा कर दी और वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा।

जिस समय कल्याणसिंह और उसके साथियों ने भूतनाथ का नाम सुना उसी समय उनकी हिम्मत का बटवारा हो गया। आधी हिम्मत तो लाचारी के हिस्से में पड़ कर उनके पास रह गई और आधी हिम्मत उनके उत्साह के साथ निकल कर वायुमण्डल की तरफ पधार गई। भूतनाथ चाहे परले सिरे का बहादुर हो या न हो मगर उसके कर्मों ने उसका नाम बहादुरी और ऐयारी की दुनिया में बड़े रोब और दाब के साथ मशहूर कर रक्खा था। चाहे कैसा ही बहादुर और दिलेर आदमी हो मगर अपने मुकाबले में भूतनाथ का नाम सुनते ही उसकी हिम्मत टूट

जाती थी। यहाँ भी वही मामला हुआ और दुश्मनों की पस्तहिम्मती ने उनकी किस्मत का फैसला भी शीघ्र ही कर दिया।

जिस समय कल्याणसिंह बेहोश होकर जमीन पर गिरा उसी समय एक सिपाही ने भूतनाथ पर तलवार का वार किया। भूतनाथ ने उसे तिलिस्मी खञ्जर पर रोका और इसके बाद खञ्जर उसके बदन में छुला दिया जिसका नतीजा यह निकला कि दुश्मन की तलवार दो टुकड़े हो गई और वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा। इसी बीच में बहादुर शेरअली खाँ ने दो सिपाहियों को जान से मार गिराया जिन्होंने उस पर हमला किया था। निःसन्देह कल्याणसिंह के साथी इतने ज्यादे थे कि शेरअली खाँ को मार डालते या गिरफ्तार कर लेते मगर भूतनाथ की मुस्तैदी ने ऐसा न होने दिया। उस बहुत बड़े कमरे में खुल कर लड़ने की जगह न थी और इस सबब से भी भूतनाथ को फायदा ही पहुँचा। जितनी देर में शेरअलीखाँ ने अपनी हिम्मत और मर्दानगी से चार आदमियों को बेकाम किया उतनी ही देर में भूतनाथ की चालाकी और फुर्ती की बदौलत बीस आदमी बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़े। भूतनाथ के बदन पर भी हलके हलके दो चार जख्म लगे, साथ ही इसके भूतनाथ को इस बात का विश्वास हो गया कि शेरअलीखाँ जो कई जख्म खा चुका था ज्यादा देर तक इन लोगों के मुकाबले में ठहर न सकेगा अतएव जहाँ तक जल्द हो सके लड़ाई का फैसला कर ही देना चाहिये, ताज्जुब नहीं कि अपने साथियों को गिरते देख दुश्मनों की हिम्मत बढ़ जाय। मगर उधर तो मामला ही दूसरा हो गया। अपने साथियों को बिना जख्म खाए गिरते और बेहोश होते देख दुश्मन को बड़ा ही ताज्जुब हुआ। उन्होंने सोचा कि भूतनाथ केवल ऐयार बहादुर और लड़ाका ही नहीं है बल्कि किसी देवता का प्रबल इष्ट भी रखता है जिस से ऐसा हो रहा है। इस ख्याल के आने के साथ ही उन लोगों ने भागने का इरादा किया मगर ताज्जुब की बात थी कि वह रास्ता जिधर से वे लोग आये थे एक दम बन्द हो गया था और इस सबब से पीठ दिखाकर भागने वालों की जान पर और भी आफत आई। इधर तो शेरअलीखाँ की तलवार ने कई सिपाहियों का फैसला किया और उधर भूतनाथ ने तिलिस्मी खञ्जर का कब्जा दबाया जिससे

बिजली की तरह चमक पैदा हुई और भागने वालों की आँखें एक दम बन्द हो गईं। फिर क्या था, भूतनाथ ने थोड़ी ही देर में तिलिस्मी खंजर की बदौलत बाकी बचे हुओं को बेहोश कर दिया और उस समय गिनती करने पर मालूम हुआ कि दुश्मन सिर्फ पैंतालीस आदमी थे। कल्याणसिंह ने यह बात झूठ कही थी कि मेरे साथ सौ सिपाही इस मकान में आने वाले हैं या आया ही चाहते हैं।

इतनी बड़ी लड़ाई और कोलाहल का चुपचाप निपटारा होना असंभव था। गुल शोर मार काट और धरो कपड़ो की आवाज ने मकान के बाहर तक खबर पहुँचा दी। पहरे वाले सिपाहियों में से एक सिपाही ऊपर चढ़ आया और यहाँ का हाल देख घबड़ा कर नीचे उतर के उसने अपने आथियों को खबर की। उसी समय यह बात चारो तरफ फैल गई और थोड़ी ही देर में राजा बीरेंद्रसिंह के बहुत से सिपाही शेरअलीखाँ के कमरे में आ मौजूद हुए। उस समय लड़ाई खतम हो चुकी थी और शेरअलीखाँ तथा भूतनाथ जिसने पुनः अपने चेहरे पर नकाब डाल ली थी बेहोश जख्मी और मरे हुए दुश्मनों को खुशी की निगाहों से देख रहे थे। शेरअलीखाँ ने राजा बीरेन्द्रसिंह के आदमियों को देख कर कहा, "तहखाने की एक गुप्त राह से राजा बीरेन्द्रसिंह का दुश्मन कल्याणसिंह इतने आदमियों को लेकर बुरी नीयत से यहाँ आया था मगर (भूतनाथ की तरफ इशारा करके) इस बहादुर की मदद से मेरी जान बच गई और राजा बीरेन्द्रसिंह का भी कुछ नुक्सान न हुआ। अब तुम लोग जहाँ तक जल्द हो सके जिनमें जान है उन्हें कैदखाने भेजवाने का और मुर्दों के जलवा देने का बन्दोबस्त करो और इस कमरे को भी साफ़ करो।"

इसके बाद उस कोठड़ी में जिसमें से कल्याणसिंह और उसके साथी लोग निकले थे ताला बन्द करके शेरअलीखाँ भूतनाथ का हाथ पकड़े हुए कमरे के बाहर सहन में निकल आया और एक किनारे खड़ा होकर बातचीत करने लगा।

शेर०। इस समय आपके आ जाने से केवल मेरी जान ही नहीं बची बल्कि राजा बीरेन्द्रसिंह का भी बहुत कुछ फायदा हुआ, हाँ यह तो कहिये आप यहाँ कैसे आ पहुँचे ? किसी ने रोका नहीं ?

भूत०। मुझे कोई भी नहीं रोक सकता, तेजसिंह ने मुझे एक ऐसी चीज दे रक्खी है जिसकी बदौलत मैं राजा बीरेंद्रसिंह की हुकूमत के अन्दर महल छोड़कर जहाँ चाहे वहाँ जा सकता हूँ कोई रोकने वाला नहीं। यहाँ मेरा आना कैसे हुआ इसका जवाब भी मैं देता हूँ। मुझे और इन्द्रदेव के ऐयार सर्यूसिंह को किसी तरह इस बात की खबर लग गई कि राजा शिवदत्त और कल्याणसिंह कैद से छूट गये हैं और बहुत से लड़ाकों को लेकर तहखाने के रास्ते से रोहतासगढ़ में पहुँच फसाद मचाया चाहते हैं। इस खबर ने हम दोनों को होशियार कर दिया। सर्यूसिंह तो दुश्मनों के साथ भेष बदले हुए तहखाने में जा घुसा है और मैं बाहर से इन्तजाम करने के लिए यहाँ आया था। यह न समझिएगा कि मैं सीधा आप ही के पास चला आया। नहीं, मैं हर तरह का इन्तजाम करने बाद यहाँ आया हूँ। इस समय इस किले के अन्दर वाली फौज लड़ने के लिए तैयार और मुस्तैद है, बहादुर लोग चौकन्ने और महल के सब दर्वाजों पर मुस्तैद हैं, तोपें गोले उगलने के लिए तैयार हैं और ऐयारों के जाल भी हर तरफ फैले हुए हैं, मगर इस बात की खबर मुझे कुछ भी नहीं है कि तहखाने के अन्दर क्या हो रहा है या क्या हुआ।

शेर०। बेशक तहखाने के अन्दर दुश्मनों ने जरूर गहरा उत्पात मचाया होगा। अफसोस! आज ही के दिन राजा बीरेन्द्रसिंह वगैरह को तहखाने के अन्दर जाना भी था!!

भूत०। इस खबर ने तो मुझे और भी बदहवास कर रक्खा है। क्या करूँ तहखाने का कुछ भी भेद मुझे मालूम नहीं है और न उसके पेचीले तथा मकड़ी के जाले की तरह उलझन डालने वाले रास्तों की मुझे अच्छी तरह खबर ही है, नहीं तो इस समय मैं अवश्य तहखाने के अन्दर पहुँचता और दुश्मनों को अपनी बहादुरी तथा ऐयारी का तमाशा दिखलाता।

शेर०। बेशक ऐसा ही है। इस समय मेरा दिल भी इस खयाल से बेचैन हो रहा है। कि मैं तहखाने के अन्दर जाकर राजा साहब की कुछ भी मदद नहीं कर सकता! अभी थोड़ी ही देर हुई जब मेरे दिल में यह बात पैदा हुई थी कि जिस राह से कल्याणसिंह और उसके मददगार इस कमरे में आये हैं उसी राह से

हमलोग भी तहखाने के अन्दर जाकर कोई काम करें मगर बड़े ताज्जुब की बात है कि वह रास्ता बन्द हो गया ! जहाँ तक मैं खयाल करता हूँ यह काम कल्याणसिंह के किसी पक्षपाती का नहीं है।

भूत०। मैं भी ऐसा ही समझता हूँ। (कुछ सोच कर) हाँ एक बात और भी मेरे ध्यान में आती है।

शेर०। वह क्या।

भूत०। यह तो निश्चय हो ही गया कि हमलोग किसी तरह तहखाने के अंदर जा कर मदद नहीं कर सकते और न इस किले में रहने में ही किसी तरह का फायदा है।

शेर०। बेशक ऐसा ही है।

भूत०। तब हमको खोह के उस मुहाने पर पहुँचना चाहिये जिस राह से दुश्मन लोग इस तहखाने में आये हैं। ताज्जुब नहीं कि दुश्मन लोग अपना काम करके या भाग के उसी राह तहखाने के बाहर निकलें और यदि ऐसा हुआ तो निःसन्देह हमलोग कोई अच्छा काम कर सकेंगे।

शेरअली०। (खुश हो कर) ठीक ठीक है, बेशक ऐसा ही होगा, तो अब विलंब करना उचित नहीं है, चलिये और शीघ्र चलिये।

भूत०। चलिये मैं तैयार हूँ।

इतना कह कर भूतनाथ और शेरअली खाँ ने राजा बीरेन्द्रसिंह के आदमियों को लाशों को उठवाने और जिन्दों को कैद करने के विषय में पुनः समझा बुझा कर तथा और भी बहुत कुछ कह सुन कर किले के बाहर का रास्ता लिया और बहुत जल्द उस ठिकाने जा पहुँचे जहाँ के लिये इरादा कर चुके थे।

छठवां बयान

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह फिर उस बड़ी तस्वीर के पास आये जिसके नीचे महाराज सूर्य्यकान्त का नाम लिखा हुआ था। दोनों कुमार उस

तस्वीर पर फिर से गौर करने और उस लिखावट को पढ़ने लगे जिसे पहिले पढ़ चुके थे। हम ऊपर लिख आये हैं कि 'इस तस्वीर में कुछ लेख ऐसा भी था जो बहुत बारीक हर्फों में लिखा होने के कारण कुमार से पढ़ा नहीं गया। अब दोनों कुमार उसी को पढ़ने के लिये उद्योग करने लगे क्योंकि उसका पढ़ना उन दोनों ने बहुत ही आवश्यक समझा।

इस कमरे में जितनी तस्वीरें थीं वे सब दीवार में बहुत ऊँचे पर न थीं बल्कि इतनी नीचे थीं कि देखने वाला उनके मुकाबले में खड़ा हो सकता था। यही सबब था कि महाराज सूर्य्यकान्त की तस्वीर में जो कुछ लिखा था उसे दोनों कुमारों ने बखूबी पढ़ लिया था मगर कुछ लेख वास्तव में बहुत ही बारीक अक्षरों में लिखा हुआ था और इसी से वे दोनों भाई उसे पढ़ न सके। दोनों भाइयों ने तस्वीर की बनावट और उसके चौकठे (फ्रेम) पर अच्छी तरह ध्यान दिया तो चारों कोनों में छोटे छोटे चार गोल शीशे जड़े हुए दिखाई पड़े जिनमें तीन शीशे पतले और एक ही रंग ढंग के थे मगर एक शीशा मोटा दलदार और बहुत साफ था। इन्द्रजीतसिंह ने उस मोटे शीशे पर उँगली रक्खी तो वह हिलता हुआ मालूम पड़ा। कुमार ने दूसरा हाथ उसके नीचे रख कर उँगली से दबाया तो शीशा चौकठे से अलग हो कर हाथ में आ रहा। इस समय आनन्दसिंह तिलिस्मी खञ्जर हाथ में लिये हुए रोशनी कर रहे थे, उन्होंने इन्द्रजीतसिंह से कहा, "मेरा दिल गवाही देता है कि यह शीशा उन अक्षरों के पढ़ने में अवश्य सहायता देगा जो बहुत बारीक होने के सबब से पढ़े नहीं जाते।"

इन्द्रजीत०। मेरा भी यही खयाल है और इसी सबब से मैंने इसे निकाला भी है।

आनन्द०। इसीलिये यह मजबूती के साथ जड़ा हुआ भी नहीं था।

इन्द्र०। देखो, अब सब मालूम हुआ जाता है।

इतना कह कर जब इन्द्रजीतसिंह ने उस शीशे को उन बारीक अक्षरों के ऊपर रक्खा तो वे अक्षर बड़े बड़े मालूम होने लगे। यह लिखा हुआ था :—

स्वर गिवर नर्ग दै कै पै

खूब समझ के तब आगे पैर रक्खो—

६	—	३	—	आ	५	—	३	—	ए
३	—	३	—	ए	८	—	४	—	०
७	—	४	—	आ	८	—	३	—	ए
७	—	३	—	ए	१	—	१	—	०
३	—	१	—	औ	७	—	३	—	०
५	—	१	—	०	२	—	३	—	०
७	—	२	—	ए	६	—	५	—	०
६	—	५	—	ए	५	—	१	—	०
५	—	१	—	आ	२	—	१	—	०
७	—	३	—	ई	७	—	२	—	ओ
२	—	२	—	ओ	५	—	५	—	०
३	—	३	—	ओ	८	—	४	—	ई
५	—	१	—	इ	५	—	१	—	ओ
७	—	३	—	०	३	—	३	—	आ
८	—	३	—	०	५	—	५	—	०
६	—	५	—	ई	६	—	१	—	०
२	—	२	—	अं	७	—	२	—	०
३	—	३	—	०	१	—	१	—	आ
७	—	२	—	०	६	—	३	—	०
१	—	१	—	०	५	—	५	—	ए
६	—	१	—	०	२	—	३	—	ई
५	—	५	—	ए					

थोड़ी देर तक तो इस लेख का मतलब दोनों की समझ में न आया लेकिन आखिर बहुत सोचने पर उसका मतलब समझ गये और प्रसन्न हो कर आनन्दसिंह बोले :—

आनन्द०। देखिये तिलिस्म के सम्बन्ध में कितनी कठिनाइयाँ हुई हैं।

इन्द्र०। यदि ऐसा न हो तो हर एक आदमी तिलिस्म के भेद को समझ जाय।

आनन्द०। अच्छा तो अब क्या करना चाहिये?

इन्द्र०। सब के पहिले बाजे की ताली खोजनी चाहिये, इसके बाद बाजे की आज्ञानुसार काम करना होगा।

दोनों भाई बाजे वाले चौतरे के पास गये और घूम घूम कर अच्छी तरह देखने लगे, उसी समय पीछे की तरफ से आवाज आई—"हम भी आ पहुँचे।" दोनों भाइयों ने ताज्जुब के साथ घूम कर देखा तो राजा गोपालसिंह पर निगाह पड़ी।

यद्यपि कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को राजा गोपालसिंह के साथ पहिले ही मुहब्बत हो गई थी मगर जब से यह मालूम हुआ कि रिश्ते में राजा गोपालसिंह हमारे भाई हैं तब से मुहब्बत ज्यादे हो गई और इस समय उन्हें देखते ही इन्द्रजीतसिंह दौड़ कर उनके गले से लिपट गये और उन्होंने भी बड़े प्रेम से इन्हें दबा लिया। इसके बाद आनन्दसिंह अपने भाई की तरह मिले और जब अलग हुए तो गोपालसिंह ने कहा, "मालूम होता है कि महाराज सूर्यकांत की तस्वीर के नीचे जो कुछ लिखा है उसे आप दोनों भाई पढ़ चुके हैं!"

इन्द्र०। जी हाँ और यह मालूम करके हमें बड़ी खुशी हुई कि आप हमारे भाई हैं! मैं समझता हूँ कि इस बात को आप पहिले ही से जानते थे।

गोपाल०। बेशक इस बात को मैं बहुत दिनों से जानता हूँ क्योंकि इस जगह कई दफे आ चुका हूँ, इसके अतिरिक्त तिलिस्म संबन्धी एक ग्रंथ भी मेरे पास है उसमें भी यह बात लिखी हुई है।

आनन्द०। तों इतने दिनों तक आपने कहा क्यों नहीं?

गोपाल०। उस किताब में जो मेरे पास है ऐसा करने की मनाही थी मगर

---

* पाठकों के सुभीते के लिये इस मजमून का आशय इस हिस्से के आखिरी पेज पर दे दिया गया है; पर उन्हें अपनी चेष्टा से मतलब समझने की कोशिश अवश्य करनी चाहिए।

अब हम कोई बात आप लोगों से नहीं छिपा सकते और न आप ही छिपा सकते हैं।

इन्द्र०। क्या आप इसी राह से आते जाते हैं? आज भी इसी राह से हम लोगों को छोड़ कर आप निकल गये थे?

गोपाल०। नहीं नहीं, मेरे आने जाने का रास्ता दूसरा ही है। उस कूएँ में आपने कई दर्वाजे देखे होंगे। उनमें जो सब से छोटा दर्वाजा है मैं उसी राह से आता जाता हूँ और यहाँ तो दूसरे ही कामों के लिए कभी कभी आना पड़ता है।

इन्द्र०। यहाँ आने की आपको क्या जरूरत पड़ा करती है?

गोपाल०। इधर तो मुद्दत से मैं आफत ही में फँसा हुआ था आप ही ने मेरी जान बचाई है इसलिए दो दफे से ज्यादे आने की नौबत नहीं आई, हाँ पहिले महीने में एक दफे अवश्य आना पड़ता था और इन कमरों की सफाई अपने हाथ से करता था। जो किताब मेरे पास है और जिसका जिक्र मै अभी कर चुका हूँ उसके पढ़ने से इस तिलिस्म का कुछ हाल और जमानिया की गद्दी पर बैठने वालों के लिए बड़े लोग जो जो आज्ञा और नियम लिख गये हैं आपको मालूम होगा। उसी नियमानुसार हर महीने की अमावस्या को मैं यहाँ आया करता था। आपकी, आनन्दसिंह की और अपनी तस्वीर मे ही ने नियमानुसार इस कमरे में लगाई है और इसी तरह बड़े लोग अपने अपने समय में अपनी और अपने भाइयों की तस्वीरें गुप्त रीति से तैयार करा के इस कमरे में रखते चले आये हैं। नियमानुसार यह एक आवश्यक बात थी कि जब तक आप लोग स्वयं इस कमरे में न आ जायँ मैं हर एक बात आप लोगों से छिपाऊँ इसीलिये मैं इस तिलिस्म के बाहर भी आपको ले नहीं गया जब कि आपने बाहर जाने की इच्छा प्रगट की थी, मगर अब कोई बात छिपाने की आवश्यकता न रही।

इन्द्र०। इस बाजे का हाल भी आपको मालूम होगा?

गोपा०। केवल इतना ही कि इस तिलिस्म के बहुत भेद इसमें भरे हुए हैं मगर इसकी ताली कहाँ है सो मैं नहीं जानता।

इन्द्र०। क्या आपके सामने यह बाजा कभी नहीं बोला?

गोपाल०। इस बाजे की आवाज कई दफे मैंने सुनी है। (जमीन में जड़े

एक पत्थर की तरफ इशारा करके) इस पर पैर पड़ने के साथ ही बाजा बजने लगता है, दो तीन गत के बाद कुछ बातें करता है और फिर चुप हो जाता है, अगर इस पत्थर पर पैर न पड़े तो कुछ भी नहीं बोलता।

इन्द्र०। (किताब जिस पर बाजे की आवाज लिख ली थी दिखा कर) यह आवाज भी आपने सुनी होगी ?

गोपाल०। हाँ सुन चुका हूँ और इसका मतलब भी समझ चुका हूँ मगर इसके लिए उद्योग करना सब के पहिले आपका काम है।

आनन्द०। महाराज सूर्यकान्त की तस्वीर के नीचे बारीक अक्षरों में जो कुछ लिखा है, उसे भी आप पढ़ चुके हैं ?

गोपाल०। नहीं, क्योंकि अक्षर बहुत बारीक हैं पढ़े नहीं जाते।

इन्द्र०। हम लोग उसे पढ़ चुके हैं।

गोपाल०। (ताज्जुब से) सो कैसे ?

कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने शीशे वाला हाल गोपालसिंह से कहा और जिस तरह स्वयं उन बारीक अक्षरों को पढ़ चुके थे उसी तरह उन्हें भी पढ़ाया।

गोपाल०। आखिर समय ने यह बात आपलोगों के लिए रख ही छोड़ी थी

इन्द्र०। इसका मतलब आप समझ गये ?

गोपाल०। जी हाँ समझ गया।

इन्द्र०। अब आप हम लोगों को बड़ाई के शब्दों से सम्बोधन न किया कीजिये क्योंकि आप बड़े हैं और हम लोग छोटे हैं, इस बात का पता लग चुका है।

गोपाल०। (हँस कर) अस्तु अब ऐसा ही होगा। अच्छा तो बाजे वाले चौतरे में से ताली निकालनी चाहिये।

इन्द्र०। जी हाँ, हमलोग इसी फिक्र में थे कि आप आ पहुँचे, लेकिन मुझे और भी बहुत सी बातें आप से पूछनी हैं।

गोपाल०। खैर पूछ लेना, पहिले ताली के काम से छुट्टी पालो।

आनन्द०। मैंने इस कमरे में एक औरत को आते देखा था मगर वह मुझ पर निगाह पड़ने के साथ ही पिछले पैर लौट गई और दूसरी कोठड़ी में जाकर

गायब हो गई। इस बात का पता न लगा कि वह औरत कौन थी और यहाँ क्योंकर आई थी!

गोपाल०। औरत! यहाँ पर!!

आनन्द०। जी हाँ।

गोपाल०। यह तो एक आचर्य की बात तुमने कही! अच्छा खुलासा कह जाओ।

आनन्दसिंह अपना हाल खुलासा बयान कर गए जिसे सुन कर गोपालसिंह को बड़ा ही ताज्जुब हुआ और वे बोले, "खैर थोड़ी देर के बाद इस पर गौर करेंगे। किसी औरत का यहाँ आना निःसन्देह आश्चर्य की बात है!"

इन्द्र०। (खून से लिखी किताब दिखा कर) मेरी राय है कि आप इस किताब को पढ़ जायँ और जो तिलिस्मी किताब आप के पास है, उसे पढ़ने के लिए मुझे दें।

गोपाल०। निःसन्देह वह किताब आपके पढ़ने लायक है, उससे बहुत फायदा पहुँचेगा और खाने पीने तथा समय पड़ने पर इस तिलिस्म से बाहर निकल जाने के लिए अण्डस न पड़ेगी और यहाँ के कई गुप्त भेद भी आप लोगों को मालूम हो जायँगे। आप इस बाजे की ताली निकालने का उद्योग कीजिये, तब तक मैं जाकर वह किताब ले आता हूँ।

इन्द्र०। बहुत अच्छी बात है, मगर बाजे की ताली निकालने के समय आप यहाँ मौजूद क्यों नहीं रहते? आप से बहुत कुछ मदद हम लोगों को मिलेगी।

गोपाल०। क्या हर्ज है, ऐसा ही सही, आपलोग उद्योग करें।

यह तो मालूम ही हो चुका था कि बाजे की ताली उसी चौतरे में है जिस पर बाजा रक्खा या जड़ा हुआ है, अस्तु तीनों भाई उसी चौतरे की तरह बढ़े। राजा गोपालसिंह के पास भी तिलिस्मी खंजर मौजूद था जिसे उन्होंने हाथ में ले लिया और कब्जा दबा कर रोशनी करने बाद कहा, "आप दोनों आदमी उद्योग करें, मैं दिखाता हूँ!!

आनन्द०।(आश्चर्य से) आप भी अपने पास तिलिस्मी खञ्जर रखते हैं!!

गोपाल०। हाँ इसे प्रायः अपने पास रखता हूँ और जब तिलिस्म के अन्दर आने की आवश्यकता पड़ती है तब तो अवश्य ही रखना पड़ता है क्योंकि बड़े लोग ऐसा करने के लिए लिख गये हैं।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह दोनों भाई बाजे वाले चौतरे के चारो तरफ घूमने और उसे ध्यान देकर देखने लगे। यह चबूतरा किसी प्रकार की धातु का और चौखूटा बना हुआ था। उसके दो तरफ तो कुछ भी न था मगर दो तरफ दो मुट्ठे लगे हुए थे जिन्हें देख इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से कहा, 'मालूम होता है कि ये दोनों मुट्ठे पकड़ कर खैंचने के लिये बने हुए हैं।'

आनन्द०। मैं भी यही समझता हूँ।

इन्द्र०। अच्छा खैंचो तो सही।

आनन्द०। (मुट्ठे को अपनी तरफ खैंच कर और घुमा कर) यह तो अपनी जगह से हिलता भी नहीं! मालूम होता है कि हम दोनों को एक साथ उद्योग करना पड़ेगा और इसीलिए इसमें दो मुट्ठे बने हुए हैं।

इन्द्र०। बेशक ऐसा ही है, अच्छा हम भी दूसरे मुट्ठे को खैंचते हैं, दोनों आदमियों को एक साथ ही जोर लगाना चाहिये।

दोनों भाइयों ने आमने सामने खड़े होकर दोनों मुट्ठों को खूब मजबूती से पकड़ा और बायें दाहिने दोनों तरफ उमेठा मगर वह बिल्कुल न घूमे। इसके बाद उसे अपनी तरफ खैंचा और उसे कुछ खिंचते देख कर दोनों भाइयों ने समझा कि इसमें अपनी पूरी ताकत खर्च करनी पड़ेगी। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् दोनों भाइयों के खूब जोर करने पर वे दोनों मुट्ठे खिंच कर बाहर निकल आये और उसके साथ ही उस चबूतरे के एक तरफ की दीवार (जिधर मुट्ठा नहीं था) पल्ले की तरह खुल गई। राजा गोपालसिंह ने झुक कर उसके अन्दर तिलिस्मी खञ्जर की रोशनी दिखाई और तीनों भाई बड़े गौर से उसके अन्दर देखने लगे। एक छोटी सी चौकी नजर आई जिस पर छोटी सी ताँबे की तख्ती और तख्ती के ऊपर एक चाभी रक्खी हुई थी। इन्द्रजीतसिंह ने अन्दर की तरफ हाथ बढ़ा कर चौकी खैंचना चाहा मगर वह अपनी जगह से न हिली, तब उन्होंने तांबे की तख्ती

और ताली उठा ली और पीछे की तरफ हट कर उस खुले हुए पल्ले को बन्द करना चाहा मगर वह बन्द भी न हुआ लाचार उसी तरह छोड़ दिया। तांबे की तख्ती पर दोनों भाइयों ने निगाह डाली तो मालूम हुआ कि उस पर बाजे में ताली लगाने की तर्कीब लिखी हुई है। और इसकी ताली वही है जो उस तख्ती के साथ थी।

गोपाल०। (इन्द्रजीत से) ताली तो आपको मिल ही गई मगर मैं उचित समझता हूँ कि थोड़ी देर के लिए आप लोग यहाँ से चल कर बाहर की हवा खाएँ और सुस्ताने के बाद फिर जो कुछ मुनासिब समझें करें।

इन्द्र०। हाँ मेरी भी यही इच्छा है, इस बन्द जगह में बहुत देर तक रहने से तबीयत घबरा गई और सर में चक्कर आ रहे हैं।

आनन्द०। मेरी भी यही हालत है और प्यास बड़े जोर की मालूम होती है।

गोपाल०। बस तो इस समय यहाँ से चलना ही बेहतर है। हम आप लोगों को एक बाग में ले चलते हैं जहाँ हर तरह का आराम मिलेगा और खाने पीने का भी सुभीता होगा।

इन्द्र०। बहुत अच्छा चलिये, किस रास्ते से चलना होगा?

गोपाल०। उसी राह से जिस से आप आये हैं।

इन्द्र०। तब तो वह कमरा भी आनन्द के देखने में आ जायगा जिसे मैं इन्हें दिखाया चाहता था। अच्छा चलिये।

राजा गोपालसिंह अपने दोनों छोटे भाइयों को साथ लिये हुए वहाँ से रवाना हुए और उस कोठड़ी में गए जिसमें से आनन्दसिंह ने अपने भाई इन्द्रजीससिंह को आते देखा था। उस जगह इन्द्रजीतसिंह ने राजा गोपालसिंह से कहा, "क्या आप इसी राह से यहाँ आते थे? मुझे तो इस दर्वाजे की जञ्जीर खञ्जर से काटनी पड़ी थी!!"

गोपाल०। ठीक है मगर मैं इस ताले को हाथ लगा कर एक मामूली इशारे से खोल लिया करता था।

आनन्द०। इस तिलिस्म में जितने ताले हैं क्या वे सब इशारे ही से खुला करते हैं या किसी खटके पर हैं?

गोपाल०। सब तो नहीं मगर कई ताले ऐसे हैं जिनका हाल मुझको मालूम है।

इतना कह कर गोपालसिंह आगे बढ़े और उस विचित्र कमरे में पहुँचे जिसके बारे में इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से यह कहा था कि उस कमरे में जो कुछ मैंने देखा सो कहने योग्य नहीं है बल्कि इस योग्य है कि तुम्हें अपने साथ ले चल कर दिखाऊँ।

वास्तव में वह कमरा ऐसा ही था और उसके देखने से आनन्दसिंह को भी बड़ा ही आश्चर्य हुआ, मगर अवश्य ही वह राजा गोपालसिंह के लिये कोई नई बात न थी क्योंकि वे कई दफे उस कमरे को देख चुके थे। तिलिस्मी खञ्जर की तेज रोशनी के कारण वहाँ की कोई चीज ऐसी न थी जो दिखाई न देती हो और इसलिये वहाँ की सब चीजों को दोनों भाइयों ने खूब ध्यान देकर देखा।

उस कमरे की लम्बाई लगभग पचीस हाथ के होगी और वह इतना ही चौड़ा भी होगा। चारो कोनों में चार जड़ाऊ सिंहासन रक्खे हुए थे और उन पर बड़े बड़े तथा चमकदार हीरे मानिक पन्ने और मोतियों के ढेर लगे हुए थे। उनके नीचे थालियों में कई प्रकर के जड़ाऊ जेवर रक्खे हुए थे जो औरतों और मर्दों के काम में आ सकते थे। चारो सिंहासनों के बगल से लोहे के मेहराबदार खम्भे निकले हुए थे जो कमरे के बीचोबीच में आ कर डेढ़ पुर्से की ऊँचाई पर मिल गये थे और उनके सहारे एक आदमी लटक रहा था जिसके गले में लोहे की जञ्जीर फाँसी के ढङ्ग पर लगी हुई थी, साफ यही मालूम होता था कि यह आदमी इस तौर पर फाँसी लटकाया गया है। उस आदमी के नीचे एक हसीन औरत सर के बाल खोले इस ढङ्ग से बैठी हुई थी जैसे उस लटकते हुए आदमी का मातम कर रही हो तथा उसके पास ही एक औरत हाथ में लालटेन लिये खड़ी थी जिसे देखने के साथ ही आनन्दसिंह बोल उठे, "यही वह औरत है जिसे मैंने उस कमरे में देखा था और जिसका हाल आप लोगों से कहा था, फर्क केवल इतना ही है कि इस समय इसके हाथ वाली लालटैन बुझी हुई है।"

गोपाल०। तुम भी तो अनोखी बात कहते हो, भला ऐसा कभी हो सकता है !!

आनन्द०। हो सके चाहे न हो सके, मगर यह औरत निःसन्देह वही है जिसे मैं देख चुका हूँ, अगर आपको विश्वास न हो तो इससे पूछ देखिये।

गोपाल०। (हँस कर) क्या तुम इसे सजीव समझते हो?

आनन्द०। तो क्या यह निर्जीव है?

गोपाल०। बेशक ऐसा ही है। तुम इसके पास जाओ और हिला कर देखो।

आनन्दसिंह उस औरत के पास गये और कुछ देर तक खड़े हो कर देखते रहे मगर बड़े भाई के लिहाज से यह सोच कर हाथ नहीं लगाते थे कि कहीं यह सजीव न हो। राजा गोपालसिंह उनका मतलब समझ गये और स्वयम् उस पुतली के पास जाकर बोले, "खाली देखने से पता न लगेगा, इसे हिला डुला और ठोक पीट के देखो।"

इतना कह कर उन्होंने उस पुतली के सर पर दो तीन चपत जमाई जिससे एक प्रकार की आवाज पैदा हुई जैसे किसी धातु की पोली चीज को ठोंकने से आवाज निकलती है। उस समय आनन्दसिंह का शक दूर हुआ और वे बोले, "निःसन्देह यह निर्जीव है, मगर वह औरत भी ठीक ऐसी ही थी, डील डौल रंग ढंग, कपड़ा लत्ता, किसी बात में फर्क नहीं है। ईश्वर जाने क्या मामला है!!"

गोपाल०। ईश्वर जाने क्या भेद है! परन्तु जब से तुमने यह बात कही है मेरे दिल को एक खुटका सा लग गया है, जब तक उसका ठीक ठीक पता न लगेगा जी को चैन न पड़ेगा। खैर इस समय तो यहाँ से चलना चाहिये।

राजा गोपालसिंह उस लटकते हुए आदमी के पास गये और उसका एक पैर पकड़ कर नीचे की तरफ दो तीन झटका दिया, तब वहाँ से हट कर इन्द्रजीतसिंह के पास चले आये। आदमी को झटका देने के साथ ही वह जोर जोर से झोंके खाने लगा और उस कमरे में किसी तरह की भयानक आवाज आने लगी मगर यह नहीं मालूम होता था कि आवाज किधर से आ रही है, हर तरफ वह भयानक आवाज गूँज रही थी। यह हालत चौथाई घड़ी तक रही, इसके बाद एक जोर की आवाज हुई और सामने की तरफ एक छोटा सा दर्वाजा खुला हुआ दिखाई दिया। उस समय कमरे में किसी तरह की आवाज सुनाई न देती थी हर तरह से सन्नाटा था।

भाइयों को साथ लिये हुए राजा गोपालसिंह उस दर्वाजे के अन्दर गये जो अभी खुला था। उसके अन्दर ऊपर चढ़ने के लिये सीढ़ियाँ बनी हुई थीं जिस राह से तीनों भाई ऊपर चढ़ गये और अपने को एक छोटे से नजरबाग में पाया। यह बाग यद्यपि बहुत छोटा था मगर बहुत ही खूबसूरत और सुफियाने किते का बना हुआ था। संगमर्मर की बारीक नालियों में नहर का जल चकाबू के नकशे की तरह घूम कर बाग की खूबसूरती को बढ़ा रहा था, खुशबूदार फूलों की महक हवा के हलके झपेटों के साथ आ रही थी, सूर्य अस्त हो चुका था, रात के समय खिलने वाली कलियों को चन्द्रदेव की आशा लग रही थी। कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह बहुत देर तक अन्धेरे में रहने तथा भूख प्यास के कारण बहुत परेशान हो रहे थे, नहर के किनारे साफ पत्थर पर बैठ गये, कपड़े उतार दिये, और मोती सरीखे साफ जल से हाथ मुंह धोने के बाद दो तीन चुल्लू जल पी कर हरारत मिटाई।

गोपाल०। अब आप लोग इस बाग में बेफिक्री के साथ अपना काम करें, मैदान जायं और स्नान सन्ध्या पूजा से छुट्टी पाकर बाग की सैर करें, तब तक मैं खास बाग में जाकर कुछ खाने का सामान और तिलिस्मी किताब जो मेरे पास है ले आता हूँ। इस बाग में मेवे के पेड़ भी बहुतायत से हैं, यदि इच्छा हो तो आप उनके फल खाने के काम में ला सकते हैं।

इन्द्रजीत०। बहुत अच्छी बात है, आप जाइये मगर जहाँ तक हो सके जल्द आइयेगा।

आनन्द०। क्या हमलोग आपके साथ खास बाग में नहीं चल सकते?

गोपाल०। क्यों नहीं चल सकते हैं मगर मैं इस समय आप लोगों को तिलिस्म के बाहर ले जाना पसन्द नहीं करता और तिलिस्मी किताब में भी ऐसा करने की मनाही है।

इन्द्र०। खैर कोई चिन्ता नहीं आप जाइये और जल्द लौट आइए, जब तिलिस्मी किताब जो आपके पास है हमलोग पढ़ लेंगे और आप भी इस 'रिक्त-गन्थ' को जो मेरे पास है पढ़ लेंगे तब जैसी राय होगी किया जायगा।

गोपाल०। ठीक है, अच्छा तो अब मैं जाता हूँ।

इतना कह कर राजा गोपालसिंह एक तरफ चले गए और कुँअर इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह जरूरी कामों से छुट्टी पाने की फिक्र में लगे।

सातवां बयान

रात पहर भर से ज्यादे जा चुकी है। चन्द्रदेव उदय हो चुके हैं मगर अभी इतने ऊँचे नहीं उठे हैं कि बाग के पूरे हिस्से पर चाँदनी फैली हुई दिखाई देती हाँ बाग के उस हिस्से पर चाँदनी का फर्श जरूर बिछ चुका था जिधर कुँवर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह एक चट्टान पर बैठे हुए बातें कर रहे थे। वे दोनों भाई अपने जरूरी कामों से छुट्टी पा चुके थे। और सन्ध्या बन्दन करने बाद उसी बागके दो चार फलों से आत्माको सन्तोष देकर आराम से बैठे बातें करते हुए राजा गोपालसिंह के आने का इन्तजार कर रहे थे। यकायक बाग के उस कोने में जिधर चाँदनी न होने तथा पेड़ों के झुरमुट के कारण अन्धेरा था दीये की चमक दिखाई पड़ी। दोनों भाई चौकन्ने होकर उस तरफ देखने लगे और दोनों को गुमान हुआ कि राजा गोपालसिंह आते होंगे मगर उनका शक थोड़ी ही देर बाद जाता रहा जब उन्होंने एक औरत को हाथ में लालटैन लिये अपनी तरफ आते देखा।

इन्द्र०। यह औरत इस बाग में क्योंकर आ पहुँची?

आनन्द०। ताज्जुब की बात है! मगर मैं समझता हूँ कि इसे हम दोनों भाइयों के यहाँ होने की खबर नहीं है अगर होती तो इस तरह बेफिक्री के साथ कदम बढ़ाती हुई न आती।

इन्द्र०। मैं भी यही समझता हूँ, अच्छा हम दोनों को छिप कर देखना चाहिये कि यह कहाँ जाती है और क्या करती है।

आन०। मेरी भी यही राय है।

दोनों भाई वहाँ से उठे और धीरे धीरे चलकर एक पेड़ की आड़ में छिप रहे जिसे चारो तरफ से लताओं ने अच्छी तरह घेर रक्खा था और जहाँ से उन दोनों की निगाह बाग के हर एक हिस्से और कोने में बखूबी पहुँच सकती थी। जब वह

औरत घूमती फिरती उस पेड़ के पास से होकर निकली तब आनन्दसिंह ने धीरे से कहा, "यह तो वही औरत है !!"

इन्द्र०। कौन ?

आन०। जिसे तिलिस्म के अन्दर बाजे वाले कमरे में मैंने देखा था और जिसका हाल आपसे और गोपाल भाई से कहा था।

इन्द्रजीत०। हाँ ! अगर वास्तव में ऐसा है तो फिर इसे गिरफ्तार करना चाहिये ?

आन०। जरूर गिरफ्तार करना चाहिये।

दोनों भाई सलाह कर के उस पेड़ की आड़ में से निकले और उस औरत को घेर कर गिरफ्तार करने का उद्योग करने लगे। थोड़ी ही देर बाद नजदीक होने पर इन्द्रजीतसिंह ने भी देख कर निश्चय कर लिया कि यह हाथ में लालटैन लिये हुए औरत वही है जिसे तिलिस्म में फाँसी लटकते हुए आदमी के पास निर्जीव खड़े देखा था।

उस औरत को भी मालूम हो गया कि दो आदमी उसे गिरफ्तार किया चाहते हैं अतएव वह चैतन्य हो गई और चमेली की टट्टियों में घूम फिर कर गायब हो गई। दोनों भाइयों ने बहुत उद्योग और पीछा किया मगर नतीजा कुछ भी न निकला। वह औरत ऐसी गायब हुई कि कोई निशान तक न छोड़ गई, न मालूम वह चमेली की टट्टियों में लीन हो गई या जमीन के अन्दर समा गई। दोनों भाई लज्जा के साथ ही साथ निराश होकर अपनी जगह लौट आये और उसी समय राजा गोपालसिंह को भी एक हाथ में चंगेर और दूसरे में तेज रोशनी की एक अद्भुत लालटेन लिये हुए आते देखा। गोपालसिंह दोनों भाइयों के पास आये और लालटेन तथा चंगेर जिसमें खाने की चीजें थीं जमीन पर रख कर इस तरह बैठ गये जैसे बहुत दूर का चला हुआ मुसाफिर परेशानी और बदहवासी की हालत में आगे सफर करने से निराश होकर पृथ्वी की शरण लेता है, या कोई धनी अपनी सारी रकम खो देने बाद चारों की तलाश से निराश और हताश होकर बैठ जाता है। उस समय राजा गोपालसिंह के चेहरे का रंग उड़ा हुआ था और वह बहुत ही परेशान और बदहवास मालूम होते थे। कुँअर इन्द्रजीत-

सिंह और आनन्दसिंह को बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने घबड़ा कर पूछा, "कहिये कुशल तो है ?"

गोपाल० । (घबराहट के साथ) कुशल नहीं है !!

इन्द्रजीत० । सो क्या ?

गोपाल० । मालूम होता है कि मेरे घर में किसी जबर्दस्त दुश्मन ने पैर रक्खा है और मेरे यहाँ से वह चीज ले गया जिसके भरोसे पर मैं अपने को तिलिस्म का राजा समझता था और तिलिस्म तोड़ने के समय आप लोगों को मदद देने का हौसला रखता था ।

आनन्द० । वह कौन सी चीज थी ।

गोपाल० । वही तिलिस्मी किताब जिसका जिक्र आप लोगों से कर चुका हूँ और जिसे लाने के लिये मैं इस समय गया था ।

इन्द्रजीत० । (रञ्ज के साथ) अफसोस ! क्या आप उसे छिपा कर नहीं थे ?

गोपाल० । छिपा कर ऐसा रखता था कि मुझे वर्षों तक कैदखाने में सड़ाने और मुर्दा बनाने पर भी 'मुन्दर' जिसने अपने को मायारानी बना रक्खा था उसे न पा सकी ।

इन्द्र० । तो आज वह किताब यकायक कैसे गायब हो गई ?

गोपाल० । न मालूम क्योंकर गायब हो गई ! मगर इतना जरूर कह सकता हूँ कि जिसने वह किताब चुराई है वह इस तिलिस्म के भेदों से कुछ न कुछ जान-कर अवश्य हो गया है और इसे आप लोग साधारण बात न समझिये । इस चोरी से मेरा उत्साह भङ्ग हो गया और हिम्मत जाती रही, मैं आप लोगों को इस तिलिस्म में किसी तरह की मदद देने लायक न रहा और मुझे अपनी जान जाने का भी खौफ हो गया । इतना ही नहीं, सबसे ज्यादे तरद्दुद की बात तो यह कि वह चोर आश्चर्य नहीं आप लोगों को भी दुःख दे !!

इन्द्र० । यह बहुत बुरा हुआ !

गोपाल० । बेशक बुरा हुआ ! हाँ यह तो बताइए अभी अभी इस बाग में लालटैन लिए हुए कौन घूम रहा था ?

आनन्द० । वही औरत जिसे मैंने तिलिस्म के अन्दर बाजे वाले कमरे में

देखा था और जो फाँसी लटकते हुए मनुष्य के पास निर्जीव अवस्था में खड़ी थी ! (इन्द्रजीतसिंह की तरफ इशारा करके) आप भाई जी से पूछ लीजिये कि मैं सच्चा था या नहीं ?

इन्द्र० । बेशक उसी रङ्ग रूप और चाल ढाल की औरत थी !

गोपाल० । बड़े आश्चर्य की बात है ! कुछ अक्ल काम नहीं करती !!

इन्द्र० । हम दोनों ने उसे गिरफ्तार करने के लिए बहुत उद्योग किया मगर कुछ बन न पड़ा । इन्हीं चनेली की टट्टियों में वह खुशबू की तरह हवा के साथ मिल गई, कुछ मालूम न हुआ कि कहाँ चली गई !!

गोपाल० । (घबड़ा कर) इन्हीं चमेली की टट्टियों में ! वहाँ से तो देव-मन्दिर में जाने का रास्ता है जो बाग के चौथे दर्जे में है !!

इन्द्र० । (चौंक कर) देखिये देखिये, वह फिर निकली !!

आठवां बयान

इस जगह हमें भूतनाथ के सपूत लड़के तथा खुदगरज और मतलबी ऐयार नानक का हाल पुनः लिखना पड़ा ।

हम ऊपर के किसी बयान में लिख आये हैं जिस समय नानक अपने मित्र की ज्याफत में तन मन धन और आधे शरीर से लौलीन हो रहा था उसी समय उस पर बज्रपात हुआ, अर्थात् एक नकाबपोश ने उसके बाप की ग्रहदशा का हाल बता कर उसे अन्धे कूएँ में ढकेल दिया । लोग कहते हैं कि उसे अपने बाप की मुहब्बत कुछ भी न थी यद्यपि अपनी माँ को कुछ कुछ जरूर चाहता था, तिस पर उनकी नई नवेली दुलहिन ने उसे ऐसा मुट्ठी में कर लिया था कि उसी को सब कुछ तथा इष्टदेव समझे हुए था और उसकी उपासना से विमुख होना हराम समझता था । वह अपने बाप की परवाह नहीं रखता था और न उसका उससे कुछ प्रेम ही था मगर वह अपने बाप से डरता उतना ही था जितना लंपट लोग काल से डरते हैं । जिस समय वह लौट कर घर में आया उसकी अनोखी स्त्री थकावट और सुस्ती के कारण चारपाई का सहारा ले चुकी थी । उसने नानक से पूछा, "कहो क्या मामला है ? तुम कहाँ गये थे ?"

नानक० । (धीरे से) अपने बाप के आफत में फँसने की खबर सुनने गया था । अच्छा होता जो उसके मौत की खबर सुनने में आती और मैं सदैव के लिये निश्चिन्त हो जाता ।

स्त्री० । (आश्चर्य से) अपने प्यारे ससुर के बारे में आज तक ऐसी बात तो मैंने तुम्हारी जुबान से कभी सुनी न थी ।

नानक० । क्योंकर सुनतीं जब कि अपने इस सच्चे भाव को मैं आज तक मंत्र की तरह छिपाये हुए था ! आज यकायक मेरे मुँह से ऐसी बात तुम्हारे सामने निकल गई मगर अब इसके बाद कभी कोई शब्द ऐसा मेरे मुँह से न निकलेगा जिससे कोई समझ सके कि मैं अपने बाप को नहीं चाहता । तुम्हें मैं अपनी जान समझता हूँ और आशा करता हूँ कि इस बात को जो यकायक मेरे मुँह से निकल गई है तुम भी जान ही की तरह हिफाजत करोगी जिसमें कोई सुनने न पावे । अगर कोई सुन लेगा तो मेरी बड़ी खराबी होगी क्योंकि मैं अपने बाप को यद्यपि मानता तो कुछ नहीं हूँ मगर उससे डरता बहुत हूँ क्योंकि वह बड़ा ही शैतान और भयानक आदमी है । यदि वह जान जायगा कि मैं उसके साथ खुदगरजी का बर्ताव करता हूँ तो वह मुझे जान ही से मार डालेगा ।

स्त्री० । नहीं नहीं, मैं ऐसी बात कभी किसी के सामने नहीं कह सकती जिसमें तुम पर मुसीबत आवे, (हँस कर) हाँ अगर तुम मुझे कभी रञ्ज करोगे तो मैं जरूर प्रगट कर दूँगी !

नानक० । उस समय मैं भी लोगों से कह दूँगा कि मेरी स्त्री व्यभिचारिणी हो गई है और मुझ पर तूफान जोड़ती है, भला दुनिया में कोई ऐसा भी आदमी है जो अपने बाप को न चाहता हो ! यदि ऐसा होता तो क्या मैं चुपचाप बैठा ही रह जाता ! मगर नहीं, मैं अपने बाप को छुड़ाने के लिए इसी वक्त जाऊँगा और इसी उद्योग में अपनी जान तक लड़ा दूँगा ।

स्त्री० । (मन में) ईश्वर करे तुम किसी तरह इस शहर से बाहर निकलो या किसी दूसरी ही दुनिया में चले जाओ ! (प्रगट) जब वह फँस ही चुका है तो चुपचाप बैठे रहो, समय पड़ने पर कह देना कि मुझे खबर न थी ।

नानक० । नहीं मैं ऐसा कदापि नहीं कर सकता क्योंकि गोपीकृष्ण (नकाब-पोश) जिसने इस बात की मुझे खबर पहुँचाई है बड़ा दुष्ट आदमी है, समय

पड़ने पर वह अवश्य कह देगा कि मैंने इस बात की इत्तिला नानक को दे दी थी।

स्त्री०। अच्छा तुम खुलासा कह तो जाओ कि क्या क्या खबर सुनने में आई?

नानक ने नकाबपोश की जुबानी जो कुछ सुना था अपनी प्यारी स्त्री से कहा। इसके बाद उसे बहुत कुछ समझा बुझा कर और सफर की पूरी तैयारी करके वह अपने बाप को छुड़ाने की फिक्र में वहाँ से रवाना हो गया।

भूतनाथ के संगी साथी लोग मामूली आदमी न थे बल्कि बड़े ही बदमाश लड़ाके शैतान और फसादी लोग थे और चारों तरफ ऐसे ढंग से घूमा करते थे कि समय पड़ने पर जब भूतनाथ उन लोगों की खोज करता तो विशेष परिश्रम किये बिना ही उनमें से कोई मिल ही जाता था, इसके अतिरिक्त भूतनाथ ने अपने लिए कई अड्डे भी मुकर्रर कर लिये थे जहाँ उसके संगी साथियों में से कोई न कोई अवश्य ही रहा करता था और उन अड्डों में से कई अड्डे ऐसे थे जिनका ठिकाना नानक को मालूम था। एक अड्डा गयाजी से थोड़ी दूर पर बराबर की पहाड़ी के ऊपर था जहाँ अपने बाप का पता लगाता हुआ नानक जा पहुँचा। उस समय भूतनाथ के साथियों में से तीन आदमी वहाँ मौजूद थे।

नानक ने उन लोगों से अपने बाप का हाल पूछा और जो कुछ उन लोगों को मालूम था उन्होंने कहा। इत्तफाक से उसी समय मनोरमा को लिए हुए भूतनाथ भी वहाँ जा पहुँचा और अपने सपूत लड़के को देख कर बहुत खुश हुआ। भूतनाथ ने मनोरमा को तो अपने आदमियों के हवाले किया और नानक का हाथ पकड़ के एक किनारे ले जाने बाद जो कुछ उस पर बीती थी सब ब्योरेवार कह सुनाया।

नानक०। (अफसोस के साथ मुँह बना कर) अफसोस! आपने इन बातों की मुझे कुछ भी खबर न दी! अगर गोपीकृष्ण आपकी परेशानी का कुछ हाल मुझसे न कहते तो मुझे गुमान भी न होता।

भूत०। खैर जो कुछ होना था वह हो गया, अब तुम मनोरमा को और हमारे एक आदमी को साथ लेकर वहाँ जाओ जहाँ तुम्हारी माँ रहती है और मनोरमा से पूछ ताछ कर जिस तरह हो सके बलभद्रसिंह का पता लगाओ। एक

आदमी को साथ जरूर लिये जाओ क्योंकि आज कल तुम्हारी माँ जिस ठिकाने रहती है यद्यपि वहाँ का हाल तुमसे मैने कह दिया है मगर रास्ता ऐसा खराब है कि बिना आदमी साथ ले गये तुम्हें कुछ भी पता न लगेगा।

नानक०। जो आज्ञा, तो क्या इस समय आप सीधे रोहतासगढ़ जायँगे?

भूत०। हाँ जरूर जाऊँगा क्योंकि ऐसे समय में शेरअली खाँ से मिलना आवश्यक है मगर जब तक मैं न आऊँ तुम अपनी माँ के पास रहना और जिस तरह हो सके बलभद्रसिंह का पता लगाना।

इसके बाद नानक को लिए हुए भूतनाथ फिर अपने आदमियों के पास चला आया और एक आदमी को धन्नूसिंह का पता बता कर (जिसे कैद करके कहीं रख आया था) बोला कि तुम धन्नूसिंह को वहाँ से लाकर मेरे घर पहुँचाओ और फिर इसी ठिकाने आकर रहो।

इन कामों से छुट्टी पाने बाद भूतनाथ शेरअली खाँ के पास रोहतासगढ़ गया और वहाँ जो कुछ हुआ सो हमारे प्रेमी पाठक ऊपर पढ़ ही चुके हैं।

नौवां बयान

दोपहर का समय है। हवा खूब तेज चल रही है। मैदान में चारों तरफ बगोले उठते दिखाई दे रहे हैं। ऐसे समय में एक बहुत फैले हुए और गुंजान आम के पेड़ के नीचे नानक और भूतनाथ का एक सिपाही जिसने अपना नाम दाऊ बाबा रक्खा हुआ है। बैठे हुए सफर की हरारत मिटा रहे हैं। पास ही में मनोरमा बैठी हुई है जिसके हाथ और पैर कमन्द से बंधे हुए हैं। थोड़ी ही दूर पर एक घोड़ी चर रही थी जिसकी लम्बी बागडोर एक डाल के साथ बंधी हुई थी और जिस पर मनोरमा को लाद के वे लोग लाये थे। इस समय सफर की हरारत मिटाने और धूप का समय टाल देने के लिये वे लोग इस पेड़ के नीचे बैठे हुए बातें कर रहे हैं।

नानक०। (मनोरमा से) मुझे तुम्हारी सूरत शकल पर रहम आता है, तुम नानक एक बदकार और नकली मायारानी के लिये अपनी जान दे रही हो!

मनोरमा०। (लम्बी साँस लेकर) बात तो ठीक है मगर अब मेरी जान बचने की भी तो कोई उम्मीद नहीं है। सच कहती हूँ कि इस जिन्दगी का मजा

मैंने कुछ भी न पाया। मेरे पास करोड़ों रुपये की जमा मौजूद है मगर इस समय मेरे किसी अर्थ की नहीं, न मालूम उस पर किसका कब्जा होगा और उसे पाकर कौन आदमी अपने को भाग्यवान मानेगा या शायद लावारसी माल समझ कर राजा ही.....

नानक०। तुम रोती क्यों हो! आँखें पोछो! तुम्हारा रोना मुझे अच्छा नहीं मालूम होता। मैं सच कहता हूँ कि तुम्हारी जान बच सकती है और तुम अपनी दौलत का आनन्द अच्छी तरह भोग सकती हो यदि बलभद्रसिंह और इन्दिरा का पता बता दो।

मनोरमा०। मैं बलभद्रसिंह और इन्दिरा का पता भी बता सकती हूँ और अपनी कुल दौलत भी तुमको दे सकती हूँ यदि मेरी जान बच जाय और तुम एक और सलूक मेरे साथ करो।

नानक०। वह कौन सा सलूक है जो तुम्हारे साथ करना होगा? हाय मुझे तुम्हारी सूरत पर दया आती है। मैं नहीं चाहता कि एक ऐसी खूबसूरत परी दुनिया से उठ जाय।

मनोरमा०। यह बात बहुत गुप्त है इसलिए मैं नहीं चाहती कि उसे सिवाय तुम्हारे कोई और सुने।

दाऊ बाबा०। लो हम आप ही अलग हो जाते हैं तुम लोग अपना मजे में बातें करो, हमें इन सब बखेड़ों से कोई मतलब नहीं हमें तो मालिक का काम होने से मतलब है, तब तक दो एक चिलम गाँजा उड़ा के सफर की थकावट मिटाते हैं!

इतना कह कर दाऊ बाबा जी वास्तव में एक मस्त आदमी था हट कर कुछ दूर चला गया और अपने सफरी बटुए में से चकमक निकाल कर आग सुलगाने बाद आनन्द के साथ गाँजा मलने लगा, इधर नानक उठ कर मनोरमा के पास जा बैठा।

नानक०। लो कहो अब क्या कहती हो?

मनो०। यह तो तुम जानते ही हो कि मेरे पास बड़ी दौलत है?

नानक०। हाँ हाँ, सो मैं खूब जानता हूँ कि तुम्हारे पास करोड़ों रुपये की जमा मौजूद है।

मनोरमा० । और यह भी जानते हो कि तुम्हारी प्यारी रामभोली भी मेरे ही कब्जे में है !

नानक० । (चौंक कर) नहीं सो तो मैं नहीं जानता ! क्या वास्तव में रामभोली भी तुम्हारे ही कब्जे में है ? हाय ! यद्यपि वह गूँगी और बहरी औरत थी मगर मैं उसे दिल से प्यार करता था । यदि वह मुझे मिल जाय तो मैं अपने को बड़ा ही भाग्यवान समझूँ !

मनो० । हाँ वह मेरे ही कब्जे में है और तुम्हें मिल सकती है, मैं अपनी तमाम दौलत भी तुम्हें देने को तैयार हूँ, और बलभद्रसिंह तथा इन्दिरा का भी पता बता सकती हूँ यदि इन सब कामों के बदले में तुम एक उपकार मेरे साथ करो !

नानक० । (खुश होकर) वह क्या ?

मनो० । तुम मेरे साथ शादी कर लो क्योंकि मैं तुम्हें जी जान से प्यार करती हूँ और तुम पर मरती हूँ !

नानक० । यद्यपि तुम्हारी उम्र मेरे बराबर है मगर मैं तुम्हें अभी तक नई नवेली ही समझता हूँ और तुम्हें प्यार भी कर सकता हूँ क्योंकि तुम खूबसूरत हो, लेकिन तुम्हारे साथ शादी मैं कैसे कर सकता हूँ ? और तो और यह बात भला बाप कब मंजूर करेगा ?

मनो० । इस बात से अगर तुम्हारा बाप रञ्ज हो तो बड़ा भारी बेवकूफ है ! बलभद्रसिंह के मिलने से उसकी जान बचती है और इन्दिरा के मिलने से वह इन्द्रदेव का प्रेमपात्र बन कर आनन्द के साथ अपनी जिन्दगी बितावेगा । तुम्हारे अमीर होने से भी उसको फायदा ही पहुँचेगा । इसके अतिरिक्त तुम्हारी रामभोली तुम्हें मिलेगी और मैं तुम्हारी होकर जिन्दगी भर तुम्हारी सेवा करूँगी । तुम खूब जानते हो कि मायारानी के फेर में पड़े रहने के कारण अभी तक मेरी शादी नहीं हुई ।

नानक० । (मुस्कुरा कर) मगर दो चार प्रेमियों से प्रेम जरूर कर चुकी हो !!

मनोरमा० । हाँ इस बात से मैं इनकार नहीं कर सकती । मगर क्या तुम इसी से हिचकते हो ? बड़े बेवकूफ हो ! इस बात से भला कौन बचा है ! क्या तुम्हारी

अनोखी स्त्री ही जो आज कल तुम्हारे सिर चढ़ी हुई है बची है ? तुम इस बारे में कसम खा सकते हो ? क्या तुम दुनिया भर के भेद जानते हो और अन्तर्यामी हो ? ये सब बातें तुम्हारे ऐसे खुशदिल आदमियों के सोचने लायक नहीं हैं। हाँ इतना मैं प्रतिज्ञापूर्वक कह सकती हूँ कि इस काम से तुम्हारा बाप कभी नाखुश न होगा। जरा ध्यान देकर देखो तो सही कि तुम्हारे बाप ने इस जिन्दगी में कैसे कैसे काम किये हैं ! उसका मुँह नहीं है कि तुम्हें कुछ कह सके। फिर इस दुनिया में मेरा तुम्हारा साथ और करोड़ों रुपये की जमा क्या यह मामूल बात है ? हमसे तुमसे बढ़ के भाग्यवान कौन दिखाई दे सकता है ? हाँ इस बात की भी मैं कसम खाती हूँ कि तुम्हारी आज कल वाली स्त्री और रामभोली से सच्चा प्रेम करूँगी और चाहे वे दोनों मुझसे कितना ही लड़ें मगर मैं उनकी खातिर ही किया करूँगी।

मनोरमा की मीठी मीठी और दिल लुभाने वाली बातों ने नानक को ऐसा बेकाबू कर दिया कि वह स्वर्ग-सुख का अनुभव करने लगा। थोड़ी देर तक चुप रहने बाद उसने कहा, "मगर इस बात का विश्वास कैसे हो कि जितनी बातें तुम कह गई हो उसे अवश्य पूरा करोगी !!"

इसके जवाब में मनोरमा ने हजारों कसमें खाईं और नानक के मन में अपनी बात का विश्वास पैदा कर दिया। इसके बाद उसने अपना हाथ पैर खोल देने के लिये नानक से कहा। नानक ने उसका हाथ पैर खोल दिया और मनोरमा ने अपनी उँगली से वह जहरीली अँगूठी (जिसको निकाल लेना भूतनाथ भूल गया था) उतार कर नानक की उँगली में पहिरा दी और नानक का मुँह चूम कर कहा, "इस समय से मैंने तुम्हें अपना पति मान लिया। अब तुम मेरे घर चलो, बलभद्रसिंह और इन्दिरा को ले कर अपने बाप के पास भेज दो, मेरे घर-बार के मालिक बनो, और इसके बाद जो कुछ मुझे कहो मैं करने को तैयार हूँ। अब इससे बढ़ कर सन्तोष दिलाने वाली बात मैं क्या कह सकती हूँ !!"

इतना कह कर मनोरमा ने नानक के गले में हाथ डाल दिया और फिर उसका मुँह चूम कर कहा, "प्यारे ! मैं तुम्हारी हो चुकी, अब तुम जो चाहो करो !!"

अहा, स्त्री भी दुनिया में क्या चीज है ! बड़े बड़े होशियारों चालाकों ऐयारे अमीरों पहलवानों और बहादुरों को बेवकूफ बना कर मट्टियामेट कर देने की शक्ति

जितनी स्त्री में है उतनी किसी में नहीं ! इस दुनिया में वह बड़ा ही भाग्यवान है जिसके गले में दुष्टा और धूर्ता स्त्री की फाँसी नहीं लगी। देखिये दुर्दैव के मारे कम्बख्त नानक ने क्या मुँह की खाई है और धूर्त मनोरमा ने कैसा उसका मुँह काला किया है ! मजा तो यह है कि स्त्री रत्न पाने के साथ ही साथ दौलत भी पाने की खुशी ने उसे और भी अन्धा कर दिया और जिस समय मनोरमा ने जहरीली अँगूठी नानक की उँगली में पहिरा कर उसके गुणों की प्रसंशा की उस समय तो नानक को निश्चय ही हो गया कि बस अब यह हमारी हो चुकी। उसने सोचा कि इसे अपनाने में अगर भूतनाथ रञ्ज भी हो जाय तो कोई परवाह की बात नहीं है और रंज होने का सबब ही क्या है उसे तो खुश होना चाहिये क्योंकि मेरे ही सबब से उसकी जान बचेगी।

नानक ने मनोरमा के गले में हाथ डाल के उससे कुछ ज्यादे ही प्रेम का बर्ताव किया जो मनोरमा ने नानक के साथ किया था और तब कहा, "अच्छा तो अब मैं तुम्हारा हो चुका, तुम भी जहाँ तक जल्द हो सके अपना वादा पूरा करो !"

मनोरमा०। मैं तुम्हारी हूँ, अपने साथी लण्ठाधिराज को बिदा करो और मेरे साथ जमानिया के तिलिस्मी बाग की तरफ चलो।

नानक०। वहाँ क्या है ?

मनोरमा०। बलभद्रसिंह और इन्दिरा उसी में कैद हैं, पहले उन्हीं को छुड़ा कर तुम्हारे बाप को खुश करना मैं उचित समझती हूँ।

नानक०। हाँ यह राय बहुत अच्छी है, मैं भी अपने साथी को समझा बुझा कर बिदा करता हूँ।

इतना कह कर नानक अपने साथी के पास चला गया जो गाँजे का दम लगा रहा था। मनोरमा का हाल नमक मिर्च लगा कर उससे कहा और समझा बुझा कर उसी अड्डे पर जहाँ से आया था चले जाने के लिये राजी किया बल्कि उसे बिदा करके तब पुनः मनोरमा के पास आया।

मनोरमा०। तुम्हारा साथी तो सहज ही में चला गया !

नानक०। आखिर वह मेरे बाप का नौकर ही तो है, अस्तु जो कुछ मैं कहूँगा उसे मानना ही पड़ेगा। हाँ तो अब तुम भी चलने के लिये तैयार हो जाओ।

मनोरमा०। (खड़ी होकर) मैं तैयार हूँ।

नानक० । ऐसे नहीं, मेरे बटुए में कुछ खाने की चीजें मौजूद हैं, लोटा डोरी भी तैयार है; वह देखो सामने कूँआ भी है, अस्तु कुछ खा पी कर आत्मा को हरा कर लेना चाहिये जिसमें सफर की तकलीफ मालूम न पड़े ।

मनोरमा० । जो आज्ञा ।

नानक ने बटुए में से कुछ खाने को निकाला और कूँए में से जल खैंच कर मनोरमा के सामने रक्खा ।

मनोरमा० । पहिले तुम खा लो फिर तुम्हारा जूठा जो बचेगा उसे मैं खाऊँगी।

नानक० । नहीं नहीं, ऐसा क्या, तुम भी खाओ और मैं भी खाऊँ !

मनोरमा० । ऐसा कदापि न होगा, अब मैं तुम्हारी स्त्री हो चुकी और सच्चे दिल से हो चुकी, फिर जैसा मेरा धर्म है वैसा ही करूँगी ।

नानक ने बहुत कहा मगर मनोरमा ने कुछ भी न सुना । आखिर नानक को ही पहिले खाना पड़ा । थोड़ा सा खाकर नानक ने जो कुछ छोड़ दिया मनोरमा उसी को खाकर चलने के लिये तैयार हो गई । घोड़ा कसा और दोनों आदमी उसी पर सवार होकर जङ्गल ही जङ्गल पूरब की तरफ चल निकले । इस समय जिस राह से मनोरमा कहती थी नानक उसी राह से जाता था । शाम होते होते ये दोनों उसी खंडहर के पास पहुँचे जिसमें हम पहिले पहिले भूतनाथ और शेरसिंह का हाल लिख आये हैं, जहाँ राजा बीरेन्द्रसिंह को शिवदत्त ने घेर लिया था, जहाँ से शिवदत्त को रूहा ने चकमा देकर फँसाया था या जिसका हाल ऊपर कई दफे लिखा जा चुका है ।

मनोरमा० । अब यहाँ ठहर जाना चाहिये ।

नानक० । क्यों ?

मनोरमा० । यह तो आपको मालूम हो ही चुका होगा कि इस खँडहर में से एक सुरंग जमानिया के तिलिस्मी बाग तक गई हुई है ।

नानक० । हाँ इसका हाल मुझे अच्छी तरह मालूम हो चुका है । इसी सुरंग की राह से मायारानी या उसके मददगारों ने पहुँच कर इन्द्रजीतसिंह और आनन्द-सिंह के साथ साथ और भी कई आदमियों को गिरफ्तार कर लिया था ।

मनोरमा० । तो अब मैं चाहती हूँ कि उसी राह से जमानिया वाले तिलिस्मी बाग के दूसरे दर्जे में पहुँचूँ और दोनों कैदियों को इस तरह निकाल बाहर करूँ

कि किसी को किसी तरह का गुमान भी न होने पावे। मैं इस सुरंग का हाल अच्छी तरह जानती हूँ, इस राह से कई दफे आई और गई हूँ। इतना ही नहीं बल्कि इस सुरङ्ग की राह से जाने में और भी एक बात का सुभीता है।

नानक०। वह क्या?

मनोरमा०। इस सुरङ्ग से बहुत सी चीजें ऐसी हैं जिन्हें हम लोग हजारों रुपये खर्चने और वर्षों परेशान होने पर भी नहीं पा सकते और वे चीजें हम लोगों के बड़े काम की हैं जैसे ऐयारी के काम में आने लायक तरह तरह की रोगनी पोशाकें जो न तो पानी में भीगें और न आग में जलें, एक से एक बढ़ के मजबूत और हलके कमन्द, पचासों तरह के नकाब, तरह तरह की दवाइयां, पचासों किस्म के अनमोल इत्र जो अब मयस्सर नहीं हो सकते। इनके अतिरिक्त ऐश व आराम की भी सैकड़ों चीजें तुमको दिखाई देगी जिन्हें अपने साथ लेते चलेंगे (धीरे से) और मायारानी का एक 'जवाहिरखाना' भी इस सुरङ्ग में है।

नानक०। वाह वाह, तब तो जरूर इसी सुरङ्ग की राह चलना चाहिये! इससे बढ़ कर 'एक पन्थ दो काज' हो ही नहीं सकता!!

मनोरमा०। और इन सब चीजों की बदौलत हम लोग अपनी सूरत भी अच्छी तरह बदल लेंगे और दो चार हर्बे भी ले लेंगे।

नानक०। ठीक है, मैं इस राह से जाने के फायदों को अच्छी तरह समझ गया। हरबों की तो हमें कुछ जरूरत नहीं है क्योंकि कमलिनी का दिया हुआ एक खञ्जर ही मेरे पास ऐसा है जिसके सामने हजारों लाखों बल्कि करोड़ों हरबे झख मारें।

मनोरमा०। (आश्चर्य से) सो क्या? वह खञ्जर कैसा है और कहाँ है?

नानक०। (खञ्जर दिखा कर) यह मेरे पास मौजूद है, जिस समय तुम इसके गुण सुनोगी तो आश्चर्य करोगी।

इतना कह कर नानक घोड़े के नीचे उतर पड़ा और सहारा देकर मनोरमा को भी नीचे उतारा। मनोरमा ने एक पेड़ के नीचे बैठ जाने की इच्छा प्रगट की और कहा कि घोड़े को छोड़ देना चाहिये क्योंकि इसकी अब हम लोगों के जरूरत नहीं रही।

नानक ने मनोरमा की बात मंजूर की अर्थात् घोड़े को छोड़ दिया और कुछ

देर तक आराम लेने की नीयत से दोनों आदमी एक पेड़ के नीचे बैठ गये। मनोरमा ने तिलिस्मी खञ्जर का गुण पूछा और नानक ने बड़ी शेखी के साथ बयान करना शुरू किया और अन्त में खञ्जर का कब्जा दबा कर बिजली की रोशनी भी पैदा कर मनोरमा को दिखाया। चमक से मनोरमा की आँखें चौंधिया गईं और उसने दोनों हाथों से अपना मुँह ढाँक लिया। जब वह चमक बन्द की गई तो नानक के कहने से मनोरमा ने आँखें खोली और खञ्जर की तारीफ करने लगी।

थोड़ी देर तक आराम करने बाद दोनों आदमी खण्डहर के अन्दर गये और उसी मामूली रास्ते से जिसका हाल कई दफे लिखा जा चुका है उसी तहखाने के अन्दर पहुँचे जिसमें शेरसिंह रहा करता था या जिसमें से इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह गायब हुये थे। यह तो पाठकों को मालूम ही है कि राजा बीरेन्द्रसिंह की सवारी आने के कारण इस खण्डहर की अवस्था बहुत कुछ बदल गई थी और अभी तक बदली हुई है मगर इस तहखाने की हालत में किसी तरह का फर्क नहीं पड़ा था।

हमारे पाठक भूले न होंगे कि इस तहखाने में उतरने के लिए जो सीढ़ियाँ थीं उनके नीचे एक छोटी सी कोठड़ी थी जिसमें शेरसिंह अपना असबाब रक्खा करता था और जिसमें से आनन्दसिंह कमला और तारासिंह गायब हुए थे। मनोरमा की आज्ञानुसार नानक ने अपने ऐयारी के बटुए में से मोमबत्ती निकाल कर जलाई और मनोरमा के पीछे पीछे उसी कोठड़ी में गया। यह कोठड़ी बहुत ही छोटी थी और इसके चारो तरफ की दीवार बहुत साफ और संगीन थी। मनोरमा ने एक तरफ की दीवार पर हाथ रख के कोई खटका या किसी पत्थर को दबाया जिसका हाल नानक को कुछ भी मालूम न हुआ मगर एक पत्थर की चट्टान भीतर की तरफ हट कर बगल में हो गई और अन्दर जाने के लिए रास्ता निकल आया। मनोरमा के पीछे पीछे नानक उस कोठड़ी के अन्दर चला गया और इसके साथ ही वह पत्थर की सिल्ली बिना हाथ लगाए अपने ठिकाने चली गई तथा दर्वाजा बन्द हो गया। मनोरमा से नानक ने उस दर्वाजे को खोलने और बन्द करने की तर्कीब पूछी और मनोरमा ने उसका भेद बता दिया बल्कि उस दर्वाजे को एक दफे खोल के और बन्द करके भी दिखा दिया। इसके बाद

दोनों आगे की तरफ बढ़े। इस समय जिस जगह वे दोनों थे वह एक लम्बा चौड़ा कमरा था मगर उसमें किसी तरफ जाने के लिए कोई दर्वाजा दिखाई नहीं देता था हाँ एक तरफ दीवार में एक बहुत बड़ी आलमारी जरूर बनी हुई थी और उसका पल्ला किसी खटके के दबाने से खुला करता था। मनोरमा ने उसके खोलने की तर्कीब भी नानक को बताई और नानक ही के हाथ से उसका पल्ला भी खुलवाया। पल्ला खुलने पर मालूम हुआ कि यह भी एक दर्वाजा है और इसी जगह से सुरङ्ग में घुसना होता है। दोनों आदमी सुरङ्ग के अन्दर रवाना हुए। यह सुरङ्ग इस लायक थी कि तीन आदमी एक साथ मिल कर जा सकें।

लगभग पचास कदम जाने बाद फिर एक कोठड़ी मिली जो पहिली कोठड़ियों की बनिस्बत ज्यादे लम्बी चौड़ी थी। इसमें चारों तरफ कई खुली आलमारियाँ थीं जो पचासों किस्म की चीजों से भरी हुई थीं। किसी में तरह तरह के हरबे थे, किसी में ऐयारी का सामान, किसी में रंगबिरंग के बनावटी मूँछ और नकाब इत्यादि थे और कई आलमारियाँ बोतलों और शीशियों से भरी हुई थीं। इन सामानों को देख कर नानक ने मनोरमा से कहा, "यह सब तो है मगर उस जवाहिरखाने का भी कहीं पता निशान है जिसका होना तुमने बयान किया था?"

मनोरमा०। मैंने तुमसे झूठ नहीं कहा था, वह जवाहिरखाना भी इसी सुरङ्ग में मौजूद है।

नानक०। मगर कहाँ है?

मनोरम०। इस सुरङ्ग में और थोड़ी दूर जाने बाद इसी तरह का एक कमरा पुनः मिलेगा। उसी कमरे में आप उन सब चीजों को देखेंगे। इस सुरङ्ग में जमानियाँ पहुँचने तक इस तरह के ग्यारह अड्डे या कमरे मिलेंगे जिनमें करोड़ों रुपये की सम्पत्ति देखने में आवेगी।

नानक०। (लालच के साथ) जब कि तुम्हें यहाँ का रास्ता मालूम है और ऐसी नादिर चीजें तुम्हारी जानी हुई हैं तो इन सभों को उठा कर अपने घर क्यों नहीं ले जातीं!!

मनोरमा०। मायारानी की बदौलत मुझे किसी चीज की कमी नहीं है। रुपये पैसे गहने जवाहिरात और दौलत से मेरी तबीयत भरी हुई है, इन सब चीजों की मैं कोई हकीकत नहीं समझती।

नानक०। बेशक ऐसा ही है।

मनोरमा०। (बोतल और शीशियों से भरी हुई एक आलमारी की तरफ इशारा करके) देखो ये बोतलें ऐशोआराम की जान खुशबूदार चीजों से भरी हुई हैं।

इतना कह मनोरमा फुर्ती के साथ उस आलमारी के पास चली गई और एक बोतल उठा कर उसका मुँह खोल और खूब सूंघ कर बोली, "अहा! सिवाय मायारानी के और तिलिस्म के राजा के ऐसी खुशबूदार चीजें और किसे मिल सकती हैं?"

इतना कह कर बोतल मुँह बन्द करके उसी जगह रख दी और दूसरी बोतल उठा कर नानक के पास ले चली, मगर वह बोतल उसके हाथ से छूट कर जमीन पर गिर पड़ी या शायद उसने जान बूझ कर ही गिरा दी। बोतल गिरने के साथ ही टूट गई और उसमें का खुशबूदार तेल चारो तरफ जमीन पर फैल गया। मनोरमा बहुत रञ्ज और अफसोस करने लगी और उसकी मुरौवत से नानक ने भी रञ्ज दिखाया। उस बोतल में जो तेल था वह बहुत खुशबूदार और इतना तेज था कि गिरने के साथ ही उसकी खुशबू तमाम कमरे में फैल गई और नानक उस खुशबू की तारीफ करने लगा।

निःसन्देह मनोरमा ने नानक को पूरा उल्लू बनाया। पहिले जो बोतल खोल के मनोरमा ने सूँघी थी उसमें भी एक प्रकार की खुशबूदार चीज थी मगर उसमें यह असर था कि उसके सूँघने बाद दो घण्टे तक किसी तरह की बेहोशी का असर सूँघने वाले पर नहीं हो सकता था और यह जो दूसरी बोतल उसने हाथ से गिरा दी उसमें बहुत तेज बेहोशी का असर था जिसने नानक को तो चौपट ही कर दिया। वह उस खुशबू की तारीफ करता करता जमीन पर लम्बा हो गया, मगर मनोरमा पर उस दवा का कुछ भी असर न हुआ क्योंकि वह पहिले ही एक दूसरी दवा सूँघ कर अपने दिमाग का बन्दोबस्त कर चुकी थी। नानक के हाथ से मनोरमा ने मोमबत्ती ले ली और एक किनारे जमीन पर जमा दी।

जब नानक अच्छी तरह बेहोश हो गया तो मनोरमा ने उसके हाथ से अपनी अँगूठी उतार ली, फिर तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अँगूठी उतार लेने बाद

तिलिस्मी खंजर भी अपने कब्जे में कर लिया और इसके बाद एक लम्बी साँस ले कर कहा, "अब कोई हर्ज की बात नहीं है !"

थोड़ी देर तक कुछ सोचने विचारने बाद मनोरमा ने एक हाथ में मोमबत्ती ली और दूसरे हाथ से नानक का पैर पकड़ घसीटती हुई बाहर वाली कोठड़ी में ले आई, उस कोठड़ी का जिसमें से निकली थी दर्वाजा बन्द कर दिया और साथ ही इसके एक तर्कीब ऐसी भी और कर दी कि नानक पुनः उस दर्वाजे को खोल न सके।

इन कामों से छुट्टी पाने बाद मनोरमा ने नानक की मुश्कें बाँधीं और हर तरह से बेकाबू करने बाद लखलखा सुँघा कर उसे होश में लाने का उद्योग करने लगी। थोड़ी देर बाद नानक होश में आया और उसने अपने को हर तरह से मजबूत और सामने हाथ में उसी का जूता लिए मनोरमा को मौजूद पाया।

नानक०। (आश्चर्य से) यह क्या ! तुमने मुझे धोखा दिया !!

मनो०। (हँस कर) जी नहीं, यह तो दिल्लगी की जा रही है ! क्या तुम नहीं जानते कि ब्याह शादी में लोग दिल्लगी करते हैं, मेरा कोई ऐसा नातेदार तो है नहीं जो तुमसे दिल्लगी करके ब्याह की रसम पूरी करे इसलिए मैं स्वयम् ही इस रसम को पूरा किया चाहती हूँ !!

इतना कह कर मनोरमा तेजी के साथ ब्याह की रसम पूरी करने लगी। जब नानक सिर की खुजलाहट से दुःखी हुआ तो हाथ जोड़कर बोला, "ईश्वर के लिए मुझ पर दया करो, मैं ऐसी शादी से बाज आया, मुझसे बड़ी भूल हुई !!"

मनो०। (रुक कर) नहीं नहीं, घबड़ाने की कोई बात नहीं है। मैं तुम्हारे साथ किसी तरह की बुराई न करूँगी बल्कि भलाई ही करूँगी। मैं देखती हूँ कि तुम्हारे हमजोली लोग सच्ची दिल्लगी से तुम्हें बड़ा दुःख देते हैं और तुम्हारी स्त्री भी जो यद्यपि तुम्हारे ही नातेदारों और मित्रों को प्रसन्न कर के गहने कपड़े तथा सौगात से तुम्हारा घर भरती है मगर फिर भी तुम्हारी नाक का कुछ भी मुलाहजा नहीं करती अतएव तुम्हारी नाक पर हर दम शामत आती ही रहती है इसलिए मैं दया करके तुम्हारी नाक ही को जड़ से उड़ा देना पसन्द करती हूँ जिसमें आइन्दे के लिये तुम्हें कोई कुछ कह न सके। हाँ

इतना ही नहीं बल्कि तुम्हारे साथ मैं एक नेकी और भी किया चाहती हूँ जिसका ब्योरा अभी कह देना उचित नहीं समझती।

नानक०। क्षमा करो, क्षमा करो, मैं हाथ जोड़ कर कहता हूँ कि मुझे माफ करो! मैं कसम खाकर कहता हूँ कि आज से मैं अपने को तुम्हारा गुलाम समझूँगा और जो कुछ तुम कहोगी वही करूँगा!

मनो०। (हँस कर) अच्छा तो आज से तू मेरा गुलाम हुआ'!

नानक०। बेशक मैं आज से तुम्हारा गुलाम हुआ, असल क्षत्री होऊँगा तो तुम्हारे हुक्म से मुँह न मोड़ूँगा!

मनो०। (हँसती हुई) इसमें तो मुझी को शक है कि तेरी जात क्या है! फिर भी कोई चिन्ता नहीं, मैं तुझे हुक्म देती हूँ कि दो महीने तक अपने घर न जाइयो और इस बीच में अपने बाप या किसी दोस्त नातेदार से भी न मिलियो, इसके बाद जो इच्छा हो कीजियो मैं कुछ न बोलूँगी मगर मुझसे और मेरे पक्षपातियों से दुश्मनी का इरादा कभी न कीजियो!

नानक०। ऐसा ही होगा।

मनो०। अगर मेरी आज्ञा के विरुद्ध कोई काम करेगा तो तुझे जान से मार डालूँगी इसको खूब याद रखियो!!

नानक०। मैं खूब याद रक्खूँगा और तुम्हारी आज्ञा के विरुद्ध कोई काम न करूँगा परन्तु कृपा करके मेरा खञ्जर तो मुझे दे दो।

मनो०। (क्रोध से) अब यह खञ्जर तुझे नहीं मिल सकता, खबरदार इसके माँगने या लेने की इच्छा न कीजियो, अच्छा अब मैं जाती हूँ।

इतना कह कर मनोरमा ने तिलिस्मी खञ्जर नानक के बदन से लगा दिया और जब वह बेहोश हो गया तो उसके हाथ पैर खोल दिये, बलती हुई मोमबत्ती एक कोने में खड़ी कर दी, और वहाँ से रवाना होकर खण्डहर के बाहर निकल आई। घोड़े को अभी तक खण्डहर के पास चरते देखा, उसके पास चली गई और अयाल पर हाथ फेरा, दो चार दफे थपथपाया और फिर सवार हो कर पश्चिम की तरफ रवाना हो गई।

इधर नानक भी थोड़ी देर बाद होश में आया। मोमबत्ती एक किनारे बल

रही थी, उसे उठा लिया और अपनी किस्मत को धिक्कार देता हुआ खण्डहर के बाहर हो कर डरता और काँपता हुआ एक तरफ को चला गया।

दसवां बयान

कुँअर इन्द्रजीतसिंह आनन्दसिंह और राजा गोपालसिंह बात कर ही रहे थे कि वह औरत चमेली की टट्टियों में फिर दिखाई दी और इन्द्रजीतसिंह ने चौंक कर कहा, "देखिये वह फिर निकली!"

राजा गोपालसिंह ने बड़े गौर से उस तरफ देखा और यह कहते हुए उस तरफ रवाना हुए कि 'आप दोनों भाई इसी जगह बैठे रहिये, मैं इसकी खबर लेने जाता हूँ।'

जब तक राजा गोपालसिंह चमेली की टट्टी के पास पहुँचें तब तक वह औरत पुनः अन्तर्ध्यान हो गई मगर गोपालसिंह थोड़ी देर तक उसी जगह पेड़ों में घूमते रहे और इसके बाद इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के पास लौट आये।

इन्द्रजीत० । कहिये क्या हुआ ?

गोपाल० । हमारे पहुँचने के पहिले ही से वह गायब हो गई, गायब क्या हो गई बस उसी दर्जे में चली गई जिसमें देवमन्दिर है। मेरा इरादा तो हुआ कि उसका पीछा करूँ मगर यह सोच कर लौट आया कि उसका पीछा करके उसे गिरफ्तार करना घण्टे दो घण्टे का काम नहीं है बल्कि दो चार पहर या दो एक दिन का काम है क्योंकि देवमन्दिर वाले दर्जे का बहुत बड़ा विस्तार है तथा छिप रहने योग्य स्थानों की भी वहाँ कमी नहीं है और मुझे इस समय इतनी फुरसत नहीं। इसका खुलासा हाल तो इस समय आप लोगों से न कहूँगा, हाँ इतना जरूर कहूँगा कि जिस समय मैं अपनी तिलिस्मी किताब लेने गया था और उसके न मिलने से दुःखी हो कर लौटा चाहता था उसी समय एक और भी दुःखदाई खबर सुनने में आई जिसके सबब से मुझे कुछ दिन के लिये जमानिया तथा आप दोनों भाइयों का साथ छोड़ना आवश्यक हो गया और दो घण्टे के लिये भी यहाँ रहना मैं पसन्द नहीं करता। फिर भी कोई चिन्ता की बात नहीं है, आप लोग शौक से इस तिलिस्म के जिस हिस्से को तोड़ सकें तोड़ें मगर इस औरत का जो अभी

दिखाई दी थी बहुत ध्यान रक्खें, मेरा दिल यही कहता है कि मेरी तिलिस्मी किताब इसी औरत ने चुराई है क्योंकि यदि ऐसा न होता तो वह यहाँ तक कदापि न पहुँच सकती।

इन्द्र०। यदि ऐसा है तो कह सकते हैं कि वह हम लोगों के साथ भी दगा किया चाहती है!

गोपाल०। निःसन्देह ऐसा है, परन्तु यदि आप लोग उसकी तरफ से बेफिक्र न रहेंगे तो वह आप लोगों का कुछ भी बिगाड़ न सकेगी, साथ ही इसके यदि आप उद्योग में लगे रहेंगे तो वह किताब भी जो उसने चुराई है हाथ लग जायगी।

इन्द्र०। जो कुछ आपने आज्ञा की हैं मैं उस पर विशेष ध्यान रक्खूँगा मगर मालूम होता है कि आपने कोई बहुत ही दुःखदाई खबर सुनी है क्योंकि यदि ऐसा न होता तो इस अवस्था में और अपनी तिलिस्मी किताब खो जाने की तरफ ध्यान न देकर आप यहाँ से जाने का इरादा न करते?

आनन्द०। और जब आप कही चुके हैं कि उसका खुलासा हाल न कहेंगे तो हम लोग पूछ भी नहीं सकते।

गोपाल०। निःसन्देह ऐसा ही है, मगर कोई चिन्ता नहीं, आप लोग बुद्धिमान है जैसा उचित समझें करें, हाँ एक बात मुझे और भी कहनी है।

इन्द्र०। वह क्या?

गोपाल०। (एक लपेटा हुआ कागज लालटेन के सामने रख कर) जब मैं उस औरत के पीछे चमेली की टट्टियों में गया तो वह औरत तो गायब हो गई मगर उसी जगह यह लपेटा हुआ कागज ठीक दर्वाजे के ऊपर ही पड़ा हुआ मुझे मिला पढ़ो तो सही इसमें क्या लिखा है?

इन्द्रजीतसिंह ने उस कागज को खोल कर पढ़ा, यह लिखा हुआ था:—

"यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि न तो आप लोग मुझे जानते हैं और न मैं आप लोगों को जानती हूँ। इसके अतिरिक्त जब तक मुझे इस बात का निश्चय न हो जाय कि आप लोग मेरे साथ किसी तरह की बुराई न करेंगे तब तक मैं आप लोगों को अपना परिचय भी

नहीं दे सकती, हाँ इतना अवश्य कह सकती हूँ कि मैं बहुत दिनों से कैदियों की तरह इस तिलिस्म में पड़ी हूँ। यदि आप लोग दयावान और सज्जन हैं तो मुझे इस कैद से अवश्य छुड़ावेंगे।

—कोई दुःखिनी।"

गोपाल०। (आश्चर्य से) यह तो एक दूसरी ही बात निकली !!

इन्द्र०। ठीक है मगर इसके लिखने पर हम लोग विश्वास ही क्योंकर कर सकते हैं ?

गोपाल०। आप सच कहते हैं, हम लोगों को इसके लिखने पर यकायक विश्वास न करना चाहिये। खैर मैं जाता हूँ, आप जो उचित समझेंगे करेंगे। आइये इस समय हम लोग एक साथ बैठ के भोजन तो कर लें फिर क्या जाने कब और क्योंकर मुलाकात हो।

इतना कह कर गोपालसिंह ने वह चंगेर जो अपने साथ लाये थे और जिसमें खाने की अच्छी अच्छी चीजें थीं आगे रक्खी और तीनों भाई एक साथ भोजन और बीच बीच में बातचीत भी करने लगे। जब खाने से छुट्टी मिली तो तीनों भाइयों ने नहर में से जल पीया और मुँह धोकर निश्चिन्त हुए, इसके बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को बहुत कुछ समझा बुझा कर और उस जगह से देवमन्दिर में जाने का रास्ता बता कर राजा गोपालसिंह वहाँ से रवाना हो गये।

ग्यारहवां बयान

राजा गोपालसिंह के चले जाने बाद दोनों कुमारों ने बातचीत करते रात बिता दी। सुबह को दोनों भाई जरूरी कामों से छुट्टी पाकर फिर उसी बाजे वाले कमरे की तरफ रवाना हुए। जिस राह से इस बाग में आये थे वह दर्वाजा अभी तक खुला हुआ था, उसी राह से होते हुए तिलिस्मी बाजे के पास जा पहुँचे। इस समय आनन्दसिंह अपने तिलिस्मी खंजर से रोशनी कर रहे थे।

दोनों भाइयों की राय हुई कि इस बाजे में जो कुछ बातें भरी हुई हैं उन्हें एक दफे अच्छी तरह सुन कर याद कर लेना चाहिये फिर जैसा होगा देखा जायगा। आखिर ऐसा ही किया। बाजे की ताली उनके हाथ लग ही चुकी थी और ताली लगाने की तर्कीब भी उस तख्ती पर लिखी हुई थी जो ताली के साथ मिली थी

अस्तु इन्द्रजीतसिंह ने बाजे में ताली लगाई और दोनों भाई उसकी आवाज गौर से सुनने लगे। जब बाजे का बोलना बन्द हुआ तो इन्द्रजीतसिंह ने आनंदसिंह से कहा, "मैं बाजे में ताली लगाता हूँ और तिलिस्मी खञ्जर से रोशनी भी करता हूँ तुम इस बाजे में से जो कुछ आवाज निकले संक्षेप रीति से लिखते चले जाओ।" आनंदसिंह ने कबूल किया और उसी किताब में जिसमें पहिले इन्द्रजीतसिंह इस बाजे की कुछ आवाज लिख चुके थे लिखने लगे। पहिले वह आवाज लिख गये जो अभी बाजे में से निकली थी इसके बाद इन्द्रजीतसिंह ने बाजे का एक खटका दबाया और फिर ताली देकर आवाज सुनने और आनन्दसिंह लिखने लगे।

इस बाजे में जितनी आवाज भरी हुई थी उसका सुनना और लिखना दो घण्टे का काम न था बल्कि कई दिन का काम था क्योंकि बाजा बहुत धीरे धीरे चल कर आवाज देता था और जो बात कुमार के समझ में न आती थी उसे दोहरा कर सुनना पड़ता था, अस्तु आज चार घण्टे तक दोनों कुमार उस बाजे की आवाज सुनने और लिखने में लगे रहे, इसके बाद फिर उसी बाग में चले आये जिसका जिक्र ऊपर आ चुका है। बाकी का दिन और रात उसी बाग में बिताया। दूसरे दिन सबेरे जरूरी कामों से छुट्टी पा कर फिर तहखाने में घुसे तथा बाजे वाले कमरे में आकर फिर बाजे की आवाज सुनने और लिखने के काम में लगे। इसी तरह दोनों कुमारों को बाजे की आवाज सुनने और लिखने के काम में कई दिन लग गये और इस बीच में दोनों कुमारों ने तीन दफे उस औरत को देखा जिसका हाल पहले लिखा जा चुका है और जिसकी लिखी एक चीठी राजा गोपालसिंह के हाथ लगी थी। उस औरत के विषय में जो जो बातें लिखने योग्य हुईं उसे हम यहाँ पर लिखते हैं।

राजा गोपालसिंह के जाने बाद पहिली दफे जब वह औरत दिखाई दी उस समय दोनों भाई नहर के किनारे बैठे बातचीत कर रहे थे, समय सन्ध्या का था और बाग की हर एक चीज साफ नजर आ रही थी। यकायक वह औरत उसी चमेली की झाड़ी में से निकलती दिखाई दी। वह दोनों कुमारों की तरफ तो नहीं गई मगर उन्हें दिखा कर एक कपड़े का टुकड़ा जमीन पर रखने बाद पुनः चमेली की झाड़ी में घुस कर गायब हो गई।

इन्द्रजीतसिंह की आज्ञा पाकर आनन्दसिंह वहाँ गये और उस टुकड़े को उठा लाये, उस पर किसी तरह के रंग से यह लिखा हुआ था :—

"सत्पुरुषों के आगमन से दीन दुखिया प्रसन्न होते हैं और सोचते हैं कि अब हमारी भी कुछ न कुछ भला होगा। मुझ दुखिया को भी इस तिलिस्म में सत्पुरुषों की बाट जोहते और ईश्वर से प्रार्थना करते बहुत दिन बीत गये, परन्तु अब आप लोगों के आने से भलाई की आशा जान पड़ने लगी है। यद्यपि मेरा दिल गवाही देता है कि आप लोगों के हाथ से सिवाय भलाई के मेरी बुराई नहीं हो सकती तथापि इस कारण से कि बिना समझे दोस्त दुश्मन का निश्चय कर लेना नीति विरुद्ध है मैं आपकी सेवा में उपस्थित न हुई। अब आशा है कि आप अनुग्रह पूर्वक अपना परिचय देकर मेरा भ्रम दूर करेंगे।"

—इन्दिरा।"

इस पत्र के पढ़ने से दोनों कुमारों को बड़ा ताज्जुब हुआ और इन्द्रजीतसिंह की आज्ञानुसार आनन्दसिंह ने उसके पत्र का यह उत्तर लिखा :—

"हम लोगों की तरफ से किसी तरह का खुटका न रक्खो। हम लोग राजा बीरेन्द्रसिंह के लड़के हैं और इस तिलिस्म को तोड़ने के लिये यहाँ आये हैं। तुम बेखटके अपना हाल हमसे कहो, हमलोग निःसन्देह तुम्हारा दुःख दूर करेंगे।"

यह चीठी चमेली की झाड़ी में उसी जगह हिफाजत के साथ रख दी गई जहाँ से उस औरत की चीठी मिली थी। दो दिन तक वह औरत दिखाई न दी मगर तीसरे दिन जब दोनों कुमार बाजे वाले तहखाने में से लौटे और उस चमेली की टट्टी के पास गए तो ढूँढ़ने पर आनन्दसिंह को अपनी लिखी हुई चीठी का जवाब मिला। यह जवाब भी एक छोटे से कपड़े के टुकड़े पर लिखा हुआ था जिसे आनन्दसिंह ने पढ़ा, मतलब यह था :—

"यह जान कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप राजा बीरेन्द्रसिंह के लड़के हैं जिन्हें मैं बहुत अच्छी तरह जानती हूँ, इसलिए आपकी सेवा में बेखटके उपस्थित हो सकती हूँ मगर राजा गोपालसिंह से डरती हूँ जो आपके पास आया करते हैं। —इन्दिरा।"

पुनः कुँअर इन्द्रजीतसिंह की तरफ से यह जवाब लिखा गया :—

"हम प्रतिज्ञा करते हैं कि राजा गोपालसिंह भी तुम्हें किसी तरह का कष्ट न देंगे।"

यह चीठी भी उसी मामूली ठिकाने पर रख दी गई और फिर दो रोज तक इन्दिरा का कुछ हाल मालूम न हुआ। तीसरे दिन सन्ध्या होने के पहिले जब कुछ कुछ दिन बाकी था और दोनों कुमार उसी बाग में नहर के किनारे बैठे बातचीत कर रहे थे तब यकायक उस चमेली की झाड़ी में से हाथ में लालटेन लिये निकलती हुई इन्दिरा दिखाई पड़ी। वह सीधे उस तरफ रवाना हुई जहाँ दोनों कुमार नहर के किनारे बैठे हुए थे, जब उनके पास पहुँची लालटेन जमीन पर रख कर प्रणाम किया और हाथ जोड़ कर सामने खड़ी हो गई। इसकी सूरत शकल के बारे में हमें जो लिखना था ऊपर लिख चुके हैं यहाँ पर पुनः लिखने की आवश्यकता नहीं है, हाँ इतना जरूर कहेंगे कि इस समय इसकी पौशाक में फर्क था। इन्द्रजीतसिंह ने बड़े गौर से इसे देखा और कहा, "बैठ जाओ और निडर होकर अपना हाल कहो।"

इन्दिरा०। (बैठकर) इसीलिए तो मैं सेवा में उपस्थित हुई हूँ कि अपना आश्चर्यजनक हाल आपसे कहूँ। आप प्रतापी राजा बीरेन्द्रसिंह के लड़के हैं और इस योग्य हैं कि हमारा मुकदमा सुनें, इन्साफ करें दुष्टों को दण्ड दें और हम लोगों को दुःख के समुद्र से निकाल कर बाहर करें।

इन्द्र०। (आश्चर्य) हम लोगों को!! क्या तुम अकेली नहीं हो? क्या तुम्हारे साथ कोई और भी इस तिलिस्म में दुःख भोग रहा है?

इन्दिरा०। जी हाँ, मेरी माँ भी इस तिलिस्म के अंदर बुरी अवस्था में पड़ी हुई है। मैं तो चलने फिरने योग्य भी हूँ परन्तु वह हर तरह से लाचार है। आप मेरा किस्सा सुनेंगे तो आश्चर्य करेंगे और निःसन्देह आपको हम लोगों पर दया आवेगी।

इन्द्र०। हाँ हाँ हम सुनने के लिए तैयार हैं, कहो और शीघ्र कहो।

इन्दिरा०। अपना किस्सा शुरू किया ही चाहती थी कि उसकी निगाह यकायक राजा गोपालसिंह पर जा पड़ी जो उसके सामने और दोनों कुमारों के पीछे की तरफ से हाथ में लालटेन लिए हुए आ रहे थे। वह चौंक कर उठ खड़ी हुई

और उसी समय कुँअर इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह ने भी घूम कर राजा गोपालसिंह को देखा। जब राजा साहब दोनों कुमारों के पास पहुँचे तो इन्दिरा ने प्रणाम किया और हाथ जोड़ कर खड़ी रह गई। कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह भी बड़े भाई का लिहाज करके खड़े हो गये। इस समय राजा गोपालसिंह का चेहरा खुशी से दमक रहा था और वह हर तरह से प्रसन्न मालूम होते थे।

इन्द्र०। (गोपालसिंह से) आपने तो कई दिन लगा दिये!

गोपाल०। हाँ एक ऐसा ही मामला आ पड़ा था कि जिसका पूरा पता लगाये बिना यहाँ आ न सका, पर आज मैं अपने पेट में ऐसी ऐसी खबरें भर के लाया हूँ कि जिन्हें सुन कर आप लोग बहुत ही प्रसन्न होंगे और साथ ही इसके आश्चर्य भी करेंगे। मैं वह सब हाल आपसे कहूँगा मगर (इन्दिर की तरफ इशारा करके) इस लड़की का हाल सुनने के बाद। (गौर से देर तक देख कर) निःसंदेह इसकी सूरत उस पुतली की ही तरह है।

आन०। कहिये भाईजी, अब तो मैं सच्चा ठहरा न!

गोपाल०। बेशक, तो क्या इसने अपना हाल आप लोगों से कहा?

इन्द्र०। जी यह अपना हाल कहा ही चाहती थी कि आप दिखाई पड़ गये। यह यकायक हम लोगों के पास नहीं आई बल्कि पत्र द्वारा इसने पहिले मुझसे प्रतिज्ञा करा ली कि कि हमलोग इसका दुःख दूर करेंगे और आप (राजा गोपालसिंह) भी इस पर खफा न होंगे।

गोपाल०। (ताज्जुब से) मैं इस पर क्यों खफा होने लगा! (इन्दिरा से) क्यों जी, तुम्हें मुझसे डर क्यों पैदा हुआ?

इन्दिरा०। इसलिये कि मेरा किस्सा आपके किस्से से बहुत सम्बन्ध रखता है। हाँ इतना भी मैं इसी समय कह देना उचित समझती हूँ मेरा चेहरा जिसे आप लोग देख रहे हैं असली नहीं है बल्कि बनावटी है, यदि आज्ञा हो तो इसी नहर के जल से मैं मुँह धो लूँ। तब आश्चर्य नहीं कि आप मुझे पहिचान लें।

गोपाल०। (ताज्जुब से) क्या मैं तुम्हें पहिचान लूँगा?

इन्दिरा०। यदि ऐसा हो तो आश्चर्य नहीं।

गोपाल०। अच्छा अपना मुँह धो डालो।

इतना कह राजा गोपालसिंह लालटेन जमीन पर रख कर बैठ गये और

कुँअर इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह को भी बैठने के लिये कहा। जब इन्दिरा अपना चेहरा साफ करने के लिये नहर के किनारे चलकर कुछ आगे बढ़ गई तब इन तीनों में यों बातचीत होने लगी :—

इन्द्र०। हाँ यह तो कहिये आप क्या खबर लाये हैं !!

गोपाल०। वह किस्सा बहुत बड़ा है, पहिले इस लड़की का हाल सुन लें तब तब कहें, हाँ इसने अपना नाम क्या बताया था ?

इन्द्र०। इन्दिरा।

गोपाल०। (चौंक कर) इन्दिरा !!

इन्द्र०। जी हाँ।

गोपाल०। (सोचते हुए, धीरे से) कौन सी इन्दिरा ? वह इन्दिरा तो नहीं मालूम पड़ती, कोई दूसरी होगी, या शायद वही ही हो, हाँ यह तो कही चुकी है कि मेरी सूरत बनावटी है, आश्चर्य नहीं कि चेहरा साफ होने पर वही निकले, अगर वही हो तो अच्छा है !!

इन्द्र०। खैर वह आती ही है, तब हाल मालूम हो जायगा, तब तक अपनी अनूठी खबरों में से दो एक सुनाइये।

गोपाल०। यहाँ से जाने बाद मुझे रोहतासगढ़ का पूरा पूरा हाल मालूम हुआ है क्योंकि आज कल राजा बीरेन्द्रसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह, भैरोसिंह, तारासिंह, किशोरी, कामिनी, कमलिनी, लाडिली और मेरी स्त्री लक्ष्मीदेवी इत्यादि सब कोई वहाँ ही जुटे हुए हैं और एक अजीबोगरीब मुकदमा पेश है।

इन्द्र०। (चौंक कर) लक्ष्मीदेवी का पता लग गया !!

गोपाल०। हाँ, लक्ष्मीदेवी वही तारा निकली जो कमलिनी के यहाँ उसकी सखी बन के रहती थी और जिसे आप जानते हैं !

इन्द्र। (आश्चर्य से) वह लक्ष्मीदेवी थीं !!

गोपाल०। हाँ वह लक्ष्मीदेवी ही थी जो बहुत दिनों से अपने को छिपाये हुए दुश्मनों से बदला लेने का मौका ढूँढ़ रही थी और समय पाकर अनूठे ढंग से यकायक प्रगट हो गई। इसका किस्सा भी बड़ा ही अनूठा है।

आनन्द०। आप रोहतासगढ़ गये थे ?

गोपाल०। नहीं।

इन्द्र०। सो क्यों? इतना हाल सुनने पर भी आप लक्ष्मीदेवी को देखने के लिये वहाँ क्यों नहीं गये?

गोपाल०। वहाँ न जाने का सबब भी बतावेंगे।

इन्द्र०। खैर यह बताइये कि लक्ष्मीदेवी यकायक किस अनूठे ढंग से प्रगट हो गईं और रोहतासगढ़ में कौन सा अजीबोगरीब मुकदमा पेश है?

गोपाल०। मैं सब हाल आपसे कहूँगा, देखिये वह इन्दिरा आ रही है, पर कोई चिन्ता नहीं अगर वही इन्दिरा है जो मैं सोचे हुआ हूँ तो उसके सामने भी सब हाल बेखटके कह दूँगा।

इतने ही में अपना चेहरा साफ करके इन्दिरा भी वहाँ आ पहुँची। चेहरा धोने और साफ करने से उसकी खूबसूरती में किसी तरह की कमी नहीं आई थी बल्कि वह पहिले से ज्यादे खूबसूरत मालूम पड़ती थी, हाँ अगर कुछ फर्क पड़ा था तो केवल इतना ही कि अब बनिस्बत पहिले के वह कम उम्र की मालूम होती थी।

इन्दिरा के पास आते ही और उसकी सूरत देखते ही गोपालसिंह झट उठ खड़े हुए और उसका हाथ पकड़ कर बोले, "इन्दिरा! तू बेशक वही इन्दिरा है जिसके होने की मैं आशा करता था! यद्यपि कई वर्षों के बाद आज किस्मत ने तेरी सूरत दिखाई है और जब मैंने आखिरी मर्तबे तेरी सूरत देखी थी तब तू निरी लड़की थी मगर फिर भी आज मैं तुझे पहिचाने बिना नहीं रह सकता, तू मुझसे डर मत और अपने दिल में किसी तरह का खुटका भी मत ला, मुझे खूब मालूम हो गया है कि मेरे मामले में तू बिलकुल बेकसूर है। मैं तुझे धर्म की लड़की समझता हूँ और समझूँगा, मेरे सामने बैठ जा और अपना अनूठा किस्सा कह। निःसन्देह तेरा किस्सा भी बड़ा ही अनूठा होगा। हाँ पहिले यह तो बता कि तेरी माँ कहाँ है? कैद से छूटने पर मैंने बहुत खोज की मगर कुछ भी पता न लगा।

इन्दिरा०। (बैठने बाद आँसू से भरी हुई आँखों को आँचल से पोंछती हुई) मेरी माँ बेचारी भी इसी तिलिस्म में कैद है।

गोपाल०। (ताज्जुब से) इसी तिलिस्म में कैद है!

इन्दिरा० । जी हाँ, इसी तिलिस्म में कैद है । बड़ी बड़ी कठिनाइयों से मैं उसका पता लगाती हुई यहाँ तक पहुँची । अगर मैं यहाँ तक पहुँच कर उससे न मिलती तो निःसन्देह वह अब तक मर गई होती, मगर न तो मैं उसे इस कैद से छुड़ा सकती हूँ और न स्वयं इस तिलिस्म के बाहर निकल सकती हूँ । दस पन्द्रह दिन के लगभग हुए होंगे कि अकस्मात् एक किताब मेरे हाथ लग गई जिसके पढ़ने से इस तिलिस्म का कुछ कुछ हाल मुझे मालूम हो गया है और मैं यहाँ घूमने फिरने लायक भी हो गई हूँ । मगर इस तिलिस्म के बाहर नहीं निकल सकती । तौ भी उस किताब का मतलब पूरा पूरा समझ में नहीं आता, यदि मैं उसे अच्छी तरह समझ सकती तो निःसन्देह यहाँ से बाहर जा सकती और आश्चर्य नहीं कि अपनी माँ को भी छुड़ा लेती ।

गोपाल० । वह किताब कौन सी है और कहाँ है ?

इन्दिरा० । (कपड़े के अन्दर से छोटी सी किताब निकाल कर और गोपालसिंह के हाथ में देकर) लीजिये यही है ।

यह किताब चौड़ाई में बहुत छोटी थी और इसके अक्षर भी बहुत महीन थे मगर इसे देखते ही गोपालसिंह का चेहरा खुशी से दमक उठा और उन्होंने इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की तरफ देख कर कहा—"यही मेरी किताब है जो खो गई थी ! (किताब चूम कर) अहा ! इसके खो जाने से तो मैं अधमुआ सा हो गया था ! (इन्दिरा से) यह तेरे हाथ कैसे लग गई ?"

इन्दिरा० । इसका हाल भी बड़ा ही विचित्र है, अपना किस्सा जब कहूँगी तो उसी के बीच में वह भी आ जायगा ।

इन्द्र० । (गोपालसिंह से) मालूम होता है कि इन्दिरा का किस्सा बहुत बड़ा है, इसलिए पहिले रोहतासगढ़ का हाल सुना दीजिये तो एक तरफ से दिलजमई हो जाय ।

कमलिनी के मकान की तबाही, किशोरी कामिनी और तारा की तकलीफ, नकली बलभद्रसिंह के कारण भूतनाथ की परेशानी, लक्ष्मीदेवी का प्रगट होना, उन सभों का रोहतासगढ़ में गिरफ्तार होना, राजा बीरेन्द्रसिंह का वहाँ पहुँचना, भूतनाथ के मुकद्दमे की पेशी, कृष्णाजिन्न का पहुँच कर इन्दिरा वाले कलमदान का पेश करना और असली बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिये भूतनाथ को

छुट्टी दिला देना इत्यादि जो कुछ बातें हम ऊपर लिख आये हैं वह सब हाल राजा गोपालसिंह ने इन्दिरा के सामने ही दोनों कुमारों से बयान किया और सभों ने बड़े गौर से सुना।

इन्दिरा०। बड़े आश्चर्य की बात है कि वह कलमदान जिस पर मेरा नाम लिखा हुआ था कृष्णाजिन्न के हाथ क्योंकर लगा !! हाय ! उस कलमदान का हमारे कब्जे से निकल जाना बहुत ही बुरा हुआ। यदि आज वह मेरे पास होता तो मैं बात की बात में भूतनाथ के मुकद्दमे का फैसला कर देती मगर अब क्या हो सकता है !!

गोपाल०। इस समय वह कलमदान राजा बीरेन्द्रसिंह के कब्जे में है इसलिये उसका तुम्हारे हाथ लगना कोई बड़ी बात नहीं है।

इन्दिरा०। ठीक है मगर उन चीजों का मिलना तो अब कठिन हो गया जो उसके अन्दर थीं और उन्हीं चीजों का मिलना सब से ज्यादे जरूरी था !

गोपाल०। ताज्जुब नहीं कि वे चीजें भी कृष्णाजिन्न के पास हों और वह महाराज के कहने से तुम्हें दे दे।

इन्द्र०। या उन चीजों से स्वयं कृष्णाजिन्न वह काम निकाले जो तुम कर सकती हो ?

इन्दिरा०। जी नहीं, उन चजों का मतलब जितना मैं बता सकती हूँ उतना कोई दूसरा नहीं बता सकता।

गोपाल०। खैर जो कुछ होगा देखा जायगा।

आनन्द०। (गोपाल से) यह सब हाल आपको कैसे मालूम हुआ ? क्या आपने कोई आदमी रोहतासगढ़ भेजा था ? या खुद पिताजी ने यह सब हाल कहला भेजा है ?

गोपाल०। भूतनाथ खुद मेरे पास मदद लेने के लिये आया था मगर मैंने मदद देने से इन्कार किया।

इन्द्र०। (ताज्जुब से) ऐसा क्यों किया ?

गोपाल०। (ऊंची सांस लेकर) विधाता के हाथों से मैं बहुत सताया गया हूँ ! सच तो यों है कि अभी तक मेरे होशहवास ठिकाने नहीं हुए, इसलिये मैं कुछ भी मदद करने लायक नहीं हूँ। इसके अतिरिक्त मैं खुद अपनी तिलिस्मी

किताब खो जाने के गम में पड़ा हुआ था मुझे किसी की बात कब अच्छी लगती थी !

इन्द्रजीत० । (मुस्कुरा कर) ऐसा करने का सबब कुछ दूसरा ही है, मैं कुछ कुछ समझ गया ! खैर देखा जायगा, अब इन्दिरा का किस्सा सुनना चाहिये ।

गोपाल० । (इन्दिरा से) अब तुम अपना हाल कहो, यद्यपि तुम्हारा और तुम्हारी मां का हाल मैं बहुत कुछ जानता भी हूँ मगर इन दोनों भाइयों को उसकी कुछ भी खबर नहीं है बल्कि तुम दोनों का कभी नाम भी इन्होंने न सुना होगा ।

इन्द्र० । बेशक ऐसा ही है ।

गोपाल० । इसलिये तुम्हें चाहिये कि अपना और अपनी माँ का हाल शुरू से कह सुनाओ, मैं समझता हूँ कि तुम्हें अपनी माँ का कुल हाल मालूम होगा ?

इन्दिरा० । जी हाँ, मैं अपनी माँ का हाल खुद उसकी जुबानी और कुछ इधर उधर से भी सुन चुकी हूँ ।

गोपल० । अच्छा तो अब कहना आरम्भ करो ।

इस समय रात घण्टे भर से कुछ ज्यादे जा चुकी थी । इन्दिरा ने पहिले अपनी माँ का हाल और फिर अपना हाल इस तरह बयान किया :—

इन्दिरा० । मेरी माँ का नाम सर्यू और बाप का नाम इन्द्रदेव है ।

इन्द्रजीत० । (ताज्जुब से) कौन इन्द्रदेव ?

गोपाल० । वही इन्द्रदेव जो दारोगा का गुरुभाई है, जिसने लक्ष्मीदेवी की जान बचाई थी, और जिसका जिक्र मैं अभी कर चुका हूँ ।

इन्दिरा० । मेरा नाना बहुत अमीर आदमी था । लाखों रुपये की मौरूसी जायदाद उसके हाथ लगी थी और वह खुद भी बहुत पैदा करता था, मगर सिवाय मेरी माँ के उसकी और कोई औलाद न थी इसलिये वह मेरी माँ को बहुत प्यार करता था और धन दौलत भी बहुत ज्यादे दिया करता था । इसी से मेरी माँ का रहना बनिस्बत ससुराल के नैहर में ज्यादे होता था । जिस जमाने का मैं जिक्र करती हूँ उस जमाने में मेरी उम्र लगभग सात या आठ वर्ष के होगी मगर मैं बातचीत और समझ बूझ में होशियार थी और उस समय की बातें आज भी मुझे इस तरह याद हैं जैसे कल की बातें हों ।

जाड़े का मौसिम था जब से मेरा किस्सा शुरू होता है। मैं अपने नानिहाल में थी। आधी रात का समय था, मैं अपनी माँ के पास पलंग पर सोई हुई थी। यकायक दर्वाजा खुलने की आवाज आई और किसी आदमी को कमरे में आते देख मेरी माँ उठ बैठी, साथ ही इसके मेरी नींद भी टूट गई। कमरे के अंदर यकायक आने वाला मेरा नाना था जिसे देख मेरी माँ को बड़ा ही ताज्जुब हुआ और वह पलंग के नीचे उतर कर खड़ी हो गई!

आनन्द०। तुम्हारे नाना का क्या नाम था?

इन्दिरा०। मेरे नाना का नाम दामोदरसिंह था और वह इसी शहर जमानिया में रहा करते थे।

आनन्द०। अच्छा तब क्या हुआ?

इन्दिरा०। मेरी माँ को घबड़ाई हुई देख कर नाना साहब ने कहा, "सर्यू, इस समय यकायक मेरे आने से तुझे ताज्जुब हुआ होगा और निःसन्देह यह ताज्जुब की बात है भी मगर क्या करूँ किस्मत और लाचारी मुझसे ऐसा कराती है। सर्यू, इस बात को मैं खूब जानता हूँ कि लड़की को अपनी मर्जी से ससुराल की तरफ बिदा कर देना सभ्यता के विरुद्ध और लज्जा की बात है मगर क्या करूँ, आज ईश्वर ही ने ऐसा करने के लिये मुझे मजबूर किया है। बेटी! आज मैं जबर्दस्ती अपने हाथ से अपने कलेजे को निकाल कर बाहर फेंकता हूँ अर्थात् अपनी एक मात्र औलाद को (तुझको) जिसे देखे बिना कल नहीं पड़ती थी जबर्दस्ती उसके ससुराल की तरफ बिदा करता हूँ। मैंने सभों की चोरी बालाजी को बुलवा भेजा है और मुझे खबर लगी है कि दो घण्टे के अन्दर ही वह आया चाहते हैं, मैं इस समय तुझे यह इत्तला देने आया हूँ कि इसी दो घण्टे के अन्दर तू भी अपने जाने की तैयारी कर ले।" इतना कहते कहते नाना साहब का जी उमड़ आया, गला भर गया, और उनकी आँखों से टपाटप आँसू की बूँदें गिरने लगीं।

इन्द्रजीत०। बालाजी किसका नाम है?

इन्दिरा०। मेरे पिता को मेरे नानिहाल में सब कोई बालाजी कह कर पुकारा करते थे।

इन्द्रजीत०। अच्छा फिर?

इन्दिरा० । उस समय अपने पिता की ऐसी अवस्था देखकर मेरी माँ बद-हवास हो गई और उखड़ी हुई आवाज में बोली–"पिता यह क्या ? तुम्हारी ऐसी अवस्था क्यों हो रही है मैं यह नई बात क्यों देख रही हूँ ! जो बात मैंने आज तक नहीं सुनी थी वह क्यों सुन रही हूँ ! मैंने ऐसा क्या कसूर किया है जो आज इस घर से निकाली जाती हूँ !"

दामोदरसिंह ने कहा, "बेटी ! तूने कुछ कसूर नहीं किया कसूर सब मेरा है । जो कुछ मैंने किया है आज उसी का फल भोग रहा हूँ, बस इससे ज्यादे और मैं कुछ नहीं कहा चाहता, हाँ तुझसे मैं एक बात की अभिलाषा रखता हूँ, आशा है कि तू अपने बाप की बात कभी न टालेगी । तू खूब जानती है कि इस दुनिया में तुझसे बढ़कर मैं किसी को नहीं मानता हूँ और न तुझसे बढ़ कर मेरा किसी पर स्नेह है, अतएव इसके बदले में मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि इस अंतिम समय में जो कुछ मैं तुझे कहता हूँ उसे तू अवश्य पूरा करियो और मेरी याद अपने दिल में बनाये रहियो.....

इतना कहते कहते मेरे नाना की बुरी हालत हो गई । आँसुओं ने उनके रोआबदार चेहरे को तर कर दिया और गला ऐसा भर गया कि कुछ कहना कठिन हो गया । मेरी माँ भी अपने पिता की विचित्र बातें सुन कर अधमुई सी हो गई । पितृस्नेह ने कसका कलेजा हिला दिया, न रुकने वाले आँसुओं को पोंछकर और मुश्किल से अपने दिल को सम्हाल कर वह बोली, "पिता ! कहो कहो, शीघ्र कहो, तुम मुझसे क्या चाहते हो ? मैं तुम्हारे चरणों पर जान तक देने के लिए तैयार हूँ !!

इसके जवाब में दामोदरसिंह ने यह कह कर कि—"मैं भी तुझसे यही आशा रखता हूँ !" अपने कपड़ों के अंदर से एक कलमदान निकाला और मेरी माँ को देकर कहा, "इसे अपने पास हिफाजत से रखियो और जब तक मैं इस दुनिया कायम रहूँ इसे कभी मत खोलियो । देख इस कलमदान के ऊपर तीन तस्वीरें बनी हुई हैं । बिचली तसवीर के नीचे इन्दिरा का नाम लिखा हुआ है । जब तेरा पति इस कलमदान के अंदर का हाल पूछे तो कह दीजियो कि पिता ने यह कलमदान इन्दिरा को दिया है और इस पर उसका नाम भी लिख दिया है और ताकीद कर दी है कि जब तक इन्दिरा की शादी न हो जाय यह कलमदान खोला

न जाय, गरज कि जैसे भी हो यह कलमदान खुलने न पाये। यह तकलीफ तुझे ज्यादे दिन तक भोगनी न पड़ेगी क्योंकि मेरी जिन्दगी का अब कोई ठिकाना नहीं रहा। मैं इस समय खूँखार दुश्मनों से घिरा हुआ हूँ, नहीं कह सकता कि आज मरूँ या कल, मगर तू मेरे मरने का अच्छी तरह से निश्चय कर लीजियो तभी इस कलमदान को खोलियो। इसकी ताली मैं तुझे नहीं देता, जब इसके खोलने का समय आवे तब जिस तरह हो सके खोल डालियो।" इतना कह कर दामोरदसिंह वहाँ से चले गए और रोती हुई मेरी माँ को उसी तरह छोड़ गए।

इन्द्र०। मैं समझता हूँ यह वही कलमदान था जो कृष्णाजिन्न ने महाराज के सामने पेश किया था और जिसका हाल अभी तुम्हारे सामने भाई साहब ने बयान किया है.....

इन्दिरा०। जी हाँ।

इन्द्र०। निःसंदेह यह अनूठा किस्सा है, अच्छा तब क्या हुआ?

इन्दिरा०। घण्टे भर तक मेरी माँ तरह तरह की बातें सोचती और रोती रही, इसके बाद दामोदरसिंह पुनः उस कमरे में आये और मेरी माँ को रोती हुई देख कर बोले, "सर्यू! तू अभी तक बैठी रो रही है! अरी बेटी, तुझे तो अब अपने प्यारे बाप के लिए जन्म भर रोना ही है; इस समय तू अपने को सम्हाल और जाने की शीघ्र ही तैयारी कर, अगर तू विलम्ब करेगी तो मुझे बड़ा कष्ट होगा और मुझे कष्ट देना तेरा धर्म नहीं है। बस अब अपने को सम्हाल! हाँ मैं एक दफे पुनः तुझसे पूछता हूँ कि उस कलमदान के विषय में जो कुछ मैंने कहा है तू वैसा ही करेगी न?" इसके जवाब मैं मेरी माँ ने सिसक सिसक कर कहा, "जो कुछ आपने आज्ञा की है मैं उसका पालन करूँगी, परन्तु मेरे पिता! यह तो बताओ कि तुम ऐसा क्यों कर रहे हो?"

मेरी माँ ने बहुत कुछ मिन्नत और आजिजी की मगर नाना साहब ने अपनी बदहवासी का सबब कुछ भी बयान न किया और बाहर चले गये। थोड़ी ही देर बाद एक लौंडी ने आकर खबर दी कि बालाजी (इन्द्रदेव) आ गये। उस समय मेरी माँ को नाना साहब की बातों का निश्चय हो गया और वह समझ गई कि अब इसी समय यहाँ से रवाना हो जाना पड़ेगा।

थोड़ी देर बाद मेरे पिता घर में आये। माँ ने उनसे उनके आने का सबब

पूछा जिसके जवाब में उन्होंने कहा कि तुम्हारे पिता ने एक विश्वासी आदमी के हाथ मुझे पत्र भेजा जिसमें केवल इतना ही लिखा था कि इस पत्र के देखते ही चल पड़ो और जितनी जल्दी हो सके हमारे पास पहुँचो।' मैं पत्र पढ़ते ही घबड़ा गया, उस आदमी से पूछा कि घर में कुशल तो है? उसने कहा कि सब कुशल है, मैं बहुत तेज घोड़े पर सवार करा के आपके पास भेजा गया हूँ, अब मेरा घोड़ा लौट जाने लायक नहीं है, मगर आप बहुत जल्द उनके पास जाइये।' मैं घबड़ाया हुआ एक तेज घोड़े पर सवार हो के उसी वक्त चल पड़ा मगर इस समय यहाँ पहुँचने पर उनके ऐसा करने का सबब पूछा तो कोई जवाब न मिला, उन्होंने एक कागज मेरे हाथ में देकर कहा कि इसे हिफाजत से रखना, इस कागज में मैंने अपनी कुल जायदाद इन्दिरा के नाम लिख दी है। मेरी जिन्दगी का अब कोई ठिकाना नहीं। तुम इस कागज को अपने पास रक्खो और अपनी स्त्री तथा लड़की को लेकर इसी समय यहाँ से चले जाओ क्योंकि अब जमानिया में बड़ा भारी उपद्रव उठा चाहता है, बस इससे ज्यादे और कुछ न कहूँगा, तुम्हारी बिदाई का सब बन्दोबस्त हो चुका है, सवारी इत्यादि तैयार है।"

इतना कह कर मेरे बाप चुप हो रहे मगर दम भर के बाद उन्होंने मेरी माँ से पूछा कि इन सब बातों का सबब यदि तुम्हें कुछ मालूम हो तो कहो? मेरी माँ ने थोड़ी देर पहिले जो कुछ हो चुका था कह सुनाया मगर कलमदान के बारे में केवल इतना ही कहा कि यह कलमदान इन्दिरा के लिये दे गये हैं और कह गये हैं कि कोई इसे खोलने न पावे, जब इन्दिरा की शादी हो जाय तो वह अपने हाथ से इसे खोले।

इसके बाद मेरे पिता मिलने के लिये मेरी नानी के पास गये और देखा कि रोते रोते उसकी अजब हालत हो गई है। मेरे पिता को देख कर वह और भी रोने लगी मगर इसका सबब कुछ भी न बता सकी कि उसके मालिक को आज क्या हो गया है, वे इतने बदहवास क्यों हैं, और अपनी लड़की को इसी समय यहाँ से बिदा करने पर क्यों मजबूर हो रहे हैं, क्योंकि उस बेचारी को भी इसका सबब कुछ मालूम न था।

यह सब बातें जो मैं ऊपर कह आई हूँ सिवाय हम पाँच आदमियों के और किसी को मालूम न थीं। उस घर का और कोई भी यह नहीं जानता था कि

आज दामोदरसिंह बदहवास हो रहे हैं और अपनी लड़की को किसी लाचारी से इसी समय बिदा कर रहे हैं।

थोड़ी देर बाद हमलोग बिदा कर दिये गये। मेरी माँ भी रोती हुई मुझे साथ लेकर रथ में सवार हुई जिसमें दो मजबूत घोड़े जुते हुए थे और इसी तरह के दूसरे रथ पर बहुत माल लेकर मेरे पिता सवार हुए और हमलोग यहाँ से रवाना हुए। हिफाजत के लिये हथियारबन्द कई सवार भी हमलोगों के साथ थे।

जमानिया से मेरे बाप का मकान केवल तीस पैंतीस कोस की दूरी पर होगा। जिस वक्त हमलोग घर से रवाना हुए उस वक्त दो घण्टे रात बाकी थी और जिस समय हम लोग घर पहुँचे उस समय पहर भर से भी ज्यादे दिन बाकी था। मेरी माँ तमाम रास्ते रोती गई और घर पहुंचने पर भी कई दिनों तक उसका रोना बन्द न हुआ। मेरे बाप के रहने का स्थान बड़ा ही सुन्दर और रमणीक है मगर उसके अन्दर जाने का रास्ता बहुत ही गुप्त रक्खा गया है।

इस जगह इन्दिरा ने इन्द्रदेव के मकान और रास्ते का थोड़ा सा हाल बयान किया और उसके बाद फिर अपना किस्सा कहने लगी :—

इन्दिरा०। मेरे पिता किसी तिलिस्म के दारोगा हैं और यद्यपि खुद भी बड़े भारी ऐयार हैं तथापि उनके यहाँ कई ऐयार नौकर हैं। उन्होंने अपने दो ऐयारों को इसलिये जमानिया भेजा कि वे एक साथ मिल कर या अलग अलग होकर दामोदरसिंह की बदहवासी और परेशानी का पता गुप्त रीति से लगावें और यह मालूम करें कि वे कौन से दुश्मनों की चालबाजियों के शिकार हो रहे हैं। इस बीच में मेरे पिता ने पुनः मेरी माँ से कलमदान का हाल पूछा जो उसके पिता ने दिया था और मेरी माँ ने उसका हाल साफ साफ कह दिया अर्थात् जो कुछ उस कलमदान के विषय में दामोदरसिंह ने नसीहत इत्यादि की थी वह साफ साफ कह सुनाया।

जिस दिन मैं अपनी माँ के साथ पिता के घर गई उसके ठीक पन्द्रहवें दिन संध्या के समय मेरे पिता के एक ऐयार ने यह खबर पहुँचाई कि जमानिया में प्रातःकाल सर्कारी महल के पास वाले चौमुहाने पर दामोदरसिंह की लाश पाई गई जो लहू से भरी हुई थी और सर का पता न था। महाराज ने उस लाश को अपने पास उठवा मंगवाया और तहकीकात हो रही है। इस खबर के सुनते ही

मेरी माँ जोर जोर से रोने और अपना माथा पीटने लगी। थोड़ी ही देर बाद मेरे नानिहाल का भी एक दूत आ पहुँचा और उसने भी वही खबर सुनाई। पिताजी ने मेरी माँ को बहुत समझाया और कहा कि कलमदान देते समय तुम्हारे पिता ने तुमसे कहा था कि मेरे मरने बाद इस कलमदान को खोलना मगर मेरे मरने का अच्छी तरह निश्चय कर लेना। उनका ऐसा कहना बेसबब न था, 'मरने का निश्चय कर लेना!' यह बात उन्होंने निःसन्देह इसीलिये कही होगी कि उनके मरने के विषय में लोग हम सभों को धोखा देंगे यह बात उन्हें अच्छी तरह मालूम थी, अस्तु तुम अभी से रो रो कर अपने को हलाकान मत करो और पहिले मुझे जमानिया जाकर उनके मरने के विषय में निश्चय कर लेने दो। यह जरूर ताज्जुब और शक की बात है कि उन्हें मार कर कोई उनका सर ले जाय और धड़ उसी तरह रहने दे। इसके अतिरिक्त तुम्हारी माँ का भी बन्दोबस्त करना चाहिये, कहीं ऐसा न हो कि वह किसी दूसरे ही की लाश के साथ सती हो जायँ।

मेरी माँ ने जमानिया जाने की इच्छा प्रगट की परन्तु पिता ने अस्वीकार करके कहा कि यह बात तुम्हारे पिता को भी स्वीकार न थी नहीं तो अपनी जिन्दगी ही में तुम्हें यहाँ बिदा न कर देते, इत्यादि बहुत कुछ समझा बुझा कर उसे शांत किया और स्वयं उसी समय दो तीन ऐयारों को साथ लेकर जमानिया की तरफ रवाना हो गये।

इतना कह कर इन्दिरा रुक गई और एक लम्बी सांस लेकर फिर बोली :—

इन्दिरा०। उस समय मेरे पिता पर जो कुछ मुसीबत बीती थी उसका हाल उन्हीं की जुबानी अच्छा मालूम होगा तथापि जो कुछ मुझे मालूम है मैं बया करती हूँ। मेरे पिता जब जमानिया पहुँचे तो सीधे घर चले गये वहाँ देखा तो मेरी नानी को अपने पति की लाश के साथ सती होने की तैयारी करते पाया क्योंकि देख भाल करने के बाद राजा साहब ने उनकी लाश उनके घर भेजवा दी थी। मेरे पिता ने मेरी नानी को बहुत कुछ समझाया और कहा कि इस लाश के साथ तुम्हारा सती होना उचित नहीं है, कौन ठिकाना यह कारवाई धोखा देने के लिए की गई हो और यदि यह दूसरे की लाश निकली तो तुम स्वयम् विचार सकती हो कि तुम्हारा सती होना कितना बुरा होगा, अस्तु तुम इसको दाह किया होने दो और बीच में मैं इस मामले का असल पता लगा लूँगा, अगर यह

लाश वास्तव में उन्हीं की होगी तो खूनी का या उनके सर का पता लगाना कोई कठिन न होगा। इत्यादि बहुत सी बातें समझा कर उनको सती होने से रोका और स्वयम् खूनियों का पता लगाने का उद्योग करने लगे।

आधी रात का समय था। सर्दी खूब पड़ रही थी। लोग लेहाफ के अंदर मुँह छिपाये अपने घर में सो रहे थे। मेरे पिता सूरत बदले और चेहरे पर नकाब डाले घूमते फिरते उसी चौमुहाने पर जा पहुँचे जहाँ मेरे नाना की लाश पाई गई थी। उस सयय चारो तरफ सन्नाटा छाया हुआ था। वे एक दूकान की आड़ में खड़े होकर कुछ सोच रहे थे कि दाहिनी तरफ से एक आदमी को आते देखा। वह आदमी भी अपने चेहरे को नकाब से छिपाये हुए था, मेरे पिता के देखते ही देखते वह उस चौमुहाने पर कुछ रख कर पीछे की तरफ मुड़ गया। पास जा कर देखा तो एक लिफाफे पर नजर पड़ी, उसे उठा लिया और घर लौट आए। शमादान के सामने लिफाफा खोला, उसके अंदर एक चीठी थी और उसमें यह लिखा था :—

"दामोदरसिंह के खूनी का जो कोई भी पता लगाना चाहे उसे अपनी तरफ से भी होशियार रहना चाहिये। ताज्जुब नहीं कि उसकी भी वही दशा हो जो दामोदरसिंह की हुई है !!"

इस पत्र को पढ़ कर मेरे पिता तरद्दुद में पड़ गये और सवेरा होने तक तरह तरह की बातें सोचते विचारते रहे। उन्हें आशा थी कि सवेरा होने पर उनके ऐयार लोग घर लौट आवेंगे और रात भर में जो कुछ उन्होंने किया है उसका हाल कहेंगे क्योंकि ऐसा करने के लिए उन्होंने अपने ऐयारों को ताकीद कर दी थी मगर उनका विचार ठीक न निकला अर्थात् उनके ऐयार लौट कर न आये। दूसरा दिन भी बीत गया और दूसरे दिन की दो। पहर रात जाते जाते तक मेरे पिता ने उन लोगों का इन्तजार किया मगर सब व्यर्थ था, उन ऐयारों का हाल कुछ भी मालूम न हुआ। आखिर लाचार होकर स्वयम् उनकी खोज में जाने के लिए तैयार हो गये और घर से बाहर निकला ही चाहते थे कि कमरे का दर्वाजा खुला और महाराज के एक चोबदार को साथ लिए हुए नाना साहब का एक सिपाही कमरे के अंदर दाखिल हुआ। पिता जी को बड़ा ताज्जुब हुआ और उन्होंने चोबदार से वहाँ आने का सबब पूछा। चोबदार ने जवाब दिया कि आप

को कुँअर साहब (गोपालसिंह) ने शीघ्र ही बुलाया है और अपने साथ लाने के लिए मुझे सख्त ताकीद की है।

गोपाल०। हाँ ठीक है, मैंने उन्हें अपनी मदद के लिए बुलवाया था क्योंकि मेरे और इन्द्रदेव के बीच में दोस्ती थी और उस समय मैं दिली तकलीफों से बहुत बेचैन था। इन्द्रदेव से और मुझसे अब भी वैसी ही दोस्ती है, वह मेरा सच्चा दोस्त है, चाहे वर्षों से हम दोनों में पत्रव्यवहार न हो मगर दोस्ती में किसी तरह की कमी नहीं आ सकती।

इन्दिरा०। बेशक ऐसा ही है, तो उस समय का हाल और उसके बाद मेरे पिता से और आपसे जो जो बातें हुई थीं सो आप अच्छी तरह बयान कर सकते हैं।

गोपाल०। नहीं नहीं, जिस तरह तुम और हाल कह रही हो उसी तरह वह भी कह जाओ, मैं समझता हूँ कि इन्द्रदेव ने वह सब हाल तुमसे कहा होगा।

इन्दिरा०। जी हाँ इस घटना के कई वर्ष बाद पिता जी ने मुझसे सब हाल कहा था जो अभी तक मुझे अच्छी तरह याद है मगर मैं इन बातों को मुख्तसर ही में बयान करती हूँ।

गोपाल०। क्या हर्ज है तुम मुख्तसर ही में बयान कर जाओ, जहाँ भूलोगी मैं बता दूँगा यदि वह हाल मुझे भी मालूम होगा।

इन्दिरा०। जो आज्ञा। मेरे पिता जब चोबदार के साथ राजमहल में गये तो मालूम हुआ कि कुँअर साहब घर में नहीं हैं कहीं बाहर गये हैं। आश्चर्य में आकर उन्होंने कुअँर साहब के खास खिदमतगार से दरियाफ्त किया तो उसने जवाब दिया कि आप के पास चोबदार भेजने बाद बहुत देर तक अकेले बैठ कर आप का इन्तजार करते रहे मगर जब आपके आने देर हुई तो घबड़ा कर खुद आपके मकान की तरफ चले गए। यह सुनते ही मेरे पिता घबड़ा कर वहाँ से लौटे और शीघ्र ही घर पहुँचे मगर कुँअर साहब से मुलाकात न हुई, दरियाफ्त करने पर पहरेदार ने कहा कि कुँअर साहब यहाँ नहीं आये हैं। वह पुनः लौटकर राजमहल में गए परन्तु कुँअर साहब का पता न लगना था और न लगा। मेरे पिता की वह तमाम रात परेशानी में बीती और उस समय उन्हें नाना साहब की

वह बात याद आई जो उन्होंने मेरे पिता से कही थी कि अब जमानिया में बड़ा भारी उपद्रव उठा चाहता है।

तमाम रात बीत गई, दूसरा दिन चला गया, तीसरा दिन गुजर गया, मगर कुँअर साहब का पता न लगा। सैकड़ों आदमी उनकी खोज में निकले। तमाम शहर में कोलाहल मच गया। जिसे देखिए वह इन्हीं के विषय में तरह तरह की बातें कहता और आश्चर्य करता था। उन दिनों कुँअर साहब (गोपालसिंह) की शादी लक्ष्मीदेवी से लगी हुई थी और तिलिस्मी दारोगा साहब शादी के विरुद्ध बातें किया करते थे, इस बात की चर्चा भी शहर में फैली हुई थी।

चौथे दिन आधी रात के समय मेरे पिता नाना साहब वाले मकान में फाटक के ऊपर वाले कमरे के अन्दर पलङ्ग पर लेटे हुए कुँअर साहब के विषय में कुछ सोच रहे थे कि यकायक कमरे का दर्वाजा खुला और आप (गोपालसिंह) कमरे के अन्दर आते हुए दिखाई पड़े। मुहब्बत और दोस्ती में बड़ाई छुटाई का दर्जा कायम नहीं रहता। कुँअर साहब को देखते ही मेरे पिता उठ खड़े हुए और दौड़ कर उनके गले से चिमट कर बोले, "क्यों साहब, आप इतने दिनों तक कहाँ थे ?"

उस समय कुँअर साहब की आँखों से आँसू की बूँदें टपाटप गिर रही थीं, चेहरे पर उदासी और तकलीफ की निशानी पाई जाती थी, और उस तीन दिन में ही उनके बदन की यह हालत हो गई थी कि महीनों के बीमार मालूम पड़ते थे। मेरे पिता ने हाथ मुँह धुलवाया और अपने पलङ्ग पर बैठा कर हाल चाल पूछा तथा कुँअर साहब ने इस तरह अपना हाल बयान किया—

"उस दिन मैंने तुमको बुलाने के लिए चोबदार भेजा, जब तक चोबदार तुम्हारे यहाँ से लौटकर जाय उसके पहिले ही मेरे एक खिदमतगार ने मुझे इत्तिला दी कि इन्द्रदेव ने आप अपने घर अकेले बुलाया है। मैं उसी समय उठ खड़ा हुआ और अकेले तुम्हारे मकान की तरफ रवना हुआ। जब आधे रास्ते में पहुँचा तो तुम्हारे यहाँ का अर्थात् दामोदरसिंह का एक खिदमतगार जिसका नाम रामप्यारे है मिला और उसने कहा कि इन्द्रदेव गंगा किनारे की तरफ गए हैं और आपको उसी जगह बुलया है। मैं क्या जानता था कि एक अदना खिदमतगार मुझसे दगा करेगा ! मैं बेधड़क उसके साथ गंगा किनारे की तरफ रवाना

हुआ। आधी रात से ज्यादे तो जा ही चुकी थी अतएव गंगा किनारे बिलकुल सन्नाटा छाया हुआ था। मैंने वहां पहुँच कर जब किसी को न पाया तो उस नौकर से पूछा कि इन्द्रदेव कहाँ हैं? उसने जवाब दिया कि ठहरिये आते होंगे। उस घाट पर केवल एक डोंगी बंधी हुई थी, मैं कुछ विचारता हुआ उसी डोंगी की तरफ देख रहा था कि यकायक दोनों तरफ से दस बारह आदमी चेहरे पर नकाब डाले हुए पहुँचे और उन सभों ने फुर्ती के साथ मुझे गिरफ्तार कर लिया। वे सब बड़े मजबूत और ताकतवर थे और सब के सब एक साथ मुझसे चिमट गये, एक ने मेरे मुँह पर मोटा कपड़ा डाल कर ऐसा कस दिया कि न तो मैं बोल सकता था और न कुछ देख सकता था। बात की बात में मेरी मुश्कें बाँध दी गईं और मैं जबर्दस्ती उसी डोंगी पर बैठा दिया गया जो घाट के किनारे बंधी हुई थी। डोंगी किनारे से खोल दी गई और बड़ी तेजी से चलाई गई। मैं नहीं कह सकता कि वे लोग कै आदमी थे और दो ही घण्टे में जितनी देर कि मैं उस पर सवार था डोंगी को खे कर कितनी दूर ले गये। जब लगभग दो घन्टे के बीत गये तब डोंगी किनारे लगाई गई और मैं उस पर से उतार कर एक घोड़े पर चढ़ाया गया, मेरे दोनों पैर नीचे की तरफ मजबूती के साथ बाँध दिये गए, हाथ की रस्सी ढीली कर दी गई जिसमें मैं घोड़े की काठी पकड़ सकूँ, और घोड़ा तेजी के साथ एक तरफ को दौड़ाया गया। मैं दोनों हाथों से घोड़े की काठी पकड़े हुये था। यद्यपि मैं देखने और बोलने से लाचार कर दिया गया था मगर अन्दाज से और घोड़ों के टापों की आवाज से मालूम हो गया कि मुझे कई सवार घेरे हुए जा रहे हैं और मेरे घोड़े की भी लगाम किसी सवार के हाथ में है। कभी तेजी से और कभी धीरे चलते चलते दो पहर से ज्यादे बीत गये, पैरों में दर्द होने लगी और थकावट ऐसी जान पड़ने लगी कि मानों तमाम बदन चूर चूर हो गया है। इसके बाद घोड़े रोके गये और मैं नीचे उतार कर एक पेड़ के साथ कस के बांध दिया गया और उस समय मेरे मुँह का कपड़ा भी खोल दिया गया। मैंने चारो तरफ निगाह दौड़ाई तो अपने को एक घने जंगल में पाया। दस आदमी मोटे मुसंडे और उनकी सवारी के दस घोड़े सामने खड़े थे। पास ही में पानी का एक चश्मा बह रहा था, कई आदमी जीन खोल कर घोड़ों को ठंडा करने और चराने की फिक्र में लगे और बाकी के शैतान हाथ में नंगी तलवार लेकर

मेरे चारो तरफ खड़े हो गये। मैं चुपचाप सभों की तरफ देखता था मगर मुँह से कुछ भी न बोलता था और न वे लोग मुझसे कुछ बात करते थे। (लम्बी सांस ले कर) यदि गर्मी का दिन होता तो शायद मेरी जान निकल जाती क्योंकि उन कम्बख्तों ने मुझे पानी तक के लिये नहीं पूछा और स्वयं खा पी कर ठीक हो गये, अस्तु पहर भर के बाद फिर मेरी वही दुर्दशा की गई अर्थात् देखने और बोलने से लाचार होकर घोड़े पर उसी तरह बैठाया गया और सफर शुरू हुआ। पुनः दो पहर से ज्यादे देर तक सफर करना पड़ा और इसके बाद मैं घोड़े से नीचे उतार कर पैदर चलाया गया। मेरे पैर दर्द और तकलीफ से बेकार हो रहे थे मगर लाचारी से फिर भी चौथाई कोस तक चलना पड़ा और इसके बाद चौकठ लांघने की नौबत आई, तब मैंने समझा कि अब किसी मकान में जा रहा हूँ। मुझे चार दफे चौकठ लाँघनी पड़ी और इसके बाद मैं एक खम्भे के साथ बाँध दिया तथा मेरे मुँह से कपड़ा हटाया गया।

❀ चौदहवाँ हिस्सा समाप्त ❀

महाराज सूर्यकान्त की तस्वीर के नीचे लिखे हुए बारीक अक्षरों वाले मजमून का अर्थ यह है :—

स्वर दै गिन कै वर्ग पै

खूब समझ के तब आगे पैर रक्खो—
बाजे वाले चौतरे में ताली खोजो।
तिलिस्मी खञ्जर अपने देह से अलग
मत करो नहीं तो जान पर आ बनेगी।

(देखिये—पृष्ठ ४५)

दुर्गा प्रेस, दुण्ढिराज, बनारस

* श्रीः *



चन्द्रकान्ता सन्तति

पन्द्रहवाँ हिस्सा

पहिला बयान

इन्दिरा बोली—कुँअर साहब ने एक लम्बी साँस लेकर फिर अपना हाल कहना शुरू किया और कहा, "जब मेरे मुँह पर से कपड़ा हटा दिया गया तब मैंने अपने को एक सजे हुए कमरे में देखा। वे ही आदमी जो मुझे यहाँ तक लाये थे अब भी मुझे चारों तरफ से घेरे हुए थे। छत के साथ बहुत सी कंदीलें लटक रही थीं और उनमें मोमबत्तियाँ जल रही थीं, दीवारगीरों में भी रोशनी हो रही थी, जमीन पर फर्श बिछा हुआ था और उस पर पचीस तीस आदमी अमीराना ढंग की पोशाक पहिरे और सामने नंगी तलवार रक्खे बैठे हुए थे मगर उन सभों का चेहरा नकाब से ढका हुआ था। तमाम रास्ते में और उस समय मेरे दिल की क्या हालत थी सो मैं ही जानता हूँ। एक आदमी ने जो सबसे ऊँची गद्दी पर बैठा हुआ था और शायद उस सभा का सभापति था मेरी तरफ मुँह करके कहा, "कुंअर गोपालसिंह! तुम समझते होगे कि मैं जमानिया के राजा का लड़का हूं

जो चाहूँ सो कर सकता हूँ, मगर अब तुम्हें मालूम हुआ होगा कि हमारी सभा इतनी जबर्दस्त है कि तुम्हारे ऐसे के साथ भी जो चाहे सो कर सकती है। इस समय तुम हमलोगों के कब्जे में हो, मगर नहीं, हमारी सभा ईमानदार है और तुम बेकसूर हो। हमलोग इमानदारी के साथ दुनिया का इन्तजाम करते हैं। तुम्हारा बाप बड़ा ही बेवकूफ है और राजा होने के लायक नहीं है जिस दिन से वह अपने को महात्मा और साधू बनाए हुए है, दयावान कहलाने के लिए मरा जाता है और दुष्टों को उतना दंड नहीं देता जितना देना चाहिये। इसी से तुम्हारे शहर में अब खून खराबा भी ज्यादे होने लग गया क्योंकि खूनी के गिरफ्तार हो जाने पर भी वह उस को दया के वश में पड़ कर प्राणदण्ड नहीं देता। इसी से अब हमलोगों को तुम्हारे यहाँ के बदमाशों का इन्साफ अपने हाथ में लेना पड़ा। तुम्हें खूब मालूम है कि जिस खूनी को तुम्हारे बाप ने केवल देश निकाले का दण्ड देकर छोड़ दिया था उसकी लाश तुम्हारे ही शहर में किसी चौमुहाने पर पाई गई थी। आज तुम्हें यह भी मालूम हो गया कि वह कार्रवाई हमी लोगों की थीं। तुम्हारे शहर का रहने वाला दामोदरसिंह भी हमारी सभा का सभासद था। एक दिन इस सभा ने लाचार होकर यह हुक्म जारी किया कि जमानिया के राजा को अर्थात् तुम्हारे बाप को इस दुनिया से उठा दिया जाय क्योंकि वह गद्दी चलाने लायक नहीं है, और तुमको जमानिया की गद्दी पर बैठाया जाय। यद्यपि दामोदरसिंह को भी नियमानुसार हमारा साथ देना उचित था मगर वह तुम्हारे बाप का पक्ष करके बेईमान हो गया, अतएव लाचार होकर हमारी सभा ने उसे प्राणदण्ड दिया। अब तुम लोग दामोदर के खूनी का पता लगाना चाहते हो मगर इसका नतीजा अच्छा नहीं निकल सकता। इस सभा ने तुम्हें इसलिए बुलाया है कि तुम्हें सब बातों से होशियार कर दिया जाय। इसका हुक्म टल नहीं सकता। तुम्हारा बाप अब बहुत जल्द इस दुनिया से उठा दिया जायगा और तुमको जमानिया की गद्दी पर बैठने का मौका मिलेगा। तुम्हें उचित है कि हमलोगों का पीछा न करो अर्थात् यह जानने का उद्योग न करो कि हमलोग कौन हैं और कहाँ रहते हैं तथा अपने दोस्त इन्द्रदेव को भी ऐसा करने के लिए ताकीद कर दो नहीं तो तुम्हारे और इन्द्रदेव को भी प्राणदंड दिया जायगा। बस केवल इतना ही समझाने के लिये तुम इस सभा में बुलाये गये हो और अब बिदा किये जाते हो।"

"इतना कह कर उस नकाबपोश ने ताली बजाई और उन्हीं दुष्टों ने जो मुझे वहाँ ले गये थे मेरे मुँह पर कपड़ा डाल कर उसी तरह कस दिया। खंभे से खोल कर मुझे बाहर ले आये, कुछ दूर पैदल चला कर घोड़े पर लादा, और दोनों पैर कस कर बाँध दिये। लाचार होकर मुझे पुनः वैसा ही सफर करना पड़ा और किस्मत ने फिर उसी तरह तीन पहर तक घोड़े पर बैठाया। इसके बाद एक जंगल में पहुँच कर मुझे घोड़े पर से नीचे उतार दिया, हाथ पैर खोल दिये, मुँह पर से कपड़ा हटा लिया और जिस घोड़े पर मैं सवार कराया गया था उसे साथ लेकर वहाँ से वे लोग रवाना हो गये। उस तकलीफ ने मुझे ऐसा बेदम कर दिया था कि दस कदम चलने की भी ताकत न थी और भूख प्यासके मारे बुरी हालत हो गई थी। दिन पहर भर से ज्यादे चढ़ चुका था। पानी का बहता हुआ चश्मा मेरी आँखों के सामने था मगर मुझमें वहाँ तक उठ कर जाने की ताकत न थी। घन्टे भर तक यों हीं पड़ा रहा, इसके बाद धीरे धीरे चश्मे के पास गया, खूब पानी पीया तब जी ठिकाने हुआ। मैं नहीं कह सकता कि किन कठिनाइयों से दो दिन में यहाँ तक पहुँचा हूँ। अभी तक घर नहीं गया, पहिले तुम्हारे ही पास आया हूँ। हा! धिक्कार है मेरी जिन्दगी को और राजकुमार कहलाने पर! जब मेरी रिआया का इन्साफ बदमाशों के आधीन है तो मैं यहाँ का हाकिम क्यों कहलाने लगा! जब मैं अपनी हिफाजत आप न कर सका तो प्रजा की रक्षा कैसे कर सकूँगा! बड़े खेद की बात है कि अदने दर्जे के बदमाश लोग हमलोगों पर मुकदमा करें और हम उनका कुछ भी न कर सकें। हमारे हितैषी दामोदरसिंह मार डाले गये और अब मेरे प्यारे पिता को मारने की फिक्र वे कर रहे हैं!"

गोपाल०। निःसन्देह उस समय मुझे बड़ा ही रञ्ज हुआ था आज जब मैं उन बातों को याद करता हूँ तो मालूम होता है कि उन लोगों को यदि मुंदर की शादी मेरे साथ करना मञ्जूर न होता तो निःसन्देह मुझे भी मार डालते और या फिर गिरफ्तार ही न करते।

इन्द्र०। ठीक है (इन्दिरा से) अच्छा तब?

इन्दिरा०। मेरे पिता ने जब यह सुना कि दामोदरसिंह के नौकर रामप्यारे ने कुँअर साहब को धोखा दिया तो उन्हें निश्चय हो गया कि रामप्यारे भी उस कुमेटी का मददगार जरूर है। वे कुंअर साहब की आज्ञानुसार तुरन्त उठ खड़े

हुए और रामप्यारे की खोज में फाटक पर आये, मगर खोज करने पर मालूम हुआ कि रामप्यारे का पता नहीं लगता। लौट कर कुँअर साहब के पास गये और बोले, "जो सोचा था वही हुआ! रामप्यारे भाग गया, आपका खिदमतगार भी जरूर भाग गया होगा!"

इसके बाद कुँअर साहब और मेरे पिता देर तक बातचीत करते रहे। पिता ने कुँअर साहब को कुछ खिला पिला कर और समझा बुझा कर शान्त किया और वादा किया कि हम उस सभा का तथा उसके सभासदों का पता जरूर लगावेंगे। पहर भर रात बाकी होगी जब कुँअर साहब अपने घर की तरफ रवाना हुए। कई आदमियों को संग लिये हुए मेरे पिता भी उनके साथ गये। राजमहल के अन्दर पैर रखते ही कुँअर साहब को पहिले अपने पिता अर्थात् बड़े महाराज से मिलने की इच्छा हुई और वे मेरे पिता को साथ लिये हुए सीधे बड़े महाराज के कमरे में चले गये, मगर अफसोस! बड़े महाराज का देहान्त हो चुका था और यह बात सब के पहिले कुँअर साहब ही को मालूम हुई। उस समय बड़े महाराज पलंग के ऊपर इस तरह पड़े हुए थे जैसे घोर निद्रा में हों मगर जब कुँअर साहब ने उन्हें जगाने के लिये हिलाया तब मालूम हुआ कि वे महानिद्रा के आधीन हो चुके हैं!!

इन्दिरा के मुंह से इतना हाल सुनते सुनते राजा गोपालसिंह की आँखों में आँसू भर आये। दोनों कुमारों के नेत्र भी सूखे न रहे। राजा साहब ने एक लम्बी साँस लेकर कहा, "मेरी माँ का देहान्त पहिले ही हो चुका था, इस समय पिता के भी परलोक सिधारने से बड़ा ही कष्ट हुआ। (इन्दिरा से) अच्छा आगे कहो।"

इन्दिरा०। बड़े महाराज के देहान्त की खबर जब चारो तरफ फैली तो महल और शहर में बड़ा ही कोलाहल मचा मगर इस बात का ख्याल कुँअर साहब और मेरे पिता के अतिरिक्त और किसी को भी न था कि बड़े महाराज की जान भी उसी गुप्त कुमेटी ने ली है और न इन दोनों ने अपने दिल का हाल किसी से कहा ही। उसके दो महीने बाद कुँअर साहब जमानिया की गद्दी पर बैठे और राजा कहलाने लगे। इस बीच में मेरे पिता ने उस कुमेटी का पता लगाने के लिये बहुत उद्योग किया मगर कुछ पता न लगा। उन दिनों कई रजवाड़ों से मातमपुर्सी के खत आ रहे थे। रणधीरसिंह (किशोरी के नाना) के यहाँ से

मातमपुर्सी का खत लेकर उनके ऐयार गदाधरसिंह* आये थे। गदाधरसिंह से और मेरे पिता से कुछ नातेदारी भी है जिसे मैं ठीक ठीक नहीं जानती और इसी सबब से मातमपुर्सी की रसम पूरी करने के बाद मेरे पिता की इच्छानुसार उन्होंने भी मेरे ननिहाल ही में डेरा डाला जहाँ मेरे पिता रहते थे और इसी बहाने कई दिनों तक दिन रात दोनों आदमियों का साथ रहा। मेरे पिता ने यहाँ का कुल हाल तथा गुप्त कमेटी में कुंअर साहब के पहुँचाये जाने का भेद कह के गदाधरसिंह से मदद माँगी जिसके जवाब में गदाधरसिंह ने कहा कि मैं मदद देने के लिये जी जान से तैयार हूं परन्तु अपने मालिक की आज्ञा बिना ज्यादे दिन तक यहां ठहर नहीं सकता और यह काम दो चार दिन का नहीं है।" तुम राजा गोपालसिंह से कहो कि वह मुझे मेरे मालिक से थोड़े दिनों के लिये मांग लें, तब मुझे कुछ उद्योग करने का मौका मिलेगा। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् आपने (गोपालसिंह की तरफ बता कर) अपना एक सवार पत्र लेकर रणधीरसिंह के पास भेजा और उन्होंने गदाधरसिंह के नाम राजा साहब का काम कर देने के लिये आज्ञा-पत्र भेज दिया। गदाधरसिंह जब जमानिया में आये थे तो अकेले न थे बल्कि अपने तीन चार चेलों को भी साथ लाये थे अस्तु अपने उन्हीं चेलों को साथ लेकर ये उस गुप्त कुमेटी का पता लगाने के लिये तैयार हो गये। इन्होंने मेरे पिता से कहा कि इस शहर में रघुबरसिंह नामी एक आदमी रहता है जो बड़ा ही शैतान रिश्वती और बेईमान है। मैं उसे फंसा कर अपना काम निकाला चाहता हूं मगर अफसोस यह है कि वह तुम्हारे गुरुभाई अर्थात् तिलिस्मी दारोगा को तुम्हारे राजा साहब बहुत मानते हैं, खैर मुझे तो उन लोगों का कुछ खयाल नहीं है मगर तुम्हें इस बात की इत्तिला पहिले ही से दे देता हूं। इसके जवाब में मेरे पिता ने कहा कि उस शैतान को मैं भी जानता हूं। यदि उसे फाँसने से कोई काम निकल सकता है तो निकालो और इस बात का कुछ खयाल न करो कि वह मेरे गुरुभाई का दोस्त है। इसके बाद मेरे पिता और गदाधरसिंह बहुत देर तक आपस में सलाह करते रहे और दूसरे दिन गदाधरसिंह ने लोगों के

* इसी गदाधरसिंह ने जब नानक की माँ से संयोग किया तो रघुबरसिंह के नाम से अपना परिचय दिया था और उसके बाद भूतनाथ के नाम से अपने को मशहूर किया।

देखने में महाराज से बिदा हो कर अपने घर का रास्ता लिया। गदाधरसिंह के जाने बाद मेरे पिता भी उन्हीं लोगों का पता लगाने के लिये घूमने फिरने और उद्योग करने लगे। एक दिन रात के समय मेरे पिता भेष बदल कर शहर में घूम रहे थे। अकस्मात् घूमते फिरते गंगा किनारे उसी ठिकाने जा पहुंचे जहाँ (गोपालसिंह की तरफ इशारा करके) उन्हें दुश्मनों ने गिरफ्तार कर लिया था। मेरे पिता ने भी एक डोंगी किनारे पर बंधी हुई देखी उस समय उन्हें कुंअर साहब की बात याद आ गई और वे धीरे धीरे चल कर उस डोंगी के पास जा खड़े हुए मगर उसी समय कई आदमियों ने यकायक पहुंच कर गिरफ्तार कर लिया। वे लोग हाथ में तलवार लिये और अपने चेहरे को नकाब से ढाँपे हुए थे। यद्यपि मेरे पिता के पास भी तलवार थी और उन्होंने अपने बचाने के लिये बहुत कुछ उद्योग किया बल्कि दो एक आदमियों को जख्मी भी किया मगर नतीजा कुछ भी न निकला क्योंकि दुश्मनों ने एक मोटा कपड़ा बड़ी फुर्ती से उनके सर और मुंह पर डाल कर उन्हें हर तरह से बेकार कर दिया। मुख्तसर यह कि दुश्मनों ने उन्हें गिरफ्तार करने बाद हाथ पैर बांध के डोंगी में डाल दिया, डोंगी खोली गई और एक तरफ को तेजी के साथ रवाना हुई। पिता के मुंह पर कपड़ा कसा हुआ था इसलिये वह देख नहीं सकते थे कि डोंगी किस तरफ जा रही है और दुश्मन गिनती में कितने हैं। दो घंटे तक इसी तरह चले जाने बाद वे किश्ती के नीचे उतारे गये और जबर्दस्ती एक घोड़े पर चढ़ाये गये, दोनों पैर नीचे से कस के बाँध दिये गये और इसी तरह वह उस गुप्त कुमेटी में पहुंचाये गये जिस तरह कुंअर साहब अर्थात् राजा गोपालसिंहजी वहाँ पहुंचाये गये थे। उसी तरह मेरे पिता भी एक खम्भे के साथ कस के बाँध दिये गये और उनके मुँह पर से वह आफत का परदा हटाया गया। उस समय एक भयानक दृश्य उन्हें दिखाई दिया। जैसा कि कुंअर साहब ने उनसे बयान किया था ठीक उसी तरह का सजा सजाया कमरा और वैसे ही बहुत से नकाबपोश बड़े ठाठ के साथ बैठे हुए थे। पिता ने मेरी माँ को भी एक खम्भे के साथ बंधी हुई और उस कलमदान को जो मेरे नाना साहब ने दिया था सभापति के सामने एक छोटी सी चौकी के ऊपर देखा। पिता को बड़ा ही आश्चर्य हुआ और अपनी स्त्री को भी अपनी तरह मजबूर देख कर मारे क्रोध के काँपने

लगे मगर कर ही क्या सकते थे ? साथ ही इसके उन्हें इस बात का भी निश्चय हो गया कि यह कलमदान भी कुछ इसी कुमेटी (सभा) से सम्बन्ध रखता है सभापति ने मेरे पिता की तरफ देख के कहा, "क्यों जी इन्द्रदेव ! तुम तो अपने को बहुत होशियार और चालाक समझते हो, मगर हमने राजा गोपालसिंह की जुबानी तुम्हें क्या कहला भेजा था ? क्या तुम्हें नहीं कहा गया था कि तुम हम लोगों का पीछा न करो ? फिर तुमने ऐसा क्यों किया ! क्या हम लोगों से कोई बात छिपी रह सकती है ! खैर अब बताओ तुम्हारी क्या सजा की जाय ? देखो तुम्हारी स्त्री और यह कलमदान भी इस समय हम लोगों के आधीन है। बेईमान दामोदरसिंह ने तो इस कलमदान को गड्ढे में डाल कर हम लोगों को फँसाना चाहा था मगर उसका अन्तिम वार खाली गया।" इसके जवाब में मेरे पिता ने बड़े गम्भीर भाव से कहा, "निःसन्देह मैं आप लोगों का पता लगाता था मगर बदनीयती के साथ नहीं बल्कि इस नीयत से कि मैं भी आप लोगों की सभा में शरीक हो जाऊँ।"

सभापति ने हँस कर कहा, "बहुत खासे ! अगर ऐसा हम लोग धोखे में आने वाले होते तो हम लोगों की सभा अब तक रसातल को पहुँच गई होती ! क्या हम लोग नहीं जानते कि तुम हमारी सभा के जानी दुश्मन हो ? बेईमान दामोदरसिंह ने तो हम लोगों को चौपट करने में कुछ बाकी नहीं रक्खा था मगर बड़ी खुशी की बात है कि यह कलमदान हम लोगों को मिल गया और हमारी सभा का भेद छिपा ही रह गया।"

सभापति की बातों से मेरे पिता को मालूम हो गया कि उस कलमदान में निःसन्देह इसी सभा का भेद बन्द है अस्तु उन्होंने मुस्कुराहट के साथ सभापति की बातों का यों जवाब दिया, "मुझे दुश्मन समझना आप लोगों की भूल है, अगर मैं सभा का दुश्मन ही होता तो अब तक आप लोगों को जहन्नुम में पहुँचा दिये होता क्योंकि मैं इस कलमदान को खोल कर इस सभा के भेदों को एक दूसरे कागज पर लिख कर अपने एक मित्र को भी दे चुका हूँ। मैं....."

पिता ने केवल इतना ही कहा था कि सभापति ने जिसकी आवाज से जाना जाता था कि घबड़ा गया है पूछा, "क्या तुम इस कलमदान को खोल चुके हो ?"

पिता०। हाँ !!

सभापति०। और इस सभा का भेद लिख कर तुमने किसके सुपुर्द किया है?

पिता०। सो नहीं बता सकता क्योंकि उसका नाम बताना उसे तुम लोगों के कब्जे में दे देना है।

सभापति०। आखिर हम लोगों को कैसे विश्वास हो कि जो कुछ तुमने कहा वह सब सच है?

पिता०। अगर मेरे कहने का विश्वास हो तो मुझे अपनी सभा का सभासद बना लो फिर जो कुछ कहोगे खुशी से करूँगा, अगर विश्वास न हो तो मुझे मार कर बखेड़ा तै करो, फिर देखो कि मेरे पीछे तुम लोगो की क्या दुर्दशा होती है!!

इन्दिरा ने दोनों कुमारों से कहा कि मेरे पिता से और उस सभा के सभापति से बड़ी देर तक बातें होती रहीं। मेरे पिता ने उसे अपनी बातों में ऐसा लपेटा कि उसकी अकिल चकरा गई और उसे विश्वास हो गया कि इन्द्रदेव ने जो कुछ कहा वह सच है। आखिर सभापति ने उठ कर अपने हाथों से मेरे पिता की मुश्कें खोलीं, मेरी मा को भी छुट्टी दिलाई और मेरे पिता को अपने पास बैठा कर कुछ कहा ही चाहता था कि मकान के बाहर दर्वाजे पर किसी के चिल्लाने की आवाज आई मगर वह आवाज एक दफे से ज्यादे सुनाई न दी और जब तक सभपति किसी को बाहर जाकर दरियाफ्त करने की आज्ञा दे तब तक हाथों में नंगी तलवारें लिये हुए पांच आदमी उस सभा के बीच में धड़धड़ाते हुए आ पहुँचे। उन पाँचों की सूरत बड़ी ही भयानक थी और उनकी पौशाक ऐसी थी कि उस पर तलवार कोई काम नहीं कर सकती थी अर्थात् फौलादी कवच पहिर कर उन लोगों ने अपने को बहुत मजबूत बनाया हुआ था। चेहरे सभों के सिन्दूर से रंगे हुए थे और कपड़ों पर खून के छींटे भी पड़े हुए थे जिससे मालूम होता कि था दर्वाजे पर पहरा देनेवालों को मार कर ये लोग यहाँ तक आये हैं। उन पाँचों में एक आदमी जो सब के आगे था बड़ा ही फुर्तीला और हिम्मत-वर मालूम होता था। उसने तेजी के साथ आगे बढ़ कर उस कलमदान को उठा लिया जो मेरे नाना साहब ने मेरी माँ को दिया था। इतने ही में उस सभा के जितने सभासद थे सब तलवारें खैंच कर उठ खड़े हुए और घमासान लड़ाई होने लगी। उस समय मौका देख कर मेरे पिता ने मेरी माँ को उठा लिया और हर तरह से बचते हुए मकान से बाहर निकल गये। उधर उन पाँचों भयानक

आदमियों ने उस सभा की अच्छी तरह मट्टी पलीद की और चार सभासदों की जान और वह कलमदान लेकर राजी खुशी के साथ वहाँ से चले गये। उस समय यदि मेरे पिता चाहते तो उन पांचों बहादुरों से मुलाकात कर सकते थे क्योंकि वे लोग उनके देखते देखते पास ही से भाग कर निकल गये थे मगर मेरे पिता ने जान बूझ कर अपने को इसलिये छिपा लिया था कि कहीं वे लोग हमें भी तकलीफ न दें और जब वे लोग देखते देखते दूर निकल गये तब वे भी मेरी मां का हाथ थामे हुए तेजी के साथ चल पड़े। उस समय उन्हें मालूम हुआ कि वे जमानिया की सरहद के बाहर नहीं है।

इन्द्रजीत०। (ताज्जुब से) क्या कहा? जमानिया की सरहद के बाहर नहीं हैं!!

इन्दिरा०। जी हाँ, वे लोग जमानिया शहर के बाहर थोड़ी ही दूर पर एक बहुत बड़े और पुराने मकान के अन्दर कुमेटी किया करते थे और जिसे गिरफ्तार करते थे उसे धोखा देने की नीयत से व्यर्थ दस बीस कोस का चक्कर दिलाते थे जिसमें मालूम हो कि यह कुमेटी किसी दूसरे ही शहर में है।

गोपाल०। और हमारे दर्बार ही के बहुत से आदमी उस कमेटी में शरीक थे इसी सबब से उनका पता नहीं लगता था क्योंकि जो तहकीकात करने वाले थे वे ही कुमेटी करने वाले थे।

इन्द्रजीत०। (इन्दिरा से) अच्छा तब?

इन्दिरा०। मेरे पिता दो घंटे के अन्दर ही राजमहल में जा पहुँचे। महाराज ने पहरे वालों को आज्ञा दे रक्खी थी कि इन्द्रदेव जिस समय चाहें हमारे पास चले आवें, कोई रोट टोक न करने पावे, अतएव मेरे पिता सीधे राजा साहब के पास जा पहुँचे जो गहरी नींद में बेखबर सोये हुए थे और चार आदमी उनके पलंग के चारो तरफ घूम घूम कर पहरा दे रहे थे। पिता ने राजा साहबको उठाया और पहरे वालों को अलग कर देने के बाद अपना कुल हाल कह सुनाया। यह जान कर राजा साहबको बड़ा ही ताज्जुब हुआ कि वह कुमेटी इसी शहरमें है। उन्होंने मेरे पिता से या मेरी माँ से खुलासा हाल पूछने में बिलम्ब करना उचित न जाना और मेरी माँ को हिफाजत के साथ महल के अन्दर भेजने बाद कपड़े पहिर तैयार हो गये। खूँटी से लटकती हुई तिलिस्मी तलवार उतार ली और मेरे पिता तथा और कई सिपाहियों को साथ ले मकान के बाहर निकल दो ही घड़ी के अंदर उस

मकान में जा पहुँचे जिसमें कुमेटी हुआ करती थी। वह किसी जमाने का बहुत पुराना मकान था जो आधे से ज्यादा बर्बाद हो चुका था फिर भी उसमें कई कमरे और दालान दुरुस्त और काम देने लायक थे। उस मकान के चारो तरफ और भी टूटे फूटे कई मकान थे जिनमें कभी किसी भले आदमी का जाना नहीं होता था*। जिस कमरे में कुमेटी होती थी जब उसके अन्दर गये तो उसे उसी तरह पर सजा हुआ पाया जैसा राजा साहब और मेरे पिता देख चुके थे। कन्दीलों में रोशनी हो रही थी, फर्क इतना ही था कि फर्श पर तीन लाशें पड़ी हुई थीं। फर्श खून से तरबतर हो रहा था और दीवारों पर भी खून के छींटे पड़े हुए थे। जब लाशों के चेहरे पर से नकाब हटाया गया तो राजा साहब को बड़ा ही ताज्जुब हुआ।

इन्द्र०। वे लोग भी जान पहिचान ही के होंगे जो मारे गये थे।

गोपाल०। जी हाँ, एक तो मेरा वही खिदमतगार था जिसने मुझे धोखा दिया था, दूसरा दामोदरसिंह का नौकर रामप्यारे था जिसने मुझे गंगा किनारे ले जा कर फँसाया था, परन्तु तीसरी लाश को देख कर मेरे आश्चर्य रञ्ज और क्रोध का अन्त न रहा क्योंकि वह मेरे खजानचीसाहब थे जिन्हें मैं बहुत ही नेक ईमानदार सूधा और बुद्धिमान समझता था। आप लोगों को इन्दिरा का कुल हाल सुन जाने पर मालूम होगा कि कम्बख्त दारोगा ही इस सभा का मुखिया था मगर अफसोस! उस समय मुझे इस बात का गुमान तक न हुआ। जब मैं वहां की कुल चीजों को लूट कर और उन लाशों को उठवा कर घर आया तो सवेरा हो चुका था और शहर में इस बात की खबर अच्छी तरह फैल चुकी थी क्योंकि मुझे बहुत से आदमियों को साथ ले कर जाते हुए सैकड़ों आदमियों ने देखा था और जब मैं लौट कर आया तो दर्वाजे पर कम से कम पांच सौ आदमी उन लाशों को देखने के लिये जमा हो गये थे। उस समय मैंने बेईमान और विश्वासघाती दारोगा को बुलाने के लिये आदमी भेजा मगर उस आदमी ने वापस आ कर कहा कि दारोगा साहब छत पर से गिर कर जख्मी हो गये हैं, सर फट गया है और उठने लायक नहीं हैं। मैंने उस बात को सच मान लिया, मगर वास्तव में दारोगा भी उसी

* सन्तति आठवें हिस्से के छठें बयान में इसी पुरानी आबादी और टूटे फूटे मकानों का हाल लिखा गया है।

सभा में जख्मी हुआ था जिसमें मेरे खजानची ने जान दी थी। अफसोस! मेरी किस्मत में तो तरह तरह की तकलीफें बदी हुईं थीं, मैं उस दुष्ट की तरफ से क्यों कर होशियार होता? (इंदिरा से) खैर तुम आगे का हाल कहो, यह सब तुम्हारी ही जुबान से अच्छा मालूम होता है।

इन्दिरा०। हां तो अब मैं संक्षेप ही में इस किस्से को बयान करती हूँ। तीनों लाशें ठिकाने पहुंचा दी गईं और राजा साहब मेरे पिता का हाथ थामे यह कहते हुए महल के अन्दर चले गये कि चलो सर्यू से पूछें कि वह क्यों कर उन दुष्टों के फन्दे में फंस गई थी और उस सभा में कौन कौन आदमी शरीक थे, शायद उसने उन सभों को बिना नकाब के देखा हो। मगर जब महल में गये तो मालूम हुआ कि सर्यू यहाँ आई ही नहीं। यह सुनते ही राजा साहब घबड़ा गए और बोल उठे—"क्या हमारे यहाँ के सभी आदमी उस कुमेटी से मिले हुए हैं!!"

गोपाल०। उस समय तो मैं पागल सा हो गया था! कुछ भी अकल जाम नहीं करती थी और यह किसी तरह मालूम नहीं होता था कि हमारे यहाँ कितने आदमी विश्वास करने योग्य हैं और कितने उस कुमेटी से मिले हुए हैं। जिन तीन विश्वासी आदमियों के साथ मैंने सर्यू को महल में भेजा था वे तीनों आदमी भी गायब हो गये थे। मुझे तो विश्वास हो गया था कि अब मेरी स्त्री और इन्द्रदेव की जान भी न बचेगी मगर वाह रे इन्द्रदेव! उसने अपने दिल को खूब ही सम्हाला और बड़ी मुस्तैदी और बुद्धिमानी से महीने भर के अन्दर बहुत से आदमियों का पता लगाया जो मेरे नौकर हो कर भी उस कुमेटी में शरीक थे और मैंने उन सभों को तोप के आगे रख कर उड़वा दिया। सच तो यों है कि उसी दिन से वह गुप्त कमेटी टूट गई और फिर कायम नहीं हुई।

इन्दिरा०। जिस समय मेरे पिता को यह मालूम हुआ कि सर्यू महल के अन्दर नहीं पहुँची बीच ही में गायब हो गई, उस समय उन्हें बड़ा ही रंज हुआ और वे अपने घर जाने के लिये तैयार हो गये। उन्होंने राजा साहब से कहा कि मैं पहिले घर जाकर यह मालूम किया चाहता हूँ कि वहाँ से केवल मेरी स्त्री ही को दुश्मन लोग ले गये हैं या मेरी लड़की इन्दिरा को भी। मगर मेरे पिता घर की तरफ न जा सके क्योंकि उसी समय घर से एक दूत आ पहुँचा और उसने इत्तला दी कि सर्यू और इन्दिरा दोनों यकायक गायब हो गईं। इस खबर को सुन

कर मेरे पिता और भी उदास हो गये और उन्होंने बड़ी कारीगरी से दुश्मनों का पता लगाना आरम्भ किया और बहुतों को पकड़ा जैसा कि अभी राजा साहब कह चुके हैं।

इन्द्रजीत०। क्या तुम दोनों को दुश्मनों ने गिफ्तार कर लिया था?

इन्दिरा०। जी हाँ।

आनन्द०। अच्छा तो पहिले अपना और अपनी माँ का हाल कहो कि किस तरह दुश्मनों के फन्दे में फंस गई?

इन्दिरा०। जो आज्ञा, यह तो मैं कही चुकी हूँ कि मेरे पिता जब जमानिया में आये तो अपने दो ऐयारों को साथ लाये थे जो दुश्मनों का पता लगाते ही लगाते गायब हो गये थे।

इन्द्रजीत०। हाँ कह चुकी हो, अच्छा तब?

इन्दिरा०। उन्हीं दोनों ऐयारों की सूरत बन कर दुश्मनों ने हम लोगों को धोखा दिया।

इन्द्रजीत०। दुश्मन उस मकान के अन्दर कैसे गये? तुम कह चुकी हो कि वहाँ का रास्ता बहुत टेढ़ा और गुप्त है।

इन्दिरा०। ठीक है मगर कम्बख्त दारोगा उस रास्ते का हाल बखूबी जानता था और वह उस कुमेटी का मुखिया था, ताज्जुब नहीं कि उसी ने उन आदमियों को भेजा हो।

इन्द्रजीत०। सच है, निःसन्देह ऐसा ही हुआ होगा अच्छा तब क्या हुआ? उन्होंने क्यों कर धोखा दिया?

इन्दिरा०। सन्ध्या का समय था जब मैं अपनी माँ के साथ उस छोटे से नजरबाग में टहल रही थी जो बंगले के बगल में था यकायक मेरे पिता के वे ही दोनों ऐयार वहाँ आ पहुँचे जिन्हें देख मेरी माँ बहुत खुश हुई और देर तक जमानिया का हाल चाल पूछती रही। उन ऐयारों ने बयान किया कि इन्द्रदेव ने तुम दोनों को जमानिया बुलाया है, हम लोग रथ लेकर आये हैं, मगर साथ ही इसके उन्होंने यह भी कहा है कि यदि वे खुशी से आना चाहें तो ले आना नहीं तो लौट आना। मेरी मां को जमानिया पहुंच कर अपनी मां को देखने की बहुत ही लालसा थी, वह कब देर करने लगी थी! तुरत ही राजी हो गई और

घंटे भर के अंदर ही सब तैयारी कर ली। ऐयार लोग मातबर समझे ही जाते हैं, अस्तु ज्यादे खोज करने की कोई आवश्यकता न थी, केवल दो लौंडियों को और मुझे साथ लेकर चल पड़ी, कलमदान भी साथ ले लिया। हमारे दूसरे ऐयारोंने भी कुछ मना न किया क्योंकि वे भी धोखे में पड़ गये थे और उन ऐयारों को सच्चा समझ चुके थे। हम लोग खोह के बाहर निकले और पहाड़ी के नीचे उतरने की नीयत से थोड़ी ही दूर आगे बढ़े थे कि चारो तरफ से दस पंद्रह दुश्मनों ने घेर लिया। उन ऐयारों ने भी रंगत पलटी, मुझे और मेरी मां को जबर्दस्ती बेहोशी की दवा सुंघा दी, हम दोनों तुरत बेहोश हो गये, मैं नहीं कह सकती कि दोनों लौंडियों की क्या दुर्दशा हुई मगर जब मैं होश में आई तो अपने को एक तहखाने में कैद पाया और अपनी मां को अपने पास देखा जो मेरे पहिले ही होश में आ चुकी थी और मेरा सर गोद में लेकर रो रही थी। हम लोगों के हाथ पैर खुले हुऐ थे। जिस कोठड़ी में हम लोग कैद थे वह कोठड़ी खासी लम्बी चौड़ी थी और सामने की तरफ दर्वाजे की जगह लोहे का जगला लगा हुआ था। जंगले के बाहर दालान था और उसी के एक तरफ ऊपर चढ़ जाने के लिये सीढ़ियां बनी हुई थीं और सीढ़ी के बगल ही में एक आले के ऊपर चिराग जल रहा था। मैं पहिले बयान कर चुकी हूँ—कि उन दिनों जाड़े का मौसिम था इसलिये हम लोगों को गर्मी की तकलीफ न थी। जब मैं होश में आई, मेरी मां ने रोना बन्द किया और मुझे बड़ी देर तक धीरज और दिलासा देने बाद बोली, "बेटी! अगर कोई तुझसे उस कलमदान के बारे में कुछ पूछे तो कह दीजियो कि कलमदान खोला तो जरूर जा चुका है मगर मैं उसके अंदर का हाल नहीं जानती, हां मेरी मां तथा और कई आदमी उसका भेद जान चुके हैं। अगर कोई उन आदमियों का नाम पूछे तो कह दीजियो कि मैं नाम नहीं जानती।" मेरी माँ ने कलमदान के विषय में ऐसा कहने के लिए क्यों कहा यह मैं नहीं जानती। शायद मेरी माँ से और दुष्टों से पहिले कुछ बात चीत हो चुकी हो मगर मुझे जो कुछ माँ ने कहा था उसे मैंने अच्छी तरह निबाहा। थोड़ी देर बाद चार पाँच आदमी उसी सीढ़ी की राह से धड़धड़ाते हुए नीचे उतर आये और मेरी माँ को जबर्दस्ती ऊपर ले गये। मैं जोर जोर से रोती और चिल्लाती रह गई मगर उन लोगों ने मेरा कुछ भी ख्याल न किया और अपना काम करके चले गए।

मैं उन लोगों की सूरत शक्ल के बारे में कुछ भी नहीं कह सकती क्योंकि वे लोग नकाब से अपने चेहरे को छिपाये हुए थे। थोड़ी देर के बाद फिर एक नकाबपोश मेरे पास आया जिसके कपड़े और कद पर खयाल करके मैं कह सकती हूँ कि वह उन लोगों में से नहीं था जो मेरी माँ को ले गए थे बल्कि कोई दूसरा ही आदमी था। वह नकाबपोश मेरे पास बैठ गया और मुझे धीरज और दिलासा देता हुआ कहने लगा कि मैं तुझे इस कैद से छुड़ाऊँगा। मुझे उसकी बातों पर विश्वास हो गया, इसके बाद वह मुझसे बातचीत करने लगा—

नकाब०। क्या तुझे उस कलमदान के अन्दर का कुछ हाल मालूम है?

मैं०। नहीं।

नकाब०। क्या तेरे सामने कलमदान खोला नहीं गया था?

मैं०। खोला गया था मगर उसका कोई हाल मुझे नहीं मालूम हुआ, हाँ मेरी माँ तथा और कई आदमियों को मालूम है जिन्हें मेरे पिता ने दिखाया था।

नकाब०। उन आदमियों के नाम तू जानती है।

मैं०। नहीं।

उसने कई तरह से उलट फेर करके पूछा मगर मैंने अपनी बातों में फर्क न डाला। मैंने उससे अपनी माँ का हाल पूछा लेकिन उसने कुछ न बताया और मेरे पास से उठकर चला गया। मुझे खूब याद है कि इसके दो पहर बाद जब मैं भूख प्यास के मारे बहुत दुःखी हो रही थी तब फिर एक आदमी मेरे पास आया और वह भी अपने चेहरे को नकाब से छिपाये हुए था। मैं डरी और समझी कि फिर उन्हीं कम्बख्तों में से कोई मुझे सताने के लिए आया है मगर नहीं, वह वास्तव में गदाधरसिंह थे और मुझे उस कैद से छुड़ाने के लिए आये थे। यद्यपि उस समय मुझे यह ख्याल हुआ कि कहीं यह भी उन दोनों ऐयारों की तरह मुझे धोखा न देते हों जिनकी बदौलत मैं घर से निकल कर कैदखाने तक पहुँची थी मगर नहीं वे वास्तव में गदाधरसिंह थे और उन्हें मैं अच्छी तरह पहिचानती थी। उन्होंने मुझे गोद में उठा लिया और तहखाने के ऊपर निकल कई पेचीले रास्तों से घूमते फिरते मैदान में पहुँचे। वहाँ उनके दो आदमी एक घोड़ा लिये तैयार थे। गदाधरसिंह मुझे लेकर घोड़े पर सवार हो गये, अपने आदमियों को ऐयारी भाषा में कुछ कह कर बिदा किया और खुद एक तरफ रवाना हो गये। उस

समय रात बहुत कम बाकी थी और सवेरा हुआ ही चाहता था। रास्ते में मैंने उनसे अपनी माँ का उस सभा में पहुँचना, मेरे पिता का भी कैद होकर वहाँ जाना, कलमदान की लूट और मेरे पिता का अपनी स्त्री को लेकर निकल जाना आदि बयान किया और यह भी कहा कि कलमदान को लूट कर ले भागने वाले का पता नहीं लगा। लगभग चार पाँच कोस चले जाने बाद एक छोटी सी नदी के किनारे पहुँचे जिसमें घुटने बराबर से ज्यादे जल न था। उस जगह गदाधरसिंह घोड़े के नीचे उतरे और मुझे भी उतारा। खुर्जी में से कुछ मेवा निकाल कर मुझे खाने को दिया। मैं उस समय बहुत भूखी थी अस्तु मेवा खा कर पानी पीया, इसके बाद वह फिर मुझे लेकर घोड़े पर सवार हुए और नदी पार हो कर एक तरफ चल निकले। दो घंटे तक घोड़े को धीरे धीरे चलाया और फिर तेज किया। दोपहर दिन के समय हमलोग एक पहाड़ी के पास पहुँचे जहाँ बहुत ही गुञ्जान जंगल था और गदाधरसिंह के चार पाँच आदमी भी मौजूद थे। हमलोगों के पहुँचते ही गदाधरसिंह के आदमियों ने जमीन पर कम्बल बिछा दिया, कोई पानी लेने के लिए चला गया, कोई घोड़े को ठण्ढा करने लगा और कोई रसोई बनाने की धुन में लगा क्योंकि चावल दाल इत्यादि उन आदमियों के पास मौजूद था। गदाधरसिंह भी मेरे पास बैठ गए और अपने बटुये में से कागज कलम दावात निकाल कर कुछ लिखने लगे। मेरे देखते ही देखते तीन चार घण्टे तक गदाधरसिंह ने बटुए में से कई कागजों को निकाला पढ़ा और उनकी नकल की, तब तक रसोई भी तैयार हो गई। हमलोगों ने भोजन किया और जब बिछावन पर आकर बैठे तो गदाधरसिंह ने फिर उन कागजों को देखना और नकल करना शुरू किया। मैं रात भर की जागी हुई थी इसलिये मुझे नींद आ गई। जब मेरी आँख खुली तो घण्टे भर रात जा चुकी थी, उस समय गदाधरसिंह मुझे लेकर पुनः घोड़े पर सवार हुए और अपने आदमियों को कुछ समझा बुझा कर रवाना हो गए। दो तीन घण्टे रात बाकी थी जब हमलोग लक्ष्मीदेवी के बाप बलभद्रसिंह के मकान पर पहुँचे। बलभद्रसिंह में और मेरे पिता में बहुत मित्रता थी इसीलिये गदाधरसिंह ने मुझे वहाँ पहुँचा देना उत्तम समझा। दर्वाजे पर पहुँचने के साथ ही बलभद्रसिंह जी को इत्तला करवाई गई। यह यद्यपि उस समय गहरी नींद में सोये हुये थे मगर सुनने के साथ ही बाहर निकल आये और खातिरदारी

के साथ मुझे और गदाधरसिंह को घर के अन्दर अपने कमरे में ले गये जहाँ सिवाय उनके और कोई भी न था। बलभद्रसिंह ने मेरे सर पर हाथ फेरा और बड़े प्यार से अपनी गोद में बैठा कर गदाधरसिंह से हाल पूछा। गदाधरसिंह ने सब हाल जो मैं बयान कर चुकी हूँ उनसे कहा और इसके बाद नसीहत की कि इन्दिरा को बड़ी हिफाजत से और छिपा कर अपने पास रखिए, जब तक दुश्मनों का अन्त न हो जाय तब तक इसका प्रकट होना उचित नहीं है, मैं फिर जमानिया जाता हूँ और देखता हूँ कि वहाँ का क्या हाल है। इन्द्रदेव से मुलाकात होने पर मैं इन्दिरा का यहाँ पहुँचा देना बयान कर दूँगा। बलभद्रसिहजी ने बहुत प्रसन्न होकर गदाधरसिंह को धन्यवाद दिया और वे थोड़ी देर तक बातचीत करने बाद सवेरा होने के पहिले ही वहाँ से रवाना हो गए। गदाधरसिंह के चले जाने बाद बलभद्रसिहजी मुझसे बातचीत करते रहे और सवेरा हो जाने पर मुझे लेकर घर के अन्दर गये। उनकी स्त्री ने भी मुझे बड़े प्यार से गोद में ले लिया और लक्ष्मी देवी ने तो मेरी ऐसी कदर की जैसी कोई अपनी जान की कदर करता है। मुझे वहाँ बहुत दिनों तक रहना पड़ा था। इसलिये मुझसे और लक्ष्मीदेवी से हद से ज्यादे मुहब्बत हो गई थी। मैं बड़े आराम से उनके यहाँ रहने लगी, मालूम होता है कि गदाधरसिंह ने जमानिया में जाकर मेरे पिता से मेरा सब हाल कहा क्योंकि थोड़े ही दिन बाद मेरे पिता मुझे देखने के लिये बलभद्रसिंह के यहाँ आये और उस समय उनकी जबानी मालूम हुआ कि मेरी माँ पुनः मुसीबत में गिरफ्तार हो गई अर्थात् महल में पहुँचने के साथ ही गायब हो गई। मैं अपनी माँ के लिये बहुत रोई मगर पिता ने मुझे दिलासा दिया। केवल एक दिन रह के मेरे पिता जमानिया की तरफ चले गये और मुझे वहाँ ही छोड़ गये।

मैं कह चुकी हूँ कि मुझसे और लक्ष्मीदेवी से बड़ी मुहब्बत हो गई थी इस लिये मैंने अपने नाना साहब का और उस कलमदान का कुछ हाल उससे कह दिया था और यह भी बता दिया था कि उस कलमदान पर तीन तस्वीरें बनी हुई हैं, दो को तो मैं नहीं जानती मगर बिचली तस्वीर मेरी है और उसके नीचे मेरा नाम लिखा हुआ है। जमानिया जा कर मेरे पिता ने क्या क्या काम किया सो मैं नहीं कह सकती परन्तु यह अवश्य सुनने में आया कि उन्होंने बड़ी चालाकी और ऐयारी से उस कुमेटी वालों का पता लगाया और राजा साहब ने उन सभों को प्राणदण्ड दिया।

गोपाल० । उन दुष्टों का पता लगाना निःसंदेह इन्द्रदेव ही का काम था, जैसी जैसी ऐयारियाँ इन्द्रदेव ने कीं वैसी कम ऐयारों को सूझेंगी । अफसोस ! उस समय वह कलमदान हाथ न आया नहीं तो सहज ही में सब दुष्टों का पता लग जाता और यही सबब था कि दुष्टों की सूची में दारोगा और जैपालसिंह का नाम न चढ़ा और वास्तव में ये ही उस कुमेटी के मुखिया थे जो मेरे हाथ से बच गये और उन्हीं की बदौलत मैं गारत हुआ ।

इन्द्र० । ताज्जुब नहीं कि दारोगा के बार में इन्द्रदेव ही ने सुस्ती कर दी हो और गुरुभाई का मुलाहजा कर गये हों ।

गोपाल० । हो सकता है ।

आन० । (इन्दिरा से) क्या उस कलमदान के अन्दर का हाल तुम्हें भी मालूम न था ?

इन्दिरा० । जी नहीं, अगर मुझे मालूम होता तो ये दोनो दुष्ट क्यों बचने पाते ? हाँ, मेरी माँ उस कलमदान को खोल चुकी थी और उसे उस कलमदान के अन्दर का हाल मालूम था मगर वह तो गिरफ्तार ही कर ली गई थी फिर उन भेदों को खोलता कौन ?

आन० । आखिर उस कलमदा के अंदर का हाल तुम्हें कब मालूम हुआ ।

इन्दिरा० । अभी थोड़े ही दिन हुए जब मैं कैदखाने में अपनी माँ के पास पहुँची तो उसने कलमदान का भेद बताया था ।

आन० । मगर कलमदान का पता न लगा ?

इन्दिरा० । जी नहीं, उसके बाद आज तक कलमदान का हाल मुझे मालूम न हुआ, मैं नहीं कह सकता कि उसे कौन ले गया या वह क्या हुआ, हाँ इस समय राजा साहब की जुबानी सुनने में आया है कि वही कलमदान कृष्णजिन्न ने राजा बीरेन्द्रसिंह के दर्बार में पेश किया था ।

गोपाल० । उस कलमदान का हाल मैं जानता हूँ । सच तो यह है कि सारा बखेड़ा उस कलमदान ही के सबब से हुआ यदि वह कलमदान उस समय मुझे या इन्द्रदेव को मिल जाता तो लक्ष्मीदेवी की जगह मुंदर मेरे घर न आती, मुन्दर तथा दारोगा की बदौलत मेरी गिनती मुर्दों में न होती और न भूतनाथ ही पर

आज इतने जुर्म लगाये जाते। वास्तव में उस कलमदान को गदाधरसिंह ही ने उन दुष्टों की सभा में से लूट लिया था जो आज भूतनाथ के नाम से मशहूर है। इसमें कोई शक नहीं कि उसने इन्दिरा की जान बचाई मगर कलमदान को छिपा गया और उसका हाल किसी से न कहा। बड़े लोगों ने सच कहा है कि—विशेष लाभ आदमी को चौपट कर देता है। वही हाल भूतनाथ का हुआ। पहिले भूतनाथ बहुत नेक और ईमानदार था और आजकल भी वह अच्छी राह चल रहा है मगर बीच में थोड़े दिनों तक उसके ईमान में फर्क पड़गया था जिसके लिए आज वह अफसोस कर रहा है। आप इन्दिरा का हाल सुन लीजिए फिर कलमदान का भेद मैं आपसे बयान करूँगा।

इन्द्र०। जो आज्ञा, (इन्दिरा से) अच्छा तुम अपना हाल कहो कि बलभद्रसिंह के यहाँ जाने बाद फिर तुम पर क्या बीती?

इन्दिरा०। मैं बहुत दिनों तक उनके यहाँ आराम से अपने को छिपाये हुए बैठी रही और मेरे पिता कभी कभी वहाँ जाकर मुझसे मिल आया करते थे। यह मैं नहीं कह सकती कि पिता ने मुझे बलभद्रसिंहजी के यहाँ क्यों छोड़ रक्खा था। जब बहुत दिनों के बाद लक्ष्मीदेवी की शादी का दिन आया और बलभद्रसिंहजी लक्ष्मीदेवी को लेकर यहाँ आये तो मैं भी साथ आई। (गोपालसिंह की तरफ इशारा करके) आपने जब मेरे आने की खबर सुनी तो मुझे अपने यहाँ बुलावा भेजा अस्तु मैं लक्ष्मीदेवी को जो दूसरी जगह टिकी हुई थी छोड़ कर राजमहल में चली आई। बस राजमहल में चले आना ही मेरे लिये काल हो गया क्योंकि दारोगा ने मुझे देख लिया और अपने पिता तथा राजा साहब की तरह मैं भी दारोगा की तरफ से बेफिक्र थी। इस शादी में मेरे पिता मौजूद न थे। मुझे इस बात का बड़ा ताज्जुब हुआ, जब राजा साहब से मैंने पूछा तो मालूम हुआ कि वह बीमार हैं इसीलिये नहीं आये। जिस दिन मैं राजमहल में आई उसी दिन रात को लक्ष्मीदेवी की शादी थी। शादी हो जाने पर सवेरे जब मैंने लक्ष्मीदेवी की सूरत देखी तो मेरा कलेजा धक्क से हो गया क्योंकि लक्ष्मीदेवी के बदले मैंने किसी दूसरी औरत को घर में देखा। हाय! उस समय मेरे दिल की जो हालत थी मैं बयान नहीं कर सकती! मैं घबड़ाई हुई बाहर की तरफ दौड़ी जिसमें राजा साहब को इस बात की खबर कर दूँ और उनसे इसका सबब पूछूँ। राजा साहब

जिस कमरे में थे उसका रास्ता जनाने महल से मिला हुआ था अतएव मैं भीतर ही भीतर उस कमरे में चली गई मगर वहाँ राजा साहब के बदले दारोगा को बैठे हुए पाया। मेरी सूरत देखते ही एक दफे दारोगा के चेहरे का रंग उड़ गया मगर तुरत ही उसने अपने को सम्हाल कर मुझसे पूछा, "क्यों इन्दिरा, क्या हाल है? तू इतने दिनों तक कहाँ थी?" मुझे उस चाण्डाल की तरफ से कुछ भी शक न था इसलिये मैं उसी से पूछ बैठी कि लक्ष्मीदेवी के बदले में मैं किसी दूसरी औरत को देखती हूँ! इसका क्या सबब है? यह सुनते ही दारोगा घबड़ा उठा और बोला, "नहीं नहीं, तू ने वास्तव में किसी दूसरे को देखा होगा! लक्ष्मीदेवी तो उस बाग वाले कमरे में है। चल मैं तुझे उसके पास पहुँचाऊँ!" मैंने खुश होकर कहा कि चलो पहुँचा दो! दारोगा झट उठ खड़ा हुआ और मुझे साथ लेकर भीतर ही भीतर बाग वाले कमरे की तरफ चला। वह रास्ता बिल्कुल एकान्त का था। थोड़ी ही दूर जाकर दारोगा ने एक कपड़ा मेरे मुँह पर डाल दिया। ओह! उसमें से किसी प्रकार की तेज महक आ रही थी जिसके सबब दो तीन दफे से ज्यादे मैं साँस न ले सकी और बेहोश हो गई। फिर मुझे कुछ भी खबर न रही कि दुनिया के परदे पर क्या हुआ या क्या हो रहा है!

गोपाल०। इन्दिरा की कथा के सम्बन्ध में गदाधरसिंह (भूतनाथ) का हाल छूटा जाता है क्योंकि इन्दिरा उस विषय में कुछ भी नहीं जानती इसलिये बयान नहीं कर सकती मगर बिना उसका हाल जाने किस्से का सिलसिला ठीक न होगा इसलिये मैं स्वयम् गदाधरसिंह का हाल बीच ही में बयान कर देना उचित समझता हूँ।

इन्द्रजीत०। हाँ हाँ जरूर कहिये, कलमदान का हाल जाने बिना आनन्द नहीं मिलता।

गोपाल०। उस गुप्त सभा में यकायक पहुँच कर कलमदान को लूट लेने वाला वही गदाधरसिंह था। उसने कलमदान को खोल डाला और उसके अन्दर जो कुछ कागजात थे उन्हें अच्छी तरह पढ़ डाला। उसमें एक तो वसीयतनामा था जो दामोदरसिंह ने इन्दिरा के नाम लिखा था और उसमें अपनी कुल जायदाद का मालिक इन्दिरा को बनाया था। इसके अतिरिक्त और सब कागज उस गुप्त कमेटी के सम्बन्ध में थे और उनमें उस गुप्त कमेटी के सब सभासदों के नाम

आज इतने जुर्म लगाये जाते। वास्तव में उस कलमदान को गदाधरसिंह ही ने उन दुष्टों की सभा में से लूट लिया था जो आज भूतनाथ के नाम से मशहूर है। इसमें कोई शक नहीं कि उसने इन्दिरा की जान बचाई मगर कलमदान को छिपा गया और उसका हाल किसी से न कहा। बड़े लोगों ने सच कहा है कि— विशेष लाभ आदमी को चौपट कर देता है। वही हाल भूतनाथ का हुआ। पहिले भूतनाथ बहुत नेक और ईमानदार था और आजकल भी वह अच्छी राह चल रहा है मगर बीच में थोड़े दिनों तक उसके ईमान में फर्क पड़गया था जिसके लिए आज वह अफसोस कर रहा है। आप इन्दिरा का हाल सुन लीजिए फिर कलमदान का भेद मैं आपसे बयान करूँगा।

इन्द्र०। जो आज्ञा, (इन्दिरा से) अच्छा तुम अपना हाल कहो कि बलभद्रसिंह के यहाँ जाने बाद फिर तुम पर क्या बीती ?

इन्दिरा०। मैं बहुत दिनों तक उनके यहाँ आराम से अपने को छिपाये हुए बैठी रही और मेरे पिता कभी कभी वहाँ जाकर मुझसे मिल आया करते थे। यह मैं नहीं कह सकती कि पिता ने मुझे बलभद्रसिंहजी के यहाँ क्यों छोड़ रक्खा था। जब बहुत दिनों के बाद लक्ष्मीदेवी की शादी का दिन आया और बलभद्रसिंहजी लक्ष्मीदेवी को लेकर यहाँ आये तो मैं भी साथ आई। (गोपालसिंह की तरफ इशारा करके) आपने जब मेरे आने की खबर सुनी तो मुझे अपने यहाँ बुलावा भेजा अस्तु मैं लक्ष्मीदेवी को जो दूसरी जगह टिकी हुई थी छोड़ कर राजमहल में चली आई। बस राजमहल में चले आना ही मेरे लिये काल हो गया क्योंकि दारोगा ने मुझे देख लिया और अपने पिता तथा राजा साहब की तरह मैं भी दारोगा की तरफ से बेफिक्र थी। इस शादी में मेरे पिता मौजूद न थे। मुझे इस बात का बड़ा ताज्जुब हुआ, जब राजा साहब से मैंने पूछा तो मालूम हुआ कि वह बीमार हैं इसीलिये नहीं आये। जिस दिन मैं राजमहल में आई उसी दिन रात को लक्ष्मीदेवी की शादी थी। शादी हो जाने पर सवेरे जब मैंने लक्ष्मीदेवी की सूरत देखी तो मेरा कलेजा धक्क से हो गया क्योंकि लक्ष्मीदेवी के बदले मैंने किसी दूसरी औरत को घर में देखा। हाय ! उस समय मेरे दिल की जो हालत थी मैं बयान नहीं कर सकती ! मैं घबड़ाई हुई बाहर की तरफ दौड़ी जिसमें राजा साहब को इस बात की खबर कर दूँ और उनसे इसका सबब पूछूँ। राजा साहब

जिस कमरे में थे उसका रास्ता जनाने महल से मिला हुआ था अतएव मैं भीतर ही भीतर उस कमरे में चली गई मगर वहाँ राजा साहब के बदले दारोगा को बैठे हुए पाया। मेरी सूरत देखते ही एक दफे दारोगा के चेहरे का रंग उड़ गया मगर तुरत ही उसने अपने को सम्हाल कर मुझसे पूछा, "क्यों इन्दिरा, क्या हाल है? तू इतने दिनों तक कहाँ थी?" मुझे उस चाण्डाल की तरफ से कुछ भी शक न था इसलिये मैं उसी से पूछ बैठी कि लक्ष्मीदेवी के बदले में मैं किसी दूसरी औरत को देखती हूँ! इसका क्या सबब है? यह सुनते ही दारोगा घबड़ा उठा और बोला, "नहीं नहीं, तू ने वास्तव में किसी दूसरे को देखा होगा! लक्ष्मीदेवी तो उस बाग वाले कमरे में है। चल मैं तुझे उसके पास पहुँचाऊँ!" मैंने खुश होकर कहा कि चलो पहुँचा दो! दारोगा झट उठ खड़ा हुआ और मुझे साथ लेकर भीतर ही भीतर बाग वाले कमरे की तरफ चला। वह रास्ता बिल्कुल एकान्त का था। थोड़ी ही दूर जाकर दारोगा ने एक कपड़ा मेरे मुँह पर डाल दिया। ओह! उसमें से किसी प्रकार की तेज महक आ रही थी जिसके सबब दो तीन दफे से ज्यादे मैं साँस न ले सकी और बेहोश हो गई। फिर मुझे कुछ भी खबर न रही कि दुनिया के परदे पर क्या हुआ या क्या हो रहा है!

गोपाल०। इन्दिरा की कथा के सम्बन्ध में गदाधरसिंह (भूतनाथ) का हाल छूटा जाता है क्योंकि इन्दिरा उस विषय में कुछ भी नहीं जानती इसलिये बयान नहीं कर सकती मगर बिना उसका हाल जाने किस्से का सिलसिला ठीक न होगा इसलिये मैं स्वयम् गदाधरसिंह का हाल बीच ही में बयान कर देना उचित समझता हूँ।

इन्द्रजीत०। हाँ हाँ जरूर कहिये, कलमदान का हाल जाने बिना आनन्द नहीं मिलता।

गोपाल०। उस गुप्त सभा में यकायक पहुँच कर कलमदान को लूट लेने वाला वही गदाधरसिंह था। उसने कलमदान को खोल डाला और उसके अन्दर जो कुछ कागजात थे उन्हें अच्छी तरह पढ़ डाला। उसमें एक तो वसीयतनामा था जो दामोदरसिंह ने इन्दिरा के नाम लिखा था और उसमें अपनी कुल जायदाद का मालिक इन्दिरा को बनाया था। इसके अतिरिक्त और सब कागज उस गुप्त कुमेटी के सम्बन्ध में थे और उनमें उस गुप्त कुमेटी के सब सभासदों के नाम

लिखे हुए थे, साथ ही इसके एक कागज दामोदरसिंह ने अपनी तरफ से उस कुमेटी के विषय में लिख कर रख दिया था जिसके पढ़ने से मालूम होता था कि दामोदरसिंह उस सभा का मन्त्री था, दामोदरसिंह के खयाल से वह सभा अच्छे कामों के लिये स्थापित हुई थी और उन आदमियों को सजा देना उसका काम था जिन्हें मेरे पिता दोष साबित होने पर भी प्राणदण्ड न देकर केवल अपने राज्य से निकाल दिया करते थे और ऐसा करने से रिआया में नाराजी फैलती जाती थी, मगर कुछ दिनों के बाद सभा में बेईमानी शुरू हो गई और उसके सभासद लोग उसके जरिये से रुपया पैदा करने लगे, तभी से दामोदरसिंह को भी उस सभा से घृणा हो गई, परन्तु नियमानुसार वे उस सभा को छोड़ नहीं सकते थे और छोड़ देने पर उसी सभा द्वारा प्राण जाने का भय था। एक दिन दारोगा ने सभा में प्रस्ताव किया कि बड़े महाराज को मार डालना चाहिये। उस प्रस्ताव का दामोदरसिंह ने अच्छी तरह खंडन किया मगर दारोगा की बात सब से भारी समझी जाती थी इसलिये दामोदरसिंह की किसी ने भी न सुनी और बड़े महाराज का मारना निश्चय हो गया। ऐसा करने में दारोगा और रघुबरसिंह का फायदा था क्योंकि वे दोनों आदमी लक्ष्मीदेवी के बदले में हेलासिंह की लड़की सुन्दर के साथ मेरी शादी कराया चाहते थे और बड़े महाराज के रहते यह बात बिल्कुल असम्भव थी। आखिर दामोदरसिंह ने अपनी जान का कुछ खयाल न किया और सभा सम्बन्धी मुख्य मुख्य कागज और सभा के सभासदों के नाम तथा अपना वसीयतनामा लिख कर कलमदान में बन्द किया और कलमदान अपनी लड़की के हवाले कर दिया जैसा कि आप इन्दिरा की जुबानी सुन चुके हैं। गदाधरसिंह को सभा का कुल हाल, जितने आदमियों को सभा मार चुकी थी उनके नाम, और सभा के मेम्बरों के नाम मालूम हो गये तब उसे लालच ने घेरा और उसने सभा के सभासदों से रुपये वसूल करने का इरादा किया। कलमदान में जितने कागज थे उसने सभों की नकल ले ली और असल कागज तथा कलमदान कहीं छिपा कर रख आया। इसके बाद गदाधरसिंह दारोगा के पास गया और उससे एकान्त में मुलाकात करके बोला कि तुम्हारी गुप्त सभा का हाल अब खुला चाहता है और तुम लोग जहन्नुम में पहुँचा चाहते हो, वह दामोदरसिंह वाला कलमदान तुम्हारी सभा से लूट ले जाने वाला मैं ही हूँ.

और मैंने उस कलमदान के अन्दर का बिल्कुल हाल जान लिया है। अब वह कलमदान मैं तुम्हारे राजा साहब के हाथ में दे देने के लिये तैयार हूँ, अगर तुम्हें विश्वास न हो तो इन कागजों को देखो जो मैं अपने हाथ से नकल करके तुम्हें दिखाने के लिये ले आया हूँ।

इतना कह कर गदाधरसिंह ने वे कागज दारोगा के सामने फेंक दिये। दारोगा के होश उड़ गए और मौत भयानक रूप से उसकी आँखों के सामने नाचने लगी उसने चाहा कि किसी तरह गदाधरसिंह को खपा (मार) डाले मगर यह बात असंभव थी क्योंकि गदाधरसिंह बहुत ही काइयाँ और हर तरह से होशियार तथा चौकन्ना था अतएव सिवाय उसे राजी करने के दारोगा को और कोई बात न सूझी। आखिर बीस हजार अशर्फी चार रोज के अन्दर दे देने के वादे पर दारोगा ने अपनी जान बचाई और वह कलमदान भूतनाथ से माँगा। भूतनाथ ने बीस हजार अशर्फी ले कर दारोगा की जान छोड़ देने का वादा किया और कलमदान देना भी स्वीकार किया अस्तु दारोगा ने उतने ही को गनीमत समझा और चार दिन के बाद बीस हजार अशर्फी गदाधरसिंह को अदा करके आप पूरा कंगाल बन बैठा। इसके बाद गदाधरसिंह ने और मेम्बरों से भी कुछ वसूल किया और कलमदान दारोगा को दे दिया मगर दारोगा से इस बात का एकरारनामा लिखा लिया कि वह ऐसे कामों में शरीक न होगा और न खुद ऐसा करेगा जिसमें इन्द्रदेव सर्यू इन्दिरा और मुझे (गोपालसिंह को) किसी तरह का नुकसान पहुँचे। इन सब कामों से छुट्टी पा कर गदाधरसिंह अपने घर के लिए बिदा हुआ मगर वास्तव में वह फिर भी घर न गया और इसलिये भेष बदल कर जमानिया में घूमने लगा कि रघुबरसिंह के भेदों का पता लगावे जो कि बलभद्रसिंह के साथ विश्वासघात करना चाहता था। वह फकीरी सूरत में रोज रघुबरसिंह के यहाँ जा कर उसके नौकर और सिपाहियों में बैठने और हेल मेल बढ़ाने लगा। थोड़े ही दिन में उसे मालूम हो गया कि रघुबरसिंह अभी तक हेलासिंह से पत्र व्यवहार करता है और पत्र ले जाने और ले आने का काम केवल बेनीसिंह करता है जो रघुबरसिंह का मातबर सिपाही है, अस्तु एक दफे जब बेनीसिंह हेलासिंह के यहाँ गया तो गदाधरसिंह ने उसका पीछा किया और मौका पा कर उसे गिरफ्तार करना चाहा लेकिन बेनीसिंह इस बात को समझ गया और दोनों में लड़ाई हो गई। गदाधरसिंह के हाथ

से बेनीसिंह मारा गया और गदाधरसिंह बेनीसिंह बन कर रघुबरसिंह के यहाँ रहने और हेलासिंह के यहाँ पत्र लेकर जाने और जवाब लाने लगा। इस हीले से तथा कागजों की चोरी करने से थोड़े ही दिनों में रघुबरसिंह का सब भेद उसे मालूम हो गया और तब उसने अपने को रघुबरसिंह पर प्रगट किया, लाचार रघुबरसिंह ने भी उसे बहुत सा रुपया दे कर अपनी जान बचाई। यह किस्सा बहुत बड़ा है और इसका पूरा पूरा हाल मुझे मालूम भी नहीं है, जब भूतनाथ अपना किस्सा आप बयान करेगा तब पूरा हाल मालूम होगा, मतलब इतना ही है कि उस कलमदान की बदौलत भूतनाथ ने रुपया भी बहुत पैदा किया और साथ ही अपने दुश्मन भी बहुत बनाये जिसका नतीजा वह अब भोग रहा है और कई नेक काम करने पर भी उसकी जान को अभी तक छुट्टी नहीं मिलती। केवल इतना ही नहीं, जब भूतनाथ असली बलभद्रसिंह का पता लगावेगा तब और भी कई विचित्र बातों का पता लगेगा, हमने सिर्फ इन्दिरा के किस्से का सिलसिला बैठाने के लिए बीच ही में इतना बयान कर दिया।

इन्द्र०। यह सब हाल आपको कब और कैसे मालूम हुआ?

गोपाल०। जब आप ने मुझे कैद से छुड़ाया उसके बाद हाल ही में ये बातें हमें मालूम हुई हैं और जिस तरह मालूम हुई सो कहने का अभी मौका नहीं, अब आप इन्दिरा का किस्सा सुनिये फिर जो कुछ शंका रहेगी उसके मिटाने का उद्योग किया जायगा।

इन्दिरा०। जो आज्ञा। दारोगा ने मुझे बेहोश कर दिया और जब मैं होश में आई तो अपने को एक लम्बे चौड़े कमरे में पाया। मेरे हाथ पैर खुले हुए थे और वह कमरा भी बहुत साफ और हवादार था। उसके दो तरफ की दीवार लकड़ी की थी और एक तरफ की ईंट और चूने से बनी हुई थी। एक तरफ की दीवार में दो दर्वाजे थे और दूसरी तरफ की पक्की दीवार में छोटी छोटी तीन खिड़कियाँ बनी हुई थीं जिनमें से हवा बखूबी आ रही थी मगर वे खिड़कियाँ इतनी ऊँची थीं कि उन तक मेरा हाथ नहीं जा सकता था। बाकी दो तरफ दीवारों में जो लकड़ी की थी तरह तरह की सुन्दर और बड़ी बड़ी तस्वीर बनी हुई थीं और छत में दो रौशनदान बने हुए थे जिनमें से सूर्य की चमक आ रही थी और वह कमरा अच्छी तरह उजाला हो रहा था। एक तरफ की पक्की दीवार में जो दो दर्वाजे थे

उनमें से एक दर्वाजा खुला हुआ और दूसरा बन्द था। मैं जब होश में आई तो अपना सर किसी की गोद में पाया, मैं घबड़ा कर उठ बैठी और उस औरत की तरफ देखने लगी जिसकी गोद में मेरा सर था। वह मेरे नानिहाल की वही दाई थी जिसने मुझे गोद में खिलाया था और जो मुझे बहुत प्यार करती थी। यद्यपि मैं कैद थी और माँ बाप की जुदाई में अधमूई हो रही थी मगर अपनी दाई को देखते ही थोड़ी देर के लिये सब दुःख भूल गई और ताज्जुब के साथ मैंने उस दाई से पूछा, "अन्ना, तू यहाँ कैसे आई?" क्योंकि मैं उस दाई को अन्ना कह के ही पुकारा करती थी।

अन्ना०। बेटी, मैं तो यह नहीं जानती कि तू यहाँ कब से है मगर मुझे आये अभी दो घण्टे से ज्यादे नहीं हुए। मुझे कम्बख्त दारोगा ने धोखा देकर गिरफ्तार कर लिया और बेहोश करके यहाँ पहुँचा दिया मगर इस जगह तुझे देख कर मैं अपना दुःख बिल्कुल भूल गई तू अपना हाल तो बता, यहाँ कैसे आई?

मैं०। मुझे भी कम्बख्त दारोगा ही ने बेहोश करके यहाँ पहुँचाया है। राजा गोपालसिंहजी की शादी हो गई मगर जब मैंने अपनी प्यारी लक्ष्मीदेवी के बदले में किसी दूसरी औरत को देखा तो घबड़ा कर इसका सबब पूछने के लिए राजा साहब के पास गई पर उनके कमरे में केवल दारोगा बैठा हुआ था, मैं उसी से पूछ बैठी। बस वह सुनते ही मेरा दुश्मन हो गया, धोखा देकर दूसरे मकान की तरफ ले चला और रास्ते में एक कपड़ा मेरे मुँह पर डाल कर बेहोश कर दिया। उसके बाद की मुझे कुछ भी खबर नहीं है। तुम्हें दारोगा ने क्या कह के यहाँ कैद किया?

अन्ना०। मैं एक काम के लिए बाजार में गई थी, रास्ते में दारोगा का नौकर मिला। उसने कहा कि इन्दिरा दारोगा साहब के घर में आई है, उसने तुझे बुलाने के लिये भेजा है और बहुत ताकीद की है कि खड़े खड़े सुनते जाओ। मैं उसकी बात सच समझ उसी वक्त दारोगा के घर चली गई मगर उस हरामजादे ने मेरे साथ भी जबर्दस्ती की, बेहोशी की दवा मुझे जबर्दस्ती के साथ सुँघाई गई। मैं यह नहीं कह सकती कि एक घंटे तक बेहोश रही या एक दिन तक, जब मैं यहाँ पहुँची तब होश में आई। उस समय केवल दारोगा नंगी तलवार लिए सामने खड़ा था। उसने मुझे कहा, "देख, तू वास्तव में इन्दिरा के पास पहुँचाई

गई है। यह लड़की अकेली कैदखाने में रहने योग्य नहीं है, इसलिये तू भी इसके साथ कैद की जाती है और तुझे हुक्म दिया जाता है कि हर तरह इसकी खातिर और तसल्ली करियो और जिस तरह हो इसे खिलाइयो पिलाइयो। देख, उस कोने में खाने पीने का सब सामान रक्खा है।"

मैं०। मेरी नानी का क्या हाल है? अफसोस मैं तो उससे मिल भी न सकी और इस आफत में फँस गई!!

अन्ना०। तेरी नानी का क्या हाल बताऊँ, वह तो नाम मात्र को जीती है, अब उसका बचना कठिन है।

अन्ना की जुबानी अपनी नानी का हाल सुन के मैं बहुत रोई कलपी। अन्ना ने मुझे बहुत समझाया और धीरज देकर कहा कि ईश्वर का ध्यान कर, उसकी कृपा से हमलोग जरूर इस कैद से छूट जायँगे। मालूम होता है कि दारोगा तेरे जरिये से कोई काम निकाला चाहता है, अगर ऐसा न होता तो वह जरूर तुझे मार डालता और तेरी हिफाजत के लिये मुझे यहाँ न लाता अस्तु जहाँ तक हो उसका काम पूरा न होने देना चाहिये। खैर जब वह यहाँ आकर तुझसे कुछ कहे सुने तो तू मुझ पर टाल दिया कीजियो फिर जो कुछ होगा मैं समझ लूँगा। अब तू कुछ खा पी ले फिर जो होगा देखा जायगा।

अन्ना के समझाने से मैं खाने के लिए तैयार हो गई। खाने पीने का सामान सब उस घर में मौजूद था, मैंने भी खाया पीया और अन्ना ने भी खाया पीया, इसके बाद अन्ना के पूछने पर मैंने अपना सब हाल शुरू से आखिर तक उससे कह सुनाया, इतने में शाम हो गई। मैं कह चुकी हूँ कि उस कमरे की छत में रौशनदान बना हुआ था जिसमें से रोशनी बखूबी आ रही थी, इसी रौशनदान के सबब से हम लोगों को मालूम हुआ कि अब सन्ध्या हो गई। थोड़ी ही देर बाद दर्वाजा खोल कर दो आदमी उस कमरे में आये, एक ने चिराग जला दिया और दूसरे ने खाने पीने का ताजा सामान रख दिया और बासी बचा हुआ उठा कर ले गया। उसके जाने बाद फिर मुझसे और अन्ना से बातचीत होती रही और दो घण्टे के बाद मुझे नींद आ गई।

इन्द्रजीत०। (गोपालसिंह से) इस जगह मुझे एक बात का सदेह हो रहा है।

गोपाल०। वह क्या?

इन्द्र० । इन्दिरा लक्ष्मीदेवी को पहिचानती थी इस लिये दारोगा ने उसे तो गिरफ्तार कर लिया मगर इन्द्रदेव का उसने क्या बंदोबस्त किया क्योंकि लक्ष्मीदेवी को तो इन्द्रदेव भी पहिचानते थे ।

गोपाल० । इसका शायद यह सबब है कि ब्याह के समय इन्द्रदेव यहाँ मौजूद न था और उसके बाद भी लक्ष्मीदेवी को देखने का उसे मौका न मिला । मालूम होता है कि दारोगा ने इन्द्रदेव से मिलने के बारे में नकली लक्ष्मीदेवी को कुछ समझा दिया था अस्तु वर्षों तक मुन्दर ने इन्द्रदेव के सामने से अपने को बचाया और इन्द्रदेव ने भी इस बात की कुछ परवाह न की । अपनी स्त्री और लड़की के गम में इन्द्रदेव ऐसा डूबा कि वर्षों बीत जाने पर भी वह जल्दी घर से नहीं निकलता था, इच्छा होने पर मै स्वयं उससे मिलने के लिये जाया करता था । कई वर्ष बीत जाने पर जब मैं कैद हो गया और सभों ने मुझे मरा हुआ जाना तब इन्द्रदेव के खोज करने पर लक्ष्मीदेवी का पता लगा और उसने लक्ष्मी-देवी को कैद से छुड़ा कर अपने पास रक्खा । इन्द्रदेव को भी मेरा मरना निश्चय हो गया था इसलिये मुन्दर के विषय में उसने ज्यादे बखेड़ा उठाना व्यर्थ समझा और दुश्मनों से बदला लेने के लिये लक्ष्मीदेवी को तैयार किया । कैद से छूटने के बाद मै खुद इन्द्रदेव से मिलने के लिये गुप्त रीति से गया था तब उसने लक्ष्मी-देवी का हाल मुझसे कहा था ।

इन्द्र० । इन्द्रदेव ने लक्ष्मीदेवी को कैद से क्यों कर छुड़ाया और उस विषय में क्या किया सो मालूम न हुआ ?

राजा गोपालसिंह ने लक्ष्मीदेवी का कुल हाल जो हम ऊपर लिख आए हैं बयान किया और इसके बाद फिर इन्दिरा ने अपना किस्सा कहना शुरू किया—

इन्दिरा० । उसी दिन आधी रात के समय जब मैं सोई हुई थी और अन्ना भी मेरे बगल में लेटी हुई थी, इस तरह की आवाज आई जैसे किसी ने अपने सर पर से गठरी उतार कर फेंकी हो । उस आवाज ने मुझे तो न जगाया मगर अन्ना झट उठ बैठी और इधर उधर देखने लगी । मैं बयान कर चुकी हूँ कि इस कमरे में दो दर्वाजे थे । उनमें से एक दर्वाजा तो लोगों के आने जाने के लिये था और वह बाहर से बंद रहता था मगर दूसरा खुला हुआ था जिसके अंदर मैं तो नहीं गई थी मगर अन्ना हो आई थी कि इसके अंदर तीन

कोठड़ियाँ हैं, एक में पायखाना है और दो कोठड़ियाँ खाली पड़ी हैं। अन्ना को शक हुआ कि उसी कोठड़ी के अंदर से आवाज आई है। उसने सोचा कि शायद दारोगा का कोई आदमी यहाँ आकर उस कोठड़ी में गया हो। थोड़ी देर तक तो उसके अन्दर से किसी के निकलने की राह देखती रही मगर इसके बाद उठ खड़ी हुई। अन्ना थी तो औरत मगर उसका दिल बड़ा ही मजबूत था, वह मौत से भी जल्दी डरने वाली न थी। उसने हाथ में चिराग उठा लिया और उस कोठड़ी के अन्दर गई। पैर रखने के साथ ही उसकी निगाह एक गठड़ी पर पड़ी मगर इधर उधर देखा तो कोई आदमी नजर न आया। तब उसने चिराग एक किनारे रख दिया और उस गठड़ी को खोला। इतने ही में मेरी आँख भी खुल गई और घर में अन्धेरा देख कर मुझे डर मालूम हुआ; मैंने हाथ फैला कर अन्ना को उठाना चाहा मगर वह तो वहाँ थी ही नहीं। मैं घबड़ा कर उठ बैठी, यकायक उस कोठड़ी की तरफ मेरी निगाह गई और उसके भीतर चिराग की रोशनी दिखाई दी, मैं घबड़ा कर जोर जोर से अन्ना अन्ना पुकारने लगी। वह मेरी आवाज सुनते ही चिराग और गठरी लिये हुए बाहर निकल आई और बोली, "ले बेटी मैं तुझे एक खुशखबरी सुनाती हूँ।" अन्ना ने यह कह कर गठड़ी मेरे आगे रख दी कि देख इसमें क्या है? मैंने बड़े शौक से वह गठड़ी खोली और उसमें अपनी प्यारी माँ के कपड़े देख कर मुझे रुलाई आ गई। ये वे ही कपड़े थे जो मेरी माँ पहिन कर घर से निकली थी जब दोनों ऐयारों ने उसे गिरफ्तार कर लिया था और ये ही कपड़े पहिरे हुए वह कैदखाने में मेरे साथ थी जब दुश्मनों ने उसे जबर्दस्ती मुझसे जुदा किया था। उन कपड़ों पर खून के छींटे पड़े हुए थे और उन्हीं छींटों को देख कर मुझे रुलाई आ गई थी मगर अन्ना ने कहा, "तू रोती क्यों है? मैं जो कह चुकी कि तेरे लिये खुशखबरी लाई हूँ। इन कपड़ों को मत देख बल्कि इनमें एक चीठी तेरी माँ के हाथ की लिखी हुई है उसे देख!" मैंने उन कपड़ों को अच्छी तरह खोला और उसके अन्दर से एक चीठी निकाली। मालूम होता है कि जब मैं अन्ना अन्ना कह के चिल्लाई तब वह जल्दी में उन सभी चीजों को लपेट सपेट कर बाहर निकल आई थी, खैर जो कुछ भी हो वह चीठी अन्ना पढ़ चुकी थी क्योंकि वह पढ़ी लिखी थी लेकिन मैं बहुत कम पढ़ लिख सकती थी केवल नाम लिखना

जानती थी मगर अपनी माँ के अक्षर अच्छी तरह पहिचानती थी क्योंकि वही मुझे पढ़ना लिखना सिखाती थी। अस्तु चीठी खोल कर मैंने अन्ना को पढ़ने के लिये कहा और अन्ना ने पढ़ कर मुझे सुनाया, उसमें यह लिखा हुआ था:—

"मेरी प्यारी बेटी इन्दिरा !

जितना मैं तुझे प्यार करती थी निःसन्देह तू भी मुझे उतना ही चाहती थी, मगर अफसोस विधाता ने हम दोनों को जुदा कर दिया और मुझे तेरी भोली भाली सूरत देखने के लिए तरसना पड़ा, परन्तु कोई चिन्ता नहीं, यद्यपि मेरी तरह तू भी दुःख भोग रही है मगर तू चाहेगी तो मैं कैद से छूट जाऊँगी और साथ ही इसके तू भी कैदखाने से बाहर हो कर मुझसे मिलेगी। अब मेरा और तेरा दोनों को कैद से छूटना तेरे ही साथ है और छूटने की तर्कीब केवल यही है कि दारोगा साहब जो कुछ मुझे कहें उसे बेखटके कर दे।

अगर ऐसा करने से इन्कार करेगी तो मेरी और तेरी दोनों ही की जान मुफ्त में जायगी।

तेरी प्यारी माँ

सयूँ।"

दूसरा बयान

अब हम रोहतासगढ़ किले के तहखाने में दुश्मनों से घिरे हुए राजा बीरेन्द्र सिंह वगैरह का कुछ हाल लिखते हैं।

जिस समय राजा बीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह इत्यादि ने तहखाने के ऊपरी हिस्से से आई हुई यह आवाज सुनी कि—"होशियार होशियार, देखो यह चाण्डाल बेचारी किशोरी को पकड़े लिये जाता है !" इत्यादि—तो सभों की तबीयत बहुत ही बेचैन हुई और राजा बीरेन्द्रसिंह तेजसिंह इन्द्रदेव और देवीसिंह वगैरह घबड़ा कर चारो तरफ देखने और सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिये।

कमलिनी हाथ में तिलिस्मी खंजर लिये हुए कैदखाने वाले दर्वाजे के बीच ही में खड़ी थी। उसने इन्द्रदेव से कहा, "मुझे भी कोठड़ी के अन्दर पहुँचाइये जिसमें किशोरी को रक्खा है, फिर मैं उसे छुड़ा लूंगी।"

इन्द्रदेव० । बेशक उसी कोठड़ी के अन्दर तुम्हारे जाने से किशोरी को मदद पहुँचेगी मगर किसी ऐयार को भी अपने साथ लेती जाओ ।

देवीसिंह० । मुझे साथ जाने के लिये कहिये ।

इन्द्रदेव० । (बीरेन्द्रसिंह से) आप देवीसिंहजी को साथ जाने की आज्ञा दीजिये ।

बीरें० । (देवीसिंह से) जाओ ।

तेज० । नहीं, कमलिनी के साथ मैं खुद जाऊँगा क्योंकि मेरे पास भी राजा गोपालसिंह का दिया हुआ तिलिस्मी खंजर है ।

इन्द्रदेव० । राजा गोपालसिंह ने आपको तिलिस्मी खंजर कब दिया ?

तेज० । कमलिनी की सहायता से मैंने उन्हें मायारानी की कैद से छुड़ाया था तब उन्होंने उसी तिलिस्मी बाग के चौथे दर्जे में से एक तिलिस्मी खंजर निकाल कर मुझे दिया था जिसे मैं बड़ी हिफाजत से रखता हूँ । कमलिनी के साथ देवीसिंह के जाने से कोई फायदा न होगा क्योंकि जब कमलिनी तिलिस्मी खञ्जर से काम लेगी तो उसकी चमक से और लोगों की तरह देवीसिंह की आँखें भी बन्द हो जायँगी.....

इन्द्रदेव० । (बात काट कर) ठीक है ठीक है, मैं समझ गया, अच्छा तो आप ही जाइये देर न कीजिये ।

इतना कह कर इन्द्रदेव बड़ी फुर्ती से कैदखाने के अन्दर चले गये और उस कोठड़ी का दर्वाजा जिसमें किशोरी कामिनी लक्ष्मीदेवी लाडिली और कमला को रख दिया था पुनः उसी ढंग से खोला जैसे पहिले खोला था । दर्वाजा खुलने के साथ ही तेजसिंह को साथ लिये हुए कमलिनी उस कोठड़ी के अन्दर घुस गई और वहाँ कामिनी लक्ष्मीदेवी लाडिली और कमला को मौजूद पाया मगर किशोरी का पता न था । कमलिनी ने उन औरतों को तुरन्त कोठड़ी के बाहर निकल कर राजा बीरेन्द्रसिंह के पास चले जाने के लिये कहा और दूसरे काम का उद्योग करने लगी । इन्द्रदेव ने जंजीर छोड़ दी और कोठड़ी का दर्वाजा बन्द हो गया । कमलिनी ने अपने तिलिस्मी खंजर की रोशनी की और चारो तरफ गौर से देखा । बगल वाली दीवार में एक छोटा सा दर्वाजा खुला हुआ दिखाई दिया जिसमें ऊपर के हिस्से में जाने के लिये सीढ़ियाँ थीं । दोनों उस दर्वाजे के अन्दर चले गये

और सीढ़ियाँ चढ़ कर छत के ऊपर जा पहुँचे अब तेजसिंह को मालूम हुआ कि इसी जगह से उस गुप्त मनुष्य के बोलने की आवाज आ रही थी।

इस ऊपर वाले हिस्से की छत बहुत लम्बी चौड़ी थी और यहाँ कई बड़े बड़े दालान और उन दालानों में से कई तरफ निकल जाने के रास्ते थे। तेजसिंह और कमलिनी ने देखा कि वहाँ पर बहुत लाशें पड़ी हुई हैं जिसमें से शायद ही दो चार में दम हो, और जमीन भी वहाँ की खून से तरबतर हो रही थी। अपने पैर को खून और लाशों से बचाकर किसी तरफ निकल जाना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव था, अस्तु कमलिनी ने इस बात का कुछ भी खयाल न किया और लाशों पर पैर रखती हुई बराबर चली गईं। आखिर एक दालान में पहुँची जिसमें से दूसरी तरफ निकल जाने के लिए एक खुला हुआ दर्वाजा था। दर्वाजे के उस पार पैर रखते ही दोनों की निगाह कृष्णाजिन्न पर पड़ी जिसे दुश्मन चारो तरफ से घेरे हुए थे और वह तिलिस्मी तलवार से सभों को काट काट कर गिरा रहा था। यद्यपि वह तिलिस्मी फौलादी जाल की पोशाक पहिरे हुए था और इस सबब से उसके ऊपर दुश्मनों की तलवार कुछ काम नहीं करती थी तथापि ध्यान देने से मालूम होता था कि तलवार चलाते चलाते उसका हाथ थक गया है और थोड़ी ही देर में हर्बा चलाने या लड़ने लायक न रहेगा। इतना होने पर भी दुश्मनों को उस पर फतह पाने की आशा न थी और वे उसका मुकाबला करने से डरते थे इसलिये जिस समय कमलिनी और तेजसिंह तिलिस्मी खञ्जर चमकाते हुए उसके पास जा पहुँचे उस समय दुश्मनों का जी बिल्कुल ही टूट गया और वे तलवारें जमीन पर फेंक फेंक "शरण, शरणागत।" इत्यादि पुकारने लगे।

अगर दुश्मनों को यहाँ से निकल जाने का रास्ता मालूम होता और वे लोग भाग कर अपनी जान बचा सकते तो कृष्णाजिन्न का मुकाबिला कदापि न करते। जब उन्होंने देखा कि हमलोग रास्ता न जानने के कारण भाग कर जा ही नहीं सकते तब लाचार होकर मरने मारने के लिये तैयार हो गये, मगर कृष्णाजिन्न ने भी उन लोगों को अच्छी तरह यमलोक का रास्ता दिखाया क्योंकि उसके हाथ में तिलिस्मी तलवार थी। जब तेजसिंह और कमलिनी भी तिलिस्मी खञ्जर चमकाते हुए वहाँ पहुँच गये तब दुश्मनों ने एक दम तलवारें हाथ से फेंक दी और "त्राहि

त्राहि शरण शरण" पुकारने लगे। उस समय कृष्णाजिन्न ने भी हाथ रोक लिया और तेजसिंह तथा कमलिनी की तरफ देखकर कहा, "बहुत अच्छा हुआ जो आप लोग आ गये!"

तेज०। मालूम होता है कि दुश्मनों के आने से आप ही ने हम लोगों को सचेत किया था?

कृष्णा०। हाँ वह आवाज मेरी ही थी और मुझी से आप लोग बातचीत कर रहे थे।

तेज०। तो क्या आप ही ने यह भी कहा था कि कोई शैतान बेचारी किशोरी को पकड़े लिए जाता है?

कृष्णा०। हाँ यह भी मैं ही ने कहा था, किशोरी को ले जाने वाला स्वयम् उसका बाप शिवदत्त था और वह मेरे हाथ से मारा गया।

कृष्णाजिन्न और भी कुछ कहा चाहता था कि कोई आवाज उसके तथा कमलिनी और तेजसिंह के कानों में पड़ी। आवाज यह थी—"हरी! हरी!! तुम लोग भागो और हमारे पीछे पीछे चले आओ! घन्नूसिंह की मदद से हमलोग निकल जायँगे!" इस आवाज को सुन कर वे लोग भी पीछे की तरफ भाग गये जिन्होंने कृष्णाजिन्न और तेजसिंह के आगे तलवारें फेंक दी थी मगर कृष्णाजिन्न और तेजसिंह ने उन लोगों को रोकना या मारना उचित न जाना और चुपचाप खड़े रह कर भागने वालों का तमाशा देखते रहे। थोड़ी ही देर में उनके सामने की जमीन दुश्मनों से खाली हो गई और सामने आती हुई मनोरमा दिखाई पड़ी। मनोरमा को देखते ही कमलिनी तिलिस्मी खञ्जर उठा कर उसकी तरफ झपटी और उस पर वार किया ही चाहती थी कि मनोरमा ने कुछ पीछे हट कर कहा, "हैं हैं, श्यामा! जरा देख समझ के!!"

मनोरमा की बात और श्यामा* का शब्द सुन कर कमलिनी रुक गई और बड़े गौर से मनोरमा का मुँह देखने बाद बोली, "तू कौन है?"

मनोरमा०। बीरूसिंह।

कमलिनी०। निशान?

मनोरमा०। चन्द्रकला।

---

* श्यामा कमलिनी का असली नाम था मगर लोगों में वह कमलिनी के नाम से प्रसिद्ध हो गई और हमारा बनावटी नाम भी एक प्रकार से ठीक हो निकला।

कमलिनी०। तुम अकेले ही हो या और भी कोई है ?

बीरू०। शिवदत्त के सिपाही धन्नूसिंह की सूरत बने हुए मेरे गुरू सर्यूसिंह भी आए हैं। उन्हीं ही ने दुश्मनों को बाहर निकलने का रास्ता बताया है। इस तहखाने के जितने दर्वाजे कल्याणसिंह ने बन्द किए थे वे सब भी गुरूजी ने खोल दिये क्योंकि उनके सामने ही कल्याणसिंह ने सब दर्वाजे बन्द किये थे और उन्होंने उसकी तर्कीब देख ली थी।

कृष्णाजिन्न०। शाबाश ! (कमलिनी से) अच्छा इन लोगों का किस्सा दूसरे समय सुनना, इस समय तुम किशोरी को लेकर राजा बीरेन्द्रसिंह के पास चली जाओ जिसे मैंने शिवदत्त के पंजे से छुड़ाया है और जो (हाथ का इशारा करके) उस तरफ जमीन पर बदहवास पड़ी है, बस अब इस काम में देर मत करो, मैं यहाँ से पुकार कर कह देता हूँ, जिस राह से तुम आई हो उस कोठरी का दर्वाजा इन्द्रदेव खोल देंगे, और तेजसिंह और बीरूसिंह को मैं थोड़ी देर के लिए अपने साथ लिये जाता हूँ, वे लोग किले में तुम लोगों के पास आ जायँगे।

कमलिनी०। क्या आप राजा बीन्द्रसिंह के पास न चलेंगे ?

कृष्णा०। नहीं।

कमलिनी०। क्यों ?

कृष्णा०। हमारी खुशी ! राजा बीरेन्द्रसिंह से कह दीजियो कि सभों को लिए हुए इसी समय तहखाने के बाहर चले जायं।

इतना कह कर कृष्णाजिन्न उस जगह कमलिनी को ले गया जहाँ बेचारी किशोरी बदहवास पड़ी हुई थी। दुश्मन लोग सब के सब भाग गये थे, सिवाय जख्मियों और मुर्दों के वहाँ पर कोई भी मुकाबला करने वाला न था, केवल दुश्मनों के हाथों से गिरी हुई मशालें इधर उधर पड़ी हुई कुछ बल रही थीं और कुछ ठंढी हो गई थीं। बेचारी किशोरी बिल्कुल बदहवास पड़ी हुई थी मगर तेजसिंह की तर्कीब से वह बहुत जल्द होश में लाई गई और कमलिनी उसे साथ लेकर राजा बीरेन्द्रसिंह के पास चली गई। कृष्णाजिन्न ने उसी सूराख में से इन्द्रदेव को दर्वाजा खोलने के लिए आवाज दे दी और तेजसिंह तथा बीरूसिंह को लिये हुए दूसरी तरफ का रास्ता लिया।

किशोरी को साथ लिए हुए थोड़ी ही देर में कमलिनी राजा बीरेंद्रसिंह के

इन्द्रदेव की आज्ञा पा कर सर्यूसिंह ने अपना और भूतनाथ का हाल बयान किया। मनोरमा और घन्नूसिंह का हाल सुन कर सब कोई हँसने लगे, इसके बाद भूतनाथ ने मनोरमा को अपने लड़के नानक के साथ अपने घर भेज कर शेरअलीखाँ के पास आना, कल्याणसिंह और उसके आदमियों का मुकाबला करना फिर शेरअलीखाँ को अपने साथ ले कर सुरंग के मुहाने पर जा कर बैठना और दुश्मनों का सत्यानाश करना इत्यादि बयान किया। इसके बाद तेजसिंह ने एक चीठी राजा बीरेन्द्रसिंह के हाथ में दी और कहा, "कृष्णजिन्न ने यह चीठी आप को दी है।"

राजा बीरेन्द्रसिंह ने चीठी ले ली और मन ही मन पढ़ जाने के बाद इन्द्रदेव के हाथ में दे कर कहा—"आप इसे जोर से पढ़ जायँ जिसमें सब कोई सुन लें।" इन्द्रदेव ने चीठी पढ़ कर सभों को सुनाई। उसका मतलब यह था :—

"इत्तफाक से आज मैं इस तहखानेमें पहुँच गया और किशोरी की जान बच गई। सर्यूसिंह और भूतनाथ ने निःसन्देह बड़ी मदद की, सच तो यों है कि आज उन्हीं की बदौलत दुश्मनों ने नीचा देखा, मगर भूतनाथने एक काम बड़ी बेवकूफी का किया, अर्थात् मनोरमा को नानक के हाथ में दे दिया और उसे घर ले जा कर असली बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिये कहा। यह भूतनाथ की बड़ी भूल है कि वह नानक को किसी काम के लायक समझता है यद्यपि नानक के हाथ से आज तक कोई काम ऐसा न निकला जिसकी तारीफ की जाय। वह निरा बेवकूफ और गदहा है, कोई नाजुक काम उसके हाथ में देना भारी भूल है, मनोरमा का उसके हाथ में देकर भूतनाथ ने बुरा किया। नानक कमीने को मालिक के काम का तो कुछ खयाल न रहा और मनोरमा के साथ शादी की धुन सवार हो गई, जिसका नतीजा यह निकला कि मनोरमा ने नानक को खूब जूतियाँ लगाईं और तिलिस्मी खंजर भी ले लिया, मैं बहुत खुश होता यदि मनोरमा नानक के नाक कान भी काट लेती। मैं आपको और आपके ऐयारों को होशियार करता हूँ और कहे देता हूँ कि औरत के गुलाम नानक बेईमान पर कोई भी कभी भरोसा न करे। आप जरूर अपने एक ऐयार को नानक के घर तहकीकात करने के लिये भेजें तब आपको नानक और नानक के घर की हालत मालूम होगी, अस्तु। अब आपका रोहतासगढ़ में रहना ठीक नहीं है, आप कैदियों को और किशोरी

कामिनी कमलिनी और लक्ष्मीदेवी इत्यादि सभी को साथ ले कर चुनार चले जायं। मैं यह बात इस खयाल से नहीं कहता कि यहाँ आपको दुश्मनों का डर है, नहीं नहीं, औवल तो अब आपका कोई ऐसा दुश्मन ही नहीं रहा जो रोहतास-गढ़ तहखाने का रत्ती बराबर भी हाल जानता हो, दूसरे इस तहखाने के कुल दर्वाजे जो (दीवारखाने वाले एक सदर दर्वाजे को छोड़ कर) गिनती मे ग्यारह थे मैंने अच्छी तरह बन्द कर दिये और उनका हाल तेजसिंह को बता दिया, मैं समझता हूँ इससे ज्यादे रास्ते तहखाने में आने जाने के लिए नहीं हैं, इतने रास्तों का हाल यहाँ का राजा दिग्विजयसिंह भी न जानता होगा, हाँ कमलिनी जरूर जानती होगी क्योंकि वह 'रिक्तगंथ' पढ़ चुकी है। यदि आप इस तहखाने की सैर किया चाहते हैं तो इस इरादे को अभी रोक दीजिये, कुँअर इन्द्रजीतसिंह आनंदसिंह के आने पर यह काम कीजियेगा, क्योंकि यहाँ का सबसे ज्यादे हाल उन्हीं दोनों भाइयों को मालूम होगा, हाँ बलभद्रसिंह का पता लगाने का उद्योग करना चाहिये और यहाँ तहखाने की भी अच्छी तरह सफाई हो जानी चाहिये जिसमें एक मुर्दा भी इसके अंदर न रह जाय। यदि इन्द्रदेव चाहें तो नकली बलभद्रसिंह को आप इन्द्रदेव के हवाले कर दीजियेगा और असली बलभद्रसिंह तथा इन्दिरा के पता लगाने का बोझ इन्द्रदेव ही के ऊपर डालियेगा। भूतनाथ को भी चाहिये कि इन्द्रदेव के साथ रह कर अपनी खैरखाही दिखावे और पुरानी कालिख अपने चेहरे से अच्छी तरह धो डाले नहीं तो उसके हक में अच्छा न होगा, और आप अपने एक ऐयार को जरूर हरामखोर नानक की तरफ रवाना कीजिये। मैं आपका ध्यान पुनः मनोरमा की तरफ दिलाता हूँ और कहता हूँ कि तिलिस्मी खंजर का उसके हाथ लग जाना बहुत ही बुरा हुआ। मनोरमा साधारण औरत नहीं है, उसकी तारीफ आप सुन ही चुके होंग, अब वह तिलिस्मी खंजर पा कर जो न कर डाले वही आश्चर्य है। उसके कब्जे से खंजर निकालने का शीघ्र उद्योग कीजिये और इस काम को सबसे ज्यादे जरूरी समझिये। इसके अतिरिक्त तेजसिंहजी की जुबानी जो कुछ मैंने कहला भेजा है, उस पर भी ध्यान दीजियेगा।"

इस चीठी को सुन कर सभों को ताज्जुब हुआ। राजा बीरेन्द्रसिंह ने इन्द्रदेव के हाथ से चीठी ले कर तेजसिंह को दे दी और बोले कि सब काम इसी के

मुताबिक होना चाहिये, इसके बाद एक एक के चेहरे को गौर से देखने लगे। भूतनाथ का चेहरा मारे क्रोध के लाल हो रहा था, नानक की अवस्था और नालायकी पर उसे बड़ा ही रंज हुआ था। लक्ष्मीदेवी के चेहरे पर हद्द से ज्यादे उदासी छाई थी, बाप की फिक्र के साथ ही साथ उसे इस बात का बड़ा ही रंज और ताज्जुब था कि राजा गोपालसिंह ने सब हाल सुन कर भी उसकी कुछ खबर न ली, न तो मिलने के लिये आये और न कोई चिट्ठी भेजी। वह हजार सोचती और गौर करती थी मगर इसका सबब कुछ भी उसके ध्यान में न आता था और न उसका दिल इस बात को ही कबूल करता था कि राजा गोपालसिंह उसे इसी अवस्था में छोड़ देंगे। ज्यादे ताज्जुब तो उसे इस बात का था कि राजा गोपालसिंह ने मायारानी के बारे में भी कोई हुक्म नहीं लगाया जिसकी बदौलत वह हद से ज्यादे तकलीफ उठा चुके थे। अब इस खयाल ने उसे और भी सताना शुरू किया कि हम लोगों को चुनार जाना होगा जहाँ गोपालसिंह का पहुँचना और भी कठिन है, इत्यादि तरह तरह की बातें वह सोच रही थी और न रुकने वाले आँसुओं को रोकने में जी जान से उद्योग कर रही थी। कमलिनी का चेहरा भी उदास था, राजा गोपालसिंह के विषय में वह भी तरह तरह की बातें सोच रही थी और उनसे तथा नानक से स्वयम् मिला चाहती थी मगर राजा बीरेन्द्रसिंह की मर्जी के खिलाफ कुछ करना भी उचित नहीं समझती थी।

राजा बीरेन्द्रसिंह ने इन्द्रदेव की तरफ देख कर कहा, "आप क्या सोच रहे हैं। कृष्णाजिन्न पर मुझे बहुत बड़ा विश्वास है और उसने जो कुछ लिखा है, मैं उसे करने के लिये तैयार हूँ।"

इन्द्रदेव०। आप मालिक हैं, आपको हर तरह पर अख्तियार है, जो चाहे करें और मुझे भी जो आज्ञा दें करने के लिये तैयार हूँ। कृष्णाजिन्न की तो मैंने सूरत भी नहीं देखी है इस लिये उसके विषय में कुछ भी नहीं कह सकता, मुझे अफसोस इस बात का है कि मैं यहाँ आ कर कुछ भी न कर सका, और न तो बलभद्रसिंह ही का पता लगा न इन्दिरा के विषय में कुछ मालूम हुआ।

बीरेन्द्र०। नकली बलभद्रसिंह जब तुम्हारे कब्जे में आ जायगा तो मैं उम्मीद करता हूँ कि तुम उन दोनों ही का पता लगा सकोगे और कृष्णाजिन्न के लिखे मुताबिक मैं नकली बलभद्रसिंह को तुम्हारे हवाले करने के लिये तैयार हूँ।

मैं तुम पर बहुत विश्वास रखता हूँ और तुम्हें अपना ही समझता हूँ। अगर कृष्णाजिन्न ने न भी लिखा होता और तुम नकली बलभद्रसिंह को माँगते तो मैं तुम्हें दे देता, अब भी अगर तुम मायारानी या दारोगा को लिया चाहो तो मैं देने को तैयार हूँ, केवल इतना ही नहीं इसके अतिरिक्त तुम अगर और भी कोई बात कहो तो मैं करने के लिये तैयार हूँ।

राजा बीरेन्द्रसिंह की बातें सुन कर इन्द्रदेव उठ कर खड़ा हुआ और झुक कर सलाम करने के बाद हाथ जोड़ कर बोला, "मैं यह जान कर बहुत ही प्रसन्न हुआ कि महाराज मुझ पर विश्वास रखते हैं और नकली बलभद्रसिंह को मेरे हवाले करने के लिये तैयार हैं तथा और भी जिसे मैं चाहूँ ले जाने की दरखास्त कर सकता हूँ। यदि महाराज की मुझ पर इतनी ही कृपा है तो मैं कह सकता हूँ कि सिवाय नकली बलभद्रसिंह के और किसी कैदी को मैं ले जाना नहीं चाहता मगर लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली को अपने साथ ले जाने की प्रार्थना करता हूँ। मैं अपनी धर्म की प्यारी लड़की लक्ष्मीदेवी पर बहुत स्नेह रखता हूँ और अभी बहुत कुछ उसके हाथ से.....(रुक कर) हाँ तो यदि महाराज मुझ पर विश्वास कर सकते हैं तो इन लोगों को और उस कलमदान को भी मुझे दे दें जिस पर 'इन्दिरा' लिखा हुआ है। भूतनाथ के कागजात अपने साथ लेते जायँ मैं असली बलभद्रसिंह का पता लगा कर सेवा में उपस्थित होऊँगा और उस समय अपने सामने भूतनाथ का मुकदमा फैसल कराऊँगा। आप भूतनाथ को आज्ञा दें कि कृष्णाजिन्न ने उसके विषय में जो कुछ लिखा है, उसे नेकनीयती के साथ पूरा करे।"

इन्द्रदेव की बात सुन कर राजा बीरेन्द्रसिंह गौर में पड़ गये। वे लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली को अपने साथ चुनार ले जाया चाहते थे और कृष्णाजिन्न ने भी ऐसा ही करने को लिखा था मगर इन्द्रदेव की अर्जी भी नामंजूर नहीं कर सकते थे क्योंकि इन्द्रदेव का लक्ष्मीदेवी पर हक था और उसी ने लक्ष्मीदेवी की रक्षा की थी, कमलिनी और लाडिली पर राजा बीरेन्द्रसिंह का कोई अधिकार न था क्योंकि वे बिल्कुल स्वतंत्र थीं। बीरेन्द्रसिंह ने कुछ देर तक गौर करने बाद इन्द्रदेव से कहा, "मुझे कुछ उज्र नहीं है। लक्ष्मीदेवी कमलिनी और

लाडिली यदि आपके साथ रहने में प्रसन्न हैं तो आप उन्हें ले जायँ, और वह कलमदान भी आपको मिल जायगा।"

इन्द्रदेव और राजा बीरेन्द्रसिंह की बातें सुन कर लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली बहुत प्रसन्न हुईं और हाथ जोड़ कर राजा बीरेन्द्रसिंह से बोलीं, "हम लोग अपने धर्म के पिता इन्द्रदेव के घर जाने में बहुत प्रसन्न हैं, वहाँ हमें अपने बाप का पता लगने का हाल भी बहुत जल्द मिलेगा।"

बीरेंद्र०। बहुत अच्छा। (तेजसिंह से) वह कलमदान इन्द्रदेव को दे दो और इन लोगों के तथा नकली बलभद्रसिंह के जाने का बंदोबस्त करो, हम भी आज ही चुनारगढ़ की तरफ कूच करेंगे। भैरोसिंह को मनोरमा की गिरफ्तारी के लिए रवाना करो और तारासिंह को नानक के घर भेजो। (देवीसिंह की तरफ देख के) एक बहुत ही नाजुक काम तुम्हारे सपुर्द करने की इच्छा है जो तुम्हारे कान में कहेंगे।

देवी०। जो आज्ञा।

देवीसिंह राजा बीरेन्द्रसिंह के पास चले गये और उनकी तरफ सिर झुका दिया। बीरेन्द्रसिंह ने देवीसिंह के कान में कहा, "लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली की निगहबानी तुम्हारे जिम्मे, मगर गुप्त!"

देवीसिंह सलाम करके पीछे हट गये और दर्बार ख़ास्त किया गया।

तीसरा बयान

शेरअलीखाँ बड़ी इज्जत और आबरू के साथ घर भेजे गये, उसके सेनापति महबूबखाँ को कैद से छुट्टी मिली, भैरोसिंह मनोरमा की फिक्र में गये, तारासिंह नानक के घर चले, और कुछ फौजी सिपाहियों के साथ नकली बलभद्रसिंह लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली को लिए हुए इन्द्रदेव ने अपने गुप्त स्थान की तरफ प्रस्थान किया। भूतनाथ बातें करता हुआ उन्हीं के साथ चल पड़ा और थोड़ी दूर जाने के बाद आज्ञा लेकर अपने अड्डे की तरफ रवाना हुआ जो बराबर की पहाड़ी पर था और देवीसिंह ने न मालूम किधर का रास्ता लिया। राजा बीरेंद्रसिंह की सवारी भी उसी दिन चुनारगढ़ की तरफ चली और तेजसिंह राजा साहब के साथ गये।

हम सब के पहिले तारासिंह के साथ चल कर नानक के घर पहुंचते हैं और

उसकी जगत्प्रिय स्त्री की अवस्था पर ध्यान देते हैं। इसमें कोई शक नहीं कि लड़कपन में नानक उत्साही था और उसे नाम पैदा करने की बड़ी लालसा थी परन्तु रामभोली के प्रेम ने उसका ख्याल कुछ बदल दिया और उसमें खुदगर्जी का हिस्सा कुछ ज्यादे हो गया, आखिर में जब उसने श्यामा नामी एक स्त्री से शादी कर ली, जिसका जिक्र कई दफे लिखा जा चुका है, तब से तो उसकी बुद्धि बिलकुल ही भ्रष्ट हो गई। नानक की स्त्री श्यामा बड़ी ही चतुर लालची और कुलटा थी मगर नानक उसे पतिव्रता और साध्वी जान कर साक्षात् माताके समान ही उसकी इज्जत करता था। नानक के नातेदारों और दोस्तों की आमदरफ्त उसके घर में विशेष थी। श्यामा को रुपये पैसे की कमी न थी और वह अपनी दौलत जमीन के अंदर गाड़ कर रक्खा करती थी जिसका हाल एक नौजवान खिदमतगार के जिसका नाम हनुमान था और कोई भी नहीं जानता था। हनुमान यद्यपि नानक का नौकर था परंतु इस सबब से कि उसकी माँ कुछ दिनों तक भूतनाथ की खिदमत में रह चुकी थी वह अपने को नौकर नहीं समझता था बल्कि घर का मालिक समझता था। नानक की स्त्री उसे बहुत चाहती थी, यहाँ तक कि एक दिन उसने अपने मुँह से उसे अपना देवर स्वीकार किया था, इस सबब से वह और भी सिर चढ़ गया था। नानक के यहाँ एक मजदूरनी भी थी, वह नानक के काम की चाहे न हो मगर उसकी स्त्री के लिए उपयोगी पात्र थी और उसके द्वारा नानक की स्त्री का बहुत काम निकलता था।

तारासिंह अपने दो चेलों को साथ लिये हुए रोहतासगढ़ से रवाना हो कर तीसरे ही दिन भेष बदले हुए नानक के घर पहुँचा। ठीक दो पहर का समय था और नानक अपने किसी दोस्त के यहाँ गया हुआ था, मगर उसका प्यारा खिदमतगार हनुमान दर्वाजे पर बैठा अपने पड़ोसी साईसों और कोचवानों के साथ गप्पें लड़ा रहा था। तारासिंह थोड़ी देर तक इधर उधर टहलता और टोह लेता रहा। जब उसे मालूम हो गया कि हनुमान नानक का प्यारा नौकर है और उम्र में भी अपने से बड़ा नहीं है तो वहाँ से लौटा और कुछ दूर जाकर किसी सुनसान अँधेरी गली में एक मकान किराये लेने का बन्दोबस्त करने लगा। सन्ध्या होने के पहिले ही उसे इस काम से भी निश्चिन्ती हो गई अर्थात् उसने एक बहुत बड़ा मकान किराये पर ले लिया जो मुद्दत से खाली पड़ा हुआ था क्योंकि लोग उसमें भूत

प्रेतों का बासा समझते थे और कोई उसमें रहना पसन्द नहीं करता था। उसमें जाने के लिए तीन रास्ते थे और उसके अंदर कई कोठरियाँ ऐसी थीं कि यदि उनमें किसी को बन्द कर दिया जाय तो हजार चिल्लाने और उधम मचाने पर भी किसी बाहर वाले को खबर न हो। तारासिंह ने उसी मकान में डेरा जमाया और बाजार जाकर दो ही घण्टे में वे सब चीजें खरीद लाया जिनकी उसने जरूरत समझी या जो एक अमीराना ढंग से रहने वाले आदमी के लिए आवश्यक थीं। इस काम से भी छुट्टी पाकर उसने मोमबत्ती जलाई और आईना तथा ऐयारी का बटुआ सामने रख कर अपनी सूरत बदलने का उद्योग करने लगा तथा शीघ्र ही एक खूबसूरत नौजवान अमीर की सूरत बनकर घर से बाहर निकला और मकान में एक चेले को छोड़कर नानक के घर की तरफ रवाना हुआ। दूसरा चेला जो तारासिंह के साथ था उसे बहुत सी बातें समझा कर दूसरे काम के लिए भेजा।

जब तारासिंह नानक के मकान पर पहुँचा तो उसने हनुमान को दर्वाजे पर बैठा पाया। इस समय हनुमान अकेला था और हुक्का पीने का बन्दोबस्त कर रहा था। उसके पास ही ताक (आला) पर एक चिराग जल रहा था जिसकी रोशनी चारो तरफ फैल रही थी। तारासिंह हनुमान के पास जाकर खड़ा हो गया। हनुमान ने बड़े गौर से उसकी सूरत देखी और रोब में आकर हुक्का छोड़ के खड़ा हो गया। उस समय चिराग की रोशनी में तारासिंह बड़े शान शौकत का आदमी मालूम पड़ता था। खूबसूरती बनाने की तारासिंह को कोई जरूरत न थी क्योंकि वह स्वयं खूबसूरत और नौजवान आदमी था परंतु रूप बदलने की नीयत से उसने अपने चेहरे पर रंग रोगन जरूर लगाया था जिससे इस समय वह और भी खूबसूरत और शौकीन जँच रहा था।

तारासिंह को देखते ही हनुमान उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़ कर बोला, "हुक्म !"

तारा०। हमारे साथ एक नौकर था, वह राह भूल कर न मालूम कहाँ चला गया, उम्मीद है कि वह हमको ढूँढ़ने के बाद सीधे घर पर चला जाय मगर इस समय प्यास के मारे हमारा गला सूखा जाता है।

हनु०। (एक छोटी सी चौकी की तरफ इशारा करके) सरकार इस चौकी पर बैठ जायँ, मैं अभी पानी लाता हूँ।

इतना सुन कर तारासिंह चौकी पर बैठ गया और हनुमान पानी लाने के लिए अंदर चला गया। थोड़ी देर में पानी का भरा हुआ एक लोटा और गिलास लिए हुए हनुमान बाहर आया और तारासिंह को पीने के लिए पानी गिलास में ढाल कर दिया, उसी समय तारासिंह ने दर्वाजे का पर्दा हिलते हुए देखा और यह भी मालूम किया कि कोई औरत भीतर से झाँक रही है। पानी पीने के बाद तारासिंह ने पाँच रुपये हनुमान के हाथ दिये और वहाँ से उठ कर दूसरी तरफ का रास्ता लिया।

हनुमान केवल एक गिलास पानी पिलाने के बदले में पाँच रुपये पाकर बड़ा ही प्रसन्न हुआ और दाता की अमीरी पर आश्चर्य करने लगा। उसे विश्वास हो गया कि यह जरूर कोई बड़ा भारी अमीर आदमी या कोई राजकुमार है और साथ ही इसके दिल का अमीर तथा जी खोल कर देने वाला है।

दूसरे दिन संध्या होने के पहिले ही हनुमान ने तारासिंह को अपने दर्वाजे के सामने से जाते देखा और उसके साथ एक नौकर को भी देखा जो बड़े शान के साथ कीमती कपड़े पहिरे और तलवार लगाये तारासिंह के पीछे पीछे जा रहा था। हनुमान ने उठ कर तारासिंह को बड़े अदब के साथ सलाम किया। तारासिंह ने अपने नौकर को जो वास्तव में उसका चेला था कुछ कह कर हनुमान के पास छोड़ा और आगे का रास्ता लिया।

तारासिंह के नौकर में और हनुमान में दो घण्टे तक खूब बातचीत हुई जिसे हम यहाँ लिखना नापसन्द करते हैं, हाँ इस बातचीत का जो कुछ नतीजा निकला वह अवश्य दिखाया जायगा क्योंकि नानक के घर की जाँच करने ही के लिये तारासिंह का आना इस शहर में हुआ था।

बहुत देर तक बातचीत करने के बाद तारासिंह का नौकर उठ खड़ा हुआ और हनुमान के हाथ में कुछ देकर घर का रास्ता लिया जहाँ तारासिंह उसके आने का इंतजार कर रहा था। जब तारासिंह ने अपने नौकर को देखा तो पूछा :—

तारा०। कहो क्या हुआ ?

नौकर०। सब ठीक है, वह तो आपको देख भी चुकी है।

तारा०। हाँ रात को जब मैं वहाँ पानी पी रहा था तो टाट का पर्दा हिलते हुए मैंने देखा था लेकिन और भी कुछ हाल चाल मालूम हुआ ?

नौकर० । जी हाँ बड़ी बड़ी बातें हुईं । वह तो पूरी खानगी है ! कल दोपहर के पहिले पहिले मैं आपको उन लोगों के नाम भी बताऊँगा जिनसे श्यामा का ताल्लुक है और उम्मीद है कि कल वह स्वयं बन ठन कर आपके पास आवे।

तारा० । ठीक है, तो क्या तुम्हें उसका नाम भी मालूम हो गया ?

नौकर० । जी हाँ उसका नाम श्यामा है और अपने पति अर्थात् नानक के लिए तो वह रूपगर्विता और गुणगर्विता नायिका है ।

तारा० । बड़े अफसोस की बात है ! निःसन्देह यह भूतनाथ के लिये बड़ा भारी कलंक है । उस औरत का पति इस योग्य नहीं कि हम लोग उसे अपने पास बैठावें या उसका छुआ पानी भी पीएँ । खैर अब तुम घर में बैठो मैं गश्त लगाने के लिये जाता हूं ।

दूसरे दिन दोपहर के समय तारासिंह का वही नौकर नानक के घर से तथा इधर उधर से घूम फिर कर तारासिंह के पास आया और बोला "आज श्यामा के कई प्रेमियों के नाम मैं लिख लाया हूँ ।"

तारा० । अच्छा बताओ तो सही शायद उन लोगों में से किसी को मैं जानता होऊँ या किसी का नाम कभी सुना हो।

नौकर० । श्यामा के एक प्रेमी का नाम "जलशायी बाबू" है ।

तारा० । (गौर करके) जलशायी बाबू को तो मैं जानता हूँ, वे तो बड़े नेक और बुद्धिमान हैं ।

नौकर० । जी हाँ वही लाँबे और गोरे से हैं, वह तरह तरह के कपड़े राजधानी से ला कर उसे दिया करते हैं, और दूसरे प्रेमी का नाम "त्रिभुवन नायक" है और उन्हें महत्व की पदवी भी है, और तीसरे प्रेमी का नाम मायाप्रसाद है जो राजा के कोषाध्यक्ष हैं, और चौथे प्रेमी का नाम "आनंदबन बिहारी" है और पाँचवें.....

तारा० । बस बस बस, मैं विशेष नाम सुनना पसन्द नहीं करता !

नौकर० । जो हुक्म (एक कागज दिखा कर) मैं तो पचासों नाम लिख लाया हूँ।

तारा० । ठीक है, तुम इस फिहरिस्त को अपने पास रक्खो, आवश्यकता पड़ने पर महाराज को दिखाया जायगा, हमारा काम तो उसके आज यहाँ आ जाने से ही निकल जायगा ।

नौकर० । जी हाँ आज वह यहाँ जरूर आवेगी, हनुमान मेरे साथ आ कर घर देख गया है ।

रात लगभग घंटे भर के जा चुकी है । नानक के घर में उसकी स्त्री शृँगार कर चुकी है और कपड़ा बदलने की तैयारी कर रही है । वह एक खुले हुए संदूक के पास खड़ी तरह तरह की साड़ियों पर नजर दौड़ा रही है और उनमें से एक साड़ी इस समय पहिरने के लिये चुना चाहती है । हाथ में चिराग लिये हुए हनुमान उसके पास खड़ा है ।

हनुमान० । मेरी प्यार भावज ! यह काली साड़ी बड़ी मजेदार है, बस इसी को निकाल लो और यह चोली भी अच्छी है ।

श्यामा० । नहीं यह साड़ी मुझे पसन्द नहीं ! तू घड़ी घड़ी मुझे भावज क्यों कहता है ?

हनुमान० । क्या तुम मेरी भावज नहीं हो ?

श्यामा० । भावज तो जरूर हूँ, यदि तू दूसरी माँ का बेटा होता तो हमारी आधी दौलत बटवा लेता और ऐसा न होने पर भी मै तुझे देवर समझती हूँ, मगर भावज पुकारने की आदत अच्छी नहीं अगर कोई सुन लेगा तो क्या कहेगा?

हनुमान० । यहाँ इस समय सुनने वाला कौन है ?

श्यामा० । इस समय यहाँ चाहे कोई न हो मगर पुकारने की आदत पड़ी रहने से कभी न कभी किसी के सामने.....

हनुमान० । नहीं नहीं, मैं ऐसा बेवकूफ नहीं हूँ, देखो इतने दिनों से मुझसे तुमसे गुप्त प्रेम है मगर आज तक किसी को मालूम न हुआ, अच्छा देखो यह साड़ी बड़ी बढ़िया है, इसको जरूर पहिनो ।

श्यामा० । अरे बाबा ! इस साड़ी को तो देखते ही मुझे क्रोध चढ़ आता है! उस दिन यह साड़ी पहिर कर मैं बिरादरी में उनके यहां गई थी, बस एक ने झट से टोक ही तो दिया, कहने लगी कि "यह साड़ी फलाने की दी हुई है !" इतना सुनते ही मैं लाल हो गई मगर कर क्या सकती थी क्योंकि बात सच थी, आखिर चुपचाप उठ कर अपने घर चली आई । मैं यह साड़ी कभी न पहिरूँगी ।

हनुमान० । अच्छा यह हरी साड़ी पहिरो ।

हनुमान० । लाओ चोली मैं पहिरा दूँ ।

श्यामा० । (हनुमान के गाल में चपत लगा कर) चल दूर हो ।

हनुमान० (चौंक कर) अरे हाँ ! देखो तो सही कैसी भूल हो गई !!

श्यामा० । (ताज्जुब से) सो क्या ?

हनुमान० । तुम्हें तो मर्दाना कपड़ा पहिर के चलना चाहिए ।

श्यामा० । हाँ चाहिये तो ऐसा ही मगर वहाँ क्या करूँगी ?

हनुमान० । यह साड़ी मैं बगल में दबा कर लिये चलता हूँ वहाँ पहिर लेना ।

श्यामा० । अच्छा यही सही ।

थोड़ी देर बाद मर्दाने कपड़े पहिरे और सर पर मुड़ासा बाँधे हुए श्यामा सड़क पर दिखाई देने लगी । आगे आगे उसका प्यारा नौकर हनुमान बगल में कपड़े की गठड़ी दबाए हुये जा रहा था । इस जगह से वह मकान बहुत दूर न था जिसमें तारासिंह ने डेरा डाला था इस लिये थोड़ी ही देर में वे दोनों उस मकान के पिछले दर्वाजे पर जा पहुँचे । दर्वाजा खुला हुआ था और तारासिंह का नौकर पहिले ही से दर्वाजे पर बैठा हुआ था, उसने को दोनों मकान के अन्दर करके दर्वाजा बन्द कर दिया ।

तारासिंह एक कोठड़ी के अंदर फर्श पर बैठा हुआ तरह तरह की बातें विचार रहा था जब उसके नौकर ने पहुँच कर श्यामा के आने की इत्तला की और कहा कि वह मर्दानी पोशाक पहिर कर यहाँ आ गई है और अब पूरब वाले कमरे में कपड़े बदल रही है ।

तारासिंह का नौकर (चेला) तो इतना कह कर चला गया मगर तारासिंह बड़े फेर में पड़ गया । वह सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिये ? उसकी चालचलन का पता तो पूरा पूरा लग गया मगर अब उसे क्योंकर यहाँ से टालना चाहिये । उसके साथ अधर्म करना तो उचित न होगा, हम लोग ऐसा काम कदापि नहीं कर सकते, मगर अफसोस ! वाह रे निर्लज्ज नानक ! क्या तुझे इन बातों की खबर न होगी ? जरूर होगी, तू इन सब बातों को जरूर जानता होगा मगर आमदनी का रास्ता खुला देख बेहयाई का नकाब डाले बैठा है । परन्तु भूतनाथ को इन बातों की खबर नहीं है, वह हयादार आदमी है, अपनी थोड़ी

सी भूल के लिये वह कैसे कैसे उद्योग कर रहा है और तेरी यह दशा, लानत है तेरी औकात पर और तुफ है तेरी शौकीनी पर !!"

तारासिंह इन सब बातों को सोच ही रहा था कि श्यामारानी मटकती हुई उसके पास आ पहुँची। तारासिंह ने बड़ी खातिर से उसे अपने पास बैठाया और उसके रूप गुण की प्रशंसा करने लगा।

श्यामारानी को बैठे अभी कुछ ही देर हुई थी कि कोठड़ी के बाहर से चिल्लाने की आवाज आई। यह आवाज नानक के प्यारे नौकर हनुमान की थी और साथ ही उसके किसी औरत के बोलने की भी आवाज आ रही थी।

पांचवां बयान

किशोरी कामिनी और कमला इत्यादि तथा और बहुत से आदमियों को लिए हुए राजा बीरेंद्रसिंह चुनारगढ़ की तरफ रवाना हुए। किशोरी और कामिनी की खिदमत के लिये साथ में एक सौ पन्द्रह लौंडियाँ थीं जिनमें से बीस लौंडियाँ तो उनमें से थीं जो राजा दिग्विजयसिंह की रानी के साथ रोहतासगढ़ में रहा करती थीं और रोहतासगढ़ फतह हो जाने के बाद राजा बीरेन्द्रसिंह की ताबेदारी स्वीकार कर चुकी थीं, बाकी लौंडियाँ नई रक्खी गई थीं। इसके अतिरिक्त रोहतासगढ़ से बहुत सी चीजें भी राजा बीरेन्द्रसिंह ने साथ ले ली थीं जिन्हें उन्होंने बेशकीमत और नायाब समझा था। रवाना होने के समय राजा साहब ने उन ऐयारों को भी अपने चुनारगढ़ जाने की इत्तला दिलवा दी थी जो राजगृही तथा गयाजी का इन्तजाम करने के लिये मुकर्रर किये गए थे।

जिस समय राजा बीरेन्द्रसिंह चुनारगढ़ की तरफ रवाना हुए रात घण्टे भर से कुछ ज्यादे बाकी थी और पाँच हजार फौज के अतिरिक्त चार पांच हजार दूसरे काम काज के आदमी भी साथ में थे। इसी भीड़ में मिली जुली साधारण लौंडी का भेष धारण किये मनोरमा भी जाने लगी। उसे अपना काम पूरा होने की पक्की उम्मीद थी और वह इस धुन में लगी हुई थी कि किशोरी और कामिनी की लौंडियों में से कोई लौंडी किसी तरह पीछे पड़ जाय तो काम चले।

पहर दिन चढ़े तक राजा बीरेन्द्रसिंह का लश्कर बराबर चला गया। जब

धूप कड़ी हुई तो एक हरे भरे जंगल में पड़ाव डाला गया जहाँ डेरे खेमे का इन्तजाम पहिले ही से हो चुका था। पड़ाव पड़ जाने के थोड़ी ही देर बाद डेरों खेमों से लदे हुए सैकड़ों ऊँट आगे की तरफ रवाना हुए जिनसे दूसरे दिन के पड़ाव का इन्तजाम होने वाला था। बाकी का दिन और तीन पहर रात तक यह जंगल गुलजार रहा और पहर रात रहते यहाँ से लश्कर कूच हुआ।

इसी तरह कूच दर कूच करते बीरेन्द्रसिंह का लश्कर चुनारगढ़ की तरफ रवाना हुआ। तीन दिन तक तो मनोरमा का काम कुछ भी न हुआ मगर चौथे दिन उसे अपना काम निकालने का मौका मिला जब किशोरी की एक लौंडी जिसका नाम दया था हाथ में लोटा लिये मैदान जाने की नीयत से पड़ाव के बाहर निकली। उस समय घड़ी भर रात जा चुकी थी और चारो तरफ अन्धकार छाया हुआ था। दया रोहतासगढ़ के राजा दिग्विजयसिंह की लौंडियों में से थी और किशोरी उसे मानती थी क्योंकि उस जमाने में जब किशोरी कैदियों की तरह रोहतासगढ़ में रहती थी दया ने उसकी खिदमत बड़ी हमदर्दी के साथ की थी।

दया को मैदान की तरफ जाते देख मनोरमा ने उसका पीछा किया, दबे पाँव उसके साथ साथ बराबर चली गई और जब जाना कि अब यह आगे न बढ़ेगी तो एक पेड़ की आड़ दे कर खड़ी हो गई। थोड़ी देर बाद जब दया जरूरी काम से छुट्टी पा कर लौटी तो मनोरमा बेधड़क उसके पास चली गई और फुर्ती के साथ तिलिस्मी खंजर उसके मोढ़े पर रख दिया। उसी दम दया काँपी और थरथरा कर जमीन पर गिर पड़ी। मनोरमा ने उसे घसीट कर एक झाड़ी के अन्दर डाल दिया और निश्चय कर लिया कि जब राजा बीरेनसिंह का लश्कर यहाँ से कूछ कर जायगा और दिन निकल आवेगा तब सुबीते से दया की सूरत बन कर दया को जान से मार डालूँगी और फिर तेजी के साथ चल कर लश्कर में जा मिलूँगी, आखिर ऐसा ही हुआ।

थोड़ी रात रहे राजा बीरेन्द्रसिंह का लश्कर वहाँ से कूच कर गया और जब पहर दिन चढ़े अगले पड़ाव पर पहुँचा तो किशोरी ने दया की खोज की मगर दया का पता क्यों कर लग सकता था! बहुत सी लौंडियाँ चारो तरफ फैल गईं और दया को ढूँढने लगीं। दोपहर होते होते तक दया लश्कर में पहुँची जो वास्तव

में मनोरमा थी। किशोरी ने पूछा, "दया! तू कहाँ रह गई थी? तेरी खोज में सब लौंडियाँ अभी तक परेशान हो रही हैं!"

नकली दया ने जवाब दिया, "जिस समय लश्कर कूच हुआ तो मेरे पेट में कुछ गड़बड़ाहट मालूम हुई। थोड़ी दूर तक तो मैं जी कड़ा कर चली गई, आखिर जब गड़बड़ाहट ज्यादे हुई और रास्ते में एक कूँआ भी नजर आया तो लोटा डोरी लेकर वहाँ ठहर गई। दो दफे तो टट्टी गई और तीन कै हुई, कै में बहुत खट्टा खट्टा पानी निकला। मैंने समझा कि बस अब किसी तरह लश्कर के साथ नहीं मिल सकती और यहाँ पड़ी पड़ी बहुत दुःख भोगूँगी मगर ईश्वर ने कुशल की, थोड़ी देर तक मैं उसी कूँए पर लेटी रही, आखिर मेरी तबीयत ठहर गई और मैं धीरे धीरे वहाँ से रवाना हुई और बड़ी मुश्किल से यहाँ तक पहुँची। कै में मुझे बड़ी तकलीफ हुई और मेरा गला भी बैठ गया।

किशोरी ने दया की अवस्था पर शोक प्रगट किया और उसको दया की बातों पर विश्वास हो गया। अब दया को किशोरी के साथ मेल जोल पैदा करने में किसी तरह का खटका न रहा और दो ही चार दिन में उसने किशोरी को अपने ऊपर बहुत ज्यादे मेहरबान बना लिया।

रोहतासगढ़ से चुनारगढ़ जाने के लिए यद्यपि भली चङ्गी सड़क बनी हुई थी मगर राजा बीरेन्द्रसिंह का लश्कर सीढ़ी सड़क छोड़ जंगल और मैदानों ही में पड़ाव डालता चला जाता था क्योंकि हजारों आदमियों को आराम जंगल और मैदान ही में मिल सकता था सड़क के किनारे किनारे उतनी ज्यादे जगह नहीं मिल सकती थी।

एक दिन जब राजा बीरेंद्रसिंह की लश्कर एक बहुत रमणीक और हरे भरे जंगल में पड़ाव डाले हुए था, सन्ध्या के समय राजा बीरेंद्रसिंह और तेजसिंह टहलते हुए अपने खेमे से कुछ दूर निकल गये और एक छोटे से टीले पर चढ़कर अस्त होते हुए सूर्य की शोभा देखने लगे। यकायक उनकी निगाह एक सवार पर पड़ी जो बड़ी तेजी के साथ घोड़ा दौड़ाता हुआ बीरेंद्रसिंह के लश्कर की तरफ आ रहा था, दोनों की निगाह उसी की तरफ डट गई और उसे बड़े गौर से देखने लगे। थोड़ी ही देर में वह सवार टीले के पास पहुँच गया और उस समय सवार की भी निगाह राजा बीरेंद्रसिंह और तेजसिंह पर पड़ी। सवार ने तुरत घोड़े का

मुँह फेर दिया और बात की बात में राजा बीरेंद्रसिंह के पास पहुँच कर घोड़े से नीचे उतर पड़ा। जिस टीले पर वे दोनों खड़े थे वह बहुत ऊँचा न था अतएव उस सवार ने नेजा गाड़ कर घोड़े की लगाम उसमें अटका दी और बेखौफ टीले के ऊपर चढ़ गया। उस सवार के हाथ में एक चीठी थी जो उसने सलाम करने के बाद राजा बीरेंद्रसिंह को दे दी।

राजा साहब ने चीठी खोलकर बड़े गौर से पढ़ी और तेजसिंह के हाथ में दे दी। तेजसिंह ने भी उसे पढ़ा और राजा साहब की तरफ देख कर कहा, "निःसन्देह ऐसा ही है!"

बीरे०। तुमने तो इस विषय में मुझसे कुछ भी नहीं कहा था!

तेज०। कुछ कहने की आवश्यकता न थी और अभी मैं इन बातों का निश्चय ही कर रहा था।

बीरे०। इस राय को तो मैं पसन्द करता हूँ।

तेजसिंह०। राय पसन्द करने ही योग्य है और इसका जवाब भी लिख देना चाहिये।

बीरे०। हाँ इसका जवाब लिख दो।

"बहुत अच्छा" कह कर तेजसिंह ने अपनी जेब से जस्ते की एक कलम निकाली और उसी चीठी की पीठ पर जवाब लिख कर बीरेंद्रसिंह को दिखाया, राजा साहब ने उसे पसन्द किया और चीठी उसी सवार के हाथ में दे दी गई। सवार सलाम करके टीले के नीचे उतर आया और घोड़े पर सवार हो कर उसी तरफ चला गया जिधर से आया था। सवार के चले जाने बाद राजा बीरेंद्रसिंह और तेजसिंह भी टीले से नीचे उतरे और किसी गुप्त विषय पर बातें करते हुए लश्कर की तरफ रवाना हुए तथा थोड़ी देर में अपने खेमे के अन्दर जा पहुँचे।

इस सफर में राजा बीरेन्द्रसिंह का कायदा था कि दिन रात में एक दफे किसी समय किशोरी और कामिनी के डेरे में जरूर जाते, थोड़ी देर बैठते और हर तरह से ऊंच नीच समझा बुझा कर तथा दिलासा देकर अपने डेरे में लौट आते। इसी तरह उन दोनों के पास दो दफे तेजसिंहके जाने का भी मामूल था।

जिस समय किशोरी और कामिनी के पास राजा साहब या तेजसिंह जाते, उस समय प्रायः सब लौंडियाँ अलग कर दी जातीं, केवल कमला उन दोनों के पास रह जाती थी। आज भी टीले पर से लौटने बाद थोड़ी देर दम लेकर राजा बीरेन्द्रसिंह किशोरी और कामिनी के खेमे में गये और दो घड़ी तक वहाँ बैठे रहे, कुल लौंडियाँ हटा दी गईं थीं केवल कमला मौजूद थी जो उन दोनों के दुःख सुख की साथी बन चुकी थी और थी।

दो घड़ी तक वहाँ ठहरने के बाद राजा साहब अपने खेमे में लौट आये और तेजसिंह के साथ बैठ कर तरह तरह की बातें करने लगे, जब रात ज्यादे चली गई तो राजा साहब ने चारपाई की शरण ली और तेजसिंह भी अपने खेमे में चले गये और खा पी कर सो रहे।

तेजसिंह को चारपाई पर गये आधे घण्टे भी न बीते थे कि चोबदार ने किशोरी की लौंडियों के आने की इत्तला की तेजसिंह तुरत उठ बैठे और उन लौंडियों को अपने पास हाजिर करने की आज्ञा दी। थोड़ी ही देर में वे लौंडियाँ तेजसिंह के सामने आईं जिनमें से एक वही दया थी जिसे वास्तव में मनोरमा कहना चाहिये।

तेज०। (लौंडियों से) इस समय तुम लोगों के आने से आश्चर्य मालूम होता है।

दया०। निःसन्देह आश्चर्य होता होगा परन्तु क्या किया जाय, किशोरीजी की आज्ञा से हम लोगों को आना पड़ा।

तेज०। क्या समाचार है?

दया०। किशोरीजी ने हमलोगों को आपके पास भेजा है और कहा है कि यहाँ से थोड़ी दूर पर कोई ऐसी इमारत है जिसके अन्दर तिलिस्म होने का शक है। जब मैं कैदियों की तरह रोहतासगढ़ में रहती थी तो यह बात राजा दिग्विजयसिंह की जुबानी सुनने में आई थी। यदि यह बात ठीक है तो आपकी कृपा से मैं उस इमारत को देखा चाहती हूँ।

तेज०। किशोरी का कहना तो ठीक है, निःसन्देह यहाँ से थोड़ी ही दूर पर एक इमारत है जिसमें तरह तरह की अद्भुत बातें देखने में आती हैं और मैं उस इमारत को देख भी चुका हूँ मगर एक साथ कई आदमियों का उस इमारत

के अन्दर जाना बहुत कठिन है। (कुछ सोच कर) अच्छा तुम लोग चलो मैं महाराज से वहाँ जाने की आज्ञा लेकर बहुत जल्द किशोरी के पास आता हूँ।

दया०। जो आज्ञा।

दोनों लौंडियाँ सलाम करके किशोरी के पास चली गईं और जो कुछ तेजसिंह ने उनसे कहा था वह किशोरी के सामने अर्ज किया। इस समय वहाँ किशोरी कामिनी और कमला एक साथ बैठी हुई थीं तथा और भी कई लौंडियाँ मौजूद थीं।

थोड़ी ही देर बाद तेजसिंह के आने की इत्तला मिली और कमला उनको लेने के लिये खेमे के बाहर गई। जब तेजसिंह खेमे के अन्दर आए तो उन्हें देख किशोरी और कामिनी उठ खड़ी हुईं और जब तेजसिंह बैठ गये तो अदब के साथ उनके सामने बैठ गईं।

तेज०। (किशोरी से) उस इमारत की याद यकायक कैसे आ गई?

किशोरी०। अकस्मात् उस इमारत की याद आ गई, कामिनी बहिन को भी उसके देखने का बहुत शौक है, मैंने सोचा कि ऐसा मौका फिर कहाँ को मिलेगा। वह इमारत रास्ते ही में पड़ती है, यदि आपका हुक्म होगा तो हम लोग उसे देख लेंगे।

तेज०। बात तो ठीक है और वह इमारत भी देखने योग्य है, मैं तुम्हें ले जा सकता हूँ और महाराज से आज्ञा भी ले आया हूँ मगर तुम अपने साथ किसी लौंडी को वहाँ न ले जा सकोगी।

किशोरी०। कामिनी बहिन और कमला का चलना तो आवश्यक है और ये दोनों न जायेंगी तो मुझे उसके देखने का आनन्द ही क्या मिलेगा।

तेज०। इन दोनों के लिये मैं मना नहीं करता, मैं रथ जोतने के लिये हुक्म दे आया हूँ अभी आता होगा, तुम तीनों उस रथ पर सवार हो जाओ, घोड़े की रास मैं ले लूँगा और तुम लोगों को वहाँ ले चलूँगा, सिवाय हम चार आदमियों के और कोई भी न जायगा।

किशोरी०। जब स्वयं आप हम लोगों के साथ हैं तो हमें और किसी की जरूरत क्या है?

तेज०। यदि इस समय हमलोग रथ पर सवार होकर रवाना होंगे तो घण्टे

भर के अन्दर ही वहाँ जा पहुँचेंगे, छः सात घण्टे में उस इमारत को अच्छी तरह देख लेंगे, इसके बाद यहाँ लौटने की कोई जरूरत नहीं है अगले पड़ाव की तरफ चले जायंगे, जब तक हमारा लश्कर यहाँ से कूच करके अगले पड़ाव पर पहुँचेगा तब तक हमलोग भी वहाँ पहुँच जायंगे।

किशोरी०। जैसी मर्जी।

थोड़ी ही देर बाद इत्तला मिली कि दो घोड़ों का रथ हाजिर है। तेजसिंह उठ खड़े हुए, पर्दे का इन्तजाम किया गया, किशोरी कामिनी और कमला उस पर सवार कराई गईं, तेजसिंह ने घोड़ों की रास सम्हाली और रथ तेजी के साथ वहाँ से रवाना हुआ।

छठवां बयान

रात बीत गई, पहर भर दिन चढ़ने के बाद राजा बीरेन्द्रसिंह का लश्कर अगले पड़ाव पर जा पहुँचा और उसके घंटे भर बाद तेजसिंह भी रथ लिये हुए जा पहुँचे। रथ जनाने डेरे के आगे लगाया गया, पर्दा करके जनाना सवार (किशोरी कामिनी और कमला) उतारी गईं और रथ नौकरों के हवाले करके तेजसिंह राजा साहब के पास चले गये।

आज के पड़ाव पर हमारे बहुत दिनों के बिछुड़े हुए ऐयार लोग अर्थात् पन्नालाल रामनारायण चुन्नीलाल और पंडित बद्रीनाथ भी आ मिले क्योंकि इन लोगों को राजा साहब के चुनारगढ़ जाने की इत्तला पहिले ही से दे दी गई थी। ये लोग उसी समय राजा साहब के खेमे में चले गये जहाँ कि राजा बीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह एकान्त में बैठे बातें कर रहे थे। इन चारों ऐयारों को आशा थी कि राजा बीरेन्द्रसिंह के साथ ही साथ चुनारगढ़ जायंगे मगर ऐसा न हुआ, इसी समय कई काम उन लोगों के सुपुर्द हुए और राजा साहब की आज्ञानुसार इसी समय वे चारो ऐयार वहाँ से रवाना होकर पूरब की तरफ चले गये।

राजा बीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह को इस बात की आहट लग गई थी कि मनोरमा भेष बदल हमारे लश्कर के साथ चल रही है और धीरे धीरे उसके मददगार लोग भी रूप बदले हुए लश्कर में चले आ रहे हैं मगर तेजसिंह को उसके गिरफ्तार करने का मौका नहीं मिलता था। उन्हें इस बात का पूरा विश्वास था कि

मनोरमा निःसन्देह किसी लौंडी की सूरत में होगी मगर बहुत सी लौंडियों में से केवल मनोरमा को जो बड़ी धूर्त और ऐयारा थी छाँट के निकाल लेना कठिन काम था। मनोरमा के न पकड़े जाने का एक सबब और भी था, तेजसिंह इस बात को तो सुन ही चुके थे कि मनोरमा ने बेवकूफ नानक से तिलिस्मी खञ्जर ले लिया है। अस्तु तेजसिंह का खयाल यही था कि मनोरमा तिलिस्मी खञ्जर अपने पास अवश्य रखती होगी। यद्यपि राजा की बहुत सी लौंडियाँ खञ्जर रखती थीं मगर तिलिस्मी खञ्जर रखने वाले को पहिचान लेना तेजसिंह मामूली काम समझते थे और इसी लिए उनकी निगाह बार बार तमाम लौंडियों की उगलियों पर पड़ती थी कि तिलिस्मी खञ्जर के जोड़ की अँगूठी किसी न किसी उँगली में जरूर दिखाई दे जायगी और जिसकी उँगली में वैसी अँगूठी दिखाई देगी उसे ही मनोरमा समझ के तुरत गिरफ्तार कर लेंगे।

यह सब कुछ था मगर मनोरमा भी कुछ कम चौंगली न थी और उसकी होशियारी और चालाकी ने तेजसिंह को भी पूरा धोखा दिया। इस बात को मनोरमा भी पहिले ही से विचार चुकी थी कि मेरे हाथ में तिलिस्मी खञ्जर के जोड़ की अँगूठी अगर तेजसिंह देखेंगे तो भेद खुल जायगा, अतएव उसने बड़ी मुस्तैदी और हिम्मत का काम किया अर्थात् इस लश्कर में आ मिलने के पहिले ही उसने इस बात को आजमाया कि तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अँगूठी केवल उँगली ही में पहिरने से काम देती है या बदन के किसी भी हिस्से के साथ लगे रहने से उसका फायदा पहुँचता है। परीक्षा करने पर जब उसे मालूम हुआ कि वह तिलिस्मी अँगूठी केवल उँगली ही में पहिरने के लिये नहीं है बल्कि बदन के किसी भी हिस्से के साथ लगे रहने ही से वह अपना काम कर सकती है, तब उसने अपनी जंघा चीर के तिलिस्मी खंजर के जोड़ की अँगूठी उसमें भर दी थी और ऊपर से सीं कर तथा मरहम पट्टी लगा कर जख्म आराम कर लिया था। इसी सबब से आज तिलिस्मी खञ्जर पास रहने पर भी तेजसिंह उसे पहिचान नहीं सके मगर तेजसिंह का दिल इस बात को भी कबूल नहीं कर सकता था कि मनोरमा इस लश्कर में नहीं है, बल्कि मनोरमा के मौजूद होने का विश्वास उन्हें उतना ही था जितना पढ़े लिखे आदमी को एक और एक के दो होने का विश्वास होता है।

आज तेजसिंह ने यह हुक्म जारी किया कि किशोरी कामिनी और कमला के खेमे में * उस समय कोई लौंडी न रहे और न जाने पावे जब वे तीनों निद्रा की अवस्था में हों, अर्थात् जब तक वे तीनों जागती रहें तब तक तो लौंडियाँ उनके पास रहें और आ जा सकें परन्तु जब वे तीनों सोने की इच्छा करें तब एक भी लौंडी खेमे में न रहने पावे और जब तक कमला घंटी बजाकर किसी लौंडी को बुलाने का इशारा न करे तब तक कोई भी लौंडी खेमे के अन्दर न जाने पावे। उस खेमे के चारो तरफ बड़ी मुस्तैदी के साथ पहरा देने का इन्तजाम भी उन्होंने कराया।

इस आज्ञा को सुन कर मनोरमा बहुत ही चिटकी और मन में कहने लगी कि तेजसिंह भी बड़ा बेवकूफ आदमी है! भला ये सब बातें मनोरमा के हौसले को कभी कम कर सकती हैं। बल्कि मनोरमा अपने काम में अब और भी शीघ्रता करेगी। लेकिन क्या मनोरमा केवल इसी काम के लिये इस लश्कर में आई है कि किशोरी कामिनी को मार कर चली जाय? नहीं नहीं वह इससे भी बढ़ कर काम करने के लिए आई है। अच्छा अच्छा, तेजसिंह को इस चालाकी का मजा आज ही न चखाया तो कोई बात नहीं! किशोरी कामिनी और कमला को या इन तीन में से किसी एक को आज ही न मार खपाया तो मनोरमा नाम नहीं! रह तो जा नालायक! देखें तेरी होशियारी कहाँ तक काम करती है!!

ऐसी ऐसी बहुत सी बातें मनोरमा ने सोची और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने का उद्योग करने लगी।

सातवां बयान

रात आधी से ज्यादा जा चुकी है। उस लम्बे चौड़े खेमे के चारो तरफ बड़ी मुस्तैदी के साथ पहरा फिर रहा है जिसमें किशोरी कामिनी और कमला गहरी नींद में सोई हुई हैं। उसके दोनों बगल और भी दो बड़े बड़े डेरे हैं जिनमें लौंडियाँ हैं और उन दोनों डेरों के चारो तरफ भी फौजी सिपाही घूम रहे हैं। मनोरमा चुपचाप अपने बिछावन पर से उठी, कनात उठाकर चोरों की तरह खेमे के नीचे से बाहर निकल गई, और पैर दबाती हुई किशोरी के खेमे की तरफ चली।

* किशोरी कामिनी और कमला एक ही खेमे में रहा करती थीं।

ी से उसने देखा कि चार फौजी सिपाही हाथ में नंगी तलवारें लिए हुए घूम घूम
र पहरा दे रहे हैं। वह हाथ में तिलिस्मी खञ्जर लिए हुए खेमे के पीछे चली
ई और एक मोटे पेड़ की आड़ देकर खड़ी हो गई। जब पहरा देने वाले टहलते
ए कुछ आगे बढ़ गये तब उसने कदम बढ़ाया और तिलिस्मी खञ्जर म्यान से
निकाल कर उसके रास्ते में रख दिया इसके बाद हट कर पुनः पेड़ की आड़ में
खड़ी हो गई तथा पहरा देने वालों की तरफ ध्यान देकर देखने लगी। जब पहरा
ने वाले लौटकर उस खंजर के पास पहुँचे तो एक की निगाह उस खंजर पर जा
ड़ी जिसका लोहा तारों की रोशनी में भी चमक रहा था। उसने झुक कर खञ्जर
ठाना चाहा मगर छूने के साथ ही बेहोश होकर औंधे मुँह जमीन पर गिर पड़ा।
सकी यह अवस्था देख उसके साथियों को आश्चर्य हुआ और दूसरे ने झुक कर
से उठाना चाहा मगर जब खंजर पर उसका हाथ पड़ा तो उसकी भी वही दशा
ई जो पहिले सिपाही की हुई थी। तिलिस्मी खंजर का हाल और गुण गिने गुथे
ादमियों को मालूम था और जिन्हें मालूम था वे भी उसे बहुत छिपा कर रखते
, बेचारे फौजी सिपाहियों को इस बात की कुछ खबर न थी और धोखे में पड़
र जैसा कि ऊपर लिख चुके हैं एक दूसरे के बाद चारो सिपाही खञ्जर छू
कर बेहोश हो गये। उस समय मनोरमा पेड़ की आड़ से बाहर निकल कर
ारो बेहोश सिपाहियों के पास पहुँची, अपना खंजर उठा लिया, और उसी
ञ्जर से खेमे के पीछे कनात में बड़ा सा छेद करने बाद बड़ी होशियारी
खेमे के अन्दर घुस गई। उस समय किशोरी कामिनी और कमला गहरी नींद
खुर्राटे ले रही थीं जिन्हें एक दम दुनिया से उठा देने की फिक्र में मनोरमा
गी हुई थी। मनोरमा उनके सिर्हाने की तरफ खड़ी हो गई और सोचने लगी,
निस्सन्देह इस समय मेरा वार खाली नहीं जा सकता, तिलिस्मी खञ्जर के एकही
र में सिर कट कर अलग हो जायगा मगर एक के सिर कटने की आहट पाकर
की की दोनों जाग जायँगी, ऐसा न होना चाहिये, इस समय इन तीनों ही को
ारना मेरा काम है, अच्छा पहिले इस तिलिस्मी खंजर से इन तीनों को बेहोश
र देना चाहिये।" इतना सोच कर मनोरमा ने तिलिस्मी खंजर बदन से लगा
र उन तीनों को बेहोश कर दिया और फिर सिर काटने के लिये तैयार हो गई।
इसने तिलिस्मी खंजर का एक भरपूर हाथ किशोरी की गर्दन पर जमाया जिससे

सिर कट कर अलग हो गया, दूसरा हाथ उसने कामिनी की गर्दन पर जमाया और उसका सिर काटने बाद कमला का सिर भी धड़ से अलग कर दिया, इसके बाद खुशी भरी निगाहों से उन तीनों लाशों की तरफ देखने लगी और खुशी भरी आवाज में धीरे से बोली, "इन्हीं तीनों ने दुनिया में ऊधम मचा रक्खा था ! जिस तरह इस समय इन तीनों को मार कर मैं खुश हो रही हूँ उसी तरह बहुत जल्द बीरेन्द्र, इन्द्रजीत, आनन्द और गोपाल को भी मार कर खुशी भरी निगाहों से उनकी लाशों को देखूँगी और तब दुनिया में मायारानी और मनोरमा के सिवाय कोई भी प्रतापी दिखाई न देगा !!"

मनोरमा इतना कह ही रही थी कि पीछे की तरफ से आवाज आई, "नहीं नहीं, ऐसा न हुआ है न होगा !!"

आठवां बयान

अब हमें थोड़ा सा हाल इन्द्रदेव का बयान करते हैं जो लक्ष्मीदेवी कमलिनी लाडिली और नकली बलभद्रसिंह को साथ लेकर अपने घर की तरफ रवाना हुए थे और जिनके साथ कुछ दूर तक भूतनाथ भी गया था।

नकली बलभद्रसिंह हथकड़ी बेड़ी से जकड़ा हुआ एक डोली पर सवार कराया गया था और कुछ फौजी सिपाही उसे चारो तरफ से घेरे हुए थे। लक्ष्मीदेवी कमलिनी तथा लाडिली पालकी पर सवार कराई गईं थीं और उन तीनों पालकियों के भी आगे पीछे बहुत से सिपाही जा रहे थे। इन्द्रदेव एक उम्दे घोड़े पर सवार थे और भूतनाथ पैदल उनके साथ साथ जा रहा था। दो पहर दिन चढ़े जब इन लोगों का डेरा एक सुहावने जंगल में पड़ा तो भूतनाथ ने इन्द्रदेव से बिदा माँगी। इन्द्रदेव ने कहा, "मुझे तो कोई उज्र नहीं है मगर लक्ष्मीदेवी और कमलिनी से पूछ लेना जरूरी है। तुम मेरे साथ उनके पास चलो, मैं उन लोगों से तुम्हें छुट्टी दिलाए देता हूँ।"

लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली की पालकी एक घने पेड़ के नीचे आमने सामने रक्खी हुई थी और उनके चारो तरफ कनात घिरी हुई थी। बीच में उम्दा फर्श बिछा हुआ था और तीनों बहिनें उस पर बैठी बातें कर रही थीं इन्द्रदेव अपने साथ भूतनाथ को लिये हुए उन तीनों के पास गए और कमलिनी की तरफ देख कर बोले, "भूतनाथ बिदा होने की आज्ञा माँगता है।"

इन्द्रदेव को देख कर तीनों बहिनें उठ खड़ी हुईं, जब इन्द्रदेव फर्श पर बैठ गए तो वे भी बैठ गईं और कमलिनी ने भूतनाथ को भी अपने सामने फर्श पर बैठने का इशारा किया। जब भूतनाथ भी बैठ गया तो यों बातें होने लगीं :—

कमलिनी०। (भूतनाथ से) भूतनाथ ! तुम्हारे मामले ने तो हम लोगों को बहुत परेशान कर रक्खा है। पहिले तो यही विश्वास हो गया था कि तुम ही मेरे बाप के घातक हो और यह जैपालसिंह वास्तव में मेरा बाप है, वह खयाल तो अब जाता रहा मगर तुम अभी तक बेकसूर साबित न हुए।

भूत०। कसूरवार तो मैं जरूर हूँ, पहिले भी तुम से कह चुका हूँ कि मेरे हाथ से कई बुरे काम हो चुके हैं जिनके लिये मैं पछता रहा हूँ और अब नेक काम कर के दुनिया में नेकनाम हुआ चाहता हूँ, और तुमने मेरी सहायता करने की प्रतिज्ञा भी की थी, तब से तुम स्वयं देख रही हो कि मैं कैसे कैसे काम कर रहा हूँ, यह सब कुछ है मगर मैंने तुम्हारे पिता माता या तुम तीनों बहिनों के साथ कोई बुराई नहीं की इसे निश्चय समझो, यही सबब है कि ऐसे नाजुक समय में भी कृष्णजिन्न ने मेरी सहायता की, मालूम होता है कि वह मेरा हाल अच्छी तरह जानता है।

कमलिनी०। खैर यह तो जब तुम्हारा मुकदमा होगा तब मालूम हो जायगा, क्योंकि मैं बिल्कुल नहीं जानती कि कृष्णाजिन्न कौन है, उसने तुम्हारा पक्ष क्यों लिया, और राजा बीरेन्द्रसिंह ने क्यों कृष्णाजिन्न की बात मान कर तुम्हें कैद से छुट्टी दे दी।

लक्ष्मीदेवी। (भूतनाथ से) मगर मैं जहाँ तक समझती हूँ यही जान पड़ता है कि तुम कृष्णाजिन्न को अच्छी तरह पहिचानते हो।

भूत०। नहीं नहीं कदापि नहीं, (खंजर हाथ में ले कर) मैं कसम खा कर कहता हूँ कि कृष्णाजिन्न को भी नहीं पहिचानता मगर उसकी कुदरत देख कर आश्चर्य करता हूँ और उससे डरता हूँ। यद्यपि उसने कैद से मुझे छुड़ा दिया मगर तुम देखती हो कि भाग कर जान बचाने की नीयत मेरी नहीं है। कई दफे स्वतन्त्र हो जाने पर भी मैंने तुम्हारे काम से मुँह नहीं फेरा और समय पड़ने पर जान तक देने को तैयार हो गया।

कमलिनी० । ठीक है ठीक है, अबकी दफे रोहतासगढ़ में पहुँच कर तुमने बड़ा काम किया, मगर इस बारे में भी मुझे एक बात का आश्चर्य मालूम होता है !

भूतनाथ० । वह क्या ?

कमलिनी० । तुमने अपना हाल बयान करती समय कहा था कि मैंने तिलिस्मी खंजर से शेरअली खाँ की सहायता की थी ।

भूतनाथ० । हाँ बेशक कहा था ।

कमलिनी० । तुम्हें जो तिलिस्मी खंजर मैंने दिया था वह तो मायारानी ने उस समय अपने कब्जे में कर लिया था जब जमानिया तिलिस्म के अन्दर जाने वाली सुरंग में उसने तुम लोगों को बेहोश किया था, उसने राजा गोपालसिंह का भी तिलिस्मी खंजर ले कर नागर को दे दिया था । नागर वाला तिलिस्मी खंजर तो भैरोसिंह ने (इन्द्रदेव की तरफ इशारा कर के) आप से ले लिया था जो मेरी इच्छानुसार अब तक भैरोसिंह के पास है परन्तु तुम्हारे पास तिलिस्मी खंजर कहाँ से आ गया जिससे तुमने काम लिया और जो अब तक तुम्हारे पास है ?

भूतनाथ० । आपको मालूम हुआ होगा कि मेरा खंजर जो मयारानी ने ले लिया था वह कृष्णाजिन्न ने रोहतासगढ़ किले के अन्दर उस समय मायारानी से छीन लिया था जब वह शेरअली खाँ को ले कर गई थी ।

कमलिनी० । हाँ ठीक है, तो क्या वही खंजर कृष्णाजिन्न ने फिर तुम्हें दे दिया ?

भूतनाथ० । जी हाँ, (तिलिस्मी खंजर और उसके जोड़ की अंगूठी कमलिनी के आगे रख कर) अब यदि आपकी मर्जी हो तो ले लीजिये यह हाजिर है ।

कमलिनी० । (कुछ सोच कर) नहीं, अब यह खंजर तुम अपने ही पास रक्खो, जब कृष्णाजिन्न ने जिन्हें राजा बीरेन्द्रसिंह और तेजसिंह मानते हैं तुम्हें दे दिया तो अब बिना उनकी इच्छा के छीन लेना मैं उचित नहीं समझती, (ऊँची साँस ले कर) क्या कहा जाय, तुम्हारे मामले में अक्ल कुछ भी काम नहीं करती ।

इन्द्रदेव० । भूतनाथ ! तुम देखते हो कि नकली बलभद्रसिंह को मैं अपने साथ लिये जाता हूँ; अगर तुम मेरे साथ चल के उससे बातचीत करते तो...

भूतनाथ० । नहीं नहीं, आप मुझे अपने साथ ले चल कर उसका मुकाबला

न कराइये, उसका सामना होने ही से मेरी जान सूख जाती है। यह तो मैं जानता ही हूँ कि एक न एक दिन मेरा और उसका सामना धूमधाम के साथ होगा और जो कुछ कसूर मैंने किया है या उसका बिगाड़ा है खुले बिना न रहेगा परन्तु अभी आप क्षमा करें, थोड़े ही दिनों में मैं अपने बचाव का सामान इकट्ठा कर लूँगा और तब तक बलभद्रसिंहजी का पता लग जायगा जिनसे भी सहायता मिलने की मुझे आशा है। हाँ यदि आप मेरी प्रार्थना स्वीकार न करें तो लाचार मैं साथ चलने के लिये हाजिर हूँ।

इन्द्रदेव०। (कुछ सोच कर) खैर कोई चिन्ता नहीं, तुम जाओ और बलभद्रसिंह को खोज निकालने का उद्योग करो और इन्दिरा का भी पता लगाओ, पर यह बताते जाओ कि अब मुझसे कब मिलोगे ?

भूतनाथ०। आठ दस दिन के बाद आपसे मिलूँगा, फिर जैसा मौका हो।

कम०। अच्छा जाओ मगर जो कुछ करना है उसे दिल लगा के करो !

भूत०। मैं कसम खा कर कहता हूँ कि बलभद्रसिंहजी को खोज निकालने की फिक्र सब से ज्यादे दुनिया में जिस आदमी को है वह मैं हूँ।

इतना कह कर भूतनाथ उठ खड़ा हुआ और अपने अड्डे की तरफ रवाना हो गया। तीसरे दिन वह अपने उस अड्डे पर पहुँचा जो 'बराबर' की पहाड़ी पर था। वहाँ अपने आदमी दाऊबाबा की जुबानी नानक का हाल सुना और क्रोध में भरा हुआ सिर्फ दो ही घण्टे वहाँ रहने बाद अकेला पहाड़ी के नीचे उतर कर उस जंगल की तरफ रवाना हो गया जहाँ पहिले पहिल श्यामसुन्दरसिंह और भगवनिया के सामने नकली बलभद्रसिंह से उसकी मुलाकात हुई थी।

नौवां बयान

लक्ष्मीदेवी कमलिनी लाडिली और नकली बलभद्रसिंह को लिये हुए इन्द्रदेव अपने गुप्त स्थान में पहुँच गये। दोपहर का समय है। एक सजे हुए कमरे के अंदर ऊँची गद्दी के ऊपर इन्द्रदेव बैठे हुए हैं, पास ही में दूसरी गद्दी बिछी हुई है जिस पर लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली बैठी हुई हैं, उनके सामने हथकड़ी बेड़ी और रस्सियों से जकड़ा हुआ नकली बलभद्रसिंह बैठा है और उसके पीछे हाथ में नंगी तलवार लिये इन्द्रदेव का ऐयार सर्यूसिंह खड़ा है।

नकली बलभद्र० । (इन्द्रदेव से) जिस समय मुझसे और भूतनाथ से मुलाकात हुई थी उस समय भूतनाथ की क्या दशा हुई सो आप लोग देख चुके हैं। अगर भूतनाथ सच्चा ही होता तो मुझसे डरता क्यों ? मगर बड़े अफसोस की बात है कि राजा बीरेन्द्रसिंह ने कृष्णाजिन्न के कहने से भूतनाथ को छोड़ दिया और जिस संदूकची को मैंने पेश किया था उसे भी न खोला, यदि वह खुलती तो भूतनाथ का भेद भी छिपा न रहा जाता।

इन्द्र० । जो हो, मैं राजा साहब की बातों में दखल नहीं दे सकता, मगर इतना कह सकता हूँ कि भूतनाथ ने चाहे तुम्हारे साथ हद्द से ज्यादे बुराई की हो मगर लक्ष्मीदेवी के साथ कोई बुराई नहीं की, इसके अतिरिक्त छोड़ दिये जाने पर भी भूतनाथ भागने का उद्योग नहीं करता और समय पड़ने पर हम लोगों का साथ ही देता है।

नकली बल० । अगर भूतनाथ आप लोगों का काम न करे तो आप लोग उस पर दया न करेंगे यही समझ कर वह...

इन्द्र० । (चिढ़ कर) ये सब वाहियात बातें हैं, मैं तुमसे बकवाद करना पसंद नहीं करता, तुम यह बताओ कि तुम्हारा नाम जैपालसिंह है या नहीं ?

नकली बल० । नहीं, मैं वास्तव में बलभद्रसिंह हूँ।

इन्द्र० । (क्रोध के साथ) अब भी तू झूठ बोलने से बाज नहीं आता ! मालूम होता है कि तेरी मौत आ चुकी है, अच्छा देख मैं तुझे किस दुर्दशा के साथ मारता हूँ ! (सर्यूसिंह से) तुम पहिले इसकी दाहिनी आँख उँगली डाल कर निकाल लो !

नकली बल० । (लक्ष्मीदेवी से) देखो, तुम्हारे बाप की क्या दुर्दशा हो रही है!

लक्ष्मी० । मुझे अब अच्छी तरह से निश्चय हो गया कि तू हमारा बाप नहीं है। आज जब मैं पुरानी बातों को याद करती हूँ तो तेरी और दारोगा की बेईमानी साफ साफ मालूम हो जाती है। सब के पहिले जिस दिन तू कैदखाने में मुझसे मिला था उसी दिन मुझे तुझ पर शक हो गया था मगर तेरी इन बातों पर कि जहरीली दवा के कारण मेरा बदन खराब हो गया है, मैं धोखे में आ गई थी।

नकली बल० । और यह मेरे मोढ़े पर वाला निशान ?

लक्ष्मी०। यह भी बनावटी है, अच्छा अगर तू मेरा बाप है तो मेरी एक बात का जवाब दे।

नकली बल०। पूछो।

लक्ष्मी०। जिन दिनों मेरी शादी होने वाली थी और जमानिया जाने के लिए जब मैं पालकी पर सवार होने लगी थी तब मेरी क्या दुर्दशा हुई थी और मैं किस ढंग के पालकी पर बैठाई गई थी।

नकली बल०। (कुछ सोच कर) अब इतनी पुरानी बात तो मुझे याद नहीं है मगर मैं सच सच कहता हूँ कि मैं ही बलभद्र.....

इन्द्र०। (क्रोध से सर्यू को) बस अब विलम्ब करने की आवश्यकता नहीं!!

इतना सुनते ही सर्यूसिंह ने धक्का देकर नकली बलभद्रसिंह को गिरा दिया और औजार डाल कर उसकी दाहिनी आँख निकाल ली। नकली बलभद्रसिंह, जिसे अब हम जैपाल के ही नाम से लिखेंगे दर्द के मारे तड़पने लगा और बोला, "अफसोस मेरे हाथ पैर बँधे हुए हैं, अगर खुले होते तो मैं इस बेदर्दी का मजा चखा देता!"

इन्द्र०। अभी अफसोस क्या करता है, थोड़ी देर में तेरी दूसरी आँख भी निकाली जायगी और उसके बाद तेरा एक एक अंग काट कर अलग अलग किया जायगा! (सर्यूसिंह से) हाँ सर्यूसिंह, अब इसकी दूसरी आँख भी निकाल लो और इसके बाद दोनों पैर काट डालो।

जैपाल०। (चिल्ला कर) नहीं नहीं, जरा ठहरो, मैं तुम्हें बलभद्रसिंह का सच्चा सच्चा हाल बताता हूँ।

इन्द्र०। अच्छा बताओ।

जैपाल०। पहिले मेरी आँख में कोई दवा लगाओ जिसमें दर्द कम हो जाय, तब मैं तुमसे सब हाल कहूँगा।

इन्द्र०। ऐसा नहीं हो सकता, बताना हो तो जल्द बता नहीं तो तेरी दूसरी आँख भी निकाल ली जायगी!

जैपाल०। अच्छा मैं अभी बताता हूँ, दारोगा ने उसे अपने बंगले में कैद कर रक्खा था मगर अफसोस! मायारानी ने उस बंगले को बारूद के जोर से उड़ा दिया, उम्मीद है कि उसी में उस बेचारे की हड्डी पसली भी उड़ गई होगी।

इन्द्र० । (सर्यू से) सर्यूसिंह ! यह हरामज़ादा अपनी बदमाशी से बाज न आवेगा अस्तु तुम एक काम करो, इसकी जो आँख तुमने निकाली है उसके गड्ढे में पिसी हुई लाल मिर्चा भर दो ।

इतना सुनते ही जैपाल चिल्ला उठा और हाथ जोड़ कर बोला :—

जैपाल० । माफ करो, माफ करो, अब मैं झूठ न बोलूँगा, मुझे जरा दम ले लेने दो, जो कुछ हाल है मैं सच सच कह दूँगा। इस तरह तड़प तड़प कर जान देना मुझे मंजूर नहीं है। मुझे क्या पड़ी है जो दारोगा का पक्ष करके इस तरह अपनी जान दूँ, कभी नहीं अब मैं कदापि तुमसे झूठ न बोलूँगा ।

इन्द्र० । अच्छा अच्छा दम ले ले, कोई चिन्ता नहीं, जब तू बलभद्रसिंह का हाल बताने को तैयार ही है तो मैं तुझे क्यों सताने लगा !

जैपाल० । इसमें कोई शक नहीं कि बलभद्रसिंह अभी तक जीता है और इन्दिरा तथा इन्दिरा की माँ के विषय में भी मैं आशा करता हूँ कि जीती होंगी ।

इन्द्र० । बलभद्रसिंह के जीते रहने का तो तुझे निश्चय है मगर इन्दिरा और उसकी माँ के बारे में 'आशा है' से क्या मतलब ?

जैपाल० । इन्दिरा और इन्दिरा की माँ को दारोगा ने तिलिस्म में बन्द करना चाहा था, उस समय न मालूम किस ढंग से इन्दिरा तो छूट कर निकल गई, मगर उसकी माँ जमानिया तिलिस्म के चौथे दर्जे में कैद कर दी गई, इसी से उनके बारे में निश्चय रूप से नहीं कह सकता मगर बलभद्रसिंह अभी तक जमानिया में उस मकान के अंदर कैद है जिसमें दारोगा रहता था। यदि आप मुझे छुट्टी दें या मेरे साथ चलें तो मैं उसे बाहर निकाल दूँ या आप खुद जाकर जिस ढंग से चाहें उसे छुड़ा लें ।

इन्द्र० । मुझे तेरी यह बात भी सच नहीं जान पड़ती ।

जैपाल० । नहीं नहीं, अबकी दफे मैंने सच ही सच बता दिया है ।

इन्द्र० । यदि मैं वहाँ जाऊँ और बलभद्रसिंह न मिलें तो ?

जैपाल० । मिलने न मिलने से मुझे कोई मतलब नहीं, क्योंकि उस मकान में से ढूँढ़ निकालना आपका काम है अगर आप ही पता लगाने में कसर कर जायेंगे तो मेरा क्या कसूर ? हाँ एक बात और है, इधर थोड़े दिन के अन्दर दारोगा ने किसी दूसरी जगह उन्हें रख दिया हो तो मैं नहीं जानता मगर

दारोगा का रोजनामचा यदि आपको मिल जाय और आप उसे पढ़ सकें तो बलभद्रसिंह के छूटने में कुछ शक न रहे।

इन्द्रदेव०। क्या दारोगा रोजनामचा बराबर लिखा करता था?

जैपाल०। जी हाँ, वह अपना रत्ती रत्ती हाल रोजनामचे में लिखा करता था।

इन्द्रदेव०। वह रोजनामचा क्योंकर मिलेगा?

जैपाल०। जमानिया के पक्के घाट के ऊपर ही एक तेली रहता है, उसका मकान बहुत बड़ा है और दारोगा की बदौलत वह भी अमीर आदमी हो गया है। उसका नाम भी जैपाल है और उसी के पास दारोगा का रोजनामचा है, यदि आप उसमें ले सकें तो अच्छी बात है नहीं तो कहिये मैं उसके नाम की एक चीठी लिख दूँगा।

इन्द्र०। (कुछ सोच कर) बेशक तुझे उसके नाम की एक चीठी लिख देनी होगी मगर इतना याद रखियो कि यदि तेरी यह बात झूठ निकली तो मैं बड़ी दुर्दशा के साथ तेरी जान लूँगा?

जैपाल०। और अगर सच निकली तो क्या मैं छोड़ दिया जाऊँगा?

इन्द्रदेव०। (मुस्कुरा कर) हाँ अगर तेरी मदद से बलभद्रसिंह को हम पा जायँगे तो तेरी जान छोड़ दी जायगी मगर तेरे दोनों पैर काट डाले जायंगे या तेरी दूसरी आँख भी बेकाम कर दी जायगी।

जैपाल०। सो क्यों?

इन्द्रदेव०। इसलिये कि तू फिर किसी काम लायक न रहे और किसी के साथ बुराई न कर सके।

जैपाल०। फिर मुझे खाने को कौन देगा?

इन्द्रदेव०। मैं दूँगा।

जैपाल०। खैर जैसी मर्जी आपकी, मुझे स्वीकार है, मगर इस समय तो मेरी आँखों में कोई दवा डालिये नहीं मैं मर जाऊँगा।

इन्द्रदेव०। हाँ हाँ, तेरी आँख का इलाज भी किया जायगा मगर पहिले तू उस तेली के नाम की चीठी लिख दे।

जैपाल०। अच्छा मैं लिख देता हूँ, हाथ खोल कर कलम दावात कागज मेरे आगे रक्खो।

यद्यपि आँख की तकलीफ बहुत ज्यादे थी मगर जैपाल भी बड़े ही कड़े दिल का आदमी था। उसका एक हाथ खोल दिया गया, कलम दावात कागज उसके सामने रक्खा गया, और उसने जैपाल तेली के नाम एक चीठी लिख कर अपनी निशानी कर दी। चीठी में यह लिखा हुआ था :—

"मेरे प्यारे जैपाल चक्की !!

दारोगा बाबा वाला रोजनामचा इन्हें दे देना नहीं तो मेरी और दारोगा की जान न बचेगी। हम दोनों आदमी इन्हीं के कब्जे में हैं।"

इन्द्रदेव ने वह चीठी ले कर अपने जेब में रक्खी और जैपाल को दूसरी कोठरी में ले जा कर कैद करने का हुक्म दिया तथा सर्यूसिंह को जैपाल की आँख में दवा लगाने के लिये भी कहा।

धूर्तराज जैपाल ने निःसन्देह इन्द्रदेव को धोखा दिया। उसने जो तेली के नाम की चीठी लिख कर दी उसके पढ़ने से दोनों मतलब निकलता है, "हम दोनों आदमी इन्हीं के कब्जे में हैं" ये ही शब्द इन्द्रदेव को फाँसने के लिये काफी थे, अस्तु देखा चाहिए वहाँ जाने पर इन्द्रदेव की क्या हालत होती है।

लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली को हर तरह से समझा बुझा कर दूसरे दिन प्रातःकाल इन्द्रदेव जमानिया की तरफ रवाना हुए।

दसवां बयान

अब हम अपने पाठकों को काशीपुरी में एक चौमञ्जिले मकान के ऊपर ले चलते हैं। यह मकान निहायत संगीन और मजबूत बना हुआ है। नीचे से ऊपर तक गेरू से रंगे रहने के कारण देखने वाला तुरत कह देगा कि यह किसी गुसाईं का मठ है। काशी के मठधारी गुसाईं नाम ही के साधु गुसाईं होते हैं, वास्तव में उनकी दौलत, उनका व्यापार, उनका रहन सहन और बर्ताव, किसी तरह गृहस्थों और बनियों से कम नहीं होता बल्कि दो हाथ ज्यादे ही होता है। अगर किसी ने धर्म्म और शास्त्र पर कृपा कर के गुसाईंपने की कोई निशानी रख भी ली तो केवल इतना ही किया तो एक टोपी गेरुए रंग की सिर पर या गेरुए रंग का एक दुपट्टा कन्धे पर रख लिया, सो भी भरसक रेशमी और बेशकीमती तो होना ही चाहिये बस। अस्तु इस समय मकान में हम अपने पाठकों को ले चलते

हैं देखने वाला उस मकान को भी किसी साधू गोसाईं का मठ कहेगा मगर वास्तव में ऐसा नहीं है, इस मकान के अन्दर कोई विचित्र मनुष्य रहता है और उसके काम भी बड़े ही अनूठे हैं।

यह मकान चार मंजिल का है। नीचे वाली तीन मंजिलों को छोड़ कर इस समय हम ऊपर वाली मंजिल पर चलते हैं जहाँ एक छोटे कमरे में तीन औरतें बैठी हुई आपुस में बातें कर रही हैं। रात दो पहर से कुछ ज्यादे जा चुकी है। कमरे के अन्दर यद्यपि बहुत से शीशे लगे हैं मगर रोशनी सिर्फ एक शमादान और एक दीवारगीर की ही हो रही है। शमादान फर्श के ऊपर जल रहा है जहाँ तीनों औरतें बैठी हैं। उनमें एक औरत निहायत हसीन और नाजुक है यद्यपि उसकी उम्र लगभग चालीस वर्ष के पहुँच गई होगी मगर नजाकत सुडौली और चेहरे का लोच अभी तक कायम है, उसकी बड़ी बड़ी आँखों में अभी तक गुलाबी डोरियाँ और मस्तानापन मौजूद है, सर के बड़े बड़े और घने बालों में चाँदी की तरह चमकने वाले बाल दिखाई नहीं देते और न अलग से देखने में ज्यादे उम्र की ही मालूम पड़ती है, साथ ही इसके बाली, पन्ने, गोप, सिकरी कड़े, छन्द और अंगूठियों की तरफ ध्यान देने से वह रुपये वाली भी मालूम पड़ती है। उसके पास बैठी हुई दोनों औरतें भी उसी की तरह कमसिन और खूबसूरत नहीं तो बदसूरत भी नहीं हैं। जो बहुत हसीन और इस मकान की मालिक औरत है उसका नाम बेगम * है और बाकी की दोनों औरतों का नाम नौरतन और जमालो है।

बेगम०। चाहे जैपालसिंह गिरफ्तार हो गया हो मगर भूतनाथ उसका मुकाबला नहीं कर सकता और न भूतनाथ उसे अपनी हिफाजत ही में रख सकता है।

जमालो०। ठीक है मगर जब लक्ष्मीदेवी और राजा बीरेन्द्रसिंह को यह मालूम हो गया कि यह असली बलभद्रसिंह नहीं है और इसने बहुत बड़ा धोखा देना चहा था तो वे उसे जीता कब छोड़ेंगे?

बेगम०। सो क्या वह खाली इतने ही कसूर पर मारा जायगा कि उसने अपने को बलभद्रसिंह जाहिर किया?

---

* बेगम नाम से मुसल्मानिन न समझना चाहिये।

जमालो० । क्या यह छोटा कसूर है ? फिर असली बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिये भी तो लोग उसे दिक करेंगे ।

बेगम० । अगर इन्साफ किया जायगा और हकीकत में किसी का पक्ष न किया जायगा तो जैपालसिंह गदाधरसिंह से ज्यादे दोषी न ठहरेगा, ऐसी अवस्था में मुझे यह आशा नहीं होती कि राजा बीरेन्द्रसिंह उसे प्राणदण्ड देंगे ।

नौर० । राजा बीरेन्द्रसिंह चाहे उसे प्राणदण्ड की आज्ञा न भी दें मगर इन्द्रदेव उसे कदापि जीता न छोड़ेगा और यह बात बहुत ही बुरी हुई कि राजा बीरेन्द्रसिंह ने उसे इन्द्रदेव के हवाले कर दिया ।

बेगम० । जो हो मगर जिस समय मैं उन लोगों के सामने जा खड़ी होऊँगी उस समय जैपाल को छुड़ा ही लाऊँगी, क्योंकि उसी की बदौलत मैं अमीरी कर रही हूँ और उसके लिए नीच से नीच काम करने को भी तैयार हूँ ।

जमालो० । सो कैसे ? क्या तुम असली बलभद्रसिंह के साथ उसका अदला बदला करोगी ?

बेगम० । हाँ मैं इन्द्रदेव और लक्ष्मीदेवी से कहूंगी कि तुम जैपालसिंह को मेरे हवाले करो तो मैं असली बलभद्रसिंह को तुम्हारे हवाले कर दूँगी । अफसोस तो इतना ही है कि गदाधरसिंह की तरह जैपालसिंह दिलावर और जीवट का आदमी नहीं है । अगर जैपालसिंह के कब्जे में बलभद्रसिंह होता तो वह थोड़ी ही तकलीफ में इन्द्रदेव या लक्ष्मीदेवी को उसका हाल बता देता ।

जमालो० । ठीक है मगर जब बलभद्रसिंह तुम्हारे कब्जे से निकल जायगा तब जैपालसिंह तुम्हारी इज्जत और कदर क्यों करेगा और क्यों दबेगा ? सिवाय इसके अब तो दारोगा भी स्वतंत्र नहीं रहा जिसके भरोसे पर जैपाल कूदता था और तुम्हारा घर भरता था ।

बेगम० । (कुछ सोच कर) हाँ बहिन सो तो तुम सच कहती हो ! तो बलभद्रसिंह को छोड़ने के पहिले ही मुझे अपना घर भर लेना चाहिये, मगर ऐसा करने में भी दो बातों की कसर पड़ती है ।

जमालो० । वह क्या ?

बेगम० । एक तो बीरेंद्रसिंह के पक्षवाले मुझ पर यह दोष लगावेंगे कि तूने बलभद्रसिंह को क्यों कैद कर रक्खा था, दूसरे जब से मनोरमा के हाथ तिलिस्मी

खंजर लगा है तब से उसका दिमाग आसमान पर चढ़ गया है, वह मुझसे कसम खाकर कह गई है कि थोड़े ही दिनों में मैं राजा बीरेन्द्रसिंह और उनके पक्ष वालों को इस दुनिया से उठा दूँगी। अगर उसका कहना सच हुआ और उसने फिर मायारानी को जमानिया की गद्दी पर जा बैठाया तो मायारानी मुझ पर दोष लगावेगी कि तूने जैपाल को इतने दिनों तक क्यों छिपा रक्खा और दारोगा से मिल कर मुझे धोखे में क्यों डाला!

नौरतन०। बेशक ऐसा ही होगा, मगर इस बात को मैं कभी नहीं मान सकती कि अकेली मनोरमा एक तिलिस्मी खंजर पाकर राजा बीरेन्द्रसिंह के ऐयारों का मुकाबला करेगी और उनके पक्षवालों को इस दुनिया से उठा देगी। क्या उन लोगों के पास तिलिस्मी खंजर न होगा?

जमालो०। मैं भी यही कहने वाली थी, मैंने इस विषय पर बहुत गौर किया मगर सिवा इसके मेरा दिल और कुछ भी नहीं कहता कि राजा बीरेन्द्रसिंह उनके लड़के और उनके ऐयारों का मुकाबला करने वाला आज दिन दुनिया में कोई भी नहीं है और एक बड़े भारी तिलिस्म के राजा गोपालसिंह भी प्रगट हो गये हैं, ऐसी अवस्था में मायारानी और उसके पक्षवालों की जीत कदापि नहीं हो सकती।

बेगम०। ऐसा ही है, और गदाधरसिंह भी किसी न किसी तरह अपनी जान बचा ही लेगा। देखो इतना बखेड़ा हो जाने पर भी लोगों ने गदाधरसिंह को जिसने अपना नाम अब भूतनाथ रख लिया है छोड़ दिया और अब वह चारों तरफ उपद्रव मचा रहा है। ताज्जुब नहीं कि वह जमीन की मिट्टी सूँघता हुआ हमारे घर में भी आ पहुँचे। यद्यपि उसे हमारा पता कुछ भी मालूम नहीं है मगर वह विचित्र आदमी है, मिट्टी और हवा में मिल गई हुई चीज का भी पता लगा लेता है! (ऊँची सांस लेकर) अगर मुझसे और उससे लड़ाई न हो गई होती तो आज मैं भी तीन हाथ की ऊँची गद्दी पर बैठने का साहस करती मगर अफसोस! भूतनाथ ने मेरे साथ बहुत ही बुरा सलूक किया! (कुछ सोच कर) यदि बलभद्रसिंह को लेकर मैं राजा बीरेन्द्रसिंह के पास चली जाऊँ और भूतनाथ के ऊपर नालिश करूँ तो मैं बहुत अच्छी तरह रहूँ। मेरे मुकद्दमे का जवाबदेही भूतनाथ कदापि नहीं कर सकता और राजा साहब उसे जरूर प्राण

दण्ड की आज्ञा देंगे। बलभद्रसिंह को छिपा रखने का यदि मुझ पर दोष लगाया जायगा तो मैं कह सकूँगी कि जिस जमाने में जो राजा होता है प्रजा उसी का पक्ष करती है, अगर मैंने मायारानी और दारोगा के जमाने में उन लोगों का पक्ष किया तो कोई बुरा नहीं किया, मैं इस बात को बिल्कुल नहीं जानती थी बल्कि दारोगा भी नहीं जानता था कि राजा गोपालसिंह को मायारानी ने कैद कर रक्खा है, अस्तु अब आपका राज्य हुआ है तो मैं आपकी सेवा में उपस्थित हुई हूँ।

जमालो०। बात तो बहुत अच्छी है, फिर इस काम में देर क्यों कर रही हो? इस काम को जहाँ तक जल्द करोगी तुम्हारा भला होगा।

बेगम०। (कुछ सोच कर) अच्छी बात है, ऐसा करने के लिये मैं कल्ह ही यहाँ से रवाना हो जाऊँगी।

इतने ही में दर्वाजे के बाहर से यह आवाज आई, "मगर भूतनाथ को भी तो अपनी जान प्यारी है, वह ऐसा करने के लिये तुम्हें जाने कब देगा?"

तीनों ने चौंक कर दर्वाजे की तरफ निगाह की और भूतनाथ को कमरे के अन्दर आते हुए देखा।

बेगम०। (भूतनाथ से) आओ जी मेरे पुराने दोस्त! भला तुमने मेरे सामने आने का साहस तो किया!

भूतनाथ०। साहस और जीवट तो हमारा असली काम काम है।

बेगम०। (अपने बाईं तरफ बैठने का इशारा करके) इधर बैठ जाओ, मालूम होता है कि पुरानी बातों को तुम बिल्कुल ही भूल गये।

भूतनाथ०। बेगम की दाहिनी तरफ बैठ कर) हम दुनिया में आने से भी छः महीने पहिले की बात याद रखने वाले आदमी हैं, आज वह दिन नहीं है जिस दिन तुम्हें और जैपाल को देखने के साथ ही डर से मेरे बदन का खून रगों के अन्दर ही जम जाता था बल्कि आज का दिन उसके बिल्कुल विपरीत है।

बेगम०। अर्थात् आज तुम मुझे देख कर खुश होते हो!!

भूतनाथ०। बेशक।

बेगम०। क्या आज तुम मुझसे बिल्कुल नहीं डरते?

भूतनाथ० । रत्ती भर भी नहीं

बेगम० । क्या अब मैं अगर राजा बीरेन्द्रसिंह के यहाँ तुम पर नालिश करूँ तो मेरा मुकद्दमा सुना न जायगा और तुम साफ छूट जाओगे ?

भूतनाथ० । मगर अब तुम्हें राजा बीरेन्द्रसिंह के सामने पहुँचने ही कौन देगा ?

बेगम० । (क्रोध से) रोकेहीगा कौन ?

भूतनाथ० । गदाधरसिंह, जो तुम्हें अच्छी तरह सता चुका है और आज फिर सताने के लिये आया है !

बेगम० । (क्रोध को पचा कर और कुछ सोच कर) मगर यह तो बताओ कि तुम बिना इत्तला कराये यहाँ चले क्यों आये और पहरे वालों सिपाहियों ने तुम्हें आने कैसे दिया ?

भूतनाथ० । तुम्हारे दर्वाजे पर है कौन जिसकी जुबानी मैं इत्तला करवाता या जो मुझे यहाँ आने से रोकता ?

बेगम० । क्या पहरे के सिपाही सब मर गये ।

भूतनाथ० । मर ही गये होंगे !

बेगम० । क्या सदर दर्वाजा खुला हुआ और सुन्नसान है ?

भूतनाथ० । सुन्नसान तो है मगर खुला हुआ नहीं है, कोई चोर न घुस आवे इस ख्याल से आती समय मैं सदर दर्वाजा भीतर से बन्द करता आया हूँ, डरो मत, कोई तुम्हारी रकम उठा कर न ले जायगा !

बेगम० । (मन ही में चिढ़ के) जमालो, जरा नीचे जा कर देख तो सही कम्बख्त सिपाही सब क्या कर रहे हैं ?

भूतनाथ० । (जमालो से) खबरदार, यहाँ से उठना मत ! इस समय इस मकान में मेरा हुकूमत है, बेगम या जैपाल की नहीं ! (बेगम से) अच्छा अब सीधी तरह से बता दो कि बलभद्रसिंह को कहाँ पर कैद कर रक्खा है ?

बेगम० । मैं बलभद्रसिंह को क्या जानूँ ?

भूतनाथ० । तो अभी किसको ले कर राजा बीरेन्द्रसिंह के पास जाने के लिये तैयार हो गईं थीं ?

बेगम० तेरे बाप को ले कर जाने वाली थी !!

इतना सुनते ही भूतनाथ ने कस के एक चपत बेगम के गाल पर जमाई जिससे वह तलमला गई और कुछ ठहरने बाद तकिये के नीचे से छुरा निकाल कर भूतनाथ पर झपटी। भूतनाथ ने बाएँ हाथ से उसकी कलाई पकड़ ली और दाहिने हाथ से तिलिस्मी खञ्जर निकाल कर उसके बदन से लगा दिया और साथ ही इसके फुर्ती से नौरतन और जमालो के बदन में भी तिलिस्मी खञ्जर लगा दिया जिससे बात की बात में वे तीनों बेहोश हो कर जमीन पर लम्बी हो गईं। इसके बाद भूतनाथ ने बड़े गौर से चारो तरफ देखना शुरू किया। इस कमरे में दो आलमारियाँ थीं जिनमें बड़े बड़े ताले लगे हुए थे, भूतनाथ ने तिलिस्मी खञ्जर मार कर एक आलमारी का कब्जा काट डाला और आलमारी खोल कर उसके अन्दर की चीजें देखने लगा। पहिले एक गठरी निकली जिसमें बहुत से कागज बँधे हुए थे। शमादान के सामने वह गठरी खोली और एक एक कर के कागज देखने और पढ़ने लगा यहाँ तक कि सब कागज देख गया और उसी शमादान में लगा कर सब जला के खाक कर दिया। इसके बाद एक सन्दूकड़ी में भी कागज भरे हुए पाए। भूतनाथ ने उन कागजों को भी गौर से देखा और दो तीन कागज अपने बटुये में रख लेने बाद बाकी कागजों को जला दिया, इसके बाद फिर आलमारी ढूँढ़ना शुरू किया मगर और कोई चीज उसके काम की न निकली।

भूतनाथ ने दूसरी आलमारी का कब्जा भी खञ्जर से काट डाला और अन्दर की चीजों को ध्यान दे कर देखना शुरू किया। इस आलमारी में यद्यपि बहुत सी चीजें भरी हुई थीं मगर भूतनाथ ने केवल तीन चीजें उसमें से निकाल लीं। एक तो दस बारह पन्ने की छोटी सी किताब थी जिसे पा कर भूतनाथ बहुत ही खुश हुआ और चिराग के सामने जल्दी जल्दी उलट पलट कर दो तीन पन्ने पढ़ गया, दूसरा एक ताली का गुच्छा था, भूतनाथ ने उसे भी ले लिया, और तीसरी चीज एक हीरे की अंगूठी थी जिसके साथ एक पुर्जा बँधा हुआ था। यह अंगूठी एक डिबिया के अन्दर रक्खी हुई थी। भूतनाथ ने अंगूठी में से पुर्जा खोल पढ़ा और इसके पाने से बहुत प्रसन्न हो कर धीरे से बोला, "बस अब मुझे किसी चीज की जरूरत नहीं है!"

इन कामों से छुट्टी पा कर भूतनाथ बेगम के पास आया जो अभी तक

बेहोश पड़ी हुई थी और उसकी तरफ देख कर बोला, "अब यह मेरा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती, ऐसी अवस्था में एक औरत के खून से हाथ रंगाना व्यर्थ है !"

भूतनाथ हाथ में शमादान लिये बिचले खंड में उतर गया जहाँ उसके साथी दो आदमी हाथ में नंगी तलवार लिये हुये मौजूद थे। उसने अपने साथियों की तरफ देख कर कहा, "बस हमारा काम हो गया, बलभद्रसिंह इसी मकान में कैद है, इसे निकाल कर यहाँ से चल देना चाहिये।" इतना कह कर भूतनाथ ने शमादान अपने एक साथी के हाथ में दे दिया और एक कोठड़ी के दर्वाजे पर जा खड़ा हुआ जिसमें दोहरा ताला लगा हुआ था। ताली का गुच्छा जो ऊपर से लाया था उसी में से ताली लगा कर ताला खोला और अपने आदमियों को साथ लिये हुए कोठड़ी के अन्दर घुसा। यह कोठड़ी खाली थी मगर इसमें से एक दूसरी कोठड़ी में जाने के लिये दर्वाजा था और उसकी जञ्जीर में भी ताला लगा हुआ था। ताली लगा कर उस ताले को भी खोला और दूसरी कोठड़ी के अन्दर गया। इसी कोठड़ी में लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली का बाप बलभद्रसिंह कैद था।

दर्वाजा खोलते समय जञ्जीर खटकने के साथ ही बलभद्रसिंह चैतन्य हो गया था। जिस समय उसकी निगाह यकायक भूतनाथ पर पड़ी वह चौंक उठा और ताज्जुब भरी निगाहों से भूतनाथ को देखने लगा। भूतनाथ ने भी ताज्जुब की निगाह से बलभद्रसिंह को देखा और अफसोस किया क्योंकि बलभद्रसिंह की अवस्था बहुत ही खराब हो रही थी। शरीर सूख के काँटा हो गया था चेहरे पर और बदन में झुर्रियाँ पड़ गई थीं, सर मूँछ और दाढ़ी के बाल तथा नाखून इतने बढ़ गये थे कि जंगली मनुष्य और उसमें कुछ भी भेद न जान पड़ता था, अन्धेरे में रहते रहते बदन पीला पड़ गया था, और सूरत शक्ल से भी बहुत ही डरावना मालूम पड़ता था। एक कम्बल, मिट्टी की ठिलिया और पीतल का एक लोटा बस यही उसकी बिसात थी, इसके अतिरिक्त उस कोठड़ी में और कुछ भी न था। भूतनाथ को देख कर वह जिस ढङ्ग से चौंका और काँपा उसे देख कर भूतनाथ ने गर्दन नीची कर ली और धीरे से कहा, "आप उठिये और जल्दी निकल चलिये, मैं आपको छुड़ाने के लिये आया हूँ।"

बलभद्र० । (आश्चर्य से) क्या तू मुझे छुड़ाने के लिये आया है ? क्या यह बात सच है ?

भूतनाथ० । जी हाँ ।

बलभद्र० । मुझे विश्वास नहीं होता ।

भूत० । इस समय तो आप यहाँ से निकल चलिये, फिर जो कुछ सवाल जवाब या सोच विचार करना हो कीजियेगा ।

बलभद्र० । (खड़े हो कर) कदाचित् यह बात सच हो ! लेकिन अगर झूठ भी हो तो कोई हर्ज नहीं, क्योंकि मैं इस कैद में रहने की बनिस्बत जल्द मर जाना अच्छा समझता हूँ !

भूतनाथ ने इस बात का कुछ जवाब न दिया और बलभद्रसिंह को अपने पीछे पीछे आने का इशारा किया । बलभद्रसिंह इतना कमजोर हो गया था कि उसे मकान के नीचे उतरना कठिन जान पड़ता था इसलिये भूतनाथ ने उसका हाथ थाम लिया और मकान के नीचे उतार कर दर्वाजे के बाहर ले गया । मकान में, दर्वाजे के बाहर, बल्कि गली भर में सन्नाटा छाया हुआ था क्योंकि यह मकान ऐसी पेचीली अन्धेरी और सन्नाटे की गली में था कि यहाँ शायद महीने में एक दफे भी किसी भले आदमी का गुजर नहीं होता होगा । दर्वाजे पर पहुँच कर भूतनाथ ने बलभद्रसिंह से पूछा, "आप घोड़े पर सवार हो सकते हैं ?"

इसके जवाब में बलभद्रसिंह ने कहा, "मुझमें उचक कर सवार होने की ताकत तो नहीं है, हाँ अगर घोड़े पर बैठा दोगे तो गिरूँगा नहीं ।"

भूतनाथ ने शमादान मकान के भीतर चौक में रख दिया और तब बलभद्रसिंह को आगे बढ़ा ले गया । थोड़ी ही दूर पर एक आदमी दो कसे कसाये घोड़ों की बागडोर थामे बैठा हुआ था । भूतनाथ एक घोड़े पर बलभद्रसिंह को सवार करा के दूसरे घोड़े पर आप जा बैठा और अपने तीनों आदमियों को कुछ कह कर वहाँ से रवाना हो गया ।

ग्यारहवां बयान

रात बहुत कम बाकी थी जब बेगम नौरतन और जमालो की बेहोशी दूर हुई ।

बेगम० । (चारो तरफ देख कर) है है !! यहाँ तो बिलकुल अन्धकार हो रहा है ! जमालो, तू कहाँ है ?

नौरतन० । जमालो नीचे गई है ।

बेगम० । क्यों ?

नौरतन० । जब हम दोनों होश में आईं तो यहाँ बिल्कुल अन्धकार देख कर घबड़ाने लगीं, नीचे चौक में कुछ रोशनी मालूम होती थी, जमालो ने झांक कर देखा तो यहाँ वाला शमादान चौक में बलता पाया, आहट लेने पर जब मालूम हुआ कि नीचे कोई भी नहीं है तो शमादान लेने के लिये नीचे गई है ।

बेगम० । हाय ! यह क्या हुआ !!

नौरतन० । पहिले रोशनी आने दो तो कहूँगी, लो जमालो आ गई ।

बेगम० । क्यों बहिन जमालो ! क्या नीचे बिल्कुल सन्नाटा है ?

जमालो० । (शमादान जमीन पर रख कर) हाँ बिल्कुल सन्नाटा है, तुम्हारे आदमी सब भी न मालूम कहाँ गायब हो गये !

बेगम० । हाय हाय ! यहाँ तो दोनों आलमारियाँ टूटी पड़ी हैं ! है है !! मालूम होता है कि कागज सभी जला कर राख कर दिये गये ! (एक आलमारी के पास जाकर और अच्छी तरह देख कर) बस, सर्वनाश हो गया ! ताज्जुब है कि उसने मुझे जीता क्यों छोड़ दिया !!

दोनों आलमारियों और उनकी चीजों की खराबी देख कर बेगम की दशा पागलों की सी हो गई । उसकी आँखों से आँसू जारी था और वह घबरा घबरा कर चारो तरफ घूम रही थी । थोड़ी ही देर में सवेरा हो गया और जब वह मकान के नीचे आई तो एक कोठड़ी के अन्दर से कई आदमियों के चिल्लाने की आवाज सुनाई पड़ी । आवाज से वह पहचान गई कि हमारे सिपाही लोग इसी में बन्द हैं । जब जंजीर खोली तो वे सब बाहर निकले और घबराहट के साथ चारो तरफ देखने लगे । बेगम के पास जाने के पहिले ही भूतनाथ ने इन आदमियों को तिलिस्मी खंजर की मदद से बेहोश कर के इस कोठड़ी के अन्दर बन्द कर दिया था ।

बेगम ने सभों से बेहोशी का सबब पूछा जिसके जवाब में उन्होंने कहा कि एक आदमी ने आकर एक खंजर एकाएकी हम लोगों के बदन से लगाया, हम लोग कुछ भ न सोच सके कि वह पागल है या चोर, बस एकदम बेहोश हो गये और तनोबदन की सुध जाती रही, फिर क्या हुआ सो हम नहीं जानते, जब होश में आये तो अपने को कोठड़ी के अन्दर कैद पाया ।

इसके बाद बेगम ने उन लोगों से कुछ भी न पूछा और नौरतन तथा जमालो को साथ लेकर ऊपर वाले खण्ड में चली गई जहाँ बलभद्रसिंह कैद था। जब बेगम ने उस कोठरी को खुला पाया और बलभद्रसिंह को उसमें न देखा तब और भी हताश हो गई और जमालो की तरफ देख के बोली, "बहिन! तुमने सच कहा था कि राजा बीरेन्द्रसिंह के पक्षपातियों का मनोरमा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती! देखो भूतनाथ के पास भी वैसा ही तिलिस्मी खंजर मौजूद है और उस खंजर की बदौलत उसने जो काम किया उसे भी तुम देख ही चुकी हो। अब अगर मैं इसका बदला भूतनाथ से लिया भी चाहूँ तो कुछ नहीं ले सकती क्योंकि अब न तो मेरे कब्जे में बलभद्रसिंह रहा न वे सबूत रह गये जिनकी बदौलत मैं भूतनाथ को दबा सकती थी। हाय! एक दिन वह था कि मेरी सूरत देख कर भूतनाथ अधमुआ हो जाता था और एक आज का दिन है कि मैं भूतनाथ का कुछ भी नहीं कर सकती! न मालूम इस मकान का और मेरा पता उसे कैसे मालूम हुआ और इतना कर गुजरने पर भी उसने मेरी जान क्यों छोड़ दी! निःसन्देह इसमें भी कोई भेद है, उसने अगर मुझे जीता छोड़ दिया तो सुखी रहने के लिये नहीं बल्कि इसमें भी उसने अपना कुछ फायदा ही सोचा होगा।"

जमालो०। बेशक ऐसा ही है, शुक्र करो कि वह तुम्हारी दौलत नहीं ले गया नहीं तो बड़ा ही अन्धेरा हो जाता और तुम टुकड़े टुकड़े को मोहताज हो जातीं, अब तुम इस बात का भी निश्चय रक्खो कि जैपालसिंह की जान कदापि नहीं बच सकती।

बेगम०। बेशक ऐसा ही है, खैर अब तुम्हारी क्या राय है?

जमालो०। मेरी राय तो यही है कि अब तुम एक पल भी इस मकान में मत ठहरो और अपनी जमा पूँजी लेकर यहाँ से चल दो। तुम्हारे पास इतनी दौलत है कि किसी दूसरे शहर में आराम से रह कर अपनी जिन्दगी बिता सको जहाँ बीरेन्द्रसिंह के ऐयारों को जाने की भी जरूरत न पड़े।

बेगम०। तुम्हारी राय बहुत ठीक है, तो क्या तुम दोनों मेरा साथ न दोगी?

जमालो०। मैं जरूर तुम्हारा साथ दूँगी!

नौरतन०। मैं भी ऐसी अवस्था में तुम्हारा साथ नहीं छोड़ सकती। जब

सुख के दिनों में तुम्हारे साथ रही तो क्या अब दुःख के जमाने में तुम्हारा साथ छोड़ दूँगी ! ऐसा नहीं हो सकता !!

बेगम० । अच्छा तो अब निकल भागने की तैयारी करनी चाहिये ।

जमालो० । जरूर ।

इतने ही में मकान के बाहर बहुत से आदमियों के शोरगुल की आवाज इन तीनों को मालूम पड़ी । बेगम की आज्ञानुसार पता लगाने के लिये जमालो नीचे उतर गई और थोड़ी ही देर में लौट आ कर बोली, "हे हे ! गजब हो गया ! राजा साहब के सिपाहियों ने मकान को घेर लिया और तुम्हें गिरफ्तार करने के लिये आये हैं !!" जमालो इससे ज्यादे न कहने पाई थी कि घड़घड़ाते हुए बहुत से सरकारी सिपाही मकान के ऊपर चढ़ आये और उन्होंने बेगम नौरतन और जमालो को गिरफ्तार कर लिया ।

बारहवां बयान

काशीपुरी से निकल कर भूतनाथ ने सीधे चुनारगढ़ का रास्ता लिया । पहर दिन चढ़े तक भूतनाथ और बलभद्रसिंह घोड़े पर सवार बराबर चले गये और इस बीच में उन दोनों में किसी तरह की बातचीत न हुई । जब वे दोनों जंगल के किनारे पहुँचे तो बलभद्रसिंह ने भूतनाथ से कहा, "अब मैं थक गया हूँ, घोड़े पर मजबूती के साथ नहीं बैठ सकता । वर्षों की कैद ने मुझे बिल्कुल बेकाम कर दिया और अब मुझमें दस कदम चलने की भी हिम्मत न रही, अगर कुछ देर तक कहीं ठहर कर आराम कर लेते तो अच्छा होता ।"

भूत० । बहुत अच्छा, थोड़ी दूर और चलिये, इसी जंगल में किसी अच्छे ठिकाने जहाँ पानी भी मिल सकता हो ठहर कर आराम कर लेंगे ।

बलभद्र० । अच्छा तो अब घोड़े को तेज मत चलाओ ।

भूत० । (घोड़े की तेजी कम करके) बहुत खूब ।

बल० । क्यों भूतनाथ ! क्या वास्तव में तुमने मुझे कैद से छुड़ाया है या मुझे धोखा हो रहा है ?

भूत० । (मुस्कुरा कर) क्या आपको इस मैदान की हवा मालूम नहीं होती ? या आप अपने को घोड़े पर सवार स्वतन्त्र नहीं देखते ? फिर ऐसा सवाल क्यों करते हैं ?

बल० । यह सब कुछ ठीक है मगर अभी तक मुझे विश्वास नहीं होता कि भूतनाथ के हाथों मुझे मदद पहुँचेगी, यदि तुम मेरी मदद किया ही चाहते तो क्या आज तक मैं कैदखाने ही में पड़ा सड़ा करता ! क्या तुम नहीं जानते थे कि मैं कहाँ और किस अवस्था में हूँ ?

भूतनाथ० । बेशक मैं नहीं जानता था कि आप कहाँ और किस अवस्था में हैं । उस पुरानी बात को जाने दीजिये मगर इधर जब से मैंने आपकी लड़की श्यामा (कमलिनी) की ताबेदारी की है तब से बल्कि इससे भी बरस डेढ़ बरस पहिले ही से मुझे आपकी खबर न थी । मुझे अच्छी तरह विश्वास दिलाया गया था कि अब आप इस दुनिया में न रहे । यदि आज के दो महीने पहिले भी मुझे मालूम हो गया होता कि आप जीते हैं और कहीं कैद हैं तो मैं आपको कैद से छुड़ा कर कृतार्थ हो गया होता ।

बल० । (आश्चर्य से) क्या श्यामा जीती है ?

भूत० । हाँ जीती है ।

बल० । तो लाडिली भी जीती होगी ?

भूत० । हाँ वह भी जीती है ।

बल० । ठीक है क्योंकि वे दोनों मेरे साथ उस समय जमानिया में न आई थीं जब लक्ष्मीदेवी की शादी होने वाली थी । पहिले मुझे लक्ष्मीदेवी के भी जीते रहने की आशा न थी मगर कैद होने के थोड़े ही दिन बाद मैंने सुना कि लक्ष्मीदेवी जीती है और जमानिया की रानी तथा मायारानी कहलाती है ।

भूत० । लक्ष्मीदेवी के बारे में जो कुछ आपने सुना सब झूठ है । जमाने में बहुत बड़ा उलट फेर हो गया जिसकी आपको कुछ भी खबर नहीं । वास्तव में मायारानी कोई दूसरी ही औरत थी और लक्ष्मीदेवी ने भी बड़े दुःख भोगे परंतु ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिये जिसने दुःख के अथाह समुद्र में डूबते हुए लक्ष्मीदेवी के बेड़े को पार कर दिया । अब आप अपनी तीनों लड़कियों को अच्छी अवस्था में पावेंगे । मुझे यह बात पहिले मालूम न थी कि मायारानी वास्तव में लक्ष्मीदेवी नहीं है ।

बल० । क्या वास्तव में ऐसी ही बात है ? क्या सचमुच में अपनी तीनों बेटियों को देखूँगा ? क्या तुम मुझ पर किसी तरह का जुल्म न करोगे और मुझे छोड़ दोगे ?

भूत० । अब मैं किस तरह अपनी बातों पर आपको विश्वास दिलाऊँ ? क्या आपके पास कोई ऐसा सबूत है जिससे मालूम हो कि मैंने आपके साथ बुराई की?

बल० । सबूत तो मेरे पास कोई भी नहीं मगर मायारानी के दारोगा और नैपाल की जुबानी मैंने तुम्हारे विषय में बड़ी बड़ी बातें सुनी थीं और कुछ दूसरे जरिये से भी मालूम है ।

भूत० । बस या तो आप दुश्मनों की बातों को मानिये या मेरी इस खैरख्वाही को देखिये कि कितनी मुश्किल से आपका पता लगाया और किस तरह जान पर खेल कर आपको निकाल ले चला हूँ ।

बल० । (लम्बी साँस ले कर) खैर जो हो, आज यदि तुमने सच्ची नीयत से मुझे छुड़ाया है और यदि तुम्हारी बदौलत मैं किसी तरह तकलीफ न पा कर अपनी तीनों लड़कियों से मिलूँगा तो तुम्हारा कसूर यदि कुछ हो भी तो मैं माफ करता हूँ ।

भूत० । इसके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूँ । लीजिये, यह जगह बहुत अच्छी है, घने पेड़ों की छाया है और पगडण्डी से बहुत हट कर भी है ।

बल० । ठीक तो है, अच्छा तुम उतरो और मुझे भी उतारो ।

दोनों ने घोड़ा रोका, भूतनाथ घोड़े से नीचे उतर पड़ा और उसकी बागडोर एक डाल से अड़ाने बाद धीरे से बलभद्रसिंह को नीचे उतारा, जीनपोश बिछा कर उन्हें आराम करने के लिये कहा और आप दोनों घोड़ों की पीठ खाली कर लम्बी बागडोर के सहारे एक पेड़ के साथ बाँध दिया जिसमें वे भी लोट पोट कर थकावट मिटा लें और घास चरें ।

यहाँ पर भूतनाथ ने बलभद्रसिंह की बड़ी खातिरदारी की । ऐयारी के बटुए में से उस्तरा निकाल कर अपने हाथ से उनकी हजामत बनाई, दाढ़ी मूछी, कँची लगा कर सर के बाल दुरुस्त किये और इसके बाद स्नान कराया और बदलने के लिये यज्ञोपवीत दिया । आज बहुत दिनों के बाद बलभद्रसिंह ने चश्मे के किनारे बैठ कर सन्ध्यावन्दन किया और देर तक सूर्य भगवान की स्तुति करते रहे । जब इस तरह से दोनों आदमी निश्चिन्त हुए तो भूतनाथ ने खुर्जी में से कुछ मेवा निकाल कर खाने के लिये बलभद्रसिंह को दिया और आप भी खाया । अब बल-

भद्रसिंह को निश्चय हो गया कि भूतनाथ मेरे साथ दुश्मनी नहीं करता और उसने नेकी ही की राह से उसे भारी कैदखाने से छुड़ाया है।

बल०। गदाधरसिंह! शायद तुमने थोड़े ही दिन से अपना नाम भूतनाथ रक्खा है?

भूत०। जी हाँ, आज कल मैं इसी नाम से मशहूर हूँ।

बल०। अस्तु मैं बड़ी खुशी से तुम्हें धन्यवाद देता हूँ क्योंकि अब निश्चय हो गया कि तुम मेरे दुश्मन नहीं हो।

भूत०। (धन्यवाद के बदले में सलाम करके) मगर मेरे दुश्मनों ने मेरी तरफ से आपके कान बहुत भरे हैं और वे बातें ऐसी हैं कि यदि आप राजा बीरेन्द्रसिंह के सामने उन्हें कहेंगे तो मैं उनकी आँखों से उतर जाऊँगा।

बल०। नहीं, मैं प्रतिज्ञापूर्वक कहता हूँ कि तुम्हारे विषय में कोई ऐसी बात किसी के सामने न कहूँगा जिससे तुम्हारा नुकसान हो।

भूत०। (पुनः सलाम कर के) मैं आशा करता हूँ कि समय पड़ने पर आप मेरी सहायता भी करेंगे?

बल०। मैं सहायता करने योग्य तो नहीं हूँ मगर हाँ यदि कुछ कर सकूँगा तो अवश्य करूँगा।

भूत०। इत्तफाक से राजा बीरेन्द्रसिंह के ऐयारों ने जैपालसिंह को गिरफ्तार कर लिया है जो आपकी सूरत बन कर लक्ष्मीदेवी को धोखा देने गया था। जब उसे अपने बचाव का कोई ढंग न सूझा तो उसने आपके मार डालने का दोष मुझ पर लगाया। मैं स्वप्न में भी नहीं सोच सकता था कि आप जीते हैं, ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिये कि यकायक आपके जीते रहने का शक मुझे हुआ और धीरे धीरे वह शक पक्का होता गया और मैं आपकी खोज करने लगा। अब आशा है कि आप स्वयम् मेरी तरफ से जैपालसिंह का मुँह तोड़ेंगे।

बल०। (क्रोध से) जैपाल मेरे मारने का दोष तुम पर लगा के आप बच जाना चाहता है!!

भूत०। जी हाँ।

बल०। उसकी ऐसी तैसी! उसने तो मुझे ऐसी ऐसी तकलीफें दी हैं कि

मेरा ही जी जानता है, अच्छा यह बताओ कि इधर क्या क्या मामले हुए और राजा बीरेन्द्रसिंह को जमानिया तक पहुँचने की नौबत क्यों आई ?

भूतनाथ ने जब से उसने कमलिनी की ताबेदारी कबूल की थी, कुल हाल कुँअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह, मायारानी, दारोगा, मनोरमा, कमलिनी, दिग्विजयसिंह और राजा गोपालसिंह वगैरह का बयान किया मगर अपने और जैपालसिंह के मामले में कुछ घटा बढ़ा कर कहा। बलभद्रसिंह ने बड़े गौर और ताज्जुब से सब बातें सुनीं और भूतनाथ की खैरखाही तथा मर्दानगी की बड़ी तारीफ की। थोड़ी देर तक और बातचीत होती रही, इसके बाद दोनों आदमी घोड़े पर सवार हो चुनारगढ़ की तरफ रवाना हुए और पहर भर के बाद उस तिलिस्म के पास पहुँचे जो चुनारगढ़ से थोड़ी दूर पर था और जिसे राजा बीरेन्द्रसिंह ने फतह किया (तोड़ा) था।

काशी से चुनारगढ़ बहुत दूर न होने पर भी इन दोनों को वहाँ पहुँचने में देर हो गई। एक तो इसलिये कि दुश्मनों के डर से सदर राह छोड़ भूतनाथ चक्कर देता हुआ गया था, दूसरे रास्ते में ये दोनों बहुत देर तक अटके रहे, तीसरे कमजोरी के सबब से बलभद्रसिंह घोड़े को तेज चला भी नहीं सकते थे।

पाठक ! इस तिलिस्मी खंडहर की अवस्था आज दिन वैसी नहीं है जैसी आपने पहिले देखी थी जब राजा बीरेन्द्रसिंह ने इस तिलिस्म को तोड़ा था। आज इसके चारो तरफ राजा सुरेन्द्रसिंह की आज्ञानुसार बहुत बड़ी इमारत बन गई है और अभी तक बन रही है। इस इमारत को जीतसिंह ने अपने ढंग पर बनवाया था। इसमें बड़े बड़े तहखाने, सुरंग और गुप्त कोठड़ियाँ जिनके दर्वाजों का पता लगाना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव था, बन कर तैयार हुई हैं। अच्छे अच्छे कमरे, सहन, बालाखाने, दीवानखाने इत्यादि जीतसिंह की बुद्धिमानी का नमूना दिखा रहे हैं। बीच में एक बहुत बड़ा रमना छूटा हुआ है जिसके बीचोबीच में तो वह खंडहर है और उसके चारो तरफ बाग लगा है। खंडहर की टूटी फूटी इमारत की भी मरम्मत हो चुकी है और अब वह खंडहर खंडहर नहीं मालूम होता। भीतर की इमारत का काम बिलकुल खतम हो चुका है, केवल बाहरी हिस्से में कुछ काम लगा हुआ है सो भी दस पन्द्रह दिन से ज्यादे का नहीं है। जिस समय बलभद्रसिंह को लिये हुए भूतनाथ वहाँ पहुँचा उस समय

जातसिंह भी वहाँ मौजूद थे और पन्नालाल रामनारायण तथा पण्डित बद्रीनाथ को साथ लिए हुए फाटक के बाहर टहल रहे थे। पन्नालाल रामनारायण और पण्डित बद्रीनाथ तो भूतनाथ को बखूबी पहचानते थे, हाँ जीतसिंह ने शायद उसे नहीं देखा था मगर तेजसिंह ने भूतनाथ की तस्वीर अपने हाथ से तैयार करके जीतसिंह और सुरेन्द्रसिंह के पास भेजी थी और उसकी विचित्र घटना का समाचार भी लिखा था।

भूतनाथ को दूर ही से आते हुए देख कर पन्नालाल ने जीतसिंह से कहा, "देखिये, भूतनाथ चला आ रहा है।"

जीत०। (गौर से भूतनाथ को देख कर) मगर दूसरा आदमी उसके साथ कौन है ?

पन्ना०। मैं इस दूसरे को तो नहीं पहिचानता।

जीत०। (बद्रीनाथ से) तुम पहिचानते हो ?

बद्री०। जी नहीं।

इतने में भूतनाथ और बलभद्रसिंह भी वहाँ पहुँच गये। भूतनाथ ने घोड़े पर से उतर कर जीतसिंह को सलाम किया क्योंकि वह जीतसिंह को बखूबी पहिचानता था इसके बाद धीरे से बलभद्रसिंह को भी घोड़े से नीचे उतारा और जीतसिंह की तरफ इशारा करके कहा, "यह तेजसिंहजी के पिता जीतसिंहजी हैं।" और दूसरे ऐयारों का भी नाम बताया। बलभद्रसिंह का भी परिचय सभों से दे कर भूतनाथ ने जीतसिंह से कहा, "यह बलभद्रसिंह हैं जिनका पता लगाने का बोझ मुझ पर डाला गया था। ईश्वर ने मेरी इज्जत रख ली और मेरे हाथों इन्हें कैद से छुड़ाया, आप तो सब हाल सुन ही चुके होंगे।

जीत०। हाँ मुझे सब हाल मालूम है, तुम्हारे मुकद्दमे ने तो हम लोगों का दिल अपनी तरफ ऐसा खैंच लिया है कि दिन रात उसी का ध्यान रहता है, मगर तुम यकायक इस तरफ कैसे आ निकले और इन्हें कहाँ पाया ?

भूतनाथ०। मैं इन्हें काशीपुरी से छुड़ा कर लिये आ रहा हूँ, दुश्मनों के खौफ से दक्खिन दबता हुआ चक्कर दे कर आना पड़ा इसी से अब यहाँ पहुँचने की नौबत आई, नहीं तो अब तक कब का चुनार पहुँच गया होता। राजा बीरेन्द्र

सिंह की सवारी चुनार की तरफ रवाना हो गई थी इसलिये मैं भी इन्हें लेकर सीधे चुनार ही की तरफ रवाना हुआ।

जीत०। बहुत अच्छा किया कि यहाँ चले आये, कल बीरेन्द्रसिंह भी यहाँ पहुँच जायंगे और उनका डेरा भी इसी मकान में पड़ेगा। किशोरी कामिनी और कमला वाला हृदय विदारक समाचार तो तुमने सुना ही होगा?

भूत०। (चौंक कर) क्या क्या? मुझे कुछ भी नहीं मालूम!

जीत०। (कुछ सोच कर) अच्छा आप लोग जरा आराम कर लीजिये तो सब हाल कहेंगे क्योंकि बलभद्रसिंह कैद की मुसीबत उठाने के कारण बहुत सुस्त और कमजोर हो रहे हैं। (पन्नालाल की तरफ देखकर) पूरब वाले नम्बर दो के कमरे में इन लोगों का डेरा दिलवाओ और हर तरह के आराम का बन्दोबस्त करो, इनकी खातिरदारी और हिफाजत तुम्हारे ऊपर है।

पन्ना०। जो आज्ञा।

हमारे ऐयारों को इस बात की उत्कण्ठा बहुत ही बढ़ी थी कि किसी तरह भूतनाथ के मुकद्दमे का फैसला हो और उसकी विचित्र घटना का हाल जानने में आवे क्योंकि इस उपन्यास भर में जैसा भूतनाथ का अद्भुत रहस्य है वैसा किसी पात्र का नहीं है। इस लिये हमारे ऐयारों को इस बात की बहुत बड़ी खुशी हुई कि भूतनाथ असली बलभद्रसिंह को छुड़ा कर ले आया और कल राजा बीरेन्द्रसिंह के यहाँ आ पहुँचने पर इसका विचित्र हाल भी मालूम हो जायगा।

❀ पन्द्रहवाँ हिस्सा समाप्त ❀

दुर्गा प्रेस, ढुण्ढिराज गणेश, बनारस।

* श्रीः *



चन्द्रकान्ता सन्तति

सोलहवाँ हिस्सा

पहिला बयान

अब हम अपने पाठकों को पुनः जमानिया के तिलिस्म में ले चलते हैं और इन्दिरा का बचा हुआ किस्सा उसी की जुबानी सुनवाते हैं जिसे अधूरा छोड़ दिया गया था।

इन्दिरा ने एक लम्बी साँस लेकर अपना किस्सा यों कहना शुरू किया:—

इन्दिरा०। जब मैं अपनी माँ की लिखी हुई चीठी पढ़ चुकी तो जी में खुश होकर सोचने लगी कि ईश्वर चाहेगा तो मैं बहुत जल्द अपनी माँ से मिलूँगी और हम दोनों को इस कैद से छुटकारा मिलेगा। अब केवल इतनी ही कसर है कि दारोगा मेरे पास आवे और जो कुछ वह कहे मैं उसे पूरा कर दूँ। थोड़ी देर सोच विचार कर मैंने अन्ना से कहा, "अन्ना, जो कुछ दारोगा साहब कहें उसे तुरत कर देना चाहिये।"

अन्ना०। नहीं बेटी ऐसा कभी न करना चाहिये. तू भूलती है क्योंकि इन

चालबाजियों को समझने लायक अभी तेरी उम्र नहीं है, अगर तू दारोगा के कहे मुताबिक काम कर देगी तो जरूर तेरी माँ और साथ ही उसके तू भी मार डाली जायगी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि दारोगा ने तेरी माँ से जबर्दस्ती यह चीठी लिखवाई है।

मैं०। तब तुमने इस चीठी के बारे में कैसे कहा कि मैं तेरे लिये खुश-खबरी लाई हूँ।

अन्ना०। 'खुशखबरी' से मेरा यह मतलब न था कि अगर तू दारोगा के कहे मुताबिक काम कर देगी तो तुझे और तेरी माँ को कैद से छुट्टी मिल जायगी, बल्कि मेरा यह मतलब था कि तेरी माँ अभी तक जीती जागता है इसका पता लग गया। क्या तुझे यह मालूम नहीं हुआ कि स्वयम् दारोगाने तुझे कैद किया है?

मैं०। यह तो मैं खुद ही तुझसे कह चुकी हूँ कि दारोगा ने मुझे धोखा देकर कैद कर लिया।

अन्ना०। तो क्या तुझे छोड़ देने से दारोगा की जान बच जायगी? क्या दारोगा इस बात को नहीं समझता कि अगर तू छूटेगी तो सीधे राजा गोपालसिंह के पास चली जायगी और अपना तथा लक्ष्मीदेवी का भेद कह देगी? उस समय दारोगा का क्या हाल होगा?

मैं०। ठीक है, दारोगा मुझे कभी न छोड़ेगा।

अन्ना०। कभी न छोड़ेगा बल्कि वह कम्बख्त तो अब तक तुझे मार डाले होता, मगर अब निश्चय हो गया कि उसे तुम दोनों से अपना कुछ मतलब निकालना है इसीलिये अभी तक कैद किये हुए है, जिस दिन उसका काम हो जायगा उसी दिन दोनों को मार डालेगा। जब तक उसका काम नहीं होता तभी तक तुम दोनों की जान बची है। (चीठी की तरफ इशारा करके) यह चीठी उसने इसी चालाकी से लिखवाई है कि जिसमें तू उसका काम जल्द कर दे!

मैं०। अन्ना! तू सच कहती है, अब मैं दारोगा का काम कभी न करूँगी चाहे जो हो।

अन्ना०। अगर तू मेरे कहे मुताबिक करेगी तो निःसन्देह तुम दोनों की जान बची रहेगी और किसी न किसी दिन तुम दोनों को कैद से भी छुट्टी मिल

मैं० । बेशक जो तू कहेगी मैं वही करूँगी ।

अन्ना० । मगर मैं डरती हूँ कि अगर दारोगा तुझे धमकावेगा या मारे पीटेगा तो तू मार खाने के डर से उसका काम जरूर कर देगी ।

मैं० । नहीं नहीं, कदापि नहीं, अगर वह मेरी बोटी बोटी काट कर फेंक देगा तो भी मैं तेरे कहे बिना उसका कोई काम न करूँगी ।

अन्ना० । ठीक है मगर साथ ही इसके यह भी न कह दीजियो कि अन्ना कहेगी तो मैं तेरा काम कर दूँगी ।

मैं० । नहीं सो तो न कहूँगी, मगर कहूँगी क्या सो बताओ ?

अन्ना० । बस जहाँ तक हो टाल मटोल करती जाइयो, आज कल के वादे पर दो तीन दिन टल जाना चाहिये, मुझे आशा होती है कि इस बीच में हम लोग छूट जायंगे ।

सुबह की सुफेदी खिड़कियों में दिखाई देने लगी और दर्वाजा खोल कर दारोगा कमरे के अन्दर आता हुआ दिखाई दिया । दारोगा सीधे मेरे पास आ कर बैठ गया और बोला—"इन्दिरा ! तू समझती होगी कि दारोगा साहब ने मेरे साथ दगाबाजी की और मुझे गिरफ्तार कर लिया मगर मैं धर्म की कसम खा कर कहता हूँ कि वास्तव में यह बात नहीं है, सच तो यों है कि स्वयम् राजा गोपाल-सिंह तेरे दुश्मन हो रहे हैं । उन्होंने मुझे हुक्म दिया था कि इन्दिरा को गिरफ्तार करके मार डालो, और उन्हीं की आज्ञानुसार मैं उनके कमरे में बैठा हुआ तुझे गिरफ्तार करने की तर्कीब सोच रहा था कि यकायक तू आ गई और मैंने तुझे गिरफ्तार कर लिया । लाचार हूँ कि मैं राजा साहब का हुक्म टाल नहीं सकता मगर साथ ही इसके जब तुझे मारने का इरादा करता हूँ तो मुझे दया आ जाती है और तेरी जान बचाने की तर्कीब सोचने लगता हूं । तुझे इस बात का ताज्जुब होता होगा कि राजा गोपालसिंह तेरे दुश्मन क्यों हो गये मगर मैं तेरा यह शक भी मिटाए देता हूँ । असल बात यह है कि राजा साहब को लक्ष्मादेवी के साथ शादी करना मंजूर न था और जिस खूबसूरत औरत के साथ वे शादी किया चाहते थे वह विधवा हो चुकी थी तथा लोगों की जानकारी में उसके साथ शादी नहीं कर सकते थे इसीलिये लक्ष्मादेवी के बदले में यह दूसरी औरत उलट फेर कर दी गई । आज्ञानुसार लक्ष्मादेवी तो मार डाली गई मगर उन लोगों को भी

चुपचाप मार डालने की राजा साहब ने आज्ञा दे दी जिन्हें यह भेद मालूम हो चुका था या जिनकी बदौलत इस भेद के खुल जाने का डर था। तेरे सबब से भी लक्ष्मीदेवी का भेद अवश्य खुल जाता इसलिये तू भी उनकी आज्ञानुसार गिरफ्तार कर ली गई।"

गोपाल०। (क्रोध से) क्या कम्बख्त दारोगा ने तुझे इस तरह समझा बुझा दिया?

इन्दिरा०। जी हाँ, और यह बात उसने ऐसे ढंग और अफसोस के साथ कही कि मुझे और मेरी अन्ना को उसकी बातों पर थोड़ी देर के लिये पूरा विश्वास हो गया, बल्कि वह इसके बाद भी बहुत देर तक आपकी शिकायत करता रहा।

गोपाल०। और मुझे वह बहुत दिनों तक तेरी बदमाशी का विश्वास दिलाता रहा, अस्तु अब मुझे मालूम हुआ कि तू मेरा सामना करने से क्यों डरती थी, अच्छा तब क्या हुआ?

इन्दिरा०। दारोगा की बात सुन कर अन्ना ने उससे कहा कि जब आपको इन्दिरा पर दया आती है तो कोई ऐसी तर्कीब निकालिये जिसमें इस लड़की और इसकी माँ की जान बच जाय।

दारोगा०। मैं खुद इसी फिक्र में लगा हूँ। इसकी माँ को तो बदमाशों ने गिरफ्तार कर लिया था मगर ईश्वर की कृपा से वह बच गई, मैंने उसे उन शैतानों के हाथ से बचा लिया।

अन्ना०। मगर वह भी तो लक्ष्मीदेवी को पहिचानती है और उसकी बदौलत भी लक्ष्मीदेवी का भेद खुल जाना संभव है!!

दारोगा०। हाँ ठीक है मगर इसके लिये भी मैंने एक बन्दोबस्त कर लिया है।

अन्ना०। वह क्या?

दारोगा०। (एक चीठी दिखा कर) देख सर्यू से मैंने यह चीठी लिखवा ली है पहले इसे पढ़ ले।

मैंने और अन्ना ने वह चीठी पढ़ी, उसमें यह लिखा हुआ था, "मेरी प्यारी लक्ष्मीदेवी! मुझे इस बात का बड़ा अफसोस है कि तेरे ब्याह के समय मैं न आ सकी। इसका एक बहुत बड़ा कारण है जो मुलाकात होने पर मैं तुझसे कहूँगी

मगर अपनी बेटी इन्दिरा की जुबानी यह सुन कर मुझे बड़ी खुशी हुई कि यह ब्याह के समय तेरे पास थी बल्कि ब्याह होने के एक दिन बाद तक वह तेरे साथ खेलती रही है।"

जब मैं चीठी पढ़ चुकी तो दारोगा ने मुझसे कहा कि बस अब तू भी एक चीठी लक्ष्मीदेवी के नाम से लिख दे और उसमें यह लिख कि मुझे इस बात का रंज है कि तेरी शादी होने के बाद एक दिन से ज्यादे मैं तेरे पास न रह सकी मगर मैं तेरी उस छवि को नहीं भूल सकती जो ब्याह होने के दूसरे दिन देखी थी। मैं ये दोनों चीठियाँ राजा गोपालसिंह को दूँगा और तुम दोनों को छोड़ देने के लिये उनसे जिद्द करके उन्हें समझा दूँगा कि अब सर्यू और इन्दिरा की जुबानी लक्ष्मीदेवी का कोई भेद नहीं खुल सकता, अगर वे दोनों कुछ कहेंगी तो इन चीठियों के मुकाबले में स्वयं झूठी बनेंगी।

मैंने दारोगा की बातों का यह जवाब दिया कि बात तो आपने बहुत ठीक कही, अच्छा मैं आपके कहे मुताबिक चीठी कल लिख दूँगी।

दारो०। यह काम देर करने का नहीं है, इसमें जहाँ तक जल्दी करोगी तहाँ तक तुम्हें जल्दी छुट्टी मिलेगी।

मैं०। ठीक है मगर इस समय मेरे सर में दद है, मुझसे एक अक्षर भी लिखा न जायगा।

दारोगा०। अच्छा क्या हर्ज है, कल सही।

इतना कह कर दारोगा कमरे के बाहर चला गया और फिर मुझमें और अन्ना में बातचीत होने लगी। मैंने अन्ना से कहा, "क्यों अन्ना! तू क्या समझती है? मुझे तो दारोगा की बात सच जान पड़ती है!"

अन्ना०। (कुछ सोच कर) जैसी चीठी दारोगा तुझसे लिखाया चाहता है वह केवल इस योग्य ही नहीं कि यदि राजा गोपालसिंह दोषी हैं तो लोकनिन्दा से उन्हें बचावे बल्कि वह चीठी बनिस्बत उनके दारोगा के काम की ज्यादे होगी अगर वह स्वयं दोषी है तो।

मैं०। ठीक है, मगर ताज्जुब की बात है कि जो राजा साहब मुझे अपनी लड़की से भी बढ़ कर मानते थे वे ही मेरी जान के ग्राहक बन जायँ!

अन्ना०। कौन ठिकाना, कदाचित् ऐसा ही हो!

मैं० । अच्छा तो अब क्या करना चाहिये ?

अन्ना० । (कुछ सोच कर) चीठी तो कभी न लिखनी चाहिये चाहे राजा गोपालसिंह दोषी हों या दारोगा दोषी हो । इसमें कोई सन्देह नहीं कि चीठी लिख देने के बाद तू मार डाली जायगी ।

अन्ना की बात सुन कर मैं रोने लगी और समझ गई कि अब मेरी जान नहीं बचती और ताज्जुब नहीं कि दारोगा के मतलब की चीठी लिख देने के कारण मेरी माँ भी इस दुनिया से उठा दी गई हो । थोड़ी देर तक तो अन्ना ने रोने में मेरा साथ दिया लेकिन इसके बाद उसने अपने को सम्हाला और सोचने लगी कि अब क्या करना चाहिये । थोड़ी देर के बाद अन्ना ने मुझसे कहा, "बेटी ! मुझे कुछ कुछ आशा हो रही है कि हमलोगों को इस कैदखाने से निकल भागने का रास्ता मिल जायगा मैं पहले कह चुकी हूँ और अब भी कहती हूँ कि रात को (कोठड़ी की तरफ इशारा करके) उस कोठड़ी में सर पर से गठड़ी फेंक देने की तरह धम्माके की आवाज सुन कर मैं जाग उठी थी और जब उस कोठड़ी में गई तो वास्तव में एक गठड़ी पर निगाह पड़ी । अब जो मैं सोचती हूँ तो विश्वास होता है कि उस कोठड़ी में कोई ऐसा दर्वाजा जरूर है जिसे खोल कर कोई बाहर वाला उस कोठड़ी में आ सके या उसमें से बाहर जा सके, इसके अतिरिक्त उस कोठड़ी में भी तख्तेबन्दी की दीवार है जिससे कहीं न कहीं दर्वाजा होने का शक हर एक ऐसे आदमी को हो सकता है जिस पर हमारी तरह मुसीबत आई हो, अस्तु आज का दिन तो तू किसी तरह काट ले, रात को मैं दर्वाजा ढूँढ़ने का उद्योग करूँगी ।"

अन्ना की बातों से मुझे भी ढाढ़स हुई । थोड़ी देर बाद कमरे का दर्वाजा खुला और कई तरह की चीजें लिए हुए तीन आदमी कमरे के अन्दर आ पहुँचे, एक के हाथ में पानी का भरा घड़ा लोटा और गिलास था, दूसरा कपड़े की गठड़ी लिये हुए था, तीसरे के हाथ में खाने की चीजें थीं । तीनों ने सब चीजें कमरे में रख दीं और पहिले की रक्खी हुई चीजें और चिरागदान वगैरह उठा कर ले गये और जाती समय कह गये कि तुम लोग स्नान करके खाओ पीओ, तुम्हारे मतलब की सब चीजें मौजूद हैं ।

ऐसी मुसीबत में खाना पीना किसे सूझता है, परन्तु अन्ना के समझाने

बुझाने से जान बचाने के लिये सब कुछ करना पड़ा। तमाम दिन बीत गया, संध्या होने पर फिर हमारे कमरे के अन्दर खाने पीने का सामान पहुँचाया गया और चिराग भी जलाया गया मगर रात को हम दोनों ने कुछ भी न खाया।

कैदखाने से निकल भागने की धुन में हम लोगों को नींद बिल्कुल न आई। शायद आधी रात बीती होगी जब अन्ना ने उठ कर कमरे का वह दर्वाजा अन्दर से बन्द कर लिया जिस राह से लोग आते थे, इसके बाद मुझे उठने और अपने साथ उस कोठड़ी के अन्दर चलने के लिये कहा जिसमें से कपड़े की गठड़ी और मेरी माँ के हाथ की लिखी हुई चीठी मिली थी। मैं उठ खड़ी हुई और अन्ना के पीछे पीछे चली। अन्ना ने चिराग हाथ में उठा लिया और धीरे धीरे कदम रखती हुई कोठड़ी के अन्दर गई। मैं पहिले बयान कर चुकी हूँ कि उसके अन्दर तीन कोठरियाँ थीं, एक में पाखाना बना हुआ था और दो कोठरियाँ खाली थीं। इन दोनों कोठरियों के चारो तरफ की दीवारें भी तख्तों की थीं। अन्ना हाथ में चिराग लिये एक कोठड़ी के अन्दर गई और उन लकड़ी वाली दीवारों को गौर से देखने लगी। मालूम होता था कि यह लकड़ी की दीवार किसी पुराने जमाने की बनी हुई है क्योंकि लकड़ी के तख्ते खराब हो गये थे और कई तख्तों को घुन ने ऐसा बरबाद कर दिया था कि एक कमजोर लात खाकर भी उनका बच रहना कठिन जान पड़ता था। यह सब कुछ था मगर जैसा कि देखने में वह खराब और कमजोर मालूम होती थी वैसी वास्तव में न थी क्योंकि दीवार की लकड़ी पाँच या छः अंगुल से कम मोटी न होगी जिसमें से सिर्फ अंगुल डेढ़ अंगुल के लगभग घुनी हुई थी। अन्ना ने चाहा कि लात मार कर एक दो तख्तों को तोड़ डाले मगर ऐसा न कर सकी।

हम दोनों आदमी बड़े गौर से चारो तरफ की दीवार को देख रहे थे, यकायक एक छोटे से कपड़े पर अन्ना की निगाह पड़ी जो लकड़ी के दो तख्तों के बीच में फँसा हुआ था, वास्तव में वह एक छोटा सा रूमाल था जिसका आधा हिस्सा हम लोगों की तरफ था। उस कपड़े को अच्छी तरह देख कर अन्ना ने मुझसे कहा, "बेटी! देख, यहाँ एक दर्वाजा अवश्य है। (हाथसे निशान बता कर) यह चारो तरफ की दरार दर्वाजे को साफ बता रही है। कोई आदमी इस तरफ आया है मगर लौट कर जाती दफे जब उसने दर्वाजा बन्द किया तो उसका

रूमाल इसमें फँस कर रह गया, शायद अन्धेरे में उसने इस बात का खयाल न किया हो और देख इस कपड़े के फँस जाने के कारण दर्वाजा भी अच्छी तरह बैठा नहीं है, ताज्जुब नहीं कि यह दर्वाजा खटके पर बन्द होता हो और तख्ता अच्छी तरह न बैठने के कारण खटका भी बन्द न हुआ हो !"

वास्तव में जो कुछ अन्ना ने कहा वही बात थी क्योंकि जब उसने रूमाल को अच्छी तरह पकड़ कर अपनी तरफ खैंचा तो उसके साथ लकड़ी का तख्ता भी खिंच कर हम लोगों की तरफ चला आया और दूसरी तरफ जाने के लिए रास्ता निकल आया। हम दोनों आदमी उस तरफ चले गये और एक कमरे में पहुँचे। उस लकड़ी के तख्ते में जो पेंच पर जड़ा हुआ था और जिसे हटा कर हम लोग पार चले गये थे दूसरी तरफ एक पीतल का मुट्ठा लगा हुआ था, अन्ना ने उसे पकड़ कर खैंचा और वह दर्वाजा जहाँ का तहाँ खट से बैठ गया।

अब हम दोनों आदमी जिस कमरेमें पहुँचे वह बहुत बड़ा न था। सामने की तरफ एक छोटा सा दर्वाजा नजर आया और उसके पास जाने पर मालूम हुआ कि नीचे उतर जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। दाहिनी और बाईं तरफ की दीवार में छोटी छोटी कई खिड़कियाँ बनी हुई थीं, दाहिनी तरफ की खिड़कियों में से एक खिड़की कुछ खुली हुई थी, मैंने और अन्ना ने उसमें से झाँककर देखा तो एक मरातिब नीचे छोटा सा चौक नजर आया जिसमें साफ सुथरा फर्श लगा हुआ था, ऊँची गद्दी पर कम्बख्त दारोगा बैठा हुआ था, उसके आगे एक शमादान जल रहा था और पास ही में एक आदमी कलम दावात और कागज लिए बैठा हुआ था।

हम दोनों आदमी दारोगा की सूरत देखते ही चौंके और डर कर पीछे हट गये। अन्ना ने धीरे से कहा, "यहाँ भी वही बला नजर आती है, कहीं ऐसा न हो कि यह कम्बख्त हमलोगों को देख ले या ऊपर चढ़ आवे !"

इतना कह कर अन्ना सीढ़ी की तरफ चली गई और धीरे से सीढ़ी का दर्वाजा खैंच कर जञ्जीर चढ़ा दी। वह चिराग जो अपने कमरे में से लेकर यहाँ तक आये थे एक कोने में रख कर फिर हम दोनों उसी खिड़की के पास गए और नीचे की तरफ झाँक कर देखने लगे कि दारोगा क्या कर रहा है। दारोगा के पास जो

आदमी बैठा था उसने लिखा हुआ एक कागज हाथ में उठाकर दारोगा से कहा, "जहाँ तक मुझसे बन पड़ा मैंने इस चीठी के बनाने में बड़ी मेहनत की !"

दारोगा० । इसमें कोई शक नहीं कि तुमने ये अक्षर बहुत अच्छे बनाये हैं । इसे देखकर कोई यकायक नहीं कह सकता कि यह सर्यू का लिखा हुआ नहीं है । जब मैंने यह पत्र इन्दिरा को दिखाया तो उसे भी निश्चय हो गया कि यह उसकी माँ के हाथ का लिखा हुआ है मगर जो गौर करके देखता हूँ तो सर्यू की लिखावट में और इसमें थोड़ा सा फर्क मालूम पड़ता है । इन्दिरा लड़की है, वह इस बात को नहीं समझ सकती, मगर इन्द्रदेव जब इस पत्र को देखेगा तो जरूर पहचान जायगा कि यह सर्यू के हाथ का लिखा नहीं है बल्कि जाल बनाया गया है ।

आदमी० । ठीक है, अच्छा तो मैं इसके बनाने में एक दफे और मेहनत करूँगा । क्या करूँ सर्यू की लिखावट ही ऐसी टेढ़ी मेढ़ी है कि ठीक नहीं उतरती तिसमें इस चीठी में कई अक्षर ऐसे लिखने पड़े जो मेरे देखे हुए नहीं हैं केवल अन्दाज ही से लिखे हैं ।

दारोगा० । ठीक है ठीक है, इसमें कोई शक नहीं कि तुमने बड़ी सफाई से इसे बनाया है, खैर एक दफे और मेहनत करो, मुझे आशा है अबकी दफे बहुत ठीक हो जायगा । (लम्बी साँस लेकर) क्या कहें, कम्बख्त सर्यू किसी तरह मानती ही नहीं ! उसे मेरी बातों पर कुछ भी विश्वास नहीं होता, तथापि कल मैं उसे फिर दम दिलासा दूँगा, अगर उसने मेरे दम में आकर अपने हाथ से चीठी लिख दी तो बस काम हो गया समझो नहीं तो तुम्हें पुनः मेहनत करनी पड़ेगी । अगर सर्यू और इन्दिरा ने मेरे कहे मुताबिक चीठी लिख दी तो मैं बहुत जल्द उन दोनों को मार कर बखेड़ा तय करूँगा क्योंकि मुझे गदाधरसिंह (भूतनाथ) का डर बराबर बना रहता है, वह सर्यू और इन्दिरा की खोज में लगा हुआ है और उसे घड़ी घड़ी मुझी पर शक होता है, यद्यपि मैं उससे कसम खा कर कह चुका हूँ कि मुझे उन दोनों का हाल कुछ भी मालूम नहीं है मगर उसे विश्वास नहीं होता । क्या करूँ लाखों रुपये दे देने पर भी मैं उसकी मुट्ठी में फँसा हुआ हूँ, यदि उसे जरा भी मालूम हो जायगा कि सर्यू और इन्दिरा को मैंने कैद कर रक्खा है तो बड़ा ही उधम मचावेगा और मुझे बर्बाद किये बिना न रहेगा ।

आदमी० । गदाधरसिंह तो मुझे आज भी मिला था।

दारोगा० । (चौंक कर) क्या वह फिर इस शहर में आ गया है ? मुझसे तो कह गया था कि मैं दो तीन महीने के लिए जाता हूँ। मगर वह तो तीन दिन भी गैरहाजिर न रहा !

आदमी० । वह बड़ा ही शैतान है, उसकी बातों का कुछ भी विश्वास नहीं हो सकता, और इस बात का जानना तो बड़ा ही कठिन है कि वह क्या करता है क्या करेगा या किस धुन में लगा हुआ है।

दारोगा० । अच्छा तो मुलाकात होने पर उससे क्या क्या बातें हुईं ?

आदमी० । मैं अपने घर की तरफ जा रहा था कि उसने पीछे से आवाज दी—"ओ रघुबरसिंह ! ओ जैपालसिंह !!" *

दारोगा० । बड़ा ही बदमाश है, किसी का अदब लेहाज करना तो जानता ही नहीं। अच्छा तब क्या हुआ ?

रघु० । उसकी आवाज सुनकर मैं रुक गया, जब वह पास आया तो बोला, "आज आधी रात के समय मैं दारोगा साहब से मिलने जाऊँगा, उस समय तुम्हें भी वहाँ मौजूद रहना चाहिये।" बस इतना कह कर चला गया।

दारोगा० । तो इस समय वह आता ही होगा ?

रघु० । जरूर आता होगा।

दारोगा० । कम्बख्त ने नाकों दम कर दिया !

इतने ही में बाहर से घण्टी बजने की आवाज आई जिसे सुन दारोगा ने रघुबरसिंह से कहा, "देखो दर्बान क्या कहता है, मालूम होता है गदाधरसिंह आ गया।"

रघुबरसिंह उठ कर बाहर गया और थोड़ी ही देर में गदाधरसिंह को अपने साथ लिए हुए दारोगा के पास आया। गदाधरसिंह को देखते ही दारोगा उठ खड़ा हुआ और बड़ी खातिरदारी और तपाक के साथ मिल कर उसे अपने पास बैठाया।

दारोगा० । (गदाधरसिंह से) आप कब आये ?

---

* जैपालसिंह बालासिंह या रघुबरसिंह ये सब नाम उसी नकली बलभद्रसिंह के हैं।

गदा० । मैं गया कब और कहाँ था ?

दारोगा० । आप ही ने कहा था कि मैं दो तीन महीने के लिये कहीं जा रहा हूँ ।

गदा० । हाँ कहा था मगर एक बहुत बड़ा सबब आ पड़ने से लाचार होकर रुक जाना पड़ा ।

दारोगा० । क्या वह सबब मैं भी सुन सकता हूँ ?

गदा० । हाँ हाँ आप ही के सुनने लायक तो वह सबब है क्योंकि उसके कर्ता धर्ता भी आप ही हैं ।

दारोगा० । तो जल्द कहिये ।

गदा० । जाते ही जाते एक आदमी ने मुझे निश्चय दिलाया कि सर्यू और इन्दिरा आप ही के कब्जे में हैं अर्थात् आप ही ने उन्हें कैद कर के कहीं छिपा रक्खा है ।

दारोगा० । (अपने दोनों कानों पर हाथ रख के) राम राम राम ! किस कम्बख्त ने मुझ पर यह कलंक लगाया ? नारायण नारायण ! मेरे दोस्त, मैं तुम्हें कई दफे कसमें खाकर कह चुका हूँ कि मैं सर्यू और इन्दिरा के विषय में कुछ भी नहीं जानता मगर तुम्हें मेरी बातों का विश्वास नहीं होता !!

गदा० । न मेरी बात पर आपको विश्वास करना चाहिए और न आप की कही हुई बातों को मैं ब्रह्मवाक्य समझ सकता हूँ । बात यह है कि इन्द्रदेव को मैं अपने सगे भाई से बढ़के समझता हूँ, चाहे मैंने आप से रिश्वत लेकर कितना ही बुरा काम क्यों न किया हो मगर अपने दोस्त इन्द्रदेव को मैं कभी किसी तरह का नुक्सान न पहुँचने दूँगा । आप सर्यू और इन्दिरा के बारे में बार बार कसमें खाकर अपनी सफाई दिखाते हैं और मैं जब उन लोगों के बारे में तहकीकात करता हूँ तो बार बार यही मालूम पड़ता है कि वे दोनों आप ही के कब्जे में हैं, अस्तु आज मैं एक आखिरी बात आपसे कहने आया हूँ अबकी दफे आप अच्छी तरह समझ बूझ कर जवाब दें ।

दारोगा० । कहो कहो क्या कहते हो ? मैं सब तरह तुम्हारी दिलजमई कर दूँगा.....

गदा० । आज मैं इस बात का निश्चय करके आया हूँ कि इन्दिरा और सर्यू

का हाल आपको मालूम है, अस्तु अब साफ कहे देता हूँ कि यदि वे दोनों आपके कब्जे में हों तो ठीक ठीक बता दीजिये, उनको छोड़ देने पर इस काम के बदले में जो कुछ आप कहें मैं करने को तैयार हूँ और यदि आप इस बात से इनकार करेंगे और पीछे साबित होगा कि आप ही ने उन्हें क़ैद किया था तो मैं कसम खा कर कहता हूँ कि सब से बढ़कर बुरी मौत जो कही जाती है वही आपके लिये कायम की जायगी।

दारोगा०। जरा जबान सम्हाल कर बातें करो! मैं तो दोस्ताना ढंग पर नर्मी के साथ तुमसे बातें करता हूँ और तुम तेज हुए जाते हो!!

गदा०। जी मैं आपके दोस्ताना ढंग को अच्छी तरह समझता हूँ! और अपनी कसमों का विश्वास तो उसे दिलाइये जो आपको केवल दारोगा समझता हो! मैं तो आपको पूरा झूठा बेईमान और विश्वासघाती समझता हूँ और आपका कोई हाल मुझसे छिपा हुआ नहीं है। जब मैंने कलमदान आपको वापस किया था तब भी आपने कसम खाई थी कि तुम्हारे दोस्तों के साथ कभी किसी तरह की बुराई न करूँगा, मगर फिर भी आप चालबाजी करने से बाज न आये!!

दारोगा०। यह सब कुछ ठीक है मगर जब मैं एक दफे कह चुका कि सर्यू और इन्दिरा का हाल मुझे मालूम नहीं है तब तुम्हें अपनी बात पर ज्यादे खींच न करना चाहिये, हाँ अगर तुम इस बात को साबित कर सको तो जो कुछ कहो मैं जुर्माना देने के लिए तैयार हूँ, यों अगर बेफायदे की तकरार बढ़ा कर झगड़ने का इरादा हो तो बात ही दूसरी है। इसके अतिरिक्त अब तुम्हें जो कुछ कहना हो इस बात को खूब सोच समझ कर कहो कि तुम किसके मकान में कितने आदमियों को साथ लेकर आये हो।

इतना कह कर इन्दिरा रुक गई और एक लम्बी साँस लेकर उसने राजा गोपालसिंह और दोनों कुमारों से कहा :—

इन्दिरा०। गदाधरसिंह और दारोगा से इस ढंग की बातें हो रही थीं और हम दोनों खिड़की में से सुन रहे थे। मुझे यह जान कर बड़ी खुशी हुई कि गदाधरसिंह हम दोनों माँ बेटियों को छुड़ाने की फिक्र में लगा हुआ है। मैंने अन्ना के कान में मुँह लगा कर कहा कि देख अन्ना, दारोगा हमलोगों के बारे में कितना झूठ बोल रहा है! नीचे उतर जाने के लिये रास्ता मौजूद ही है, चलो हम दोनों

नीचे पहुँच कर गदाधरसिंह के सामने खड़े हो जायँ !' अन्ना ने जवाब दिया कि 'मैं भी यही सोच रही हूँ, मगर इस बात का खयाल है कि अकेला भूतनाथ हम लोगों को किस तरह छुड़ा सकेगा, कहीं ऐसा न हो कि हमलोगों को अपने सामने देख कर दारोगा गदाधरसिंह को भी गिरफ्तार कर ले, फिर हमारा छुड़ाने वाला कोई भी न रहेगा !' अन्ना नीचे उतरने से हिचकती थी मगर मैंने उसकी बात न मानी, आखिर लाचार हो कर मेरा हाथ पकड़े हुए वह नीचे उतरी और गदाधरसिंह के पास खड़ी हो कर बोली, "दारोगा झूठा है ! इस लड़की को इसी ने कैद कर रक्खा है और इसकी माँ को भी न मालूम कहाँ छिपाये हुए है !!"

मेरी सूरत देखते ही दारोगा का चेहरा पीला पड़ गया और गदाधरसिंह की आँखें मारे क्रोध के लाल हो गईं। गदाधरसिंह ने दारोगा से कहा, "क्यों बे हरामजादे के बच्चे ! क्या अब भी तू अपनी कसमों पर भरोसा करने के लिये मुझसे कहेगा !!"

गदाधरसिंह की बातों का जवाब दारोगा ने कुछ भी न दिया और इधर उधर झाँकने लगा। इत्तफाक से वह कलमदान भी उसी जगह पड़ा हुआ था जिसके ऊपर मेरी तस्वीर थी और जो गदाधरसिंह ने रिश्वत लेकर दारोगा को दे दिया था। दारोगा असल में यह देख रहा था कि गदाधरसिंह की निगाह उस कलमदान पर तो नहीं पड़ी, मगर वह कलमदान गदाधरसिंह की नजरों से दूर न था, अस्तु उसने दारोगा की अवस्था देख कर बड़ी फुर्ती के साथ उसको उठा लिया और दूसरे हाथ से तलवार खींच कर सामने खड़ा हो गया। उस समय दारोगा को विश्वास हो गया कि अब उसकी जान किसी तरह नहीं बच सकती। यद्यपि रघुबरसिंह उसके पास ही बैठा हुआ था मगर वह इस बात को भी खूब जानता था कि हमारे ऐसे दस आदमी भी गदाधरसिंह को काबू में नहीं कर सकते इसलिये उसने मुकाबला करने की हिम्मत न की और अपनी जगह से उठ कर भागने लगा परन्तु जा न सका, गदाधरसिंह ने उसे एक लात ऐसी जमाई कि वह धम्म से जमीन पर गिर पड़ा और बोला, "मुझे क्यों मारते हो ? मैंने क्या बिगाड़ा है ? मैं तो खुद यहाँ से चले जाने को तैयार हूँ !!"

गदाधरसिंह ने कलमदान कमरबन्द में से खींच कर कहा, "मैं तेरे भागने को खूब समझता हूँ ! तू अपनी जान बचाने की नीयत से नहीं भागता बल्कि

बाहर पहरे वाले सिपाहियों को होशियार करने के लिए भागता है !! खबरदार, अपनी जगह से हिलेगा तो अभी भुट्टे की तरह तेरा सर उड़ा दूँगा ! (दारोगा से) बस अब तुम भी अगर अपनी जान बचाया चाहते हो तो चुपचाप बैठे रहो !!"

गदाधरसिंह की डपट से दोनों हरामखोर जहाँ के तहाँ रह गये, अपनी जगह से हिलने या मुकाबला करने की हिम्मत न पड़ी, और हम दोनों को साथ लिये हुए गदाधरसिंह उस मकान के बाहर निकल आया। दरवाजे पर कई पहरेदार सिपाही मौजूद थे मगर किसी ने रोक टोक न की और हम लोग तेजी के साथ कदम बढ़ाते हुए गली के बाहर निकल गये। उस समय मालूम हुआ कि हम लोग जमानिया के बाहर नहीं हैं।

गली के बाहर निकल कर जब हमलोग सड़क पर पहुँचे तो दो घोड़ों का रथ और दो सवार दिखाई पड़े। गदाधरसिंह ने मुझको और अन्ना को रथ पर सवार कराया और आप भी उसी रथ पर बैठ गया। "हूँ" करने के साथ ही रथ तेजी के साथ रवाना हुआ और पीछे पीछे दोनों सवार भी घोड़ा फेंकते हुए जाने लगे।

उस समय मेरे दिल में दो बातें पैदा हुईं, एक तो यह कि गदाधरसिंह ने दारोगा को जीता क्यों छोड़ दिया ? दूसरी यह कि हमलोगों को राजा गोपालसिंह के पास न ले जाकर कहीं और क्यों ले जाता है ? मगर मुझे इस विषय में कुछ पूछने की आवश्यकता न पड़ी क्योंकि शहर के बाहर निकल जाने पर गदाधरसिंह स्वयम् मुझसे कहा, "बेटी इन्दिरा, निःसन्देह कम्बख्त दारोगा ने तुझे बड़ा ही कष्ट दिया होगा और तू सोचती होगी कि मैंने दारोगा को जीता क्यों छोड़ दिया तथा तुझे राजा गोपालसिंह के पास न ले जाकर अपने घर क्यों लिये जाता हूँ ? अस्तु मैं इसका जवाब इसी समय दे देना उचित जानता हूँ। दारोगा को मैंने यह सोच कर छोड़ दिया कि अभी तेरी माँ का पता लगाना है और निःसन्देह वह भी दारोगा ही के कब्जे में है जिसका पता मुझे लग चुका है, तथा राजा साहब के पास मैं तुझे इसलिये नहीं ले गया कि महल में बहुत से आदमी ऐसे हैं जो दारोगा के मेली हैं और राजा गोपालसिंह तथा मैं भी उन्हें नहीं जानता। ताज्जुब नहीं कि वहाँ पहुँचने पर तू फिर किसी मुसीबत में पड़ जाय।"

मैं०। आपका सोचना बहुत ठीक है, मेरी माँ भी महल ही में से गायब हो

गई थी। तो क्या आप इस बात की खबर भी राजा गोपालसिंह को न करेंगे ?

गदाधर०। राजा साहब को इस मामले की खबर जरूर की जायगी मगर अभी नहीं।

मैं०। तब कब ?

गदाधर०। जब तेरी माँ को भी कैद से छुड़ा लूँगा तब। हाँ अब तू अपना हाल कह कि दारोगा ने तुझे कैसे गिरफ्तार कर लिया और यह दाई तेरे पास कैसे पहुँची ?

मैं अपना और अपनी अन्ना का किस्सा शुरू से आखीर तक पूरा पूरा कह गई जिसे सुन कर गदाधरसिंह का बचा बचाया शक भी जाता रहा और उसे निश्चय हो गया कि मेरी माँ भी दारोगा ही के कब्जे में है।

सवेरा हो जाने पर हम लोग एक जगह सुस्ताने और घोड़ों को आराम देने के लिये कुछ देर तक ठहरे और फिर उसी तरह रथ पर सवार हो रवाना हुए।

दोपहर होते होते हम लोग एक ऐसी जगह पहुँचे जहाँ दो पहाड़ी की तरहट (उपत्यका) एक साथ मिली हुई थी, वहाँ सभों को सवारी छोड़ कर पैदल चलना पड़ा। मैं यह नहीं जानती कि सवारी का रथ और घोड़े किधर रवाना किये गये या उनके लिये अस्तबल कहाँ बना हुआ था। मुझे और अन्ना को घुमाता और चक्कर देता हुआ गदाधरसिंह पहाड़ के दर्रे में ले गया जहाँ एक छोटा सा मकान अनगढ़ पत्थरों के ढोकों से बना हुआ था, कदाचित् वह गदाधरसिंह का अड्डा हो। वहाँ उसके कई आदमी भी थे जिनकी सूरत आज तक मुझे याद हैं। अब जो मैं उनकी सूरतों पर विचार करती हूँ तो यही कहने की इच्छा होती है कि वे लोग बदमाशी, बेरहमी और डकैती के साँचे में ढले हुए थे और उनकी सूरत शक्ल और पोशाक की तरफ ध्यान देने से डर मालूम होता था।

वहाँ पहुँच कर गदाधरसिंह ने मुझसे और अन्ना से कहा, "तुम दोनों बेखौफ हो कर कुछ दिन तक आराम करो, मैं सर्यू के छुड़ाने की फिक्र में जाता हूँ, जहाँ तक होगा बहुत जल्द लौट आऊँगा। तुम दोनों को किसी तरह की तकलीफ न होगी, खाने पीने का सामान यहाँ मौजूद ही है और जितने आदमी यहाँ मौजूद हैं सब तुम्हारी खिदमत करने के लिए तैयार हैं।" बहुत सी बातें गदाधरसिंह ने हम दोनों को समझाईं और अपने आदमियों से भी बहुत देर तक

बातें करता रहा। दो पहर दिन और तमाम रात गदाधरसिंह वहाँ रहा, तथा सुबह के वक्त फिर हम दोनों को समझा बुझाकर जमानिया की तरफ रवाना हो गया।

मैं तो समझती थी कि अब मुझे पुनः किसी तरह की मुसीबत का सामना न करना पड़ेगा और मैं गदाधरसिंह की बदौलत अपनी माँ तथा लक्ष्मीदेवी से भी मिल कर सदैव के लिए सुखी हो जाऊँगी, मगर अफसोस! मेरी मुराद पूरी न हुई और उस दिन के बाद मैंने गदाधरसिंह की सूरत भी न देखी। मैं नहीं कह सकती कि वह किसी आफत में फँस गया या रुपये की लालच ने उसे हम लोगों का भी दुश्मन बना दिया। इसका असल हाल उसी की जुबानी मालूम हो सकता है—यदि वह अपना हाल ठीक ठीक कह दे तो। अस्तु, अब मैं अपना हाल बयान करती हूँ कि उस दिन के बाद मुझ पर क्या क्या मुसीबतें गुजरीं और मैं अपनी माँ के पास तक क्योंकर पहुँची।

गदाधरसिंह के चले जाने बाद आठ दिन तक तो मैं बेखौफ बैठी रही, नौवें दिन से मेरी मुसीबत की घड़ी फिर शुरू हुई। आधी रात का समय था, मैं और मेरी अन्ना एक कोठड़ी में सोई हुई थीं, यकायक किसी की आवाज सुन कर हम दोनों की आँख खुल गई, तब मालूम हुआ कि दर्वाजे के बाहर कोई किवाड़ खट-खटा रहा है! अन्ना ने उठ कर दर्वाजा खोला तो पण्डित मायाप्रसाद पर निगाह पड़ी। कोठरी के अन्दर चिराग जल रहा था और मैं पण्डित मायाप्रसाद को अच्छी तरह पहिचानती थी।

दूसरा बयान

इन्दिरा ने जब अपना किस्सा कहते कहते पण्डित मायाप्रसाद का नाम लिया तो राजा गोपालसिंह चौंके और उन्होंने ताज्जुब में आकर इन्दिरा से पूछा, "पण्डित मायाप्रसाद कौन?"

इन्दिरा०। आपके कोषाध्यक्ष (खजानची)।

गोपाल०। क्या उसने भी तुम्हारे साथ दगा की?

इन्दिरा०। सो मैं ठीक ठीक नहीं कह सकती, मेरा हाल सुन कर कदाचित् आप कुछ अनुमान कर सकें। क्या मायाप्रसाद अब भी आपके यहाँ काम कर ते हैं?

गोपाल० । हाँ है तो सही मगर आज कल मैंने उसे किसी दूसरी जगह भेजा है अस्तु अब मैं इस बात को बहुत जल्द सुना चाहता हूँ कि उसने तेरे साथ क्या किया ?

हमारे पाठक महाशय पहले भी मायाप्रसाद का नाम सुन चुके हैं। सन्तति पन्द्रहवें हिस्से के तीसरे बयान में इनका जिक्र आ चुका है, तारासिंह को एक नौकर ने नानक की स्त्री श्यामा के प्रेमियों के नाम बताये थे उन्हीं में इनका नाम भी दर्ज हो चुका है। ये महाशय जाति के कनयकुब्ज ब्राह्मण थे। और अपने को ऐयार भी लगाते थे।

इन्दिरा ने फिर अपना किस्सा कहना शुरू किया :—

इन्दिरा० । उस समय मैं मायाप्रसाद को देख कर बहुत खुश हुई और समझी कि मेरा हाल राजा साहब (आप) को मालूम हो गया है और राजा साहब ही ने इन्हें मेरे पास भेजा है। मैं जल्दी से उठ कर उनके पास गई और मेरी अन्ना ने उन्हें दण्डवत करके कोठड़ी में आने के लिये कहा जिसके जवाब में पण्डितजी बोले, "मैं कोठड़ी के अन्दर नहीं आ सकता और न इतनी मोहलत है।"

मैं० । क्यों ?

मायाप्रसाद० । मैं इस समय केवल इतना ही कहने आया हूँ कि तुम लोग जिस तरह बन पड़े अपनी जान बचाओ और जहाँ तक जल्दी हो सके यहाँ से निकल भागो क्योंकि गदाधरसिंह दुश्मनों के हाथ फँस गया है और थोड़ी ही देर में तुम दोनों भी गिरफ्तार हुआ चाहती हो।"

मायाप्रसाद की बात सुन कर मेरे तो होश उड़ गये। मैंने सोचा कि अब जो किसी तरह दारोगा मुझे पकड़ पावेगा तो कदापि जीता न छोड़ेगा। आखिर अन्ना ने घबड़ा कर पण्डितजी से पूछा, "हम लोग भाग कर कहाँ जायँ और किसके सहारे पर भागें ?" पण्डितजी ने क्षण भर सोच कर कहा, "अच्छा तुम दोनों मेरे पीछे पीछे चली आओ।"

उस समय हम दोनों ने इस बात का जरा भी ख्याल न किया कि पण्डितजी सच बोलते हैं या दगा करते हैं। हम दोनों आदमी पण्डितजी को बखूबी जानते

थे और उन पर विश्वास करते थे, उसी समय चलने के लिये तुरत तैयार हो गये और कोठरी के बाहर निकल कर उनके पीछे पीछे रवाना हुए। जब मकान के बाहर निकले तो दर्वाजे के दोनों तरफ कई आदमियों को टहलते हुए देखा मगर अंधेरी रात होने और जल्दी जल्दी निकल भागने की धुन में लगे रहने के कारण मैं उन लोगों को पहिचान न सकी इस लिये नहीं कह सकती कि वे लोग गदाधरसिंह के आदमी थे या किसी दूसरे के। उन आदमियों ने हम लोगों से कुछ नहीं पूछा और हम लोग बिना रुकावट के पण्डितजी के पीछे पीछे रवाना हुए। थोड़ी दूर जाकर दो आदमी और मिले, एक के हाथ में मशाल थी और दूसरे के हाथ में नंगी तलवार। निःसन्देह वे दोनों आदमी मायाप्रसाद के नौकर थे जो हुक्म पाते ही हम लोगों के आगे आगे रवाना हुए। इस पहाड़ी से नीचे उतरने का रास्ता बहुत ही पेचीला और पथरीला था। यद्यपि हम दोनों आदमी एक दफे उस रास्ते को देख चुके थे मगर फिर भी किसी के राह दिखाये बिना उस रास्ते से निकल जाना कठिन ही नहीं बल्कि असंभव था। मगर एक तो हम लोग मायाप्रसाद के पीछे पीछे जा रहे थे दूसरे मशाल की रोशनी साथ थी इसलिये शीघ्रता से हम लोग पहाड़ी के नीचे उतर आये और पण्डितजी की आज्ञानुसार दाहिनी तरफ घूम कर जंगल ही जंगल चलने लगे। सबेरा होते होते तक हम लोग एक खुले मैदान में पहुँचे और वहाँ एक छोटा सा बागीचा नजर पड़ा। पण्डितजी ने हम दोनों से कहा कि तुम लोग बहुत थक गई हो इसलिये थोड़ी देर तक इस बागीचे में आराम कर लो तब तक हम लोग सवारी बंदोबस्त करते हैं जिसमें आज ही तुम राजा गोपालसिंह के पास पहुँच जाओ।

मुझे उस बगीचे में किसी आदमी की सूरत दिखाई न पड़ी, न तो वहाँ का कोई मालिक नजर आया और न किसी माली या नौकर ही पर नजर पड़ी, मगर बगीचा बहुत साफ और हरा भरा था। पण्डितजी ने अपने दोनों आदमियों को किसी काम के लिये रवाना किया और हम दोनों को इस बगीचे में बेफिक्री के साथ नहाने धोने की आज्ञा देकर खुद भी आधी घड़ी के अन्दर ही लौट आने का वादा करके कहीं चले गये। पण्डितजी और उनके आदमियों को गये हुए अभी चौथाई घड़ी भी न बीती होगी कि दो आदमियों को साथ लिये हुए कम्बख्त दारोगा बाग के अन्दर आता हुआ दिखाई पड़ा।

तीसरा बयान

दारोगा की सूरत देखते ही मेरी और अन्ना की जान सूख गई। हम दोनों को विश्वास हो गया कि पण्डितजी ने हमारे साथ दगा की। उस समय सिवाय जान दे देने के और मैं कर ही क्या सकती थी? इधर उधर देखा पर जान दे देने का कोई जरिया दिखाई न पड़ा। अगर उस समय मेरे पास कोई हर्बा होता तो मैं जरूर अपने को मार डालती। दारोगा ने भी मुझे दूर से देखा और कदम बढ़ाता हुआ हम दोनों के पास पहुँचा। मारे क्रोध के उसकी आँखें लाल हो रही थीं और होंठ काँपते थे। उसने अन्ना की तरफ देख कर कहा, "क्यों कम्बख्त लौंडी! अब तू मेरे हाथ से बच कर कहाँ जायगी? यह सारा फसाद तेरा ही उठाया हुआ है! न तू दर्वाजा खोल कर दूसरे कमरे में जाती न गदाधरसिंह को इस बात की खबर हो! तू ने ही इन्दिरा को ले भागने की नीयत से मेरी जान आफत में डाली थी अस्तु अब मैं तेरी जान लिये बिना नहीं रह सकता क्योंकि तुझ पर मुझे बड़ा क्रोध है!!"

इतना कह दारोगा ने म्यान से तलवार निकाल ली और एक ही हाथ में बेचारी अन्ना का सर अलग कर दिया, उसकी लाश तड़पने लगी और मैं चिल्ला कर उठ खड़ी हुई।

इतना हाल कहते कहते इन्दिरा की आँखों में आँसू भर आया। इन्द्रजीतसिंह आनन्दसिंह और राजा गोपालसिंह को भी उसकी अवस्था पर बड़ा दुःख हुआ और बेईमान नमकहराम दारोगा को क्रोध से याद करने लगे। तीनों भाइयों ने इन्दिरा को दिलासा दिया और चुप करा के अपना किस्सा पूरा करने के लिये कहा। इन्दिरा ने आँसू पोंछ कर पुनः कहना शुरू किया :—

इन्दिरा०। उस समय मैं समझी थी कि दारोगा मेरी अन्ना को तो मार ही चुका है अब उसी तलवार से मेरा भी सर काट के बखेड़ा तै करेगा मगर ऐसा न हुआ। उसने रूमाल से तलवार पोंछ कर म्यान में रख ली और अपने नौकर के हाथ से चाबुक ले मेरे सामने आकर बोला, "अब बुला गदाधरसिंह को आकर तेरी जान बचावे!"

इतना कह उसने मुझे उसी चाबुक से मारना शुरू किया। मैं मछली की

तरह तड़प रही थी और उसे कुछ भी दया नहीं आती थी, वह बार बार यही कह के चाबुक मारता था कि अब बता मेरे कहे मुताबिक चीठी लिख देगी या नहीं ? मगर मैं इस बात का दिल में निश्चय कर चुकी थी कि चाहे कैसी ही दुर्दशा से मेरी जान क्यों न ली जाय मगर उसके कहे मुताबिक चीठी कदापि न लिखूँगी।

चाबुक की मार खा कर मैं जोर जोर से चिल्लाने लगी। उसी समय दाहिनी तरफ से एक औरत दौड़ती हुई आई। उसने डपट कर दारोगा से कहा, "क्यों चाबुक मार कर इस बेचारी की जान ले रहे हो ? ऐसा करने से तुम्हारा मतलब कुछ भी न निकलेगा। तुम जो कुछ चाहते हो मुझसे कहो, मैं बात की बात में तुम्हारा काम करा देती हूँ।"

उस औरत की उम्र का पता बताना कठिन था, न तो वह कमसिन थी और न बूढ़ी ही थी, शायद तीस पैंतीस वर्ष की अवस्था हो या इससे कुछ कम ज्यादे हो। उसका रंग काला और बदन गठीला तथा मजबूत था, घुटने के कुछ नीचे तक का पायजामा और उसके ऊपर दक्षिणी ढंग की साड़ी पहरे हुए थी जिसकी लांग पीछे की तरफ खुसी थी। कमर में एक मोटा कपड़ा लपेटे हुए थी, शायद उसमें कोई गठरी या और कोई चीज बँधी हो।

उस औरत की बात सुन कर दारोगा ने चाबुक मारना बन्द किया और उसकी तरफ देख कर कहा, "तू कौन है ?"

औरत०। चाहे मैं कोई होऊँ इससे कुछ मतलब नहीं, तुम जो कुछ चाहते हो मुझसे कहो, मैं तुम्हारी ख्वाहिश पूरी कर दूँगी। चाबुक मारती समय जो कुछ तुम कहते हो उससे मालूम होता है कि इस लड़की से तुम कुछ लिखाया चाहते हो। इससे जो कुछ लिखवाना हो मुझे बताओ मैं लिखवा दूँ, इस तरह मारने पीटने से कोई काम न चलेगा। इसके एक पक्षपाती ने जिसने अभी तुम्हारे आने की खबर दी थी इसे समझा बुझा के बहुत पक्का कर दिया है और खुद (हाथ का इशारा करके) उस कूएँ में जा छिपा है, वह जरूर तुम पर वार करेगा। मेरे साथ चलो मैं दिखा दूँ। पहिले उसे दुरुस्त करो तब इसके बाद जो कुछ तुम इस लड़की को कहोगे झख मार के कर देगी इसमें कोई संदेह नहीं।

दारोगा०। क्या तूने खुद उस आदमी को देखा था ?

औरत० । हाँ हाँ कहती तो हूँ कि मेरे साथ उस कूएँ पर चलो मैं उस आदमी को दिखा देती हूँ । दस बारह कदम पर कूआँ है कुछ दूर तो है नहीं ।

दारोगा० । अच्छा चल कर मुझे बताओ (अपने दोनों आदमियों से) तुम इस लड़की के पास खड़े रहो ।

वह औरत कूएँ की तरफ बढ़ी और दारोगा उसके पीछे पीछे गया । वास्तव में वह कूआँ बहुत दूर न था । जब दारोगा को लिये हुए वह औरत कूएँ पर पहुँची तो अन्दर झाँक कर बोली, "देखो वह छिप कर बैठा है ।"

दारोगा ने ज्यों ही झाँक कर कूए के अन्दर देखा कि उस औरत ने पीछे से धक्का दिया और कम्बख्त दारोगा धड़ाम से कूँए के अन्दर जा रहा । यह कैफियत उसके दोनों साथी दूर से देख रहे थे और मैं भी देख रही थी । जब दारोगा के दोनों साथियों ने देखा कि उस औरत ने जान बूझ कर उनके मालिक को कूएँ में ढकेल दिया है तो दोनों आदमी तलवार खैंच कर उस औरत की तरफ दौड़े । जब पास पहुँचे तो वह औरत जोर से हँसी और एक तरफ को भाग चली। उन दोनों ने उसका पीछा किया मगर वह औरत दौड़ने में इतनी तेज थी कि वे दोनों उसे पा न सकते थे । उसी बगीचे के अन्दर वह औरत चक्कर देने लगी और उन दोनों के हाथ न आई । वह समय उन दोनों के लिये बड़ा ही कठिन था, वे दोनों इस बात को जरूर सोचते होंगे कि अगर अपने मालिक को बचाने की नीयत से कूएँ पर जाते हैं तो वह औरत भाग जायगी या ताज्जुब नहीं कि उन्हें भी उसी कूएँ में ढकेल दे। आखिर जब उस औरत ने उन दोनों को दौड़ाया तो उन दोनों ने आपुस में कुछ बातें की और एक आदमी तो उस कूएँ की तरफ चला गया और दूसरे ने उस औरत का पीछा किया । जब उस औरत ने देखा कि अब दो में से एक ही रह गया तो वह खड़ी हो गई और जमीन पर से ईंट का टुकड़ा उठा कर उस आदमी की तरफ जोर से फेंका । उस औरत का निशाना बहुत सच्चा था जिससे वह बच न सका और वह ईंट का टुकड़ा इस जोर से उसके सर में लगा कि सर फट गया और वह दोनों हाथों से सर पकड़ कर जमीन पर बैठ गया । उस समय उस और ने पुनः दूसरी ईंट मारी तीसरी मारी और चौथी ईंट खाकर तो वह जमीन पर लेट गया । उस समय उसने खञ्जर निकाल लिया जो उसकी कमर में छिपा हुआ था और दौड़ती हुई उसके पास जाकर खञ्जर से

उसका सर काट डाला। मैं यह तमाशा दूर से देख रही थी। जब एक आदमी को समाप्त कर चुकी तो उस दूसरे के पास आई जो कूएँ पर खड़ा अपने मालिक को निकालने की फिक्र कर रहा था। एक ईंट का टुकड़ा उसकी तरफ भी जोर से फेंका जो उसकी गरदन में लगा। वह आदमी हाथ में नङ्गी तलवार लिये हुए उस औरत पर झपटा मगर उसे पा न सका, उस औरत ने फिर उस आदमी को दौड़ाना शुरू किया। बीच बीच में ईंट और पत्थरों से उसकी खबर लेती जाती थी, वह आदमी भी ईंट और पत्थर के टुकड़े उस औरत पर फेंकता था मगर औरत इतनी तेज और फुर्तीली थी कि उसके सब वार बराबर बचाती चली गई मगर उसका वार एक भी खाली न जाता था। आखिर उस आदमी ने भी इतनी मार खाई कि खड़ा होना मुश्किल हो गया और वह हताश होकर जमीन पर बैठ गया, जब जमीन पर बैठने की देर थी कि उस औरत ने धड़ाधड़ पत्थर मारना शुरू किया यहाँ तक कि वह अधमूआ होकर जमीन पर लेट गया। उस औरत ने उसके पास पहुँच कर उसका सर भी धड़ से अलग कर दिया इसके बाद दौड़ती हुई मेरे पास आई और बोली, "बेटी! तू ने देखा कि मैंने तेरे दुश्मनों की कैसी खबर ली? मैं तो उस बूढ़े कम्बख्त (दारोगा) को भी पत्थर मार मार कर मार डालती मगर डरती हूँ कि विलम्ब हो जाने से उसके और भी सङ्गी साथी न आ पहुँचें, अगर ऐसा हुआ तो बड़ी मुश्किल होगी अस्तु उसे जाने दे और मेरे साथ चल, मैं तुझे हिफाजत से तेरे घर या जहाँ तू कहे पहुँचा दूँगी।"

यद्यपि चाबुक की मार खाने से मेरी बुरी हालत हो गई थी मगर अपने दुश्मनों की ऐसी दुर्दशा देख मैं खुश हो गई और उस औरत को साक्षात् माता समझ कर मैं उसके पैरों पर गिर पड़ी। उसने मुझे बड़े प्यार से उठा कर गले से लगा लिया और हाथ पकड़े बाग के पिछली तरफ ले चली। बाग के पीछे की तरफ भी बाहर निकल जाने के लिये एक खिड़की थी और उसके पास सरपत का एक साधारण जङ्गल था। वह औरत मुझे लिए हुए सरपत के जङ्गल में घुस गई उसी जङ्गल में उस औरत का घोड़ा बँधा हुआ था। उसने घोड़ा खोला, चारजामा इत्यादि ठीक करके उस पर मुझे बैठाया, और पीछे आप भी सवार हो गई। घोड़ा तेजी के साथ रवाना हुआ और तब मैं समझी कि मेरी जान बच गई।

वह औरत पहर भर तक बराबर घोड़ा फेंके चली गई और जब एक घने जंगल में पहुँची तो घोड़े की चाल धीमी की तथा थोड़ी देर तक धीरे धीरे चल कर एक कुटी के पास पहुँची जिसके दर्वाजे पर दो तीन आदमी बैठे आपुस में कुछ बातें कर रहे थे। उस औरत को देखते ही वे लोग उठ खड़े हुए और अदब के साथ सलाम करके घोड़े के पास चले आये। औरत ने घोड़े के नीचे उतर कर मुझे भी उतार लिया। उन आदमियों में से एक ने घोड़े की लगाम थाम ली और उसे टहलाने के लिये ले गया, दूसरे आदमी ने कुछ इशारा पाकर कुटी के अन्दर से एक कम्बल ला के जमीन पर बिछा दिया और एक आदमी हाथ में घड़ा लोटा और रस्सी लेकर जल भरने के लिए चला गया। औरत ने मुझे कम्बल पर बैठने का इशारा किया और आप भी कमर हल्की करने के बाद उसी कम्बल पर बैठ गई, तब उसने मुझसे कहा कि अब तू अपना सच्चा सच्चा हाल बता कि तू कौन है और इस मुसीबत में क्यों कर फँसी तथा वह बुड्ढा शैतान कौन था, तब तक मेरा आदमी पानी लाता है और खाने पीने का बन्दोबस्त करता है।

उस औरत ने दया करके मेरी जान बचाई थी और जहाँ मैं चाहती थी वहाँ पहुँचा देने के लिए तैयार थी और मेरे दिल ने भी उसे माता के समान मान लिया था, इसलिए मैंने उससे कोई बात नहीं छिपाई और अपना सच्चा सच्चा हाल शुरू से आखीर तक कह सुनाया। उसे मेरी अवस्था पर बहुत तरस आया और बहुत देर तक तसल्ली और दिलासा देती रही। जब मैंने उसका नाम पूछा तो उसने अपना नाम 'चम्पा' बताया।

इतना हाल कह कर इन्दिरा क्षण भर के लिए रुक गई और कुँअर आनन्दसिंह ने चौंक कर उससे पूछा, "क्या नाम बताया, चम्पा!"

इन्दिरा०। जी हाँ।

आनन्द०। (गौर से इन्दिरा की सूरत देख कर) ओफ! अब मैंने तुझे पहिचाना!

इन्दिरा०। जरूर पहिचाना होगा क्योंकि एक दफे आप मुझे उस खोह में देख चुके हैं जहाँ चम्पा ने छत से लटकते हुए एक आदमी की देह काटी थी,

आपने उसमें बाघा डाली थी और योगिन का वेष धरे हाथ में अँगीठी लिए चपला ने आकर आपको और देवीसिंहजी को बेहोश कर दिया था।

इन्द्रजीत०। (ताज्जुब से आनन्दसिंह की तरफ देख कर) तुमने वह हाल मुझसे कहा था। जब तुम मेरी खोज में निकले थे और उस मुसलमानिन औरत की कैद से तुम्हें देवीसिंह ने छुड़ाया था, उसी समय का यह हाल है।

आनन्द०। जी हाँ और यह वही लड़की है।

इन्द्र०। मगर मैंने तो सुना था कि उसका नाम सरला है!

इन्दिरा०। जी हाँ, चम्पा ही ने मेरा नाम सरला रख दिया था।

इन्द्र०। वाह वाह! वर्षों के बाद इस बात का पता लगा।

गोपाल०। जरा उस किस्से को मैं भी सुना चाहता हूँ।

आनन्दसिंह ने उस समय का बिल्कुल हाल राजा गोपालसिंह से कह सुनाया और इसके बाद इन्दिरा को फिर अपना हाल कहने के लिए कहा।

चौथा बयान

भूतनाथ और असली बलभद्रसिंह तिलिस्मी खंडहर की नई इमारत वाले नम्बर दो के कमरे में उतारे गये। जीतसिंह की आज्ञानुसार पन्नालाल ने उनकी बड़ी खातिर की और हर तरह के आराम का बन्दोबस्त उनकी इच्छानुसार कर दिया। पहर रात बीतने पर जब वे लोग हर तरह से निश्चिन्त हो गये तो जीतसिंह को छोड़कर बाकी सब ऐयार जो उस खंडहर में मौजूद थे भूतनाथ से गपशप करने के लिये उसके पास आ बैठे और इधर उधर की बातें होने लगीं। पन्नालाल ने किशोरी कामिनी और कमला की मौत का हाल भूतनाथ से बयान किया जिसे सुनकर बलभद्रसिंह ने हद से ज्यादे अफसोस किया और भूतनाथ उदासी के साथ बड़ी देर तक सोच सागर में गोता खाता रहा। जब लगभग आधी रात के जा चुकी तो सब ऐयार बिदा होकर अपने अपने ठिकाने चले गये और भूतनाथ तथा बलभद्रसिंह भी अपनी चारपाई पर जा बैठे। बलभद्रसिंह तो बहुत जल्द निद्रादेवी के अधीन हो गया मगर भूतनाथ की आँखोंमें नींद का नाम निशान न था। कमरे में एक शमादान जल रहा था और भूतनाथ अन्दरवाले रमने की तरफ निगाह किए हुए कुछ सोच रहा था।

जिस कमरे में ये दोनों आराम कर रहे थे उसमें भीतर रमने की तरफ तीन खिड़कियाँ थीं, उन्हींमें से एक खिड़की की तरफ मुँह किये हुए भूतनाथ लेटा हुआ था। उसकी निगाह रमने से होती हुई ठीक उस दालान में पहुँच रही थी जिसमें वह तिलिस्मी चबूतरा था और जिस पर पत्थर का आदमी सोया हुआ था। उस दालान में एक कन्दील जल रही थी जिसकी रोशनी में वह चबूतरा तथा पत्थर वाला आदमी साफ दिखाई दे रहा था।

भूतनाथ को उस दालान और चबूतरे की तरफ देखते हुए घण्टे भर से ज्यादे बीत गया। यकायक उसने देखा कि चबूतरे का वह पत्थर जो भूतनाथ की तरफ पड़ता था पूरा का पूरा एक पल्ले किवाड़ की तरह खुल कर जमीन के साथ लग गया और उसके अन्दर किसी तरह की रोशनी मालूम पड़ने लगी जो धीरे धीरे ज्यादे होती जाती थी।

भूतनाथ को यह बात मालूम थी कि यह चबूतरा किसी तिलिस्म से सम्बन्ध रखता है और उस तिलिस्म को राजा बीरेंद्रसिंह के दोनों लड़के तोड़ेंगे। अस्तु इस समय उस चबूतरे की ऐसी अवस्था देख कर भूतनाथ को बड़ा ही ताज्जुब हुआ और वह आँखें मल कर उस तरफ देखने लगा। थोड़ी देर बाद चबूतरे के अंदर से एक आदमी निकलता हुआ दिखाई पड़ा मगर यह निश्चय नहीं हो सकता था कि वह मर्द है या औरत, क्योंकि वह एक स्याह लबादा सर से पैर तक ओढ़े हुए था और उसके बदन का कोई भी हिस्सा दिखाई न देता था। उसके बाहर निकलने के साथ ही चबूतरे के अंदर वाली रोशनी बंद हो गई मगर वह पत्थर जो हटकर जमीन के साथ लग गया था ज्यों का त्यों खुला ही रहा। वह आदमी बाहर निकल कर इधर उधर देखने लगा और थोड़ी देर तक कुछ सोचने के बाद बाहर रमने में आ गया। धीरे धीरे चल कर उसने एक दफे चारो तरफ का चक्कर लगाया। चक्कर लगाती समय वह आदमी कई दफे भूतनाथ की निगाहों की ओट हुआ मगर भूतनाथ ने उसे उठ कर देखने का उद्योग इस लिये नहीं किया कि कहीं उस आदमी की निगाह उस पर न पड़ जाय। जिस कमरे में भूतनाथ सोया हुआ था वह एक मञ्जिल ऊपर था और वहाँ से रमना तथा दालान साफ साफ दिखाई दे रहा था।

वह आदमी घूम फिर कर उसी तिलिस्मी चबूतरे के पास जा खड़ा हुआ और

कुछ दम लेकर चबूतरे के अन्दर घुस गया। थोड़ी देर बाद वही आदमी फिर चबूतरे के बाहर निकला। अबकी दफे वह अकेला न था बल्कि उसी ढंग का लबादा ओढ़े चार आदमी और भी उसके साथ थे अर्थात् पाँच आदमी चबूतरे के बाहर निकले और पूरब तरफ वाले कोने में जाकर सीढ़ियों की राह ऊपर की मञ्जिल में चढ़ गये। चारो ही तरफ इमारत बनी हुई थी इसलिए भूतनाथ को यह न जान पड़ा कि वे लोग किधर गये या किस कोठरी में घुसे, मगर इस बात का शक जरूर हो गया कि कहीं वे लोग कोठरी ही कोठरी घूमते हुए इस कमरे में न आ जायँ। अस्तु उसने एक महीन चादर मुँह पर ओढ़ ली और इस ढंग से लेट गया कि दर्वाजे की तरफ तथा तिलिस्मी चबूतरे की तरफ जिधर चाहे बिना सर हिलाये देख सके। आधे घण्टे के बाद भूतनाथ के कमरे का दर्वाजा खुला और उन्हीं पाँचों में से एक आदमी ने कमरे के अन्दर झाँक कर देखा तथा जब उसे मालूम हो गया कि दोनों आदमी बेखबर सो रहे हैं तो धीरे से कमरे के अन्दर चला आया और उसके बाद बाकी के चारो आदमी भी कमरे के अन्दर चले आये। वे पाँचों आदमी (या जो हों) एक ही रंग का लबादा या बुर्का ओढ़े हुए थे, केवल आँख की जगह जाली बनी हुई थी जिसमें देखने में किसी तरह की अड़चन न पड़े। उन पाँचों ने बड़े गौर से बलभद्रसिंह की सूरत देखी और एक ने कागज का एक लिफाफा उसके सिरहाने की तरफ रख दिया, फिर भूतनाथ के पास आया और उसके सिरहाने पर भी एक लिफाफा रख कर अपने साथियों के पास चला गया। कई क्षण और ठहर कर वे पाँचों आदमी कमरे के बाहर निकल गये और दर्वाजा को उसी तरह घुमा दिया जैसा पहिले था। उसी समय भूतनाथ भी उन पाँचों से किसी को पकड़ लेने की नीयत से चारपाई पर से उठ खड़ा हुआ और कमरे के बाहर निकला मगर कहीं कोई दिखलाई न पड़ा। उसी जगह नीचे उतर जाने के लिये सीढ़ियाँ थीं, भूतनाथ ने समझा कि वे लोग इन्हीं सीढ़ियों की राह नीचे उतर गये होंगे, अस्तु वह भी शीघ्रता के साथ नीचे उतर गया और घूमता हुआ बीच वाले रमने में पहुँचा मगर उन पाँचों में से कोई भी दिखाई न दिया। उस समय भूतनाथ ने सोचा कि आखिर वे लोग घूम फिर कर उसी तिलिस्मी चबूतरे के पास तो पहुँचेंगे इसलिये पहिले ही से वहाँ चल कर छिप रहना चाहिये।

भूतनाथ अपने को छिपाता हुआ उस तिलिस्मी चबूतरे के पास जा पहुँचा और पीछे की तरफ जा उसकी आड़ में छिप कर बैठ गया।

भूतनाथ को उसकी आड़ में छिप कर बैठे हुए आधे घण्टे से ज्यादे बीत गया मगर फिर किसी की सूरत दिखाई न पड़ी, तब वह उठ कर चबूतरे के सामने की तरफ आया जिधर का मुँह खुला हुआ था। वह पत्थर का तख्ता जो हट कर जमीन के साथ लग गया था अभी तक खुला हुआ था। भूतनाथ ने उसके अन्दर की तरफ झाँक कर देखा मगर अन्धकार के सबब कुछ दिखाई न पड़ा, हाँ उसके अन्दर से कुछ बारीक आवाज जरूर आ रही थी जिसे समझना कठिन था। भूतनाथ पीछे की तरफ हट गया और सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिये। इतने ही में अन्दर की तरफ से कुछ खटखटाहट की आवाज आई और वह पत्थर का तख्ता हिलने लगा जो चबूतरे से पल्ले की तरह अलग हो गया था। भूतनाथ उसके पास से हट गया और वह पत्थर का पल्ला चबूतरे के साथ धीरे से लग कर ज्यों का त्यों बन्द हो गया। उस समय भूतनाथ यह कहता हुआ वहाँ से रवाना हुआ, "मालूम होता है वे लोग किसी दूसरा राह से इसके अन्दर पहुँच गये।"

भूतनाथ घूमता हुआ फिर अपने कमरे में चला आया और अपनी चारपाई पर से उस लिफाफे को उठा लिया जो उन लोगों में से एक ने उसके सिरहाने रख दिया था। शमादान के पास जाकर लिफाफा खोला और उसके अन्दर से खत निकाल कर पढ़ने लगा। सिर्फ इतना लिखा हुआ था—

"कल बारह बजे रात को इसी कमरे में मेरा इन्तजार करो और जागते रहो।"

भूतनाथ ने दो तीन दफे उस लेख को पढ़ा और फिर लिफाफे में रख कर कमर में खोंस लिया, इसके बाद बलभद्रसिंह की चारपाई के पास गया और चाहा कि उसके सिरहाने जो पत्र रक्खा गया है उसे उठा कर पढ़े मगर उसी समय बलभद्रसिंह की आँख खुल गई और अपनी चारपाई पर किसी को झुके हुए देख वह उठ बैठा, भूतनाथ पर निगाह पड़ी और वह ताज्जुब में आ कर बोला, "यह क्या मामला है!"

भूतनाथ०। इस समय एक ताज्जुब की बात देखने में आई है।

बलभद्र०। वह क्या?

भूतनाथ०। तुम जरा सावधान हो जाओ और मुझे अपने पास बैठने दो तो कहूँ।

बलभद्र०। (भूतनाथ के लिये अपनी चारपाई पर जगह करके आओ बैठ जाओ और कहो कि क्या मामला है?

भूतनाथ बलभद्रसिंह की चारपाई पर बैठ गया और उसने जो कुछ देखा था पूरा पूरा बयान किया तथा अन्त में कहा कि पढ़ने के लिये मैं तुम्हारे सिर्हाने से चीठी उठाने लगा था कि तुम्हारी आँख खुल गई, अब तुम खुद उस चीठी को पढ़ो तो मालूम हो कि क्या लिखा हुआ है।'

बलभद्रसिंह लिफाफा उठा कर शमादान के पास चला गया और अपने हाथ से लिफाफा खोला। उसके अन्दर एक अंगूठी थी जिस पर निगाह पड़ते ही वह चिल्ला उठा और बिना कुछ कहे अपनी चारपाई पर आकर बैठ गया।

पांचवां बयान

कुमार की आज्ञानुसार इन्दिरा ने पुनः अपना हाल कहना शुरू किया :—

इन्दिरा०। चम्पा ने मुझे दिलासा देकर बहुत कुछ समझाया और मेरी मदद करने का वादा किया और यह भी कहा कि आज से तू अपना नाम बदल दे। मैं तुझे अपने घर ले चलती हूँ मगर इस बात का खूब ध्यान रखियो कि यदि कोई तुझसे तेरा नाम पूछे तो 'सरला' बताइयो और यह सब हाल जो तूने मुझसे कहा है अब और किसी से बयान न कीजियो। मैंने चम्पा की बात कबूल कर ली और वह मुझे अपने साथ चुनारगढ़ ले गई। वहाँ पहुँचने पर जब मुझे चम्पा की इज्जत और उसके मर्तबे का हाल मालूम हुआ तो मैं अपने दिल में बहुत खुश हुई और विश्वास हो गया कि यहाँ रहने में मुझे किसी तरह का डर नहीं है और चम्पा की मेहरबानी से मैं अपने दुश्मनों से बदला भी ले सकूँगी।

चम्पा ने मुझे हिफाजत और आराम से अपने यहाँ रक्खा और मेरा सच्चा हाल अपनी प्यारी सखी चपला के सिवाय और किसी से भी न कहा। निःसंदेह चम्पा ने मुझे अपनी लड़की के समान रक्खा और ऐयारी की विद्या भी दिल लगा कर सिखाने लगी, मगर अफसोस! किस्मत ने मुझे बहुत दिनों तक उसके

पास रहने न दिया और थोड़े ही जमाने के बाद (इन्द्रजीतसिंह की तरफ इशारा कर के) आपको गया की रानी माधवी ने धोखा देकर गिरफ्तार कर लिया। चम्पा और चपला आपकी खोज में निकलीं और मुझे भी उनके साथ जाना पड़ा। बस उसी जमाने में मेरा और चम्पा का साथ छूटा।

आनन्द०। तुम्हें यह कैसे मालूम हुआ कि भैया को माधवी ने गिरफ्तार कराया था?

इन्दिरा०। माधवी के दो आदमियों को चम्पा और चपला ने अपने काबू में कर लिया था। पहिले छिप कर उन दोनों की बातें सुनी थीं जिससे विश्वास हो गया था कि ये दोनों माधवी के नौकर हैं और कुँअर साहब को गिरफ्तार कर लेने में ये दोनों भी शरीक थे, मगर यह समझ में न आया कि जिस माधवी के ये लोग नौकर हैं वह माधवी कौन है और कुँअर साहब को ले जा कर उसने कहाँ रक्खा है। लाचार चम्पा ने धोखा दे कर उन दोनों को अपने काबू में कर लिया और कुँअर साहब का हाल उनसे पूछा। मगर मैंने उन दोनों आदमियों के ऐसा जिद्दी कोई भी न देखा, आपने स्वयम् देखा था कि चम्पा ने उस खोह में उसे कितना दुःख दे कर मारा मगर इस कम्बख्त ने ठीक ठीक पता नहीं ही दिया। उस समय वहाँ चम्पा का एक नौकर भी हबशी के रूप में काम कर रहा था, आपको याद होगा।

आनन्द०। अच्छा! वह माधवी ही का आदमी था?

इन्दिरा०। जी हाँ और उसकी बातों का आपने दूसरा ही मतलब लगा लिया था।

आनन्द०। ठीक है, फिर दूसरे आदमी की क्या दशा हुई, क्योंकि चम्पा ने तो दो आदमियों को पकड़ा था?

इन्दिरा०। दूसरा आदमी भी चम्पा के हाथ से उसी रोज उसके थोड़ी देर पहिले मारा गया था।

आनन्द०। हाँ ठीक है, उसके थोड़ी देर पहिले चम्पा ने एक और आदमी को मारा था, वही होगा जिसके मुँह से निकले हुए टूटे फूटे शब्दों ने हमें धोखे में डाल दिया था, अच्छा उसके बाद क्या हुआ? तुम्हारा उनका साथ कैसे छूटा?

इंदिरा०। चम्पा और चपला जब वहाँ से जाने लगीं तो ऐयारी का बहुत

कुछ सामान और खाने पीने की चाजें उसी खोह में रख कर मुझे कह गईं कि जब तक हम दोनों या दोनों में से एक लौट कर न आवें तब तक तू इसी जगह रहियो—इत्यादि, मगर मुझे बहुत दिनों तक उन दोनोंका इन्तजार करना पड़ा यहाँ तक कि जी ऊब गया और मैं ऐयारी का कुछ सामान लेकर उस खोह से बाहर निकली क्योंकि चम्पा की बदौलत मुझे कुछ कुछ ऐयारी आ भी गई थी। जब मैं उस पहाड़ और जंगल को पार करके मैदान में पहुँची तो सोचने लगी कि अब क्या करना चाहिये? क्योंकि बहुत सी बँधी हुई उम्मीदों का उस समय खून हो रहा था और माँ का चिन्ता के कारण मैं बहुत ही दुःखी हो रही थी। यकायक मेरी निगाह एक ऐसी चीज पर पड़ी जिसने मुझे चौंका दिया और मैं घबड़ा कर उस तरफ देखने लगी.....

इन्दिरा और कुछ कहा ही चाहती थी कि जमीन के अन्दर से बड़े जोर शोर के साथ घबराहट की आवाज आने लगी जिसने सभीको चौंका दिया और इन्दिरा घबड़ाकर राजा गोपालसिंह का मुँह देखने लगी। सबेरा हो चुका था और पूरब तरफ से उदय होने वाले सूर्य की लालिमा ने आसमान का कुछ हिस्सा अपनी बारीक चादर के नीचे ढाँक लिया था।

गोपाल०। (कुमार से) अब आप दोनों भाइयों का यहाँ ठहरना उचित नहीं जान पड़ता है। यह आवाज जो जमीन के नीचे से आ रही है निःसन्देह तिलिस्मी कल पुर्जों के हिलने या घूमने का सबब है। एक तौर पर आप तिलिस्म तोड़ने में हाथ लगा चुके हैं। अस्तु अब इस काम में रुकावट नहीं हो सकती। निःसन्देह इस आवाज को सुनकर आपके दिल में भी यही खयाल पैदा हुआ होगा अस्तु अब आप क्षण भर भी विलम्ब न कीजिये।

कुमार०। बेशक ऐसी ही बात है और आप भी यहाँ से शीघ्र चले जाइये, मगर इन्दिरा का क्या होगा?

गोपाल०। इन्दिरा को इस समय मैं अपने साथ ले जाता हूँ फिर जो कुछ होगा देखा जायगा।

कुमार०। अफसोस कि इन्दिरा का कुल हाल हम सुन न सके, खैर लाचारी है।

गोपाल०। कोई चिन्ता नहीं, आप तिलिस्म का काम तमाम करके इसकी माँ

को छुड़ाइये फिर सब हाल सुन लीजियेगा। हाँ मैंने आपसे वादा किया था कि अपनी तिलिस्मी किताब आपको पढ़ने के लिए दूँगा मगर वह किताब गायब हो गई थी इसलिए दे न सका था। अब (किताब दिखा कर) इन्दिरा के हाथ से यह किताब मुझे मिल गई है और पढ़ने के लिए मैं आपको दे भी सकता हूँ, यदि आप इसे अपने साथ ले जाना चाहें तो ले जायें।

इन्द्र०। समय की लाचारी इस समय हमलोगों को आपसे जुदा करती है और यह निश्चय नहीं हो सकता कि पुनः कब आपसे मुलाकात होगी और यह किताब हमलोग ले जायँगे तो कब वापस आने की नौबत आयेगी। तिलिस्मी किताब जो मेरे पास है उसके पढ़ने और बाजे की आवाज के सुनने से मुझे विश्वास होता है कि आपकी किताब पढ़े कि बिना भी हमलोग तिलिस्म तोड़ सकेंगे। यदि मेरा यह ख्याल ठीक है तो आपके पास से यह किताब ले जाकर आपका बहुत बड़ा हर्ज करना समयानुकूल न होगा।

गोपाल०। बेशक इस किताब के बिना आपका कोई हर्ज नहीं हो सकता और इसमें कोई शक नहीं कि इस किताब के बिना मैं बेहाथ पैर का हो जाऊँगा।

इन्द्र०। तो इस किताब को आप अपने पास रहने दीजिये फिर जब मुलाकात होगी तो देखा जायगा, अब हमलोग बिदा होते हैं।

गोपाल०। खैर जाइये, मैं आप दोनों कुमारों को दयानिधि ईश्वर के सुपुर्द करता हूँ।

इसके बाद राजा गोपालसिंह ने कुछ बातें दोनों कुमारों को जल्दी जल्दी समझा कर बिदा किया और आप इन्दिरा को साथ ले महल की तरफ रवाना हुए।

छठवां बयान

जिस राह से कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को राजा गोपालसिंह इस बाग में लाये थे उसी राह से लौट कर ये दोनों भाई उस कमरे में पहुँचे जो बाजे वाले कमरे में जाने के पहिले पड़ता था और जिसमें मशालदार चार खम्भों के सहारे एक बनावटी आदमी फाँसी लटक रहा था। इस कमरे का खुलासा हाल एक दफे लिखा जा चुका है इसलिये यहाँ पुनः लिखने की कोई

आवश्यकता नहीं जान पड़ती। पाठकों को यह भी याद होगा कि इंदिरा का किस्सा सुनने के पहिले ही कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह उस तिलिस्मी बाजे की आवाज ताली दे दे कर अच्छी तरह सुन समझ चुके हैं। यदि याद न हो तो तिलिस्म सम्बन्धी पिछला किस्सा पुनः पढ़ जाना चाहिये क्योंकि अब ये दोनों भाई तिलिस्म तोड़ने में हाथ लगाते हैं।

कमरे में पहुँचने के बाद दोनों भाइयों ने देखा कि फाँसी लटकते हुए आदमी के नीचे जो मूरत (इन्दिरा के ढंग की) खड़ी थी वह इस समय तेजी के साथ नाच रही है। कुअर इन्द्रजातसिंह ने तिलिस्मी खञ्जर का एक वार करके उस मूरत को दो टुकड़े कर दिया अर्थात् कमर से ऊपर वाला हिस्सा काट कर गिरा दिया। उसी समय उस मूरत का नाचना बन्द हो गया और वह भयानक आवाज भी जो बड़ी देर से सब तरफ गूँज रही थी एक दम बन्द हो गई। इसके बाद दोनों भाइयों ने उस बची हुई आधी मूरत को भी जोर करके जमीन से उखाड़ डाला। उस समय मालूम हुआ कि उसके दाहिने पैर के तलवे में लोहे की एक जंजीर लगी है दोनों कुमारों ने उस जंजीर को खींचा जिससे दाहिनी तरफ वाली दीवार में एक नया दर्वाजा निकल आया।

तिलिस्मी खंजर की रोशनी के सहारे दोनों भाई उस नये दर्वाजे के अन्दर चले गये और थोड़ी दूर जाने के बाद एक और खुला हुआ दर्वाजा लाँघ कर छोटी सी कोठरी में पहुँचे जिसके ऊपर चढ़ जाने के लिये दस बारह सीढ़ियाँ बनी हुई थीं। दोनों भाई सीढ़ियाँ चढ़ कर ऊपर के कमरे में पहुँचे जिसकी लम्बाई पचास हाथ से कम न होगी। यह कमरा काहे का था एक छोटा सा बनावटी बागीचा मन मोहन वाला था। यद्यपि इसमें फूल बूटों के जितने पेड़ लगे हुए थे सब बनावटी थे मगर फिर भी जान पड़ता था कि फूलों की खुशबू से वह कमरा अच्छी तरह बसा हुआ है। इस कमरे की छत में मोटे-मोटे शीशे बहुतायत से लगे हुए थे जिसमें से बे रोक टोक पहुँचने वाली रोशनी के कारण कमरे भर में उजाला हो रहा था। वे शीशे चौड़े या चिपटे न थे बल्कि गोल गुम्बज की तरह बने हुए थे।

इस छोटे से बनावटी बगीचे में छोटी छोटी बहुत ही खूबसूरत क्यारियाँ बनी हुई थीं और उन क्यारियों के चारो तरफ की जमीन पत्थर के छोटे छोटे रंग बिरंगे टुकड़ों से बनी हुई थी। बीच में एक गोलाम्बर (चबूतरा) बना हुआ

ा और उसके ऊपर एक औरत खड़ी हुई मालूम पड़ती थी जिसके बायें हाथ में क तलवार और दाहिने हाथ में हाथ भर लम्बा एक ताली थी।

कुमार इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खञ्जर की रोशनी बन्द करके आनंदसिंह की रफ देखा और कहा, "यह औरत निःसन्देह लोहे या पीतल की बनी हुई होगी ौर यह ताली भी वही होगी जिसकी हमलोगों को जरूरत है मगर तिलिस्मी ाजे ने तो यह कहा था कि ताली किसी चलती फिरती मे प्राप्त करोगे यह औरत ालती फिरती नहीं है खड़ी है।'

आनंद०। उसके पास चलिये तो देखें वह ताली कैसी है।

इन्द्रजीत०। चलो।

दोनों भाई उस गोलाम्बर की तरफ बढ़े मगर उसके पास न जा सके। ीन चार हाथ इधर ही थे कि एक प्रकार की आवाज के साथ वहाँ की मीन हिली और गोलम्बर (जिस पर पुतली थी) तेजी से चक्कर खाने लगा ौर उसी के साथ वह नकली औरत (पुतली) भी घूमने लगी जिसके हाथ में लवार और ताली थी। घूमने के समय उसका ताली वाला हाथ ऊँचा हो गया ौर तलवार का हाथ आगे की तरफ बढ़ आया जो अपने चक्कर की तेजी में वक का काम कर रहा था

आनन्द०। कहिये भाईजी! अब यह औरत या पुतली चलती फिरती हो ाई या नहीं?

इन्द्रजीत०। हाँ हो तो गई।

आनन्द०। अब जिस तरह हो सके इसके हाथ से ताली ले लेनी चाहिये, ोलाम्बर पर जाने वाला तो तुरत दो टुकड़े हो जायगा।

इन्द्रजीत०। (पीछे हटते हुए) देखें हट जाने पर इसका घूमना बन्द होता है या नहीं।

आनन्द०। (पीछे हट कर) देखिये गोलाम्बर का घूमना बन्द हो गया! बस यही काला पत्थर चार हाथ के लगभग चौड़ा जो इस गोलाम्बर के चारो तरफ लगा है असल करामात है, इस पर पैर रखने ही से गोलाम्बर घूमने लगता है। काले पत्थर के ऊपर जा कर) देखिये घमने लग गया, (हट कर) वह बन्द

हो गया, अच्छा अब मैं समझ गया, इस पुतली के हाथ से ताली और तलवार ले लेना कोई बड़ी बात नहीं है !

इतना कह कर आनन्दसिंह ने एक छलांग मारी और काले पत्थर पर पैर रक्खे बिना ही कूद कर गोलाम्बर के ऊपर चले गये। गोलाम्बर ज्यों का त्यों अपने ठिकाने जमा रहा और आनन्दसिंह पुतली के हाथ से ताली तथा तलवार लेकर जिस तरह वहाँ गये थे उसी तरह कूद कर अपने भाई के पास चले आये और बोले—"कहिये क्या मजे में ताली ले आये !"

इन्द्रजीत०। बेशक ! (ताली हाथ में लेकर) अजब ढंग की ताली बनी हुई है ! (गौर से देख कर) इस पर कुछ अक्षर भी खुदे मालूम पड़ते हैं मगर बिना तेज रोशनी के इनका पढ़ा जाना मुश्किल है।

आनन्द०। मैं तिलिस्मी खञ्जर की रोशनी करता हूँ आप पढ़िये।

इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खञ्जर की रोशनी में उसे पढ़ा और आनन्दसिंह को समझाया। इसके बाद दोनों भाई कूद कर उस गोलाम्बर पर चले गये जिस पर हाथ में ताली लिये हुए वह पुतली थी। ढूँढ़ने और गौर से देखने पर दोनों भाइयों को मालूम हुआ कि उस पुतली के दाहिने पैर में एक छेद ऐसा है जिसमें वह तलवार जो पुतली के हाथ से ले ली गई थी बखूबी घुस जाय। भाई की आज्ञानुसार आनन्दसिंह ने वही पुतली वाली तलवार उस छेद में डाल दी, यहाँ तक कि पूरी तलवार छेद के अन्दर चली गई केवल उसका कब्जा बाहर रह गया। उस समय दोनों भाइयों ने मजबूती के साथ उस पुतली को पकड़ लिया। थोड़ी ही देर बाद गोलाम्बर के नीचे से एक आवाज आई और पहिले की तरह वह गोलाम्बर पुतली सहित घूमने लगा। पहिले धीरे धीरे और क्रमशः तेजी के साथ वह गोलाम्बर घूमने लगा। उस समय दोनों भाइयों के हाथ उस पुतली के साथ ऐसे चिपक गये कि मालूम होता था छुड़ाने से भी छूटेंगे नहीं।

गोलाम्बर घूमता हुआ जमीन के अंदर घुसने लगा और सर में चक्कर आने के कारण दोनों भाई बेहोश हो गये। जब वे होश में आये तो आँखें खोल कर चारो तरफ देखने लगे मगर अन्धकार के सिवाय और कुछ भी दिखाई न दिया। उस समय इन्द्रजीतसिंह ने अपने तिलिस्मी खंजर के जरिये से रोशनी की और इधर उधर देखने लगे। अपने छोटे भाई के पास में बैठे पाया और उस पुतली को टुकड़े

टुकड़े भई हुई देखा जिसके कुछ टुकड़े गोलाम्बर के ऊपर थे और कुछ जमीन पर छितरे हुए थे।

इस समय भी दोनों भाइयों ने अपने को उसी गोलाम्बर पर पाया, समझे कि यह गोलाम्बर ही धँसता हुआ इस नीचे वाली जमीन के साथ आ लगा है मगर जब छत की तरफ निगाह की तो किसी तरह का निशान या छेद न देखा और छत को बराबर और बिल्कुल साफ पाया। अब जहाँ पर दोनों भाई थे वह कोठरी बनिस्बत ऊपर वाले (या पहिले) कमरे के बहुत छोटी थी चारो तरफ तरह तरह के कल पुर्जे दिखाई दे रहे थे जिनमें से निकल कर फैलते हुए तार और लोहे की जञ्जीरें जाल की तरह बिल्कुल कोठरी को घेरे हुए थीं। बहुत सी जञ्जीरें ऐसी थीं जो छत में, बहुत सी दीवारों में, और बहुत सी जमीन के अन्दर घुसी हुई थीं। इन्द्रजीतसिंह के सामने की तरफ एक छोटा सा दर्वाजा था जिसके अन्दर दोनों कुमारों को जाना पड़ेगा अस्तु दोनों कुमार गोलाम्बर के नीचे उतरे और तारों तथा जञ्जीरों से बचते हुए उस दर्वाजे के अन्दर गये। यह रास्ता सुरंग की तरह था जिसकी छत जमीन और दोनों तरफ की दीवारें मजबूत पत्थर की बनी हुई थीं। दोनों कुमार थोड़ी दूर तक उसमें बराबर चले गये और इसके बाद ऐसी जगह पहुँचे जहाँ ऊपर की तरफ निगाह करने से आसमान दिखाई देता था। गौर करने से दोनों कुमारों को मालूम हुआ कि यह स्थान वास्तव में एक कूए की तरह है। इसकी जमीन (किसी कारण से) बहुत ही नरम और गुदगुदी थी। बीच में एक पतला लोहे का खम्भा था, खम्भे के नीचे जञ्जीर के सहारे एक खटोली बँधी हुई थी जिस पर दो तीन आदमी बैठ सकते थे। खटोली से अढ़ाई तीन हाथ ऊँचे (उसी खम्भे में) एक चर्खी लगी हुई थी और चर्खी के साथ एक ताम्रपत्र बँधा हुआ था। इन्द्रजीतसिंह ने ताम्रपत्र को पढ़ा, बारीक हरफों में यह लिखा हुआ था :—

"यहाँ से बाहर निकल जाने वाले को खटोली के ऊपर बैठ कर यह चर्खी सीधी तरफ घुमाना चाहिये। चर्खी सीधी तरफ घुमाने से यह खम्भा खटोली को लिये हुए ऊपर की तरफ जायगा और उलटी तरफ घुमाने से नीचे उतरेगा। पीछे हटने वाले को अब वह रास्ता खुला हुआ नहीं मिलेगा जिधर से वह आया होगा।"

पत्र पढ़ कर इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह से कहा, "यहाँ से बाहर निकल चलने के लिये यह अच्छी तर्कीब है, अब हम लोगों को भी इसी तरह बाहर हो जाना चाहिये, तुम भी इसे पढ़ लो।"

आनन्द० ! (पत्र पढ़ कर) आइये इस खटोली में बैठ जाइये।

दोनों कुमार उस उस खटोली में बैठ गये और इन्द्रजीतसिंह चर्खी घुमाने लगे। जैसे जैसे चर्खी घुमाते थे तैसे तैसे वह खम्भा खटोली को लिये हुए ऊपर की तरफ उठता जाता था। जब वह खम्भा कूएँ के बाहर निकल गया तब अपने चारो तरफ की जमीन और इमारतों को देख कर दोनों कुमार चौंके और इन्द्रजीतसिंह की तरफ देख कर आनन्दसिंह ने कहा :—

आनन्द०। यह तो तिलिस्मी बाग का वही चौथा दर्जा है जिसमें हम लोग कई दिन तक रह चुके हैं।

इन्द्रजीत०। ठीक वही है, मगर यह खम्भा हम लोगों को (हाथ का इशारा करके) इस तिलिस्मी इमारत में पहुँचावेगा।

पाठक ! हम संतति के नवें हिस्से के पहिले बयान में इस बाग के चौथे हिस्से का हाल जो कुछ लिख चुके हैं शायद आपको याद होगा, यदि भूल गये हों तो उसे पुनः पढ़ जाइये। उस बयान में यह भी लिखा जा चुका है कि इस बाग के पूरब तरफ वाले मकान के चारो तरफ पीतल की दीवार थी इसलिये उस मकान का केवल ऊपर वाला हिस्सा दिखाई देता था और यह कुछ भी मालूम नहीं होता था कि उसके अन्दर क्या है, हाँ छत के ऊपर लोहे का एक पतला महराबदार खम्भा जरूर था जिसका दूसरा सिरा उसके पास वाले कूएँ के अंदर गया था। उस मकान के अन्दर चारो तरफ जो पीतल की दीवार थी उसमें एक बन्द दर्वाजा भी दिखाई देता था और उसके दोनों तरफ पीतल ही के दो आदमी हाथ में नंगी तलवार लिये खड़े थे, इत्यादि।

यह उसी मकान के साथ वाला कुँआँ था जिसमें से इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह निकले थे। धीरे धीरे ऊँचे होकर दोनों भाई उस मकान की छत पर जा चहुँचे जिसके चारो तरफ पीतल की दीवार थी। खटोली मकान की छत तक पहुँच कर अड़ गई और दोनों कुमारों को उस पर से उतर जाना पड़ा। पहिले

जब दोनों कुमार इस बाग (चौथे दर्जे) के अन्दर आये थे तब इस मकान का हाल कुछ जान नहीं थे मगर अब तो इत्तफाक ने खुद इन दोनों को उस मकान के अंदर पहुँचा दिया इस लिये बड़े उत्साह से दोनों भाई इस मकान का तमाशा देखने के लिये तैयार हो गये।

इस मकान की छत पर से एक रास्ता नीचे उतर जाने के लिये था, उसी राह से दोनो भाई नीचे वाली मंजिल में उतर कर एक छोटे से कमरे में पहुँचे जहाँ की छत जमीन और चारो तरफ की दीवारों में कलई किये हुये हजारों शीशे बड़ी कारीगरी से जड़े हुए थे। अगर एक आदमी भी उस कमरे में जाकर खड़ा हो तो अपनी हजारों सूरतें * देख कर घबड़ा जाय। सिवाय इस बात के उस कमरे में और कुछ भी न था, न यही मालूम होता था कि यहाँ से किसी और जगह जाने के लिये कोई रास्ता है। उस कमरे की अवस्था देख कर इन्द्रजीतसिंह हँसे और आनन्दसिंह की तरफ देख कर बोले :—

इन्द्रजीत०। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस कमरे में इन शीशों की बदौलत एक प्रकार की दिल्लगी है, मगर आश्चर्य है कि तिलिस्म बनाने वालों ने यह फजूल कार्रवाई क्यों की है! इन शीशों के लगाने से कोई फायदा या नतीजा मालूम नहीं होता।

आनन्द०। मैं यही सोच रहा हूँ मगर विश्वास नहीं होता कि तिलिस्म बनाने वाले ने इसे व्यर्थ ही बनाया हो। कोई न कोई बात इसमें जरूर होगी। इसके सिवाय इस मकान में अभी तक कोई अनूठी बात दिखाई नहीं दी अगर यहाँ कुछ है तो केवल यही एक कमरा है, अस्तु इस कमरे को फजूल समझना इस इमारत भर को फजूल समझना है, मगर ऐसा नहीं हो सकता। देखिये इसी मकान से उस लोहे वाले खम्भे का सम्बन्ध है जिसकी बदौलत हम लोग..... (रुक कर) सुनिये सुनिये, तह आवाज कैसी और कहाँ से आ रही है!

बात करते करते आनन्दसिंह रुक गये और ताज्जुब भरी निगाहों से अपने भाई की तरफ देखने लगे क्योंकि उन्हें दो आदमियों के जोर से बातचीत करने की आवाज सुनाई देने लगी। वह आवाज यह थी :—

* यदि दो बड़े शीशे आमने सामने रख कर देखिये तो शीशों में दो या चार ही नहीं बल्कि हजारों शीशे एक दूसरे के अन्दर दिखाई देंगे।

एक० । तो दोनों कुमार उस कूएँ से निकल कर यहाँ आ जायँगे ?

दूसरा० । जरूर आ जायँगे । उस कूएँ में जो लोहे का खम्भा गया हुआ है उसमें एक खटोली बँधी हुई है, उसी खटोली पर बैठ कर एक कल घुमाते हुए दोनों आदमी यहाँ आ जायँगे ।

पहिला० । तब तो बड़ी मुश्किल होगी ! हम लोगों को यह जगह छोड़ देनी पड़ेगी !

दूसरा० । हम लोग इस जगह को क्यों छोड़ने लगे ? जिसके भरोसे पर हम लोग यहाँ बैठे हैं क्या वह दोनों कुमारों से कमजोर है ? खैर उसे आने दो पहिले तो हमी लोग उन्हें तङ्ग करने के लिये बहुत हैं ।

पहिला० । इसमें तो कोई शक नहीं कि हम लोग उनकी ताकत और जवाँमर्दी को हवा खिला सकते हैं मगर एक काम जरूर करना चाहिये ।

दूसरा० । वह क्या ?

पहिला० । इस कमरे का वह दर्वाजा खोल देना चाहिये जिसमें भयानक अजगर रहता है, जब दोनों उस दर्वाजे को खुला देख कर उसके अन्दर जायँगे तो निःसन्देह वह अजगर उन दोनों को निगल जायेगा ।

दूसरा० । और बाकी के दर्वाजे मजबूती के साथ बन्द कर देने चाहिये जिसमें वे और किसी तरफ जा न सकें ।

पहिला० । बेशक ! इसके अतिरिक्त एक काम और भी जरूर करना चाहिये जिसमें वे दोनों उस दर्वाजे के अन्दर जरूर जायँ अर्थात् उन दोनों लड़कियों को भी उस अजगर वाली कोठरी में हाथ पैर बाँध कर पहुँचा देना चाहिये जिन पर दोनों कुमार आशिक हैं ।

दूसरा० । यह तो तुमने बहुत अच्छी बात कही । जब वह अजगर उन लड़कियों को निगलना चाहेगा तो वे जरूर चिल्लायेंगी, उस समय आवाज पहिचानने पर वे दोनों अपने को किसी तरह रोक न सकेंगे और उस दर्वाजे के अन्दर जरूर चले जायँगे और अजगर की खुराक बनेंगे ।

पहिला०। यह भी अच्छी बात कही, अच्छा उन दोनों को पकड़ लाओ और हाथ पैर बाँध कर उस कोठरी में डाल दो । अगर इस कार्रवाई से काम न चलेगा तो दूसरी कार्रवाई की जायगी मगर उन्हें इस मकान के बाहर कदापि जाने न देंगे ।

इसके बाद वह बातचीत की आवाज बन्द हो गई और तब यकायक सामने वाले आईने में कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने अपने प्यारे ऐयार भैरोसिंह और तारासिंह की सूरत देखी, सो भी इस ढंग से कि दोनों ऐयार अकड़ते हुए एक तरफ से आए और दूसरी तरफ चले गये। इसके बाद दो औरतों की सूरत नजर आई। पहले तो पहिचानने में शक हुआ मगर तुरन्त ही मालूम हो गया कि वे दोनों कमलिनी और लाडिली हैं। उन दोनों की कमर में लोहे की जंजीरें बँधी हुई थीं और उन्हें एक मजबूत आदमी अपने हाथ में पकड़े हुए उन दोनों के पीछे पीछे जा रहा था। यह भी देखा कि कमलिनी और लाडिली चलते चलते रुकीं और उसी समय पिछले आदमी ने उन दोनों को धक्का दिया जिससे वे झुक गईं और सर हिला कर आगे बढ़ती हुई नजरों की ओट हो गईं।

भैरोसिंह और तारासिंह यहाँ कैसे आ पहुँचे? कमलिनी और लाडिली को कैदियों की तरह ले जाने वाला कौन था? इस शीशे के अन्दर उन सभों की सूरतें कैसे दिखाई पड़ी? और चारो तरफ से बन्द रहने पर भी यहाँ आवाज कैसे आई? इन बातों को सोचते हुए दोनों कुमार बहुत ही दुःखी हुए।

आनन्द०। भैया, यह तो बड़े आश्चर्य की बात मालूम पड़ती है! यह लोग (अगर वास्तव में कोई हों) तो कहते हैं कि अजगर कुमारों को निगल जायगा। मगर हमलोग तो खुद अजगर के मुँह में जाने के लिये तैयार हैं क्योंकि तिलिस्मी बाजे की यही आज्ञा है। अब या तो तिलिस्मी बाजे की बात झूठी है और या ये लोग धोखा देना चाहते हैं?

इन्द्रजीत०। मैं भी इन्हीं बातों को सोच रहा हूँ। तिलिस्मी बाजे की आवाज को झूठा समझना बुद्धिमानी की बात नहीं है क्योंकि उसी आवाज के भरोसे पर हमलोग तिलिस्म तोड़ने के लिए तैयार हुए हैं, मगर हाँ इस बात का पता लगाये बिना अजदहे के मुँह में जाने की भी इच्छा नहीं होती कि यह आवाज कैसी थी। इस आईने में जिन लोगों की सूरतें दिखाई दी हैं या जिन लोगों के बातचीत की आवाज सुनाई दी है वे वास्तव में कोई हैं या बिल्कुल तिलिस्मी खेल ही है? कलई किये हुए आईने में किसी ऐसे आदमी की सूरत क्योंकर दिखाई दे सकती है जो उसके सामने न हो?

आनन्द०। यह एक नई बात है। अगर किसी के सामने हम यह किस्सा बयान करें तो वह यही कहेगा कि तुमको धोखा हुआ, जिन लोगों को तुमने आईने में देखा था वे तुम्हारे पीछे की तरफ से निकल गये होंगे और तुमने उस बात का ख्याल न किया होगा, मगर नहीं, अगर वास्तव में ऐसा ही होता तो आईने में भी हम उन्हें अपने पीछे की तरफ से निकल जाते हुए देखते। वास्तव में इसका सबब कोई दूसरा ही है जो हम लोगों की समझ में नहीं आता।

इन्द्रजीत०। खैर अब क्या किया जाय! इस मञ्जिल से नीचे उतर जाने या किसी और तरफ जाने के लिये रास्ता भी तो दिखाई नहीं देता। (उँगली का इशारा करके) सिर्फ वह एक निशान है जहाँ से आप ही आप एक दर्वाजा पैदा होगा या हम लोग दर्वाजा पैदा कर सकते हैं मगर वह दर्वाजा उसी अजदहे वाली कोठरी का है जिसमें जाने के लिये हम लोग यहाँ आये हैं।

आनन्द०। ठीक है मगर क्या हम लोग तिलिस्मी खञ्जर से इस शीशे को तोड़ या काट नहीं सकते?

तन्द्रजीत०। जरूर काट सकते हैं मगर यह कार्रवाई अपने मन की होगी!

आनन्द०। तो क्या हर्ज है, आज्ञा दीजिये तो मैं एक हाथ शीशे पर लगाऊँ।

इन्द्रजीत०। इस शीशे को तोड़ कर देखो क्या नतीजा निकलता है। कहीं कोई बखेड़ा न पैदा हो!!

"अब जो होनी हो सो हो!!" इतना कह कर आनन्दसिंह तिलिस्मी खंजर लिये हुए आईने की तरफ बढ़े। उसी वक्त बायें तरफ की शीशे वाली दीवार में एक आवाज होकर छोटा सा दर्वाजा उसी जगह निकल आया जहाँ कुमार ने हाथ का इशारा करके आनन्दसिंह को बताया था मगर दोनों कुमारों ने उसके अंदर जाने का ख्याल भी न किया और आनन्दसिंह ने तिलिस्मी खञ्जर का एक भरपूर हाथ अपने सामने वाले शीशे पर लगाया जिसका नतीजा यह हुआ कि शीशे का एक बहुत बड़ा टुकड़ा भारी आवाज देकर पीछे की तरफ हट गया और आनन्दसिंह इस तरह उसके अन्दर घुस गये जैसे किसी हवा के खिंचाव या बवण्डर ने उन्हें अपनी तरफ खींच लिया हो। इसके बाद वह शीशे का टुकड़ा अपनी जगह पर आकर ज्यों का त्यों बराबर मालूम होने लगा।

हवा के खिंचाव का असर कुछ कुछ इन्द्रजीतसिंह पर भी पड़ा मगर यह

दूर खड़े थे इसलिये खिंच कर वहाँ तक न जा सके मगर आनन्दसिंह उसके पास होने के कारण खिंच कर दर्वाजे के अन्दर चले गये।

आनन्दसिंह का यकायक इस तरह आफत में फँस जाना बहुत ही बुरा हुआ। इस बात का उतना रंज इंद्रजीत को हुआ सो वे ही जान सकते थे। उनकी आँखों में आँसू भर आया और वे बेचैन हो कर धीरे से बोले—"जब तक मैं भी इस शीशे के अन्दर न चला जाऊँगा अपने भाई को न छुड़ा सकूँगा या इस बात का पता न लगा सकूँगा कि उस पर क्या मुसीबत आई।" इतना कह तिलिस्मी खञ्जर लिए हुए शीशे की तरफ बढ़े मगर दो कदम जा कर फिर रुक गये और सोचने लगे, "कहीं ऐसा न हो कि जिस मुसीबत मे आनन्दसिंह पड़ गया है उसी मुसीबत में मैं भी फँस जाऊँ! यदि ऐसा हुआ तो हम दोनों इसी तिलिस्म में मर कर रह जायँगे। यहाँ कोई ऐसा है भी नहीं जो हम लोगों की सहायता करेगा। अगर ईश्वर की कृपा से तिलिस्म के इस दर्जे को हम अकेले तोड़ सके तो निःसन्देह आनन्द को छुड़ा लेंगे। कहीं ऐसा न हो कि जब तक हम तिलिस्म तोड़ें तब तक आनन्द की जान पर आ बने। बेशक इस आवाज ने हम लोगों को धोखे में डाल दिया। हमें तिलिस्मी बाजे पर भरोसा करके बेखौफ अजहदे के मुँह में चले जाना चाहिये था।" इत्यादि तरह तरह की बातें सोच कर इन्द्रजीतसिंह रुक गये और आनन्दसिंह की जुदाई में आँसू गिराते हुए उसी अजहदे वाली कोठरी में चले गये जिसका दर्वाजा पहिले ही खुल चुका था।

उस कोठरी में सिवाय एक अजहदे के और कुछ भी न था। इस अजहदे की मोटाई दो गज घेरे से कम न होगी। उसका खुला हुआ मुँह इस योग्य था कि उद्योग करने से आदमी उसके पेट में बखूबी घुस जाय। वह अजदहा एक सोने के चबूतरे के ऊपर कुण्डली मारे बैठा था। अपने डील डौल और खुले हुए भयानक मुँह के कारण वह बहुत ही डरावना मालूम पड़ता था। झूठा और बनावटी मालूम हो जाने पर भी उसके पास जाना या खड़े होना बड़े जीवट का काम था।

इन्द्रजीतसिंह बेखौफ उस अजहदे के मुँह में घुस गये और कोशिश करके आठ या नौ हाथ के लगभग नीचे उतर गये। इस बीच में उन्हें गर्मी और साँस लेने की तङ्गी से बहुत तकलीफ हुई और इसके बाद उन्हें नीचे उतर जाने के

लिए बारह सीढ़ियाँ मिलीं। नीचे उतर जाने पर कई कदम एक सुरंग में चलना पड़ा और इसके बाद वे उजाले में पहुँचे।

अब जिस जगह इन्द्रजीतसिंह पहुँचे वह एक छोटा सा तिमञ्जिला मकान संगमर्मर के पत्थरों से बना हुआ था और उसका ऊपरी हिस्सा बिल्कुल खुला था अर्थात् चौक में खड़े होने से आसमान दिखाई देता था। नीचे वाले खण्ड में जहाँ इन्द्रजीतसिंह खड़े थे चारो तरफ चार दालान थे और चारो दालान अच्छे अच्छे बेश-कीमती जवाहिरात, सोने के जड़ाऊ नुमाइशी बरतनों, तथा हर्बों से भरे हुए थे? कुमार उस बेहिसाब दौलत तथा अनमोल चीजों को देखते हुए बाईं तरफ वाले दालान में पहुँचे और वहाँ की दीवार में एक छोटा सा दर्वाजा देखा। झाँकने से मालूम हुआ कि ऊपर के खण्ड में जाने के लिये सीढ़ियाँ हैं। कुँअर इन्द्रजीतसिंह सीढ़ियों की राह ऊपर चढ़ गये। उस खण्ड में भी चारो तरफ चार दालान थे। पूरब तरफ वाले दालान में कल पुरजे लगे हुए थे, उत्तर तरफ वाले दालान में एक चबूतरे के ऊपर लोहे का सन्दूक ठीक उसी ढंग का था जैसा कि तिलिस्मी बाजा कुमार देख चुके थे, दक्खिन तरफ वाले दालान में कई पुतलियाँ खड़ी थीं जिनके पैरों में गड़ारीदार पहिये की तरह बना हुआ था, जमीन में लोहे की नालियाँ जड़ी हुई थीं और उन नालियों में वह पहिया चढ़ा हुआ था अर्थात् वह पुतलियें इस लायक थीं कि पहियों और नालियों की बरकत से बँधे हुए (महमूद) स्थान तक चल फिर सकती थीं और पश्चिम तरफ वाले दालान में एक शीशे की दीवार के सिवाय और कुछ भी दिखाई नहीं देता था।

उन पुतलियों में कुमार ने अपने जान पहिचान और संगी साथियों की मूरतें देखी। उन्हीं में भैरोसिंह, तारासिंह, कमलिनी, लाडिली, राजा गोपालसिंह और अपनी तथा अपने छोटे भाई की भी मूरत देखी जो डील डौल और नकशे में बहुत साफ बनी हुई थीं। कमलिनी और लाडिली की मूरत के कमर में लोहे की जञ्जीर बँधी हुई थी और एक मजबूत आदमी उसे थामे हुए था। कुमार ने मूरत को हाथ का धक्का देकर चलाना चाहा मगर वह अपनी जगह से एक अंगुल भी न हिली। कुमार ताज्जुब से उसकी तरफ देखने लगे।

कुमार इन सब चीजों को गौर और ताज्जुब की निगाह से देख रहे थे कि यकायक दो आदमियों के बातचीत की आवाज इनके कान में पड़ी। चौंक कर

चारो तरफ देखने लगे मगर किसी आदमी की सूरत न दिखाई पड़ी। थोड़ी ही देर में मालूम हो गया कि उत्तर तरफ वाले दालान में चबूतरे के ऊपर जो लोहे वाला सन्दूक है उसी में से आवाज निकल रही है। कुमार समझ गये कि यह सन्दूक भी उसी तरह का तिलिस्मी बाजा है जैसा कि पहले देख चुके हैं अस्तु वे तुरत उस बाजे के पास चले गये और आवाज सुनने लगे। वह बातचीत (आवाज) ठीक वही थी जो कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह शीशे वाले कमरे में सुन चुके थे अर्थात् एक ने कहा, "तो क्या दोनों कुमार उस कूएँ में से निकल कर यहाँ आ जायेंगे !" उसी के बाद दूसरे आदमी के बोलने की आवाज आई मानो दूसरे ने जवाब दिया, "जरूर आ जायेंगे। उस कूएँ में जो लोहे का खम्भा गया हुआ है उसमें एक खटोली बँधी हुई है, उसी खटोली पर बैठ कर एक कल घुमाते हुए दोनों आदमी यहाँ आ जायेंगे।" इत्यादि जो जो बातें दोनों कुमारों ने उस शीशे वाले कमरे में सुनी थीं ठीक वे ही बातें उसी ढंग की आवाज में कुमार ने इस बाजे में सुनीं। बड़ा ताज्जुब हुआ और उन्होंने इस बात का निश्चय कर लिया कि अगर वह शीशे वाला कमरा इस दीवार के बगल ही में है तो निःसन्देह यही आवाज हम दोनों भाइयों ने सुनी थी। इसके साथ ही कुमार की निगाह पश्चिम तरफ वाले दालान में शीशे की दीवार के ऊपर पड़ी और वे धीरे से बोल उठे, "बेशक इसी शीशे वाली दीवार के उस तरफ वह कमरा है और ताज्जुब नहीं कि उस कमरे में इस तरफ यही शीशे की दीवार हम लोगों ने देखी हो !!"

इतने ही में दक्खिन तरफ वाले दालान में से धीरे धीरे कुछ कल पुर्जों के घूमने की आवाज आने लगी। कुमार ने उस तरफ देखा तो भैरोसिंह की मूरत अपने ठिकाने से चलते हुए पाया। उन दोनों मूरतों की अकड़ कर चलने वाली चाल भी ठीक वैसी ही थी जैसी कुमार उस शीशे के अन्दर देख चुके थे। ये दोनों मूरतें चलती हुईं उस शीशे वाली दीवार के पास पहुँचीं। उसी समय दीवार में एक दर्वाजा निकल आया और दोनों मूरतें उसके अन्दर घुस गईं। इसके बाद कमलिनी और लाडिली की मूरतें चलीं और उनके पीछे वाला आदमी जो जञ्जीर थामे हुए था पीछे पीछे चला और उसी तरह शीशे वाली दीवार के अन्दर जाकर थोड़ी देर में अपने ठिकाने लौट आया और वह दर्वाजा ज्यों का त्यों बन्द हो

गया। अब कुँअर इन्द्रजीतसिंह के दिल में किसी तरह का शक नहीं रहा, उन्हें निश्चय हो गया कि उस शीशे वाले कमरे में जो कुछ हम दोनों ने सुना और देखा वास्तव में कुछ भी न था या अगर कुछ था तो वही जो कि यहाँ आने से मालूम हुआ है, साथ ही इसके कुमार यह भी सोचने लगे कि ये हमारे संगी साथियों और मुलाकातियों की मूरतें पुरानी बनी हुई हैं या तस्वीरों की तरह इन्हें भी राजा गोपालसिंह ने स्थापन किया है ? और इन मूरतों का चलना फिरना तथा इस बाजे का बोलना किसी खास वक्त पर मुकर्रर है या घण्टे घण्टे दो दो घण्टे पर ऐसा ही हुआ करता है ।? मगर नहीं घड़ी घड़ी व्यर्थ ऐसा होना अनुचित है। तो क्या जब शीशे वाले कमरे में कोई जाता है तभी ऐसी बातें होती हैं ? क्योंकि हमलोगों के भी वहाँ पहुँचने पर यही दृश्य देखने में आया था। अगर मेरा यह खयाल ठीक है तो अब भी उस शीशे वाले कमरे में कोई पहुँचा होगा। गैर आदमी का वहाँ पहुँचाना तो असम्भव है, अगर कोई वहाँ पहुँचा है तो चाहे वह आनन्दसिंह हो या राजा गोपालसिंह हों। कौन ठिकाना फिर किसी कारण से आनन्दसिंह वहाँ जा पहुँचे हों ! अगर ऐसा हो तो जिस तरह इस बाजे की आवाज उस कमरे में पहुँचती है उसी तरह मेरी आवाज भी वहाँ वाला सुन सकता है— इत्यादि बातें कुमार ने बहुत जल्दी जल्दी सोचीं और इसके बाद ऊँचे स्वर में बोले, "शीशे वाले कमरे में कौन है ?"

जवाब०। मैं हूँ आनन्दसिंह, क्या मैं भाई साहब की आवाज सुन रहा हूँ ?

इन्द्रजीत०। हाँ, मैं यहाँ आ पहुँचा हूँ, तुम भी जहाँ तक जल्दी हो सके उस अजदहे के मुँह में चले जाओ और हमारे पास पहुँचो।

जवाब०। बहुत अच्छा।

सातवां बयान

किस्मत जब चक्कर खिलाने लगती है तो दम भर भी सुख की नींद सोने नहीं देती। इसकी बुरी निगाह के नीचे पड़े हुए आदमी को तभी कुछ निश्चिन्ती होती है जब इसका पूरा दौरा (जो कुछ करना हो कर घर के) बीत जाता है। इस किस्से को पढ़कर पाठक जान गए होंगे कि इन्द्रदेव भी सुखियों की पंक्ति में गिने जाने लायक नहीं है। वह भी जमाने हाथों से अच्छी तरह सताया जा चुका

है, और इस जवांमर्द की आँखों में बहुत सी रातें उन दिनों की बीत चुकी हैं जब कि उसका मजबूत दिल कई तरह की खुशियों से नाउम्मीद हो कर 'हरि-इच्छा' का मंत्र जपता हुआ एक तरह से बेफिक्र हो बैठा था। मगर आज उसके आगे वही दुःखदाई घड़ी पहिले से दूना विकराल रूप धारण करके आ खड़ी हुई हैं। इतने दिनो तक तो यह समझ कर कि उसकी स्त्री और लड़की इस दुनिया से कूच कर गईं सब्र कर के बैठा हुआ था लेकिन जब से उसे अपनी स्त्री और लड़की के इस दुनिया में मौजूद रहने का कुछ कुछ हाल और आपुस वालों की बेईमानी का थोड़ा बहुत पता मालूम हुआ है तब से अफसोस रञ्ज और गुस्से से उसके दिल की अजब हालत हो रही है।

लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली को समझा बुझा कर जब इन्द्रदेव जमानिया की तरफ बलभद्रसिंह को छुड़ाने की नीयत से रवाना हुआ तो पहाड़ी के नीचे पहुँच कर अपने अस्तबल में से एक उम्दा घोड़ा लिया और उस पर सवार हो पाँच ही सात कदम आगे बढ़ा था कि राजा गोपालसिंह का भेजा हुआ एक सवार आ पहुँचा जिसने सलाम करके एक चीठी उसके हाथ में दी और उसने उसे खोल कर पढ़ा।

इस चीठी में राजा गोपालसिंह ने यही लिखा था कि—आप पत्र पढ़ते ही अकेले मेरे पास चले आइये। यह सुनकर आपको बड़ा आश्चर्य होगा कि आज कल इन्दिरा मेरे घर में है और उसकी माँ भी जीती है जो यद्यपि तिलिस्म में फँसी हुई है मगर मैं उसे अपनी आँखों से देख आया हूँ।

इस चीठी को पढ़कर इन्द्रदेव कितना खुश हुआ होगा यह हमारे पाठक स्वयम् समझ सकते हैं, अस्तु वह तेजी के साथ जमानिया की तरफ रवाना हुआ और समय से पहिले ही वहाँ जा पहुँचा। जब राजा गोपालसिंह को उसके आने की खबर हुई तो वे दर्वाजे तक आकर बड़ी मुहब्बत से इन्द्रदेव को घर के अन्दर ले गये और गले से मिलकर अपने पास बैठाया तथा इन्दिरा को बुलवा भेजा जब इन्दिरा ने अपने बाप के आने की खबर पाई दौड़ती हुई राजा गोपालसिंह के पास आई और अपने बाप के पैरों पर गिर कर रोने लगी। इस समय कमरे के अन्दर राजा गोपालसिंह इन्द्रदेव और इन्दिरा के सिवाय और कोई भी न था

एकान्त कर दिया गया था यहाँ तक कि जो लौंडी इन्दिरा को बुलाकर लाई थी वह भी बाहर कर दी गई थी।

इन्दिरा के रोने ने राजा गोपालसिंह और इन्द्रदेव का कलेजा हिला दिया और वे दोनों भी रोने से अपने को बचा न सके। लेकिन आखिर दोनों ने बड़ी मुश्किल से दिल को सम्हाला और इन्दिरा का भी जी ठिकाने हुआ। उस समय इन्द्रदेव ने उसका हाल पूछा और उसने अपना दर्दनाक किस्सा कहना शुरू किया।

इन्दिरा का हाल जो कुछ हम ऊपर के बयानों में लिख चुके हैं वह और उसके बाद अपना तथा अपनी माँ का बचा हुआ किस्सा भी इन्दिरा ने बयान किया जिसे सुनकर इन्द्रदेव की आँखें खुल गईं और उसने एक लम्बी साँस लेकर कहा :—

"अफसोस! हर दम साथ रहने वालों की जब यह दशा है तो किस पर विश्वास किया जाय! खैर, कोई चिन्ता नहीं!!"

गोपाल०। मेरे प्यारे दोस्त! जो कुछ होना था सो हो गया, अब अफसोस करना वृथा है। क्या उन राक्षसों द्वारा मैं कुछ कम सताया गया हूँ? मगर नहीं, ईश्वर न्याय करने वाला है, तुम देखोगे कि उनका पाप खुद उन्हें ही किस तरह खाता है। रात बीत जाने पर इन्दिरा की माँ से भी तुम्हारी मुलाकात कराऊँगा। अफसोस, दुष्ट दारोगा ने उसे ऐसी जगह पहुँचा दिया है कि जहाँ से वह स्वयं तो निकल ही नहीं सकती मगर मैं खुद तिलिस्म का राजा कहला कर भी उसे छुड़ा नहीं सकता! अब कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह तिलिस्म तोड़ रहे हैं, आशा है कि वह बेचारी भी बहुत जल्द इस मुसीबत से छूट जायगी।

इन्द्र०। क्या इस समय मैं उसे नहीं देख सकता?

गोपाल०। नहीं, यदि दोनों कुमार तिलिस्म तोड़ने में हाथ न लगा चुके होते तो शायद मैं ले भी चलता मगर अब रात के वक्त वहाँ जाना असम्भव है।

जिस समय इन्द्रदेव और गोपालसिंह की मुलाकात हुई थी चिराग जल चुका था। यद्यपि इन्दिरा ने अपना किस्सा संक्षेप में बयान किया था मगर फिर भी इस काम में डेढ़ पहर का बीत गया था। इसके बाद राजा गोपालसिंह ने अपने सामने इन्द्रदेव को खिलाया पिलाया और तब इन्द्रदेव ने अपना तथा रोहतासगढ़ का हाल कहना शुरू किया और इस समय तक जो जो मामले हो चुके थे सब

खुलासा बयान किये। तमाम रात बातचीत में बीत गई, सबेरा होने पर जरूरी कामों से छुट्टी पा कर तीनों आदमी तिलिस्म के अन्दर जाने के लिए तैयार हुए।

इस जगह हमें यह कह देना चाहिये कि इन्दिरा को तिलिस्म के अन्दर से निकाल कर अपने घर में ले आना राजा गोपालसिंह ने बहुत ही गुप्त रक्खा था और ऐयारी के ढङ्ग पर उसकी सूरत भी बदलवा दी गई थी।

आठवां बयान

आनन्दसिंह की आवाज सुनने पर इन्द्रजीतसिंह का शक जाता रहा और वह आनन्दसिंह के आने का इन्तजार करते हुए नीचे उतर आए। थोड़ी ही देर बाद अपने छोटे भाई को उसी राह से आते देखा जिस राह से वह स्वयं इस मकान में आए थे।

इन्द्रजीतसिंह अपने भाई के लिए बहुत ही दुःखी हो रहे थे। उन्हें विश्वास हो गया था कि आनन्दसिंह किसी आफत में फँस गए और बिना तरद्दुद के उनका छूटना कठिन है मगर थोड़ी ही देर में बिना तरद्दुद के उनके आ मिलने से भी उन्हें कम ताज्जुब न हुआ। उन्होंने आनन्दसिंह को गले से लगा लिया और कहा :—

इन्द्र०। मैं तो समझता था कि तुम किसी आफत में फँस गये और तुम्हारे छुड़ाने के लिए बहुत ज्यादे तरद्दुद करना पड़ेगा!

आनन्द०। जी नहीं, वह मामला तो बिल्कुल खेल ही निकला! सच तो यह है कि इस तिलिस्म में दिल्लगी और मसखरेपन का हिस्सा भी मिला हुआ है।

इन्द्र०। तो तुम्हें किसी तरह की तकलीफ नहीं हुई?

आनन्द०। कुछ भी नहीं! हवा के खिंचाव के कारण जब मैं शीशे के अंदर चला गया तो वह शीशे का टुकड़ा जिसे दर्वाजा कहना चाहिये बन्द हो गया और मैंने अपने को पूरे अन्धकार में पाया। तिलिस्मी खञ्जर का कब्जा दबा कर रोशनी की तो सामने एक छोटा सा दर्वाजा एक पल्ले का दिखाई पड़ा जिसमें खैंचने के लिए लोहे की दो कड़ियाँ लगी हुई थीं। मैंने बायें हाथ से कड़ी पकड़ कर दर्वाजा

खैंचना चाहा मगर वह थोड़ा सा खिच कर रह गया, सोचा कि इसमें दो कड़ियाँ इसीलिए लगी हैं कि दोनों हाथों से पकड़ कर दर्वाजा खैंचा जाय, अस्तु तिलिस्मी खंजर म्यान में रख लिया जिससे पुनः अन्धकार हो गया मगर उसका खयाल न कर मैंने दोनों हाथों से दोनों कड़ियों को पकड़ कर अपनी तरफ खैंचना चाहा लेकिन मेरे दोनों हाथ उन कड़ियों में चपक गये और दर्वाजा भी न खुला। उस समय मैं बहुत ही घबड़ा गया और हाथ छुड़ाने के लिए जोर करने लगा। दस बारह पल के बाद वह कड़ी पीछे की तरफ हटी और मुझे खींचती हुई दूर तक ले गई। मैं यह नहीं कह सकता कि कड़ियों के साथ ही साथ दर्वाजे का कितना बड़ा हिस्सा पीछे की तरफ हटा था मगर इतना मालूम हुआ कि मैं ढालवीं जमीन की तरफ जा रहा हूँ। आखिर जब उन कड़ियों का पीछे हटना बन्द हो गया तो मेरे दोनों हाथ भी छूट गये, इसके बाद थोड़ी थोड़ी देर तक घड़घड़ाहट की आवाज आती रही और तब तक मैं चुपचाप खड़ा रहा।

जब घड़घड़ाहट की आवाज बन्द हो गई तो मैंने तिलिस्मी खञ्जर निकाल कर रोशनी की और अपने चारो तरफ गौर करके देखा। जिधर से ढालवीं जमीन पर उतरता हुआ वहाँ तक पहुँचा था उस तरफ अर्थात् पीछे की तरफ बिना चौखट का बन्द दर्वाजा पाया जिससे मालूम हुआ कि अब मैं पीछे की तरफ नहीं हट सकता मगर दाहिनी तरफ एक और दर्वाजा देख कर मैं उसके अन्दर चला गया और दो कदम के बाद घूमकर फिर मुझे ऊँची जमीन अर्थात् चढ़ाव पर चढ़ना पड़ा जिससे साफ मालूम हो गया कि मैं जिधर से उतरता हुआ आया था अब उसी तरफ पुनः जा रहा हूँ। कई कदम जाने के बाद पुनः एक बन्द दर्वाजा मिला मगर वह आप से आप खुल गया। जब मैं उसके अन्दर गया तो अपने को उसी शीशे वाले कमरे में पाया और घूम कर पीछे की तरफ देखा तो साफ दीवार नजर पड़ी। यह नहीं मालूम होता था कि मैं किस दर्वाजे को लाँघ कर कमरे में आ पहुँचा। इसी से मैं कहता हूँ कि तिलिस्म बनाने वाले मसखरे भी थे क्योंकि उन्हीं की चालाकियों ने मुझे घुमा फिरा कर पुनः उसी कमरे में पहुँचा दिया जिसे एक तरह की जबर्दस्ती कहनी चाहिये।

मैं उस कमरे में खड़ा हुआ ताज्जुब से उसी शीशे की तरफ देख रहा था कि पहिले की तरह दो आदमियों के बातचीत की आवाज सुनाई दी। मैं आपके साथ

उस कमरे में था तब जो जो बातें सुनने में आईं थीं वे ही बातें मैंने पुनः सुनीं और जिन लोगों को उस आईने के अन्दर आते जाते देखा था उन्हीं को पुनः देखा। निःसन्देह मुझे बड़ा ही ताज्जुब हुआ और मैं बड़े गौर से सोचने लगा कि यह क्या मामला है कि इतने ही में आपकी आवाज सुनाई दी और आपकी आज्ञानुसार अजदहे के मुँह में जाकर मैं यहाँ तक आ पहुँचा। आप यहाँ किस राह से आये हैं ?

इन्द्र०। मैं भी उसी अजदहे के मुँह में से होता हुआ यहाँ आया हूँ। मगर यहाँ आने पर मुझे जो जो बातें मालूम हुई हैं उनसे मुझे शीशे वाले कमरे का कुल भेद मालूम हो गया।

आनन्द०। सो क्या ?

इन्द्र०। मेरे साथ आओ, मैं सब तमाशा तुम्हें दिखाता हूँ।

अपने छोटे भाई को साथ लिये कुँअर इन्द्रजीतसिंह नीचे के खण्ड वाली सब चीजों को दिखा कर ऊपर वाले खण्ड में गये और वहाँ का बिल्कुल हाल कहा। बाजा और मूरत इत्यादि भी दिखाया और बाजे के बोलने तथा मूरत के चलने फिरने के विषय में भी अच्छी तरह समझाया जिससे इन्द्रजीसिंह की तरह आनन्दसिंह का भी शक जाता रहा। इसके बाद आनन्दसिंह ने पूछा, "अब क्या करना चाहिये ?"

इन्द्र०। यहाँ से बाहर निकलने के लिए दर्वाजा खोलना चाहिये। यह तो हम निश्चय कर चुके हैं कि इस खण्ड के ऊपर जाने के लिए कोई रास्ता नहीं है और न ऊपर जाने से कुछ काम ही चलेगा अतएव हमें पुनः नीचे वाले खण्ड में चलकर कोई दर्वाजा ढूँढ़ना चाहिये या तुम अगर कोई और बात सोचते हो तो कहो।

आनन्द०। मैं यह सोचता हूँ कि हम लोग आखिर तिलिस्म तोड़ने के लिए यहाँ आये हैं इसलिये जहाँ तक बन पड़े यहाँ की चीजों को तोड़ फोड़ और नष्ट भ्रष्ट करना चाहिये, इसी बीच में कहीं न कहीं कोई दर्वाजा दिखाई दे ही जायागा।

इन्द्र०। (मुस्कुरा कर) यह भी एक बात है, खैर तुम अपने ही खयाल के मुताबिक कारवाई करो, मैं तमाशा देखता हूँ।

आनन्द० । बहुत अच्छा, तो आइये पहिले उस दर्वाजे को खोलें जिसमें पुतलियाँ जाती हैं ।

इतना कह कर आनन्दसिंह उस दालान में गये जिसमें कमलिनी लाडिली तथा और ऐयारों की मूरतें थीं । हम ऊपर लिख चुके हैं कि मूरतें लोहे की नालियों पर चल कर शीशे वाली दीवार के पास पहुँचती थीं और वहाँ का दर्वाजा आप से आप खुल जाता था । आनन्दसिंह भी उसी दर्वाजे के पास गये और कुछ सोच कर उन्हीं नालियों पर पैर रक्खा जिन पर पुतलियाँ चलती थीं ।

नालियों पर पैर रखने साथ ही दर्वाजा खुल गया और दोनों भाई उस दर्वाजे के अन्दर चले गये । इन्हें वहाँ दो रास्ते दिखाई पड़े, एक का तो दर्वाजा बन्द था और जंजीर में एक भारी ताला लगा हुआ था और दूसरा रास्ता शीशे वाली दीवार की तरफ गया हुआ था जिसमें पुतलियों के लिये नालियाँ बनी हुई थीं । पहिले दोनों कुमार पुतलियों के आने का हाल मालूम करने की नीयत से उसी तरफ गये और वहाँ अच्छी तरह घूम फिर कर देखने और जाँच करने पर जो कुछ उन्हें मालूम हुआ उसका तत्व हम नीचे लिखते हैं ।

वहाँ शीशे की तीन दीवारें थीं और हर एक के बीच में आदमियों के चलने फिरने लायक रास्ता छूटा हुआ था । पहिली शीशे की दीवार जो कमरे की तरफ थी सादी थी अर्थात् उस शीशे के पीछे पारे की कलई न थी, हाँ उसके बाद वाली दूसरी शीशे वाली दीवार में कलई की हुई थी और जमीन पर पुतलियों के चलने के लिये नालियाँ इस ढंग से बनी हुई थीं कि बाहर वालों को दिखाई न पड़े और पुतलियाँ कलई वाले शीशे के साथ सट सकें । यही सबब था कि कमरे की तरफ देखने वालों को शीशे के अन्दर आदमी चलता हुआ मालूम पड़ता था और उन नकली आदमियों की परछाहीं जो शीशे में पड़ती थी साथ सटे रहने के कारण देखने वाले को मालूम नहीं पड़ती थी । मूरतें आगे जाकर घूमती हुई दीवार के पीछे चली जाती थीं । उसके बाद फिर शीशे की दीवार थी और उस पर नकली कलई की हुई थी । इस गली में भी नाली बनी हुई थी और उसी राह से मूरतें लौट कर अपने ठिकाने जा पहुँचती थीं ।

इन सब चीजों को देख कर जब कुमार लौटे तो उस बन्द दर्वाजे के पास आये जिसमें बड़ा सा ताला लगा हुआ था । दर्वाजा खोल कर दोनों भाई उसके

अन्दर गये। तीन चार कदम जाने बाद नीचे उतरने के लिये सीढ़ियाँ मिलीं। इन्द्रजीतसिंह अपने हाथ में तिलिस्मी खंजर लिये हुए रोशनी कर रहे थे।

दोनों भाई सीढ़ियाँ उतर कर नीचे चले गये और इसके बाद उन्हें एक बारीक सुरंग में चलना पड़ा। थोड़ी दूर बाद एक और दर्वाजा मिला, उसमें भी ताला लगा हुआ था और आनन्दसिंह ने तिलिस्मी खंजर से उसकी भी जंजीर काट डाली और दर्वाजा खोल कर दोनों भाई उसके पास चले गए।

इस समय दोनों कुमारों ने अपने को एक बाग में पाया। यह बाग छोटे छोटे जंगली पेड़ों और लताओं से भरा हुआ था। यद्यपि यहाँ की क्यारियाँ निहायत खूबसूरत और संगमर्मर के पत्थर से बनी हुई थीं मगर उनमें सिवाय झाड़ झंखाड़ के और कुछ भी न था। इसके अतिरिक्त और भी चारो तरफ एक प्रकार का जंगल हो रहा था, हाँ दो चार पेड़ फल के वहाँ जरूर थे और एक छोटी सी नहर भी एक तरफ से आ कर बाग में घूमती हुई दूसरी तरफ निकल गई थी। बाग के बीचोबीच में एक छोटा सा बँगला भी बना हुआ था जिसकी जमीन दीवार और छत इत्यादि सब पत्थर की और मजबूत बनी हुई थी मगर फिर भी उसका कुछ हिस्सा टूट फूट कर खराब हो गया था।

जिस समय दोनों कुमार इस बाग में पहुँचे उस समय दिन बहुत कम बाकी था और ये दोनों भी भूख प्यास और थकावट से परेशान हो रहे थे अस्तु नहर के किनारे जा कर दोनो ने हाथ मुँह धोया और जरा आराम लेकर जरूरी काम के लिये चले गये। उससे छुट्टी पाने बाद दो चार फल तोड़ कर खाए और नहर का जल पीकर इधर उधर घूमने फिरने लगे। उसी समय उन दोनों को यह भी मालूम हो गया कि जिस दर्वाजे की राह से वे दोनों इस बाग में आये थे वह आप से आप ऐसा बन्द हो गया कि उसके खुलने की कोई उम्मीद न रही।

दोनों भाई घूमते हुए बीच वाले बँगले में आये। देखा कि तमाम जमीन कूड़े कर्कट से खराब हो रही है। एक पेड़ से बड़े बड़े पत्तों वाली छोटी सी डाली तोड़ कर थोड़ी सी जमीन साफ की और रात भर उसी जगह रह कर गुजारा किया।

सुबह को जरूरी कामों से छुट्टी पाकर दोनों भाइयों ने नहर में दुपट्टा (कमरबन्द) धो कर सूखने डाला और जब वह सूख गया तो स्नान पूजा से निश्चिन्त हो दो चार फल खा कर पानी पिया, तब बाग में घमने लगे।

इन्द्रजीत० । जहाँ तक मैं सोचता हूँ यह वही बाग है जिसका हाल तिलिस्मी बाजे से मालूम हुआ था मगर उस पिण्डी का कहीं पता नहीं लगता ।

आनन्द० । निःसन्देह यह वही बाग है, यह बीच वाला बँगला हमारा शक दूर करता है, इसलिये जल्दी करके इस बाग से बाहर हो जाने की फिक्र न करनी चाहिए । कहीं ऐसा न हो कि 'मनुबाटिका' इसी का नाम हो और हम लोग धोखे में आ कर इसके बाहर हो जायँ । बाजे ने यही कहा था कि यदि अपना काम किये बिना 'मनुबाटिका' के बाहर हो जाओगे तो तुम्हारे किये कुछ भी न होगा, न तो पुनः 'मनुबाटिका' में जा सकोगे और न अपनी जान ही बचा सकोगे ।

इन्द्रजीत० । रिक्तगन्थ में भी तो यही बात लिखी हुई है, इस लिये मैं भी यहाँ से बाहर निकल चलने के लिये नहीं कह सकता, जिस तरह हो उस पिण्डी का पता लगाना ही चाहिये ।

पाठक, तिलिस्मी किताब (रिक्तगन्थ) और तिलिस्मी बाजे से दोनों कुमारों को यह मालूम हुआ था कि मनुबाटिका में किसी जगह जमीन पर एक छोटी सी पिण्डी बनी हुई मिलेगी, उसका पता लगा कर उसी को अपने मतलब का दर्वाजा समझना । यही सबब था कि दोनों कुमार उस पिण्डी को खोज निकालने की फिक्र में लगे हुए थे मगर उस पिण्डी का पता नहीं लगता था । लाचार उन्हें कई दिनों तक उस बाग में रहना पड़ा । आखिर एक घनी झाड़ी के अन्दर एक छोटी सी पिण्डी का पता लगा । वह पिण्डी हाथ भर ऊँची और तीन हाथ के घेरे में होगी । यह किसी तरह भी मालूम नहीं होता था कि पिण्डी पत्थर की है या पीतल इत्यादि किसी धातु की बनी हुई है परंतु जिस चीज से वह पिण्डी बनी हुई थी उसी चीज से बना हुआ एक सूर्यमुखी का फूल उसके ऊपर जड़ा हुआ था और वही फूल उस पिण्डी की पूरी पहिचान थी । आनन्दसिंह ने खुश होकर इन्द्रजीतसिंह से कहा :—

आनन्द० । बारे ईश्वर की कृपा से किसी तरह इस पिण्डी का पता लग ही गया ! मैं समझता हूँ कि इसमें आपको भी किसी तरह का शक न होगा ?

इन्द्र० । मुझे किसी तरह का शक नहीं है । यह पिण्डी निःसन्देह वही है जिसे हम लोग खोज रहे थे । अब हमें इस जमीन को अच्छी तरह साफ करके

अपने सच्चे सहायक रिक्तगन्थ से हाथ धो बैठने के लिये तैयार हो जाना चाहिये।

आनन्द०। जी हाँ ऐसा ही होना चाहिए, यदि रिक्तगंथ में कुछ संदेह हो तो उसे पुनः देख जाइये।

इन्द्रजी०। यद्यपि उस ग्रन्थ मे मुझे किसी तरह का सन्देह नहीं है और जो कुछ उसमें लिखा है मुझे अच्छी तरह याद है मगर शक मिटाने के लिये एक दफे उलट पुलट कर देख लूँगा।

अनन्द०। मेरा भी यही इरादा है और यह काम घंटे दो घंटे के अन्दर हो भी जायगा अस्तु आप पहिले रिक्तगंथ देख जाइये तब तक मैं इस झाड़ी को साफ कर डालता हूँ।

इतना कह कर आनन्दसिंह ने तिलिस्मी खञ्जर से काट काट के पिण्डी के चारो तरफ के झाड़ झंखाड़ को साफ करना शुरू किया और इन्द्रजीसिंह नहर के किनारे बैठ कर तिलिस्मी किताब उलट पुलट कर देखने लगे। थोड़ी देर के बाद इन्द्रजीतसिंह आनन्दसिंह के पास आए और बोले—"लो अब तुम भी इसे देख कर अपना शक मिटा लो तब तक तुम्हारे काम को मैं पूरा कर डालता हूँ।"

आनन्दसिंह ने अपना काम छोड़ दिया और अपने भाई के हाथ से यह रिक्तगन्थ लेकर नहर के किनारे चले गये तथा इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खञ्जर से पिण्डी के चारो तरफ की सफाई करनी शुरू कर दी। थोड़ी ही देर में जो कुछ घास फूँस झाड़ झंखाड़ पिंडी के चारो तरफ था साफ हो गया और आनन्दसिंह भी तिलिस्मी किताब देख कर अपने भाई के पास चले आये और बोले, "अब क्या आज्ञा है?"

इसके जवाब में इंद्रजीतसिंह ने कहा, "बस अब नहर के किनारे चलो और रिक्तगंथ का आटा गूँधो।"

दोनों भाई नहर के किनारे आये और एक ठिकाने साएदार जगह देख कर बैठ गये। उन्होंने नहर के किनारे ले एक पत्थर की चट्टान को जल से अच्छी तरह धोकर साफ किया और इसके बाद रिक्तगंथ को पानी में डुबोकर उस पत्थर पर रख दिया। देखते ही देखते जो कुछ पानी रिक्तगंथ में लगा था सब उसमें पच गया। फिर हाथ से उस पर पानी डाला, वह भी पच गया। इसी तरह बार बार चुल्लू भर भर कर उस पर पानी डालने लगे और ग्रन्थ पानी पी

पी कर मोटा होने लगा। थोड़ी देर के बाद वह मुलायम हो गया और तब आनंदसिंह ने उसे हाथ से मल मल के आँटे की तरह गूँधना शुरू किया। शाम होते होते तक उसकी सूरत ठीक गूँधे हुए आँटे की तरह हो गई मगर रंग उसका काला था। आनन्दसिंह ने उस आँटे को उठा लिया और अपने भाई के साथ उस पिण्डी के पास आकर उनकी आज्ञानुसार तमाम पिण्डी पर उस आँटे का लेप कर दिया। इसके बाद दोनों भाई वहाँ से किनारे हो गया और जरूरी कामों से छुट्टी पाने के काम में लगे।

नौवां बयान

रात आधी से कुछ ज्यादे जा चुकी है और दोनों कुमार उसी बाग के बीच वाले बँगले के दालान में सोये हुए हैं। यकायक किसी तरह की भयानक आवाज सुनकर दोनों भाइयों की नींद टूट गई और वे दोनों उठ कर बँगले के नीचे चले आये। चारो तरफ देखने पर जब उनकी निगाह उस तरफ गई जिधर पिण्डी थी तो कुछ रोशनी मालूम पड़ी। दोनों भाई जब उसके पास गए तो देखा क्या कि उस पिण्डी में से हाथ भर ऊँची लाट निकल रही है। यह लाट (आग की ज्योति) नीले और कुछ पीले रङ्ग की मिली जुली थी। साथ ही इसके यह भी मालूम हुआ कि लाह या राल की तरह वह पिण्डी गलती हुई जमीन के अंदर धँसती चली जाती है, या यों कहना चाहिए कि जल कर छोटी होती जाती है। उस पिण्डी में से धूँआँ निकल रहा था उसमें धूप या लोबान की सी खुशबू आती थी।

थोड़ी देर तक दोनों कुमार वहाँ खड़े रह कर तमाशा देखते रहे इसके बाद इन्द्रजीतसिंह यह कहते हुए बँगले की तरफ लौटे कि—ऐसा तो होना ही था, मगर उस भयानक आवाज का पता न लगा, शायद इसी में से वह आवाज भी निकली हो!' इसके जवाब में आनन्दसिंह ने कहा, "शायद ऐसा ही हो!"

दोनों कुमार अपने ठिकाने चले आए और बची हुई रात बातचीत में काटी क्योंकि खटका हो जाने के कारण फिर उन्हें नींद न आई। सवेरा होने पर जब वह दोनों पुनः उस पिण्डी के पास गए तो देखा कि आग बुझा हुई है और पिंडी की जगह पीले रङ्ग की राख मौजूद है। यह देख दोनों भाई वहाँ से लौट

आए और अपने नित्य कर्म से छुट्टी पाकर जब पुनः वहाँ गए तो उस पीले रङ्ग की राख को निकाल कर जगह साफ करने लगे। मालूम हुआ कि वह पिण्डी जो जल कर राख हो गई है लगभग तीन हाथ के जमीन के अंदर थी इसीलिए राख साफ हो जाने पर तीन हाथ का गड्ढा इतना लम्बा चौड़ा निकला कि उसमें दो आदमी बखूबी जा सकते थे। गड्ढे के अंत में लोहे का एक तख्ता था जिसमें कड़ी लगी हुई थी। इंद्रजीतसिंह ने कड़ी में हाथ डाल कर वह लोहे का तख्ता उठा लिया और आनंदसिंह को देकर कहा, "इसे किनारे रख दो।"

लोहे का तख्ता हटा देने बाद ताले के मुँह की तरह एक सूराख नजर आया जिसमें इन्द्रजीतसिंह ने वही तिलिस्मी ताली डाली जो घूमने वाली पुतली के हाथ में से ली थी। कुछ तो वह ताली ही विचित्र बनी हुई बनी थी और कुछ ताला खोलती समय इन्द्रजीतसिंह को भी बुद्धि से काम लेना पड़ा। ताला खुल जाने बाद दर्वाजे की तरह एक पल्ला हटाया गया, उस समय नीचे उतरने के लिए सीढ़ियाँ नजर आईं। तिलिस्मी खंजर की रोशनी के सहारे दोनों भाई नीचे उतरे और भीतर से वह दर्वाजा बन्द कर लिया क्योंकि ताली का छेद दोनों तरफ था और वही ताली दोनों तरफ काम देती थी।

पन्द्रह या सोलह सीढ़ियाँ उतर जाने बाद दोनों कुमारों को थोड़ी दूर तक सुरङ्ग में चलना पड़ा। इसके बाद ऊपर चढ़ने के लिए पुनः सीढ़ियाँ मिलीं और उसी ताली से खुलने लायक एक दर्वाजा। सीढ़ियाँ चढ़ने और दर्वाजा खोलने बाद कुमारों को कुछ मिट्टी हटानी पड़ी और इसके बाद दोनों कुमार जमीन के बाहर निकले।

इस समय दोनों कुमारों ने अपने को एक और ही बाग में पाया जो लम्बाई चौड़ाई में उस बाग में कुछ छोटा था जिसमें से कुमार आये थे। पहिले बाग की तरह यह बाग भी एक प्रकार से जंगल हो रहा था। इन्दिरा की माँ अर्थात् इन्द्र-देव की स्त्री इसी बाग में मुसीबत की घड़ियाँ काट रही थी और इस समय भी इसी बाग में मौजूद थी इसलिये बनिस्बत पहिले बाग के इस बाग का नक्शा कुछ खुलासे तौर पर लिखना आवश्यक है।

इस बाग में किसी तरह की इमारत न थी, न तो कोई कमरा था और न कोई बँगला या दालान था, इसलिए बेचारी सर्यू को जाड़े के मौसिम की कलेजा

दहलाने वाली सर्दी, गर्मी की कड़कड़ाती हुई धूप, और बर्सात का मूसलाधार पानी अपने कोमल शरीर ही के ऊपर बर्दाश्त करना पड़ता था। हाँ कहने के लिए ऊँचे ऊँचे बड़ पीपल के पेड़ों का कुछ सहारा जरूर था मगर बड़े लाड़ प्यार से पाली जाकर दिन रात सुख ही से बिताने वाली एक पतिव्रता के लिए जंगली और भयानक पेड़ों का सहारा सहारा नहीं कहा जा सकता बल्कि वह भी उसके लिए डराने और सताने का सामान ही माना जा सकता है। परंतु हाँ वहाँ थोड़े से पेड़ ऐसे भी थे जिनके फलों को खाकर पतिमिलाप की आशालता में उलझी हुई अपनी जान को वह बचा सकती थी और प्यास दूर करने के लिए उस नहर का पानी मौजूद था जो मनुवाटिका में से होती इस बाग में आकर बेचारी सर्यू की जिंदगी का सहारा हो रही थी। तिलिस्म बनाने वालों ने उस नहर को इस योग्य नहीं बनाया था कि कोई उसके मुहाने को दम भर के लिए सुरङ्ग मान कर एक बाग से दूसरे बाग में जा सके। इस बाग की चारदीवारी में भी विचित्र कारीगरी की गई थी। दीवार नाँघ कर पार हो जाना तो दूर रहे कोई उसकी दीवार को छू भी नहीं सकता था। कई प्रकार की धातुओं से उस बाग की सात हाथ ऊँची दीवार बनाई गई थी। जिस तरह रस्सियों के सहारे कनात खड़ी की जाती है शक्ल सूरत में वह दीवार वैसी ही मालूम पड़ती थी अर्थात् एक एक दो दो कहीं कहीं तीन तीन हाथ की दूरी पर दीवार में लोहे की जञ्जीरें लगी हुई थीं जिनका एक सिरा तो दीवार के अंदर घुसा हुआ था और दूसरा सिरा जमीन के अंदर। चारो तरफ की दीवार में से किसी भी जगह हाथ लगाने से आदमी के बदन में बिजली का असर हो जाता था और वह बेहोश हो कर जमीन पर गिर पड़ता था, यही सबब था कि बेचारी सर्यू उस दीवार के पार हो जाने के लिये कोई उद्योग न कर सकी बल्कि इस आशा में उसे कई दफे तकलीफें उठानी पड़ी थीं।

इस बाग के उत्तर तरफ की दीवार के साथ सटा हुआ एक छोटा सा मकान था। इस बाग में खड़े होकर देखने वालों को तो वह मकान ही मालूम पड़ता था मगर यह नहीं कह सकते थे कि दूसरी तरफ से उसकी क्या सूरत थी। सात खिड़कियाँ इस बाग की तरफ पड़ती थीं जिससे भास होता था कि वह इस मकान का एक खुलासा कमरा है। इस बाग में आने पर सब से पहिले जिस चीज पर कुँअर इंद्रजीतसिंह की निगाह पड़ी वह यही कमरा था और उसकी तीन खिड़-

कियों में से इन्दिरा इन्द्रदेव और राजा गोपालसिंह इसी बाग की तरफ झाँक कर किसी को देख रहे थे, और इसके बाद जिस पर निगाह पड़ी वह जमाने के हाथों से सताई हुई बेचारी सर्यू थी मगर उसे दोनों कुमार पहिचानते न थे।

जिस तरह कुँअर इन्द्रजीतसिंह और उनके बताने से आनंदसिंह ने राजा गोपालसिंह इन्द्रदेव और इन्दिरा को देखा उसी तरह उन तीनों ने भी दोनों कुमारों को देखा और दूर ही से साहब सलामत की।

इंदिरा ने हाथ जोड़कर और अपने पिता की तरफ बता कर कुमारों से कहा, "आपही के चरणों की बदौलत मुझे पिताजी के दर्शन हुए!"

दसवां बयान

अब हम अपने पाठकों को उसी सफर में से चलते हैं जिसमें चुनार जाने वाले राज बीरेंद्रसिंह का लश्कर पड़ा हुआ है। पाठकों को याद होगा कि कम्बख्त मनोरमा ने तिलिस्मी खञ्जर से किशोरी कामिनी और कमला का सर काट डाला और खुशी भरी आवाज में कुछ कह रही थी कि पीछे की तरफ से आवाज आई— "नहीं नहीं, ऐसा न हुआ है न होगा!"

वह आवाज देने वाला भैरोसिंह था जिसे मनोरमा के खोज निकालने का काम सुपुर्द किया गया था। वह मनोरमा की खोज में चक्कर लगाता और टोह लेता हुआ उसी लश्कर में जा पहुँचा था मगर उसे इन बातों का बड़ा ही अफसोस था कि उन तीनों का सर कट जाने बाद खेमे के अंदर पहुँचा।

हमारे ऐयार की आवाज सुन कर मनोरमा चौंकी और जब उसने घूम कर पीछे की तरफ देखा तो हाथ में खञ्जर लिए हुए भैरोसिंह पर निगाह पड़ी। यद्यपि भैरोसिंह पर नजर पड़ते ही वह जिन्दगी से नाउम्मीद हो गई मगर फिर भी उसने तिलिस्मी खञ्जर का वार भैरोसिंह पर किया। भैरोसिंह पहिले ही से होशियार था और उसके पास भी तिलिस्मी खंजर मौजूद था, अस्तु उसने अपने खञ्जर पर इस ढंग से मनोरमा के खञ्जर का वार रोका कि मनोरमा की कलाई भैरोसिंह के के खञ्जर पर पड़ी और वह कट कर तिलिस्मी खञ्जर सहित दूर जा गिरी। भैरो-

सिंह इतने ही पर सब्र न करके उसी खञ्जर से मनोरमा की एक टाँग भी काट डाली और इसके बाद जोर से चिल्ला कर पहरे वालों को आवाज दी।

पहरे वाले तो पहिले ही बेहोश पड़े हुए थे मगर भैरोसिंह की आवाज ने लौंडियों को होशियार कर दिया और बात की बात में बहुत सी लौंडियाँ उस खेमे के अंदर आ पहुँचीं जो वहाँ की अवस्था देख कर जोर जोर से रोने और चिल्लाने लगीं।

थोड़ी ही देर में उस खेमे के अन्दर और बाहर भीड़ लग गई। जिधर देखिये उधर मशाल जल रही है और आदमी पर आदमी टूटा पड़ता है। राजा बीरेंद्रसिंह और तेजसिंह भी उस खेमे में गये और वहाँ की अवस्था देख कर अफसोस करने लगे। तेजसिंह ने हुक्म दिया कि तीनों लाशें उसी जगह ज्यों की त्यों रहने दी जायँ। मनोरमा (जो कि चेहरा धुल जाने के कारण पहिचानी जा चुकी थी) वहाँ से उठवा कर दूसरे खेमे में पहुँचाई जाय, उसके जख्म पर पट्टी लगाई जाय, और उस पर सख्त पहरा रहे। इसके बाद भैरोसिंह और तेजसिंह को साथ लिये हुए राजा बीरेंद्रसिंह अपने खेमे में आये और बातचीत करने लगे। उस समय खेमे के अंदर सिवाय इन तीनों के और कोई भी न था। भैरोसिंह ने अपना हाल बयान किया और कहा, "मुझे इस बात का बड़ा ही दुःख है कि किशोरी कामिनी और कमला का सर कट जाने बाद मैं उस खेमे के अंदर पहुँचा !!"

तेज०। अफसोस की कोई बात नहीं है, ईश्वर की कृपा से हमलोगों को यह बात पहिले ही मालूम हो गई थी कि मनोरमा हमारे लश्कर के साथ है।

भैरो०। लेकिन अगर यह बात मालूम ही हो गई थी तो आपने इसका इंतजाम क्यों नहीं किया और इन तीनों की तरफ से बेफिक्री क्यों रहे ?

तेज०। हमलोग बेफिक्र नहीं रहे बल्कि जो कुछ इंतजाम करना वाजिब था किया गया। तुम यह सुनकर ताज्जुब करोगे कि किशोरी कामिनी और कमला मरी नहीं बल्कि ईश्वर की कृपा से जीती हैं, लौंडी की सूरत में हर दम पास रहने पर भी मनोरमा ने धोखा खाया।

भैरो०। हैं ! मनोरमा ने धोखा खाया और वे तीनों जीती हैं !!

तेज०। हाँ ऐसा ही है। इसका खुलासा हाल हम तुमसे कहते हैं मगर

पहिले यह बताओ कि तुमने मनोरमा को कैसे पहिचाना ? हम तो कई दिनों से उसको पहिचानने की फिक्र में लगे हुए थे मगर पहिचान न सके यद्यपि बराबर तिलिस्मी खञ्जर के जोड़ की अँगूठी देखने की नीयत से सभों की उँगलियों पर निगाह रखते थे।

भैरो०। मैं उसका पता लगाता हुआ इस लश्कर में आ पहुँचा था। उस समय टोह लेता हुआ जब मैं किशोरी के खेमे के पास पहुँचा तो पहरे के सिपाहियों को बेहोश और खेमे का पर्दा कटा हुआ देख मुझे किसी दुश्मन के अंदर जाने का गुमान हुआ और मैं भी उसी राह से खेमे के अंदर चला गया। जब वहाँ की अवस्था देखी और उसके मुँह से निकली हुई बातें सुनीं तब शक हुआ कि यही मनोरमा है मगर निश्चय तब ही हुआ जब उसका चेहरा साफ किया गया और आपने भी पहिचाना। अब आप कृपा कर बताइये कि किशोरी कामिनी और कमला क्योंकर जीती बचीं और ये तीनों जो मारी गईं कौन थीं ?

तेज०। हमें इस बात का पता तो लग चुका था कि भेष बदले हुए मनोरमा हमारे लश्कर के साथ है मगर जैसा कि तुमसे कह चुके हैं उद्योग करने पर भी मैं उसे पहिचान न सका। एक दिन राजा साहब और मैं टहलते हुए खेमे से कुछ दूर चले गये और एक छोटे से टीले पर चढ़ कर अस्त होते हुए सूर्य की शोभा देखने लगे। उसी समय कृष्णाजिन्न का भेजा हुआ एक सवार हमारे पास आया और उसने एक चीठी राजा साहब के हाथ में दी। राजा साहब ने चीठी पढ़कर मुझे दी। उसमें यह लिखा था—"मुझे इस बात का पूरा पूरा पता लग चुका है कि कई सहायकों को साथ लिए और भेष बदले हुए मनोरमा आप के लश्कर में मौजूद है और उसके अतिरिक्त और भी कई दुष्ट किशोरी और कामिनी के साथ दुश्मनी किया चाहते हैं। इसलिए मेरी राय है कि बचाव तथा दुश्मनों को धोखा देने के लिए किशोरी कामिनी और कमला को कुछ दिन तक छिपा देना चाहिये और उनकी जगह लौंडियों को सूरत बदल कर रख देना चाहिये। इस काम के लिए मेरा एक तिलिस्मी मकान जो आपके रास्ते ही में कुछ दूर हट कर पड़ेगा मुनासिब है और मैंने इस काम के लिए वहाँ पूरा इन्तजाम भी कर दिया है और लौंडियाँ भी सूरत बदलने और खिदमत करने के लिये भेज दी हैं क्योंकि आपकी लौंडियों की सूरत बदलना ठीक न होगा और लश्कर में लौंडियों की कमी से

लोगों को शक हो जायगा। अस्तु आप बहुत जल्द उन तीनों को वहाँ पहुँचाइये, मैं भी इन्तजाम करने के लिए पहिले ही से उस मकान में जाता हूँ—" इत्यादि। इसके बाद उस मकान का पूरा पूरा पता लिख कर अपना दस्तखत एक खास निशान के साथ कर दिया था जिसमें हम लोगों को चीठी लिखने वाले पर किसी तरह का शक न हो और उस मकान के अंदर जाने की तर्कीब भी लिख दी थी।

कृष्णाजिन्न की राय को राजा साहब ने भी स्वीकार किया और पत्र का उत्तर देकर वह सवार बिदा कर दिया गया। रात के समय किशोरी कामिनी और कमला को ये बातें समझा दी गईं और उन्होंने उसी दुष्ट मनोरमा की जुबानी दोपहर के बाद यह कहला भेजा कि 'हमने सुना है कि यहाँ से थोड़ी ही दूर पर कोई तिलिस्मी मकान है, यदि आप चाहें तो हम लोग उस मकान की सैर कर सकते हैं'—इत्यादि। मतलब यह कि इसी बहाने से मैं खुद उन तीनों को रथ पर सवार करा के उस मकान में ले गया और कृष्णाजिन्न को वहाँ मौजूद पाया। उसने अपने हाथ से अपनी तीन लौंडियों को किशोरी कामिनी और कमला बना कर हमारे रथ पर सवार कराया और मैं उन्हें लेकर इस लश्कर में लौट आया। तुम जानते ही हो कि कृष्णाजिन्न कितना बड़ा बुद्धिमान और होशियार तथा हमलोगों का दोस्त आदमी है।

भैरो०। बेशक बेशक, उनकी हिफाजत में किशोरी कामिनी और कमला को किसी तरह की तकलीफ नहीं हो सकती। यह आपने बड़ी खुशी की बात सुनाई, मगर मैं समझता हूँ कि इन भेदों को अभी आप गुप्त रक्खेंगे और यह बात जाहिर न होने देंगे कि वे तीनों जो मारी गई हैं वास्तव में किशोरी कामिनी और कमला न थीं।

तेज०। नहीं नहीं, अभी इस भेद का खुलना उचित नहीं है। सभों को यही मालूम रहना चाहिये कि वास्तव में किशोरी कामिनी और कमला ही मारी गईं। अच्छा अब दो चार बातें तुम्हें और कहना है वह भी सुन लो।

भैरो०। जो आज्ञा।

तेज०। कृष्णाजिन्न तो कामकाजी आदमी ठहरा और वह ऐसे ऐसे बखेड़ों में फँसा है कि उसे दम मारने की भी फुरसत नहीं।

भैरो० । निःसन्देह ऐसा ही है । इतना काम जो वह करते हैं सो भी उन्हीं की बुद्धिमानी का नतीजा है, दूसरा नहीं कर सकता ।

तेज० । अस्तु वह तो ज्यादे दिनों तक उस मकान में रह नहीं सकता जिसमें किशोरी कामिनी और कमला हैं । वह अपने ठिकाने चला गया होगा यद्यपि उन तीनों की हिफाजत का पूरा पूरा बन्दोबस्त कर गया होगा । अस्तु अब तुम भी इसी समय उस मकान की तरफ चले जाओ और जब तक हमारा दूसरा हुक्म न पहुँचे या कोई आवश्यक काम न आ पड़े तब तक उन तीनों के साथ रहो, हम उस मकान का पता तथा उसके अन्दर जाने की तर्कीब तुम्हें बता देते हैं ।

भैरो० । जो आज्ञा, मैं अभी जाने के लिये तैयार हूँ ।

तेजसिंह ने उस मकान का पूरा हाल भैरोसिंह को बता दिया और भैरोसिंह उसी समय अपने बाप का चरण छू कर बिदा हुए ।

भैरोसिंह के जाने बाद सबेरा होने पर एक ब्राह्मण द्वारा नकली किशोरी कामिनी और कमला के मृत देह की दाह क्रिया करा दी गई । इसके पहिले ही लश्कर में जितने पढ़े लिखे ब्राह्मण थे सभों को बटोर कर तेजसिंह ने यह व्यवस्था करा ली थी कि इन तीनों का कोई नातेदार यहाँ मौजूद नहीं है इस लिये किसी ब्राह्मण द्वारा इनकी क्रिया करा देनी चाहिये । इस काम से छुट्टी पीने बाद लश्कर कूच कर दिया गया और सब कोई धीरे धीरे चुनारगढ़ की तरफ रवाना हुए ।

ग्यारहवां बयान

दोनों कुमार यद्यपि सर्यू को पहिचानते न थे मगर इन्दिरा की जुबानी उसका हाल सुन चुके थे इसलिये उन्हें शक हो गया कि यह सर्यू है । उसी समय राजा गोपालसिंह ने पुकार कर दोनों कुमारों से कहा कि इन्दिरा की माँ यही सर्यू है और इन्द्रदेव ने कुमारों की तरफ बता कर सर्यू से कहा कि राजा बीरेन्द्रसिंह के दोनों लड़के यही कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह हैं जो तिलिस्म तोड़ने के लिये यहाँ आये हैं और इन्हीं की बदौलत तुम इस आफत से छूटोगी ।

दोनों कुमारों को देखते ही सर्यू दौड़ कर पास चली आई और कुँअर इन्द्रजीतसिंह के पैरों पर गिर पड़ी । सर्यू उम्र में कुँअर इन्द्रजीतसिंह से बहुत

बड़ी थी मगर इज्जत और मर्तबे के ख्याल से दोनों को अपना अपना हक अदा करना पड़ा। कुमार ने उसे पैर पर से उठाया और दिलासा देकर कहा, "सर्यू! मैं तुम्हारा हाल पूरा पूरा तो नहीं मगर इन्द्रिरा की जुबानी बहुत कुछ सुन चुका हूँ। हम लोगों को तुम्हारी अवस्था पर बहुत ही रंज है। अब तुम्हें चाहिए कि अपने दिल से दुःख को दूर करके ईश्वर को धन्यवाद दो क्योंकि तुम्हारी मुसीबत का जमाना अब बीत गया और ईश्वर तुम्हें इस कैद से बहुत जल्द छुड़ाने वाला है। जब तक हम इस तिलिस्म में हैं तुम्हें बराबर अपने साथ रक्खेंगे। जिस दिन हम दोनों भाई तिलिस्म के बाहर निकलेंगे उस दिन तुम भी दुनिया की हवा खाती हुई मालूम करोगी कि तुम्हें सताने वालों में से अब कोई भी स्वतंत्र नहीं रह गया और न अब तुम्हें किसी तरह का दुःख भोगना पड़ेगा। तुम्हें ईश्वर को बहुत धन्यवाद देना चाहिए कि इतना ऊधम मचने पर भी तुम अपने पति और अपनी प्यारी लड़की को सिवाय तुम्हारी जुदाई के और हर तरह के रंज और दुःख से खाली पाती हो। ईश्वर तुम लोगों का कल्याण करे।"

इसके बाद कुमार ने कमरे की तरफ सर उठा कर देखा। राजा गोपालसिंह ने इन्द्रदेव की तरफ इशारा करके कहा, "इन्दिरा के पिता इन्द्रदेव को हमने बुलवा भेजा है, शायद आज के पहिले आपने इन्हें न देखा होगा।"

उस समय पुनः इन्द्रदेव ने झुक कर कुमार को सलाम किया और कुमार इन्द्रजीतसिंह ने सलाम का जवाब देकर कहा, "आपका आना बहुत अच्छा हुआ। आप इन दोनों को अपनी आँखों से देख कर प्रसन्न हुए होंगे। कहिये रोहतासगढ़ का क्या हाल है?"

इन्द्रदेव०। सब कुशल है। मायारानी और दारोगा तथा और कैदियों को साथ लेकर राजा बीरेन्द्रसिंह चुनारगढ़ की तरफ रवाना हो गये। किशोरी कामिनी और कमला को अपने साथ लेते गए। लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली तथा नकली बलभद्रसिंह को उनसे माँग कर मैं अपने घर ले गया और उन्हें उसी जगह छोड़कर राजा गोपालसिंह की आज्ञानुसार यहाँ चला आया हूँ। यह हाल संक्षेप में मैंने इसलिए बयान किया कि राजा गोपालसिंह की जुबानी वहाँ का हाल आपको मालूम हो गया है यह मैं सुन चुका हूँ।

इन्द्रजीत०। लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली को आप यहाँ क्यों न ले आये?

इसका जवाब इन्द्रदेव ने तो कुछ न दिया मगर राजा गोपालसिंह ने कहा, "यह असली बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिए अपने मकान से रवाना हो चुके थे जब रास्ते में मेरा पत्र इन्हें मिला। परसों एक पत्र मुझे कृष्णाजिन्न का भेजा हुआ पहुँचा था। उसके पढ़ने से मालूम हुआ कि मनोरमा भेष बदल कर राजा साहब के लश्कर में जा मिली थी जिसका पता लगाना बहुत कठिन था और वह किशोरी कामिनी की मार डालने की सामर्थ रखती थी क्योंकि उसके पास तिलिस्मी खंजर भी था। इसलिए कृष्णाजिन्न ने राजा साहब को लिख भेजा कि बहाना करके गुप्त रीति से किशोरी कामिनी और कमला को हमारे फलाने तिलिस्मी मकान में (जसका पता ठिकाना और हाल भी लिख भेजा था) शीघ्र भेज दीजिए, मैं वहाँ मौजूद रहूँगा और उनके बदले में अपनी तीन लौंडियों को किशोरी कामिनी और कमला बना कर भेज दूँगा जो आपके लश्कर में रहेंगी। ऐसा करने से यदि मनोरमा का वार चल भी गया तो हमारा कुछ नुक्सान न होगा। राजा साहब ने भी यह बात पसन्द कर ली और कृष्णाजिन्न के लिखे मुताबिक किशोरी कामिनी और कमला को खुद तेजसिंह रथ पर सवार करा के कृष्णाजिन्न के तिलिस्मी मकान में छोड़ आये तथा उनकी जगह भेष बदली हुई लौंडियों को अपने लश्कर में ले गए। आज रात को कृष्णाजिन्न का दूसरा पत्र मुझे मिला जिससे मालूम हुआ कि राजा साहब के लश्कर में नकली किशोरी कामिनी और कमला मनोरमा के हाथ से मारी गईं और मनोरमा भी गिरफ्तार हो गई। आज के पत्र में कृष्णाजिन्न ने यह भी लिखा है कि तुम इन्द्रदेव को एक पत्र लिख दो कि वह लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली को भी बहुत जल्द उसी तिलिस्मी मकान में पहुँचा दे जिसमें किशोरी कामिनी और कमला हैं, मैं (कृष्णाजिन्न) स्वयं वहाँ मौजूद रहूँगा और दो तीन दिन के बाद दुश्मनों का रंगढंग देख कर किशोरी कामिनी कमला लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली को जमानिया पहुँचा दूँगा। इसके बाद जब राजा वीरेन्द्रसिंह की आज्ञा होगी या जब उचित होगा तो सभों को चुनार पहुँचाया जायगा और उन लोगों के सामने वहाँ भूतनाथ का मुकद्दमा होगा। कृष्णाजिन्न का यह लिखना मुझे बहुत पसन्द आया क्योंकि वह बड़ा ही बुद्धिमान और नेक आदमी है, जो काम करता है उसमें कुछ न कुछ फायदा समझ लेता है अस्तु मैं चाहता हूँ कि (इंद्रदेव की तरफ इशारा करके)

इन्हें आज ही यहाँ से बिदा कर दूँ जिसमें ये तीनों औरतों को लेकर बहुत जल्द कृष्णाजिन्न के तिलिस्मी मकान में पहुँचा दें। वहाँ दुश्मनों का डर कुछ भी नहीं है और किशोरी तथा कामिनी को भी इन लोगों से मिलने की बड़ी चाह है जैसा कि कृष्णाजिन्न के पत्र से मालूम होता है।"

ये बातें जो राजा गोपालसिंह ने कहीं दोनों कुमारों को खुश करने के लिए वैसी ही थीं जैसी चातक के लिए स्वाती की बूंद। दोनों कुमारों को किशोरी और कामिनी के मिलने की आशा ने हद से ज्यादे प्रसन्न कर दिया। इंद्रजीतसिंह ने मुस्कुरा कर गोपालसिंह से कहा, "कृष्णाजिन्न की बात मानना आपके लिए उतना ही आवश्यक है जितना हम दोनों भाइयों के लिए तिलिस्म तोड़ कर चुनारगढ़ पहुंचना। आप बहुत जल्द इंद्रदेव को यहाँ से रवाना कीजिए।"

गोपाल०। ऐसा ही होगा।

आन०। कृष्णाजिन्न का वह तिलिस्मी मकान कहाँ पर है और यहाँ से कै दिन की राह.....?

गोपाल०। यहाँ से कुल पन्द्रह सोलह कोस पर है।

इन्द्रजीत०। वाह वाह वाह! तब तो बहुत ही नजदीक है! (इन्द्रदेव से) मेरी तरफ से कृष्णाजिन्न को प्रणाम करके बहुत धन्यवाद दीजियेगा क्योंकि उन्होंने बड़ी चालाकी से किशोरी कामिनी और कमला को बचा लिया।

इन्द्रदेव०। बहुत अच्छा।

इन्द्रजीत०। आप तो असली बलभद्रसिंह का पता लगाने के लिये घर से निकले थे, उनका.....

इन्द्रदेव०। (राजा गोपालसिंह की तरफ इशारा करके) आप कहते हैं कि नकली बलभद्रसिंह ने तुम्हें धोखा दिया, तुम अब उसकी खोज मत करो क्योंकि भूतनाथ ने असली बलभद्रसिंह का पता लगा लिया और उन्हें छुड़ा कर चुनारगढ़ ले गया।

इन्द्रजीत०। (गोपालसिंह से) क्या यह बात सच है?

गोपाल०। हाँ कृष्णाजिन्न ने मुझे यह भी लिखा था।

इन्द्रजीत०। (मुस्कुरा कर) तब तो इस खबर में किसी तरह का शक नहीं हो सकता।

इसके बाद दुनिया के पुराने नियमानुसार और बहुत दिनों से बिछुड़े हुए प्रेमियों के मिलने पर जैसा हुआ करता है उसी के मुताबिक इन्द्रदेव और सयू में कुछ बातें हुईं, इन्दिरा ने भी माँ से कुछ बातें कीं, और तब राजा गोपालसिंह इन्दिरा और इन्द्रदेव को साथ ले कर कमरे के बाहर हो गए।

बारहवां बयान

किशोरी कामिनी और कमला जिस मकान में रक्खी गईं थीं वह नाम ही को तिलिस्मी मकान था। वास्तव में न तो उस मकान में कोई तिलिस्म था और न किसी तिलिस्म से उसे कुछ सम्बन्ध ही था। तथापि वह मकान और स्थान बहुत सुन्दर और दिलचस्प था। ऊँची ऊँची चार पहाड़ियों के बीच में बीस बाईस बिगहे के लगभग जमीन थी जिसमें तरह तरह के कुदरती गुल बूटे लगे हुए थे जो जमीन ही की तरावट से सरसब्ज बने रहते थे। पूरब तरफ वाली पहाड़ी के ऊपर से साफ और मीठे जल का झरना गिरता था जो उस जमीन में चक्कर देता हुआ पश्चिम की तरफ की पहाड़ी के नीचे जा कर लोप हो जाता था और इस सबब से वहाँ की जमीन हमेशा तर बनी रहती थी। बीच में एक छोटा सा दो मंजिल का मकान बना हुआ था और उत्तर तरफ वाली पहाड़ी पर सौ सवा सौ हाथ ऊँचे जाकर एक छोटा सा बँगला था जिसे शायद बनाने वाले ने जाड़े के मौसिम के लिये आवश्यक समझा हो क्योंकि नीचे वाले मकान में तरी ज्यादे रहती थी। किशोरी कामिनी और कमला इसी बँगले में रहती थीं और उनकी हिफाजत के लिये दो चार सिपाही और लौंडियाँ थीं उन सभों का डेरा नीचे वाले मकान में था तथा खाने पीने का सामान तथा रहने बन्दोबस्त भी उसी में था।

उन तीनों की हिफाजत के लिये जो सिपाही और लौंडियाँ वहाँ थीं उन सभों की सूरत भी ऐयारी ढंग से बदली हुई थी और यह बात किशोरी कामिनी तथा कमला से कह दी गई थी जिसमें उन तीनों को किसी तरह का खटका न हो।

ये तीनों जानती थीं कि ये सिपाही और लौंडियाँ हमारी नहीं हैं फिर भी समय और अवस्था पर ध्यान दे कर इन्हें उन सभों पर भरोसा करना पड़ता था। इस मकान में आने के कारण इन तीनों की तबीयत बहुत ही उदास थी। रोहतास-गढ से रवाना होती समय इन तीनों को निश्चय हो गया था कि अब हम लोग

बहुत जल्द चुनारगढ़ पहुँचने वाले हैं जहाँ न तो किसी दुश्मन का डर रहेगा और न किसी तरह की तकलीफ ही रहेगी, इससे भी बढ़ कर बात यह होगी कि उसी चुनारगढ़ में हम लोगों की मुराद पूरी होगी। मगर निराशा ने रास्ते ही में पल्ला पकड़ लिया और दुश्मन के डर से इन्हें इस विचित्र स्थान में आकर रहना पड़ा जहाँ सिवाय गैर के अपना कोई भी दिखाई नहीं पड़ता था।

जिस दिन ये तीनों यहाँ आईं थीं उस दिन कृष्णाजिन्न भी यहाँ मौजूद था। ये तीनों कृष्णाजिन्न को बखूबी जानती थीं और यह भी उनको विश्वास था कि कृष्णाजिन्न हमारा सच्चा पक्षपाती और सहायक है तिस पर तेजसिंह ने भी उन तीनों को अच्छी तरह समझा कर कह दिया था कि यद्यपि तुम लोगों को यह नहीं मालूम कि वास्तव में कृष्णाजिन्न कौन है और कहाँ रहता है तथापि तुम लोगों को उस पर उतना ही भरोसा रखना चाहिये जितना हम पर रखती हो और उसकी आज्ञा भी उतनी ही इज्जत के साथ माननी चाहिये जितनी इज्जत के साथ हमारी आज्ञा मानने की इच्छा रखती हो, और किशोरी कामिनी तथा कमला ने यह बात बड़ी प्रसन्नता से स्वीकार की थी।

जिस समय ये तीनों इस मकान में आईं थीं उसके दो ही घण्टे बाद सब सामान ठीक करके कृष्णाजिन्न और तेजसिंह चले गये थे और जाती समय इन तीनों को कृष्णाजिन्न कहता गया था कि तुम लोग अकेले रहने के कारण घबराना नहीं, मैं बहुत जल्द लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली को तुम लोगों के पास भेजवाऊँगा और तब तुम लोग बड़ी प्रसन्नता के साथ यहाँ रह सकोगी। मैं भी जहाँ तक जल्द हो सकेगा तुम लोगों को लेने लिये आऊँगा।

तीसरे ही दिन भैरोसिंह भी उस विचित्र स्थान में जा पहुँचे जिन्हें देख किशोरी कामिनी और कमला बहुत खुश हुईं।

हमारे प्रेमी पाठक जानते हैं कि कमला और भैरोसिंह का दिल घुल मिल कर एक हो रहा था अस्तु इस समय यह स्थान उन्हीं दोनों के लिये मुबारक हुआ और उन्हीं दोनों को यहाँ आने की विशेष प्रसन्नता भी हुई मगर उन दोनों को अपनी बनिस्बत अपने मालिकों का ज्यादा ख्याल था। उनकी प्रसन्नता के बिना अपनी प्रसन्नता नहीं चाहते थे और उनके मालिक भी इस बातको अच्छी तरह जानते थे।

उस स्थान में पहुँच कर भैरोसिंह ने वहाँ के रास्ते की बड़ी तारीफ की और

कहा कि इन्द्रदेव के मकान में जाने का रास्ता जैसा गुप्त और टेढ़ा है वैसा ही यहाँ का भी है, अनजान आदमी यहाँ कदापि नहीं आ सकता। इसके बाद भैरोसिंह ने राजा बीरेन्द्रसिंह के लश्कर का हाल बयान किया।

भैरोसिंह की जुबानी लश्कर का हाल और मनोरमा के हाथ से मेघ बदली हुई तीनों लौंडियों के मारे जाने की खबर सुन कर किशोरी और कामिनी के रोंगटे खड़े हो गये। किशोरी ने कहा, "निःसन्देह कृष्णाजिन्न देवता है। उसकी अद्भुत शक्ति उसकी बुद्धि और उसके विचार की जहाँ तक तारीफ की जाय उचित है! उसने जो कुछ सोचा ठीक ही निकला!!"

भैरो०। इसमें कोई शक नहीं! तुम लोगों को यहाँ बुलवा कर उसने बड़ा ही काम किया। मनोरमा तो गिरफ्तार हो ही गई और भाग जाने लायक भी न रही, उसके मददगार भी अगर लश्कर के साथ होंगे तो अब गिरफ्तार हुए बिना नहीं रह सकते। इसके अतिरिक्त.....

कमला०। हम लोगों को मरा जान कर कोई पीछा भी न करेगा और जब दोनों कुमार तिलिस्म को तोड़ कर चुनारगढ़ में आ जायँगे तब तो यही दुनिया हम लोगों के लिये स्वर्ग हो जायगी।

बहुत देर तक इन चारों में बातचीत होती रही। इसके बाद भैरोसिंह ने वहाँ की अच्छी तरह सैर की और खा पी कर निश्चिन्त होने बाद इधर उधर की बातों से उन तीनों का दिल बहलाने लगे तथा जब तक वहाँ रहे उन लोगों को उदास होने न दिया।

तेरहवां बयान

सन्ध्या होने में अभी दो घण्टे से ज्यादे देर है मगर सूर्य भगवान पहाड़ की आड़ हो गये इसलिये उस स्थान में जिसमें किशोरी कामिनी और कमला हैं पूरब तरफ वाली पहाड़ी के ऊपरी हिस्से के सिवाय और कहीं धूप नहीं है। समय अच्छा और स्थान बहुत ही रमणीक मालूम पड़ता है। भैरोसिंह एक पेड़ के नीचे बैठे कुछ बना रहे हैं और किशोरी कामिनी तथा कमला बँगले से कुछ दूर हट कर एक पत्थर की चट्टान पर बैठी बातें कर रही हैं।

कमला ने कहा, "बैठे बैठे मेरा तो जी घबड़ा गया!"

कामिनी० । तो तुम भी भैरोसिंह के पास जा बैठो और पेड़ की छाल छील कर रस्सा बटो ।

कमला० । जी मैं ऐसे गन्दे काम नहीं करती । मेरा मतलब यह था कि अगर हुक्म हो तो मैं इस पहाड़ी के बाहर जा कर इधर उधर की खबर ले आऊँ या जमानिया में जाकर इसी बात का पता लगाऊँ कि राजा गोपालसिंह के दिल से लक्ष्मीदेवी की मुहब्बत एक दम क्यों जाती रही जो आज तक उस बेचारी को पूछने के लिए एक चिड़िया का बच्चा भी नहीं भेजा !

किशोरी० । बहिन इस बात का तो मुझे भी बड़ा रञ्ज है । मैं सच कहती हूँ कि हम लोगों में से कोई भी ऐसा नहीं है जो उसके दुःख की बराबरी करे । राजा गोपालसिंह ही की बदौलत उसने जो जो तकलीफें उठाई हैं उसे सुनने और याद करने से कलेजा काँप जाता है मगर अफसोस राजा गोपालसिंह ने उसकी कुछ भी कदर न की ।

कामिनी० । मुझे तो सब से ज्यादे केवल इसी बात का ध्यान रहता है कि बेचारी लक्ष्मीदेवी ने जो जो कष्ट सहे हैं उन सभों से बढ़ कर उसके लिए यह दुःख है कि राजा गोपालसिंह ने पता लग जाने पर भी उसकी कुछ सुध न ली । सब दुःखों को तो वह सह गई मगर यह दुःख उसके सहे न सहा जायगा । हाय हाय, राजा गोपालसिंह का भी कैसा पत्थर का कलेजा है !

किशोरी० । ऐसी मुसीबत कहीं मुझे सहनी पड़ती तो मैं पल भर भी इस दुनिया में न रहती । क्या जमाने से मुहब्बत एक दम जाती रही ? या राजा गोपालसिंह ने लक्ष्मीदेवी में कोई ऐब देख लिया है ?

कमला० । राम राम ! वह बेचारी ऐसी नहीं है कि किसी ऐब को अपने पास आने दे । देखो उसने अपनी छोटी बहिन की लौंडी बन कर मुसीबत के दिन किस ढंग से बिताये । मगर उसके प्रतिव्रत धर्म का नतीजा कुछ भी न निकला !

किशोरी० । इस दुःख से बढ़ कर दुनिया में कोई भी दुःख नहीं है । (पेड़ पर बैठे हुए एक काले कौवे की तरफ इशारा करके) देखो बहिन, यह काग हम लोगों की तरफ मुँह करके बार बार बोल रहा है । (जमीन पर से एक तिनका उठा कर) यह कहता है कि तुम्हारा कोई प्रेमी यहाँ चला आ रहा है ।

कामिनी० । (ताज्जुब से) सो तुम्हें कैसे मालूम हुआ ? क्या कौवे की बोली तुम पहिचानती हो ? या इस तिनके में कुछ लिखा है ? या यों ही दिल्लगी करती हो ?

किशोरी० । मैं दिल्लगी नहीं करती सच कहती हूँ, इसका पहिचानना कोई मुश्किल बात नहीं है ।

कामिनी० । बहिन मुझे भी बताओ ! तुम्हें इसकी तर्कीब किसने सिखाई थी ?

किशोरी० । मेरी माँ ने मुझे एक श्लोक याद करा दिया था । उसका मतलब यह है कि जब काले कौवे (काग) की बोली सुने तो एक बड़ा सा साफ तिनका जमीन पर से उठा ले और अपनी उँगलियों से नाप के देखे कि कै अंगुल है, जै अंगुल हो उसमें तेरह और मिला कर सात का भाग दे जाय, अर्थात् सात सात करके जहाँ तक उसमें से निकाल सके निकाल दे और फिर जो कुछ बचे उसका हिसाब लगाये । एक बचे तो लाभ होगा, दो बचे तो कुछ नुक्सान होगा, तीन बचे तो सुख मिलेगा, चार बचे तो भोजन की कोई चीज मिलेगी, पाँच बचे तो किसी मित्र का दर्शन होगा, छः बचे तो कलह होगी, और सात बचे या यों कहो कि कुछ भी न बचे तो समझो कि अपने या अपने किसी प्रेमी का मरना होगा, बस इतना ही तो हिसाब है ।

कामिनी० । तुम तो इतना कह गईं लेकिन मेरी समझ में कुछ भी न आया, यह तिनका जो तुमने अपनी उँगली से नापा है इसका हिसाब कर के समझा दो तो समझ जाऊँगा ।

किशोरी० । अच्छा देखो, यह तिनका जो मैंने नापा था छः अंगुल का है, इसमें तेरह मिला दिया तो कितना हुआ ?

कामिनी० । उन्नीस हुए ।

किशोरी० । अच्छा इसमें से कै सात निकल सकते हैं ?

कामिनी० । (सोच कर) सात और सात चौदह, दो सात निकल गये और पाँच बचे ! अच्छा अब मैं समझ गई, तुम अभी कह चुकी हो कि अगर पाँच बचे तो किसी मित्र का दर्शन होगा, अच्छा अब वह श्लोक सुना दो क्योंकि श्लोक बड़ी जल्दी याद हो जाया करता है ।

किशोरी० । सुनो :—

काकस्य वचनं श्रुत्वा गृहीत्वा तृणमुत्तमम्,
त्रयोदश समायुक्ता मुनिभिः भागमाचरेत्।
१ २ ३ ४ ५
लाभं नष्टं महासौख्यं भोजनं प्रियदर्शनम्
कलहो मरणं चैव काको वदति नान्यथा॥

कमला०। (हँस कर) श्लोक तो अशुद्ध है!!

किशोरी०। अच्छा अच्छा रहने दीजिये, अशुद्ध है तो तुम्हारी बला से, तुम बड़ी पण्डिता बन कर आई हो तो अपना शुद्ध करा लेना!

कामिनी०। (कमला से) खैर तुम्हारे कहने से अगर मान भी लिया जाय कि श्लोक अशुद्ध है पर उसका मतलब तो अशुद्ध नहीं है।

कमला०। नहीं नहीं, मतलब को कौन अशुद्ध कह सकता है, मतलब तो ठीक और सच है।

कामिनी०। तो बस फिर हो चुका। बीबी! दुनिया में श्लोक की बड़ी कदर होती है, पंडित लोग अगर कोई झूठी बात भी समझाना चाहते हैं तो झट श्लोक बना कर पढ़ देते हैं, सुनने वाले को विश्वास हो जाता है और यह तो वास्तव में सच्चा श्लोक है।

कामिनी ने इतना कहा ही था कि सामने से किसी को आते देख चौंक पड़ी और बोली, 'अहाहा! देखो किशोरी बहिन की बात कैसी सच निकली! लो कमला रानी देख लो और अपना कान पकड़ो!!'

जिस जगह किशोरी कामिनी और कमला बैठी बातें कर रही थीं उसके सामने ही की तरफ इस स्थान में आने का रास्ता था। यकायक जिस पर निगाह पड़ने से कामिनी चौंकी वह लक्ष्मीदेवी थी, उसके बाद कमलिनी और लाडिली दिखाई पड़ी और सब के बाद इन्द्रदेव पर नजर पड़ी।

किशोरी०। देखो बहिन हमारी बात कैसी सच निकली!!

कामिनी०। बेशक बेशक!

कमला०। कृष्णाजिन्न सच ही कह रहे थे कि मैं उन तीनों को भी यहाँ भेजवा दूँगा।

किशोरी० । (खड़ी होकर) चलो हमलोग आगे चल कर उन्हें ले आवें ।

ये तीनों लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली को देख कर बहुत ही खुश हुईं और वहाँ से उठ कर कदम बढ़ाती हुई उनकी तरफ चलीं । वे तीनों बीच वाले मकान के पास पहुँचने भी न पाई थीं कि ये सब उनके पास पहुँचीं और इन्द्रदेव को प्रणाम करने बाद आपुस में बारी बारी से एक दूसरे के गले मिलीं । भैरोसिंह भी उसी जगह आ पहुँचा और कुशल क्षेम पूछ कर प्रसन्न हुआ । इसके बाद सब कोई मिलकर उसी बंगले में आये जिसमें किशोरी कामिनी और कमला रहती थीं, और इन्द्रदेव बीच वाले दो मञ्जिले मकान में चले गये जिसमें भैरोसिंह का डेरा था ।

यद्यपि वहाँ खिदमत करने के लिए लौंडियों की कमी न थी तथापि कमला ने अपने हाथ से तरह तरह की खाने की चीजें तैयार करके सभों को खिलाया पिलाया और मुहब्बत भरी हंसी दिल्लगी की बातों से सभों का दिल बहलाया । रात के समय जब हर एक कामों से निश्चिन्त होकर एक कमरे में सब बैठीं तो बातचीत होने लगी :—

किशोरी० । (लक्ष्मीदेवी से) जमाने ने तो हम लोगों को जुदा कर दिया था मगर ईश्वर ने कृपा करके बहुत जल्द मिला दिया ।

लक्ष्मी० । हाँ बहिन इसके लिए मैं ईश्वर को धन्यवाद देती हूँ । मगर मेरी समझ में अभी तक नहीं आता कि कृष्णाजिन्न कौन है जिसके हुक्म से कोई भी मुँह नहीं मोड़ता । देखो तुम भी उसी की आज्ञानुसार यहाँ पहुँचाई गईं और हम लोग भी उसी की आज्ञा से यहाँ लाए गये । जो हो मगर इसमें कोई शक नहीं कि कृष्णाजिन्न बहुत ही बुद्धिमान और दूरदर्शी है । यह सुनकर हमलोगों को बड़ी खुशी हुई कि कृष्णाजिन्न की चालाकियों ने तुम लोगों की जान बचा ली !

कामिनी० । यह खबर तुम्हें कब मिली ?

लक्ष्मी० । इन्द्रदेवजी जमानिया गये थे उसी जगह उन्हें कृष्णाजिन्न की चीठी मिली जिससे सब हाल मालूम हुआ और उसी चीठी के मुताबिक हमलोग यहाँ पहुँचाए गये ।

किशोरी० । जमानिया गये थे ? राजा गोपालसिंह बुलाया होगा ?

लक्ष्मी० । (ऊँची साँच लेकर) वह क्यों बुलाने गये थे, उन्हें क्या गर्ज पड़ी थी ? हाँ हमारे पिता का पता लगाने गये थे सो वहाँ जाने पर कृष्णाजिन्न की ही चीठी से यह भी मालूम हुआ कि भूतनाथ उन्हें छुड़ा कर चुनारगढ़ ले गया। ईश्वर उसका भला करे, भूतनाथ बात का धनी निकला।

किशोरी० । (खुश होकर) भूतनाथ ने यह बहुत बड़ा काम किया ! फिर भी उसके मुकदमे में बड़ी उलझन निकलेगी।

लाडिली० । इसमें क्या शक है !

किशोरी० । अच्छा तो जमानिया में जाने से और भी किसी का हाल मालूम हुआ ?

कम० । हाँ दोनों कुमारों से भी दूर की मुलाकात और बातचीत हुई क्योंकि वे तिलिस्म तोड़ने की कार्रवाई कर रहे थे। वहाँ इन्द्रदेव ने अपनी लड़की इंदिरा को पाया और अपनी स्त्री सर्यू को भी देखा।

किशोरी० । (चौंक कर और खुश होकर) यह बड़ा काम हुआ ! वे दोनों इतने दिनों तक कहाँ थीं और कैसे मिलीं ?

लक्ष्मी० । वे दोनों तिलिस्म में फँसी हुई थीं, दोनों कुमारों की बदौलत उनकी जान बची।

इस जगह लक्ष्मीदेवी ने सर्यू और इन्दिरा का किस्सा पूरा पूरा बयान किया जिसे सुनकर वे तीनों बहुत प्रसन्न हुईं और कमला ने कहा, "विश्वासघातियों और दुष्टों के लिये जमानिया बैकुण्ठ हो रहा था।"

लक्ष्मी० । तभी तो मुझे ऐसे ऐसे दुःख भोगने पड़े जिनसे अभी तक छुटकारा नहीं मिलता ! मगर मैं नहीं कह सकती कि अब मेरी क्या गति होगी और मुझे क्या करना होगा !!

किशोरी० । क्या जमानिया में इन्द्रदेव से राजा गोपालसिंह ने तुम्हारे विषय में कोई बातचीत नहीं की ?

लक्ष्मी० । कुछ भी नहीं, सिर्फ इतना कहा कि तुम उन तीनों बहिनों को कृष्णाजिन्न की आज्ञानुसार वहाँ पहुँचा दो जहाँ कि किशोरी कामिनी और कमला है। वहाँ स्वयं कृष्णाजिन्न जायँगे, उस समय जो कुछ वह कहें सो करना। शायद कृष्णाजिन्न उन सभों को यहाँ लेते आवें।

कामिनी० । (हाथ मल कर) बस ।

लक्ष्मी० । बस और कुछ भी नहीं पूछा और न इन्द्रदेव ही ने कुछ कहा, क्योंकि उन्हें भी इस बात का बड़ा रञ्ज है ।

किशोरी० । रञ्ज हुआ ही चाहे, जो कोई सुनेगा उसी को इस बात का रञ्ज होगा, वह तो बेचारे तुम्हारे पिता ही के बराबर ठहरे क्यों न रञ्ज करेंगे ! (कमलिनी से) तुम तो अपने जीजाजी के मिजाज की बड़ी तारीफ करती थीं !

कम० । बेशक वह तारीफ के लायक हैं मगर इस मामले में तो मैं आप हैरान हो रही हूँ कि उन्होंने ऐसा क्यों किया ! उनके सामने ही दोनों कुमारों ने बड़े शौक से तुम लोगों का हाल इन्द्रदेव से पूछा और सभों को जमानिया में बुला लेने के लिए कहा मगर उस पर भी राजा साहब ने हमारी दुखिया बहिन को याद न किया ! आशा है कि कल तक कृष्णाजिन्न भी यहाँ आ जायँगे, देखें वह क्या कहते हैं !

लक्ष्मी०। कहेंगे क्या ? अगर वह तुझे जमानिया चलने के लिए कहेंगे भी तो मैं इस बेइज्जती के साथ जाने वाली नहीं हूँ । जब मेरा मालिक मुझे पूछता ही नहीं तो मैं कौन सा मुँह लेकर उसके पास जाऊँ और किस सुख के लिए या किस आशा पर इस शरीर को रक्खूँ !

कमला० । नहीं नहीं तुम्हें इतना रञ्ज न करना चाहिये...

कामिनी०। (बात काट कर) रञ्ज न करना चाहिये ! भला इससे बढ़ कर भी कोई रञ्ज दुनिया में है ? जिसके सबब से और जिसके खयाल से इस बेचारी ने इतने दुःख भोगे और ऐसी अवस्था में रही वही जब एक बात न पूछे तो कहो रञ्ज हो कि न हो ? और नहीं तो इस बात का तो खयाल करते कि इसी की बहिन या उनकी साली की बदौलत उनकी जान बची, तो दुनिया से उनका नाम निशान ही उठ गया था ।

लाडिली० । बहिन ! ताज्जुब तो यह है कि इनकी खबर न ली तो न सही अपनी उस अनोखी मायारानी की सूरत तो आन कर देख जाते जिसने उनके साथ.....

कामिनी० । (जल्दी से) हाँ और क्या ? उसे भी देखने न आये ! उन्हें चाहिये था कि रोहतासगढ़ में पहुँच कर उसकी बोटी बोटी अलग कर देते !

इसी तरह से ये सब बड़ी देर तक आपुस में बातें करती रहीं। लक्ष्मीदेवी की अवस्था पर सभों को रञ्ज अफसोस और ताज्जुब था। जब रात ज्यादे बीत गई तो सभों ने चारपाई की शरण ली। दूसरे दिन उन्हें कृष्णाजिन्न के आने की खबर मिली।

चौदहवां बयान

किशोरी, कामिनी, कमलिनी लक्ष्मीदेवी, कमला और लाडिली सभी को कृष्णाजिन्न के आने का इन्तजार था। सभों के दिल में तरह तरह की बातें पैदा हो रही थीं और सभों को इस बात की आशा लग रही थी कि कृष्णाजिन्न के आने पर इस बात का पता लग जायगा कि कृष्णाजिन्न कौन है और राजा गोपालसिंह ने लक्ष्मीदेवी की सुध क्यों भुला दी।

आखिर दूसरे दिन कृष्णाजिन्न भी वहाँ आ पहुँचा। यद्यपि वह एक ऐसा आदमी था जिसकी किसी को भी कुछ खबर न थी, कोई भी नहीं कह सकता था कि वह कौन और कहाँ का रहने वाला है, न तो कोई उसकी जात बता सकता था और न कोई उसकी ताकत और सामर्थ्य के विषय में कुछ वादाविवाद कर सकता था तथापि उसकी हमदर्दी और कार्रवाई से भी खुश थे और इसलिये कि राजा बीरेन्द्रसिंह उसे मानते थे सभी उसकी कदर करते थे। गुप्त से गुप्त स्थान में पहुँच के वह सभों को चौकन्ना कर चुका था इसलिये किशोरी और लक्ष्मीदेवी इत्यादि की उससे पर्दा करने की कोई आवश्यकता न थी और न ऐसा करने का उन्हें हुक्म था अस्तु कृष्णाजिन्न के आने की खबर पा कर सब खुश हुईं और बीच वाले दो मञ्जिले मकान में जिसमें सब के पहिले आकर उसने इन्द्रदेव से मुलाकात की थी चलने के लिये तैयार हो गईं मगर उसी समय भैरोसिंह ने बँगले पर आ लक्ष्मीदेवी इत्यादि से कहा कि कृष्णाजिन्न स्वयं यहीं चले आ रहे हैं।

थोड़ी देर बाद कृष्णाजिन्न बँगले पर आ पहुँचा। लक्ष्मीदेवी, कमलिनी, लाडिली, किशोरी, कामिनी और कमला ने आगे बढ़ कर उसका इस्तकबाल (अगुआनी) किया और इज्जत के साथ ला कर एक ऊँची गद्दी के ऊपर बैठाया। उनकी इच्छानुसार इन्द्रदेव और भैरोसिंह गद्दी के नीचे दाहिनी तरफ बैठे और लक्ष्मीदेवी इत्यादि को सामने बैठने के लिये कृष्णाजिन्न ने आज्ञा दी

और सभों ने खुशी से उसकी आज्ञा स्वीकार की। कृष्णाजिन्न ने सभों का कुशल मङ्गल पूछा और फिर यों बातचीत होने लगी :—

किशोरी०। आपकी बदौलत हमलोगों की जान बच गई मगर उन लौंडियों के मारे जाने का रञ्ज है।

कृष्णा०। यह सब ईश्वर की माया है, वह जो चाहता है करता है। यद्यपि मनोरमा ने कई शैतानों को साथ लेकर तुम लोगों का पीछा किया था मगर उसके गिरफ्तार हो जाने ही से सभों का खौफ जाता रहा। अब जो मैं खयाल करके देखता हूँ तो तुम लोगों का दुश्मन कोई भी दिखाई नहीं देता, क्योंकि जिन दुष्टों की बदौलत लोग दुश्मन हो रहे थे या यों कहो कि जो लोग उनके मुखिया थे सब गिरफ्तार हो गये यहाँ तक कि अब उन लोगों को कैद से छुड़ाने वाला भी कोई न रहा।

कमलिनी०। ठीक है तो अब हमलोगों को छिप कर वहाँ रहने की क्या जरूरत है?

कृष्णा०। (हँस कर) तुम्हें तो तब भी छिप कर रहने की जरूरत नहीं पड़ी जब चारो तरफ दुश्मनों का जोर बँधा हुआ था आज की कौन कहे! मगर हाँ (हाथ का इशारा करके) इन बेचारियों को अब यहाँ रहने की कोई जरूरत नहीं और अब इसी लिये मैं यहाँ आया भी हूँ कि तुम लोगों को जमानिया ले चलूँ वहाँ से फिर जिसको जिधर जाना होगा चला जायगा।

लक्ष्मी०। तो आप हमलोगों को चुनारगढ़ क्यों नहीं ले चलते या वहाँ जाने की आज्ञा क्यों नहीं देते?

कृष्णा०। नहीं, तुम लोगों को पहिले जमानिया चलना चाहिये। यह केवल मेरी आज्ञा ही नहीं है बल्कि मैं समझता हूँ कि तुम लोगों की भी यही इच्छा होगी। (लक्ष्मीदेवी से) तुम तो जमानिया की रानी ही ठहरीं, तुम्हारी रिआया खुशी मनाने के लिए उस दिन का इन्तजार कर रही है जिस दिन तुम्हारी सवारी शहर के अन्दर पहुँचेगी, और कमलिनी तथा लाडिली तुम्हारी बहिन ही ठहरीं.....

लक्ष्मी०। (बात काट कर) बस बस, मैं बाज आई जमानिया की रानी

बनने से ! वहाँ जाने की मुझे कोई जरूरत नहीं और मेरी दो बहिनें भी जहाँ मैं रहूँगी वहीं मेरे साथ रहेंगी।

कृष्णा०। क्यों क्यो ऐसा क्यों ?

लक्ष्मी०। मैं इस लिए विशेष बात कहा नहीं चाहती कि आपने यद्यपि हम लोगों की बड़ी सहायता की है और हम लोग जन्म भर आपकी ताबेदारी कर के भी उसका बदला नहीं चुका सकते तथापि आप का परिचय न पाने के कारण...

कृष्णा०। ठीक है ठीक है, अपरिचित पुरुष से दिल खोल कर बातें करना कुलवती स्त्रियों का धर्म नहीं है, मगर मैं यद्यपि इस समय अपना परिचय नहीं दे सकता तथापि यह कहे देता हूँ कि नाते में राजा गोपालसिंह का मैं छोटा भाई हूँ इसलिए तुम्हें भावज मान कर बहुत कुछ कहने और सुनने का हक रखता हूँ। तुम निश्चय रक्खो कि मेरे विषय में राजा गोपालसिंह तुम्हें कभी उलाहना न देंगे चाहे तुम मुझसे किसी तरह पर बातचीत क्यों न करो ! (कुछ सोच कर) मैं समझता हूँ कि तुम जमानिया जाने से क्यों इनकार करती हो। शायद तुम्हें इस बात का रञ्ज है कि यकायक तुम्हारे जीते रहने की खबर पाकर भी गोपालसिंह तुम्हें देखने के लिए न आये.....

कम०। देखने के लिए आना दूर रहे अपने हाथ से एक पुर्जा लिख कर यह भी न पूछा कि तेरा मिजाज कैसा है !

लाडिली०। आने जाने वाले आदमी तक से भी हाल न पूछा !!

लक्ष्मी०। (धीरे से) एक कुत्ते की भी इतनी बेकदरी नहीं की जाती !!

कम०। ऐसी हालत में रञ्ज हुआ ही चाहे ! जब आप यह कहते हैं कि हम राजा गोपालसिंह के छोटे भाई हैं और मैं समझती हूँ कि आप झूठ भी नहीं कहते होंगे, तभी हम लोगों को इतना कहने का हौसला भी होता है। आप ही कहिये कि राजा साहब को क्या यही उचित था ?

कृष्णा०। मगर तुम इस बातका क्या सबूत रखती हो कि राजा साहबने इनकी बेकदरी की ? औरतों की भी विचित्र बुद्धि होती है ! असल बात को तो जानती नहीं और उलाहना देने को तैयार हो जाती हैं !

कम०। सबूत अब इससे बढ़कर क्या होगा जो मैं कह चुकी हूँ ? अगर एक दिन के लिए चुनारगढ़ आ जाते तो क्या पैर की मेंहदी छूट जाती ?

कृष्णा० । अपने बड़े लोगों के सामने अपनी स्त्री को देखने के लिए आना क्या यह उचित होता ? मगर अफसोस ! तुम लोगों को तो इस बात की खबर ही नहीं कि राजा गोपालसिंह महाराज बीरेन्द्रसिंह के भतीजे होते हैं और इस सबब से लक्ष्मीदेवी को अपने घर में आ गई जान कर उन्होंने किसी तरह की जाहिरदारी न की ।

सब० । (ताज्जुब से) क्या महाराज उनके चाचा होते हैं ?

कृष्णा० । हाँ ! यह बात पहिले केवल हमी दोनों आदमियों को मालूम थी और तिलिस्म तोड़ती समय दोनों कुमारों को मालूम हुई, या आज मेरी जुबानी तुम लोगों ने सुनी ! खुद महाराज बीरेन्द्रसिंह को भी अभी तक यह बात मालूम नहीं है ।

लक्ष्मी० । अच्छा अच्छा जब नातेदारी इतनी छिपी हुई थी तो.....

कम० । (लक्ष्मीदेवी को रोक कर) बहिन तुम रहने दो मैं इनकी बातों का जवाब दे लूँगी ! (कृष्णाजिन्न से) तो क्या गुप्त रीति से वह एक चीठी भी नहीं भेज सकते थे ?

कृष्णा० । चीठी भेजना तो दूर रहे गुप्त रीति से खुद कई दफे आकर वे इनको देख गये ।

लाडिली० । अगर ऐसा ही होता तो रंज काहे का था !

कमलिनी० । इस बात को तो वह कदापि साबित नहीं कर सकते !

कृष्णा० । यह बात तो बहुत सहज में साबित हो जायगी और तुम लोग सहज ही में मान भी जाओगी मगर जब उनका और तुम्हारा सामना होगा तब ।

कमलिनी० । तो आपकी राय है कि बिना सन्तोष हुए और बिना बुलाये बेइज्जती के साथ हमारी बहिन जमानिया चली जाय ?

कृष्णा० । बिना बुलाये कैसे ? आखिर मैं यहाँ किस लिये आया हूँ ! (जेब से एक चीठी निकाल कर और लक्ष्मीदेवी के हाथ में देकर) देखो खास उनके हाथ की लिखी हुई यह चीठी पढ़ो ?

चीठी में यह लिखा हुआ था :—

"चिरंजीव कृष्णा योग्य लिखी गोपालसिंह का आशीर्वाद—आज तीन दिन हुए एक पत्र तुम्हें भेज चुका हूँ । तुम छोटे भाई हो इसलिये विशेष लिखना

उचित नहीं समझता, केवल इतना लिखता हूँ कि तुम चीठी देखते ही चले जाओ और अपनी भावज को तथा उनकी दोनों बहिनों को जहाँ तक जल्द हो सके यहाँ ले आओ।"

इस चीठी को बारी बारी से सभों ने पढ़ा।

कमलिनी०। मगर इस चीठी में कोई ऐसी बात नहीं लिखी है जिसमें लक्ष्मी-देवी के साथ हमदर्दी पाई जाती हो। जब हाथ दुखाने बैठे ही थे तो एक चीठी इनके नाम की भी लिख डाली होती। इन्हें नहीं तो मुझी को कुछ लिख भेजा होता! मेरा उनका सामना हुए भी तो बहुत दिन नहीं हुए! मालूम होता है कि थोड़े ही दिनों में वे बेमुरौवत और कृतघ्न भी हो गये!

कृष्णा०। कृतघ्न का शब्द तुमने बहुत ठीक कहा! मालूम होता है कि तुम उन पर अपनी कार्रवाइयों का अहसान डाला चाहती हो!

कमलिनी०। (क्रोध से) क्यों नहीं? क्या मैंने उनके लिये थोड़ी मेहनत की है? और इसका क्या यही बदला था?

कृष्णा०। जब अहसान और उसके बदले का खयाल आ गया तो मुहब्बत कैसी और प्रेम कैसा? मुहब्बत और प्रेम में अहसान और बदला चुकाने का तो खयाल ही न होना चाहिये। यह तो रोजगार और लेनदेन का सौदा हो गया! और अगर तुम इसी बदला चुकाने वाली कार्रवाई को प्रेमभाव समझती हो तो घबराती क्यों हो? समझ लो कि दूकानदार नादेहन्द है मगर बदला देने योग्य है, कभी न कभी बदला चुका ही जायगा! हाय हाय!! औरतें भी कितनी जल्द अहसान जताने लगती हैं! क्या तुमने कभी यह भी सोचा है कि तुम पर किस किस ने अहसान किया और तुम उसका बदला किस तरह चुका सकती हो? अगर तुम्हारा ऐसा ही मिजाज है और बदला चुकाये जाने की तुम ऐसी ही भूखी हो तो बस हो चुका, तुम्हारे हाथों से किसी गरीब असमर्थ या दीन दुखिया का भला कैसे हो सकता है? क्योंकि उसे तो तुम बदला चुकाने लायक कदापि न समझोगी!!

कमलिनी०। (कुछ शर्मा कर) क्या राजा गोपालसिंह भी असमर्थ और दीन हैं?

कृष्णा० । नहीं हैं, तो तुमने राजा समझ के उन पर अहसान किया था ! अगर ऐसा है तो मैं तुम्हें उनसे बहुत सा रुपैया दिलवा सकता हूँ ।

कमलिनी० । जी मैं रुपये की भूखी नहीं हूँ ।

कृष्णा० । बहुत ठीक, तब तो तुम प्रेम की भूखी ठहरीं !

कमलिनी० । बेशक ।

कृष्णा० । अच्छा तो जो आदमी प्रेम का भूखा है उसे दीन असमर्थ और समर्थ में अहसान करती समय भेद क्यों दीखने लगा और इसके देखने की उसे जरूरत ही क्या है ? ऐसी अवस्था में भी यही जान पड़ता है कि तुम्हारे हाथों से गरीब और दुखियों को लाभ नहीं पहुँच सकता क्योंकि वे न तो समर्थ हैं और न तुम उनसे उन अहसान के बदले में प्रेम ही पा कर खुश हो सकती हो ।

कमलिनी० । आपके इस कहने से मेरी बात नहीं कटती । प्रेम भाव का बर्ताव करके तो अमीर और गरीब बल्कि गरीब से गरीब आदमी भी अहसान का बदला उतार सकता है ! और नहीं तो वह अपने ऊपर अहसान करने वाले का कुशल मङ्गल ही चाहेगा । इसके अतिरिक्त अहसान और अहसान का जस माने बिना दोस्ती भी तो नहीं हो सकती ! दोस्ती की तो बुनियाद ही नेकी है ! क्या आप उनके साथ भी दोस्ती कर सकते हैं जो आपके साथ बदी करें ?

कृष्णा० । अगर तुम केवल उपकार मान लेने ही से खुश हो सकती हो तो चल कर राजा राहव से पूछो कि वह तुम्हारा उपकार मानते हैं या नहीं, या उनको कहो कि उपकार मानते हैं तो इसकी मुनादी करवा दें जैसा कि लक्ष्मीदेवी ने इन्द्रदेव का उपकार मान के किया था ।

लक्ष्मी० । (शर्मा कर) मैं भला चाचाजी के अहसानों का बदला क्योंकर अदा कर सकती हूँ ! और मुनादी करने से होता ही क्या है ?

कृष्णा० । शायः राजा गोपालसिंह भी यही सोच कर चुप बैठे हों और दिल में तुम्हारी तारीफ करते हों !

लक्ष्मी० । (कमलिनी से) तुम तो व्यर्थ की बातें कह रही हो, इस वादा-विवाद से क्या फायदा होगा ? मतलब तो इतना ही है कि मैं ऐसे घर में नहीं जाना चाहती जहाँ अपनी इज्जत नहीं, पूछ नहीं, चाह नहीं और जहाँ एक दिन भी रही नहीं ।

कृष्णा० । अच्छा इन सब बातों को जाने दो, मैं एक दूसरी बात कहत उसका जवाब दो !

कमलिनी० । कहिये ।

कृष्णा० । जरा विचार करके देखो कि तुम उनको तो बेमुरौवत कहती ह और इसका खयाल भी नहीं करतीं कि तुम लोग उनसे कहीं बढ़ कर बेमुरौवत हो राजा गोपालसिंह एक चीठी अपने हाथ से लिख कर तुम्हारे पास भेज देते त तुम्हें संतोष हो जाता मगर चीठी के बदले में मुझे भेजना तुम लोगों पसन्द आया ! अच्छा, अहसान जताने का रास्ता तो तुमने खोल ही दिया है, खुद ह गोपालसिंह पर अहसान जता चुकी हो, तो अगर मैं भी यह कहूँ कि मैंने तु लोगों पर अहसान किया है तो क्या बुराई है ?

कमलिनी० । कोई बुराई नहीं है ! और इसमें कोई सन्देह भी नहीं है कि आपने हम लोगों पर बहुत बड़ा अहसान किया है और बड़े वक्त पर ऐसी मदद की है कि कोई दूसरा कर ही नहीं सकता । हम लोगों का बाल बाल आपके अह सानों से बंधा हुआ है ।

कृष्णा० । तो अगर मैं ही राजा गोपालसिंह बन जाऊँ तो ?

कृष्णाजिन्न की इस आखिरी बात ने सभों को चौंका दिया । लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली कृष्णाजिन्न का मुंह देखने लगीं, मगर कृष्णाजिन्न इस समय भी ठीक उसी सूरत में था जिस रत में आज के पहिले कई दफे हमारे पाठक उसे देख चुके हैं ।

कृष्णाजिन्न ने अपने चेहरे पर से एक झिल्ली सी उतार कर अलग रख दी और उसी समय कमलिनी ने चिल्ला कर कहा, "अहा ! यह तो स्वयं राजा गोपाल-सिंह हैं !!" और यह कह कर उनके पैरों पर गिर पड़ी, "आपने तो हम लोगों को अच्छा धोखा दिया !"

❀ सोलहवाँ हिस्सा समाप्त ❀

दुर्गा प्रेस, दुण्डिराज, बनारस